सूर्योदय से

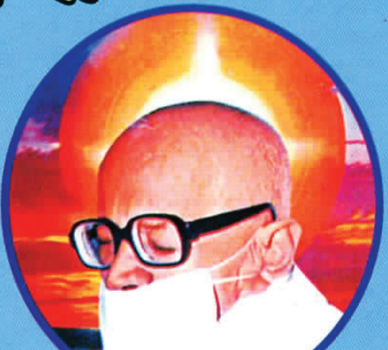

सूर्यास्त तक

❖ श्री जय मुनि जी

सूर्योदय से सूर्यास्त तक

सूर्योदय से सूर्यास्त तक

लेखक
श्री जय मुनि जी

प्रकाशक
शील कुमार जैन
पंचकूला

प्राप्ति स्थानः

शील कुमार जैन

ैध्व ला, लखमी चन्द जैन, कसून वाले कोठी न। 101,
सेक्टर-17, पंचकूला, (हरियाणा)

मोबाइल : 09779084443, 09781180129

प्रथम संस्करण : 2008

वीर निर्वाण दिवस : दीपावली

28 अक्टूबर 2008

द्वितीय संस्करण : अक्टूबर 2014

तृतीय संस्करण : अप्रैल 2018

मुद्रक :

रमन कुमार जैन द्वारा भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली

फोन : 011-23851570, 8700588570, 9810910450

विषयानुक्रमणिका

आमुख vii
सूर्योदय से सूर्यास्त तक 1

प्रथम प्रहर

1. परिवार-परिचय 3
2. घायल बचपन 13

द्वितीय प्रहर

1. नया परिवार-नया परिवेश 27
2. मिली राम-लखन सी जोड़ी 40
3. दिल्ली का दायित्व 54
4. दिल्ली से विदाई 78
5. पंजाब की पुकार 99
6. निर्णायक क्षण 106

तृतीय प्रहर

1. वाचस्पति गुरुदेव के बाद 122
2. धर्म-चक्र का हुआ प्रवर्तन 137
3. लहर-लहर लहराई यशःपताका! 160
4. साड्डा पंजाब 172

5. हरा हुआ हरियाणा 186
6. चरैवेति चरैवेति 205
7. मेरु-दण्ड हिला 225
8. मिला मसीहा दिल्ली को 247
9. आत्म-रमण-शील योगी की यात्रएं 265

चतुर्थ प्रहर

1. पैर विवश, पर हृदय सरस 284
2. चौथे पहर की आखिरी घड़ी 298

परिशिष्ट

1. पूज्य गुरुदेव के चातुर्मासों की सूची 323
2. पूज्य गुरुदेव की धर्म-वंश-परम्परा..326
3. कुछ विशेष प्रसंग 338
4. प्रवचनामृतम् ..... श्री गुरु-मुख से 388

आमुख

जन-जन की आशा, आस्था एवं श्रद्धा के केन्द्र, संघ-शास्ता, शासन-प्रभावक पूज्य गुरुदेव श्री 1008 श्री सुदर्शन लाल जी म.सा. का पावन जीवन-चरित 'सूर्योदय से सूर्यास्त तक' आपके कर-कमलों में समर्पित करते हुए हमें अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है। यद्यपि गुरुदेव के देवलोक-गमन को नौ वर्ष से भी अधिक अर्सा बीत चुका है, तो भी उनका जीवन अद्यावधि जन-मन को आह्लादित और धर्म के अमृत से आप्लावित कर रहा है और उम्मीद है कि ये 'यावच्चन्द्र दिवाकरम्—' जैन इतिहास में अपना अनन्य स्थान बनाए रखेगा।

पूज्य गुरुदेव का जीवन-चरित पहले सन् 1999 में 'महावीर-मिशन विशेषांक' के रूप में प्रकाशित हुआ। श्रद्धालु-वर्ग में उसका बड़ा श्रद्धापूर्ण स्थान रहा। आज भी कितने ही भक्त जन उसे आगम-शास्त्र की तरह पढ़ते हैं। कुछ उसे जैन धर्म का मौलिक इतिहास समझते हैं, कई उसे सन्दर्भ-ग्रन्थ की तरह उपयोग करते हैं और कुछ तो उसे मुद्रित चलचित्र की तरह ही देख-देखकर प्रमुदित होते रहते हैं।

पूर्वोक्त 'महावीर मिशन' का भण्डार (stock) समाप्त प्रायः होने से तथा श्रद्धालु जनता की निरन्तर पुरजोर मांग रहने से गुरु भगवन्तों की आज्ञा से इसका परिवर्धित एवं संशोधित रूप में पुनः प्रकाशन का विचार बना। इसके लिए 'गुरु-सुदर्शन-संघ' के वर्तमान उत्तराधिकारी संघनायक महाप्रभावी शास्त्री जी पद्म चन्द्र जी म.सा. एवं मुनिसंघ के वरिष्ठतम मुनिराज महास्थविर तपस्वीराज श्री प्रकाश चन्द्र जी म.सा. की भावना एवं निर्देशन में सारी व्यवस्था बनी। पहले की भाँति ही, इस बार भी इस भगीरथ प्रयत्न को पूर्णता तक पहुँचाया—पूज्य गुरुदेव के सुशिष्य

विद्वद्रत्न श्री जयमुनि जी म.सा. ने। महाराज श्री जी का जीवन, दर्शन, चिन्तन, मनन एवं लेखन प्रामाणिक, सन्देह-रहित, सत्य-निष्ठ एवं स्तरीय होता है। व्यर्थ की टीका-टिप्पणी एवं मिथ्या खण्डन-मण्डन से परे रहना आपकी प्रकृति है। आपकी लेखनी जैन साधु के द्वितीय महाव्रत 'सर्व मृषावाद-विरमण व्रत' की क्रियात्मक अभिव्यक्ति है। तभी घोर तपस्वी संथारा-साधक गुरुदेव श्री बदरी प्रसाद जी म.सा. ने एक बार फरमाया था कि 'जयमुनि मेरा दूसरा रामप्रसाद है।'

ये मेरे जीवन का परम सौभाग्य रहा कि मुझे प्रारम्भ से ही पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म.सा. की चरण-शरण मिली। मैं कोई अधिक शिक्षित या ज्ञान-दृष्टि-सम्पन्न श्रावक नहीं हूँ, केवल शबरी की भक्ति को ही अपना आदर्श मानकर गुरुदेव के प्रति सदा समर्पित रहा हूँ। मैं, मेरी धर्मपत्नी श्रीमती मूर्ति देवी, दोनों सुपुत्र चिरं सुरेश जैन, राजकुमार जैन एवं तीनों सुपुत्रियों के परिवार प्रत्येक कार्यक्रम का श्री गणेश गुरुदेव के नाम-ग्रहण एवं मंगलमय आशीर्वाद लेकर ही सम्पन्न करने वाले हैं। मेरे पास जो कुछ है, सब कुछ उनका है—तन भी उनका, मन भी उनका, धन भी उनका, और तो और ये जीवन भी उनका ही दिया हुआ है।

गुरुदेव के महाप्रयाण के बाद मेरे जीवन में घोर निराशा एवं गहरी शून्यता भर गई थी। तब पूज्य श्री महास्थविर जी म. एवं पूज्य श्री संघ नायक जी म. ने मुझे जिस प्रकार संभाला, वह मेरे जीवन का सबसे मनोरम अध्याय है। मैं इन गुरुजनों के ऋण से कभी उऋण नहीं हो सकता।

इस जीवन-चरित के प्रकाशन में मैं पूज्य श्री महास्थविर जी म., पूज्य श्री संघनायक जी म., विद्वद् रत्न श्री जयमुनि जी म. एवं इस उपक्रम से सम्बद्ध रहे अन्य सभी पूज्य मुनिराजों का कोटि-कोटि आभार व्यक्त करता हूँ। 'भारतीय विद्या प्रकाशन' के प्रभारी मान्य श्री रमण कुमार जी जैन ने अपने सहयोगी स्टाफ के साथ दिनरात गहन परिश्रम करके इस ग्रन्थ को जो अति भव्य रूप प्रदान किया, एतदर्थ वे कोटिशः धन्यवाद के पात्र हैं।

पूज्य गुरुजनों की कृपा से मेरे जैसे तुच्छ सेवक को गुरुदेव के जीवन-चरित के प्रकाशन का सौभाग्य मिला, इस देवदुर्लभ वरदान के लिए किन शब्दों में गुरुदेवों का आभार-प्रदर्शन करूँ, मेरी वाणी मौन है। इस ग्रन्थ का नियमित रूप में, घर-घर में पठन, श्रवण, मनन एवं चिन्तन हो तथा इसके अध्ययन से कहीं, कभी, कोई एक और 'गुरु सुदर्शन' तैयार हो, इसी पावन पुनीत मंगल-कामना के साथ–

–शील कुमार जैन

कोठी नं. - 101, सैक्टर-17,
पंचकूला (हरियाणा)
फोन नं. : 0172-2562609
मोबाइल : 9814184443

सूर्योदय से सूर्यास्त तक

दूरं यान्तु निशाचराः शशिकराः क्लेशं लभन्तान्तराम्,
उद्योतं कलयन्तु हन्त न चिरं खद्योतका द्योतले।
ध्वान्तं ध्वंसमुपैतु हंस-निवहः पद्मकरे शाम्यतु,
प्राची-पर्वत-मौलि-मण्डन-मणिः सूर्यः समुज्जृम्भते ॥

पूर्व दिशा में उदयाचल में सूर्य देवता पधारे हैं, इसलिए सभी निशाचर भाग जाएँगे, चन्द्रमा की किरणें फीकी पड़ जाएँगी, जुगनू भी प्रकाश नहीं फैला सकेंगे तथा सारा अन्धेरा भी दूर भाग जाएगा। पर हाँ, कमलवन में राजहंसों को अवश्य ही शान्ति प्राप्त होगी।

आपने इस छन्द में सूर्य देवता की स्तुति सुनी। सूर्य समस्त ब्रह्माण्ड-मण्डल की उज्ज्वलतम मणि है, ज्योतिश्चक्र का केन्द्र है, पूर्व दिशा के माथे का सिन्दूर है। दिन, रात, पक्ष, मास, ॠतु, अयन, युग और कल्प-भेद का व्यवस्थापक है, चराचर सृष्टि का जीवन है, प्राण है और सर्वस्व है। ये अनन्त प्रकाश, ऊर्जा और उष्मा का एकमात्र स्त्रोत है। इसके उदय से सर्वत्र आशा और आस्था का संचार होता है और अस्त होने से सब जगह अंधेरा छा जाता है।

सूर्य के समान ही तेजस्वी, ओजस्वी, यशस्वी और वर्चस्वी थे हमारे आराध्य, संघशास्ता, शासन-प्रभावक, संघ-शिरोमणि, महामहिम, चरित-नायक, पूज्य गुरुदेव श्री श्री 1008 श्री सुदर्शन लाल जी म.सा.। वे अपने नाम से भी, काम से भी, द्रव्य से भी और भाव से भी 'सुदर्शन' थे। वे सूर्य देवता के उदय और अस्त को अपने विराट् व्यक्तित्व में समेटे हुए थे। उनका पावन जन्म 4 अप्रैल 1923 को सूर्योदय के समय हुआ

और निधन 25 अप्रैल 1999 को सूर्यास्त के समय। इसीलिए उनकी सम्पूर्ण जीवन-गाथा को भी हमने 'सूर्योदय से सूर्यास्त तक' इस नाम से अभिहित किया है।

एक दिवस के चार विभाग होते हैं, जिनको चार प्रहर भी कहते हैं। इन प्रहरों का विभाग-कर्ता भी सूर्य ही है। प्रथम प्रहर में सूर्य मन्द, द्वितीय में तीव्र, तृतीय में तीव्रतर और चतुर्थ में पुनः शान्त-शीतल हो जाता है। गुरुदेव का जीवन भी इसी प्रकार चारों प्रहरों का मंगल संगम-स्थल ही था। पाठकगण! इसके पीछे छिपे भावों को हृदयंगम करने का प्रयास करें और श्रद्धा, भक्ति एवं आस्था से गुरुदेव की जीवन-गंगा में नहाकर अपने आपको पवित्र करें।

प्रथम प्रहर

1. परिवार-परिचय

पूज्य गुरुदेव का जन्म हरियाणा प्रान्त के रोहतक नगर में हुआ। प्राचीन समय में दिल्ली के उत्तर-पश्चिम में रोहतक, महम, हाँसी, हिसार, भटिण्डा एवं फिरोजपुर तक के विस्तृत भूमि-भाग में जैनों का प्रभुत्व था। लेकिन कालक्रम से विदेशी आक्रान्ताओं के आक्रमण स्वरूप जैनों का अपने मूल स्थान से पलायन, धर्मान्तरण और समाजान्तरण हुआ। एक समय ऐसा भी था, जब रोहतक में अन्य कोई धर्म-स्थान या ठाकुरद्वारा आदि नहीं था, केवल स्थानकवासी जैनों का ही प्रचार-प्रसार था। 500 वर्ष पूर्व रोहतक शहर के बाबरा मोहल्ले में भावडों (ओसवाल जैनों) के लगभग 500 घर थे। भावड़ा शब्द ही बिगड़कर आज का 'बाबरा' बना है। भावड़े जैन कालान्तर में पंजाब आदि प्रदेशों में स्थानान्तरित हो गए। वर्तमान में हरियाणा के अधिकांश जिलों में जो जैन हैं, वे अग्रवाल जैन हैं। गुरुदेव का जन्म भी अग्रवाल जैन परिवार में हुआ। इस दृष्टि से हम इनके खानदान को विशुद्ध जैन नहीं कह सकते, क्योंकि मूलतः वह वैष्णव-धर्मानुयायी सनातनी खानदान था और उसमें ठाकुरद्वारे की मान्यता चली आती थी। आज भी उनके विवाह-सम्बन्ध प्रायः जैनेतर परिवारों में ही अधिक होते हैं।

गुरुदेव के पारिवारिक जन रोहतक आने से पूर्व पास ही मदीना गाँव में रहते थे। लगभग 250 वर्ष पूर्व एक सद्गृहस्थ ला. हरकिशन लाल जी मदीना से चलकर रोहतक के बाबरा मोहल्ले में आकर बसे। जिस गली में आकर वे रहे, वह गली भी धीरे-धीरे 'मदीन वाली गली' कहलाने लगी। उनकी वंश परम्परा इस प्रकार हैः

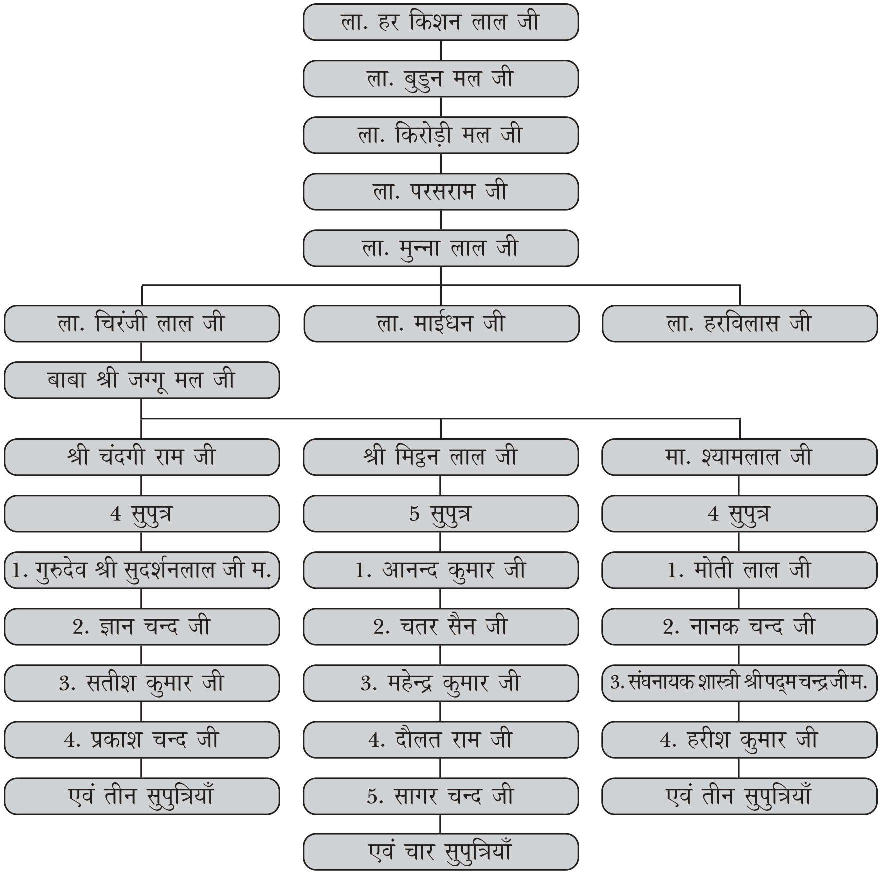

गुरुदेव के परिवार में सर्वप्रथम ला. बुड्डन मल जी रोहतक में जैन मुनियों के सम्पर्क में आए। श्री राजाराम जी, कृपाराम जी आदि तो विधिवत् सामायिक-संवर भी करते थे। गुरुदेव के बाबा श्री जग्गू मल जी तो जैन धर्म, जैन समाज और जैन संस्कारों में पूरी तरह रच-पच गए थे। उनका जीवन 'रघुवंश' में उल्लिखित रघुवंशियों के आदर्श का मूर्तिमान् अनुकरण ही था, यथा–**शैशवेऽभ्यस्त-विद्यानां, सन्तानाय गृहमेधिनाम्। वार्धक्ये मुनिवृत्तीनां, योगेनान्ते तनुत्याजाम्** अर्थात् बचपन में विद्या पढ़ी, केवल सन्तान प्राप्ति-हेतु ही यौवन में विवाह रचाया, प्रौढ़ आयु में संन्यास लिया और अन्त में समाधि-संथारा-पूर्वक देहत्याग किया। उनका जन्म सं. 1942 (सन् 1885) में रोहतक में हुआ। जन्मदाता पिता थे–

ला. चिरंजी लाल जी, परंतु ये अपने चाचा श्री माईधन जी के यहाँ गोद चले गए थे। यद्यपि उन की स्कूली पढ़ाई नगण्य थी, वे केवल अपना नाम ही लिख पाते थे, पर धर्मश्रद्धा उनमें कूट-कूटकर भरी थी। समाज-सेवा का शौक था। व्यवसाय के प्रति रुचि कम और धर्मध्यान व गुरुभक्ति में अधिक थी।

जैसा कि उस समय रिवाज था, बाबा जी की शादी मात्र दस वर्ष की अल्पायु में ही सोनीपत शहर में हो गई। पत्नी का नाम था– गिरनारी देवी। वे गुरु म. से बहुधा मजाक में कहा करते कि 'शादी के कई वर्ष बाद तक भी, मैं ये नहीं जानता था कि तेरी दादी को क्या कहूँ। किस नाम और किस रिश्ते से पुकारूँ, उनकी ससुराल में 'जग्गू' शब्द का व्यवहार नहीं होता था, उन्हें 'जीजा जगन्नाथ जी' के नाम से जाना और पुकारा जाता था।

बाबा जी में धन की लिप्सा नहीं थी। दुकान में थोड़ा-बहुत घी रख लेते थे। अपनी सन्तान को उन्होंने हर दृष्टि से योग्य और सुसंस्कृत बनाया। जब उनकी आयु कुल तीस वर्ष की थी, तो पत्नी का निधन हो गया। बच्चों की देखभाल की जिम्मेवारी उन्हीं पर आ गई। पुनर्विवाह के बहुत से प्रस्ताव आए, पर सब दबावों को नकारते हुए यावज्जीवन के लिए तीन स्कन्ध ग्रहण कर लिए– 1. ब्रह्मचर्य व्रत 2. कच्ची पक्की हरी वनस्पति का त्याग और 3. रात्रि चौविहार। उस समय में, इस इलाके में ऐसे कठोर व्रत विरले लोग ही ले पाते थे। उनके तीन सुपुत्र थे। बड़े श्री चन्दगीराम जी को एल.एल.बी. पास करा के वकील बनाया। मध्यम श्री मिट्ठन लाल जी को व्यापार में डाला और छोटे श्री शान लाल जी को सफल अध्यापक बनाया। एक पुत्र और था। नाम बाबूराम था। जो अत्यल्प आयु में ही काल कर गया था।

बाबा जी के मन में पूज्यपाद, चारित्र-चूड़ामणि, संयम-सुमेरु श्री मयाराम जी म.सा. के प्रति गहरी श्रद्धा थी। गुरु-धारणा भी उनके नाम को ही ली थी। गुरु-आज्ञा को प्रभु-आज्ञा मान कर शिरोधार्य करते

थे। श्री मयाराम जी म. जब आखिरी बार सं. 1969 में रोहतक पधारे थे, तो उनकी प्रेरणा से जीवन भर के लिए सट्टा न करने का नियम लिया था। अपने मनोभावों को वे इस तरह प्रकट करते थे, "मैं सोचने लगा, देख जग्गू! घरवाली तेरी गुजर गई। बच्चे अभी छोटे हैं, कामधन्धा विशेष नहीं है। यदि तू सट्टा करेगा, तो तेरे बच्चे रुल जाएँगे। ये सोचकर मैंने बाजार में जाकर सौदा काट दिया। उस समय बारह रुपये, बारह आने और कुछ पाई का नुक्सान दिया, पर आगे सदा-सदा के लिए घर बच गया, मन में बड़ी शान्ति हुई।"

बाबा जी ने जहां अपनी सन्तान को मातृत्व का प्यार दिया, वहीं धार्मिक संस्कार, शुद्ध आहार-व्यवहार और दृढ़ अनुशासन के रूप में अपने पैतृक दायित्व को भी निभाया। कुछेक घटनाएँ प्रस्तुत हैंः—

1. रोहतक शहर में चारित्र चूडामणि श्री मयाराम जी म. के लघुभ्राता श्री रामनाथ जी म. लम्बे समय तक स्थिरवास रहे। मध्याह्न में प्रवचन होता था। बाबाजी खुद प्रवचन में सामायिक करते तथा घर में सबको प्रवचन में उपस्थित होने का सख्त निर्देश दिया हुआ था। उनके तीनों पुत्र रोज सामायिक करते थे। एक दिन उन्होंने प्रवचन के मध्य, पीछे मुड़कर देखा कि मिट्ठन लाल नहीं आया। बड़े उद्विग्न हुए। चौराहे पर आए। देखा कि वह मित्रों के साथ ताश खेलने में मशगूल है। भरी महफिल में उसे कान पकड़ कर उठाया और डाँटा, 'मिट्ठन! तुझे शर्म नहीं आती? गुरु महाराज कथा कर रहे हैं और तू ताश खेल रहा है।' बस फिर क्या था, ताश की बाजी छोड़कर मिट्ठन सीधा कथा में उपस्थित हो गया।

2. बाबू चन्दगी राम जी वकील सा. को सीजन के शुरू में नई सब्जी खरीदकर खाने का शौक था। उन दिनों टमाटर भारतीय बाजार में नया ही आया था। वे खरीद लाए। बाबा जी को कच्ची-पक्की सब हरी का त्याग था, इसलिए वे टमाटर से परिचित नहीं थे। लाल रंग के फल को पहली बार घर में देखकर सोचने लगे, 'हो न हो, ये कोई गैर शाकाहारी पदार्थ है', फौरन वकील साहब को तलब करके उपालम्भ दिया, 'चन्दगी! तू तो

डूब गया। मैंने तुझे वकील क्या बनाया, अपने धर्म का ही सत्यानाश कर दिया। हमारा घर जैनों का है, इसमें कोई ऐसी-वैसी चीज नहीं चलेगी। बता तू ये लाल-लाल चीज क्या लाया है?' वकील साहब ने बहुत अनुनय की, बहुत विश्वास दिलाया, पर बाबा जी को पूरी तसल्ली तभी हुई, जब वे सब्जी-विक्रेता 'शिन्नू' के यहाँ जाकर खुद तसल्ली करके आए।

3. बाबा जी के तीनों बेटों की शादी हो चुकी थी। एक चूल्हे पर खाना बनता था। सम्पत्ति और खर्च भी सांझे थे। एक दिन पुत्रवधुओं में किसी बात पर जरा-सी खटपट हो गई। बाबा जी को भनक लग गई। सोचा-'अभी संभाल लूँ तो ठीक है, बाद में आपस का प्यार बना रहेगा।' आधी रात को तीनों पुत्रों को जगाया। जिनके पास जितना जेवर व नकद धन था, मंगवा लिया। सबको यथायोग्य बाँट दिया, खर्चे की व्यवस्था बना दी। (एक सोने का कण्ठा अपने प्रिय पोते-पूज्य गुरुदेव के लिए रखा।) सुबह जब सब के अलग-अलग चूल्हे जले, तभी पड़ोसियों को घर के बँटवारे का पता लगा। अशान्ति और कलह उन्हें बिल्कुल पसंद नहीं था।

4. बाबा जी रोहतक में गुरु-दर्शन-हेतु आने वाले भाई-बहनों की सेवा का भार संभालते थे। खर्चा ब्रादरी का होता था। प्यारे लाल हलवाई की दुकान से दर्शनार्थियों के लिए लड्डू, पूरी, कलौंजी व पेठे की सब्जी लाकर खिलाते। एक दिन कुछ सामान बच गया। उसे अपनी दुकान में ले जाकर हटड़ी (दीवार में बनी छोटी अलमारी) में रख दिया। गुरु म. उस समय चौथी कक्षा में पढ़ते थे। स्कूल से लौटकर अधिकतर समय दुकान पर बिताते थे। वे स्कूल से आए। भूख लगी थी। हटड़ी में सामान देखकर बिना किसी से पूछे खा गए। थोड़ी देर बाद बाबा जी आए। हटड़ी से सामान गायब देखकर कड़कती आवाज में पूछा-'लड्डू किसने खाए हैं?' गुरुदेव ने हामी भरी, तो उनके मुँह पर एक जोरदार तमाचा मारा। फिर बोले, 'यह सामान समाज के पैसों का लाया हुआ है, हमें इसे खाने का कोई हक नहीं है। यदि तुझे खाना था, तो मुझे बताता, मैं तेरे लिए अलग से खरीद कर ला देता'। ऐसा तमाचा उन्होंने गुरुदेव को पहली बार ही लगाया था। फिर उस सामान की यथोचित कीमत स्थानक के

दान-पात्र में डाली। आज के समाज के कर्णधार इस घटना से बहुत-कुछ सीख सकते हैं।

वैसे तो बाबा जी अध्यात्म-साधकों की श्रेणी में आते हैं, परन्तु कई बार वे अचूक भविष्यवाणी भी कर देते थे। उनमें कभी-कभार घर के किसी कुलदेवता (पितर) का शक्तिरूप में प्रवेश होता था और वे एक विलक्षण-सी समाधि में चले जाते थे (आजकल की भाषा में 'चौंकी आना')। एक बार ऐसी ही अवस्था में उन्होंने घर से चोरी हुए सामान का हू-ब-हू विवरण दे दिया था और वह रोहतक शहर से बाहर 'गोकर्ण' पर बरामद भी हो गया था।

पत्नी के निधन के बाद बाबा जी की भावना दीक्षा ग्रहण करने की थी, परन्तु इससे पहले वे परिवार के उत्तरदायित्व को पूर्ण कर लेना चाहते थे। उसके बाद जब तक वे घर में रहे, तो एक सन्त के रूप में अधिक, गृहस्थ के रूप में कम रहे। दीक्षा लेने के पीछे उनकी त्याग-भावना तो कारण थी ही, घर के दुखद भविष्य का स्पष्ट आभास भी उन्हें होने लगा था। उन्हीं के शब्दों में, "मुझे पता था कि मेरे जीते जी दो जवान बेटे मरेंगे, दो बहुएँ मरेंगी, एक पोता मरेगा। घर में रहूँगा तो सारी जिन्दगी रोना ही रोना रहेगा। साधु बन गया तो किसी से मोह नहीं रहेगा और आर्त्तध्यान से बच जाऊँगा।" अपने ज्येष्ठ पौत्र (हमारे गुरुदेव) का दीक्षा-मार्ग साफ करना भी उनका स्वयं की दीक्षा लेने का कारण बना। इन सभी प्रबल मनःस्थितियों के होने पर भी, उनको अपने घरवालों से आज्ञा नहीं मिल रही थी। एक बार वे ज्ञान-ध्यान सीखने हेतु लुधियाना में उपाध्याय श्री आत्मा राम जी म. के श्री चरणों में भी गए। साधु-प्रतिक्रमण भी सीखा, पर पुनः घर लौट आए। कुछ समय बाद उनके घर में कुछ घरेलू कारण से आपस की अनबन की स्थिति बनी। उनके गोद लेने वाले पिता श्री माईधन दास जी ने गोदनामा निरस्त कर दिया। ये दुर्घटना उनके लिए वरदान बन गई और वे द्रव्य-भाव सभी संयोगों से विमुक्त होकर बड़े गुरुदेव व्याख्यान-वाचस्पति श्री मदन लाल जी म. सा. के ज्येष्ठ शिष्य के रूप में दीक्षित हो गए। तब उनकी आयु थी 51 वर्ष, 6 मास और 3 दिन। स्थान

था – नारनौल शहर और तारीख थी – 23 फरवरी 1937, तदनुसार माघ शुदी त्रयोदशी, संवत् 1993, मंगलवार। उस समय नारनौल में सहज रूप से ही मनोहर सम्प्रदाय के श्री पथ्वी चन्द्र जी म. का आचार्यपद एवं पण्डित श्री हेमचन्द्र जी म. का दीक्षा-प्रसंग था। बाबा जी अपने घरवालों को सूचित किए बिना ही गुरु-चरणों में पहुंचे थे। तब दिल्ली चाँदनी चौक के प्रमुख श्रावक श्रीमान् गोकुल चन्द जी जैन 'नाहर' ने बड़े गुरुदेव को अर्ज की थी कि, 'ये वृद्ध हैं, इनको अच्छी तरह से संभालना, इनके परिवार को मैं समझा दूंगा।' दीक्षा लेने के पश्चात् उन्होंने 12 वर्ष तक विभिन्न ग्राम-नगरों में विचरण किया तथा अंतिम नौ वर्ष तक दिल्ली में स्थिरवासी रहे। उनकी तपस्या, सरलता, निश्छलता, स्नेहवृत्ति, निर्लेपता एवं कठोर संयम-भावना के शताधिक प्रसंग हैं। वे दिन भर में 7 द्रव्य से अधिक नहीं लगाते थे। प्रतिवर्ष अठाई तप करते थे। हाँसी चातुर्मास में तो 5 अठाइयां की। अधिकांश दवाइयों का त्याग रखते थे। अनेक प्रसंगों पर वचन-सिद्ध सिद्ध हुए। 10 मई 1959 को बारादरी, चाँदनी चौक दिल्ली में संथारापूर्वक दिवंगत हुए। अपने पीछे छोड़ गए अपनी दुग्ध-धवल कीर्ति, महान् तप व संयम की अमर कहानियां और अपनी भावनाओं के मूर्तिमान् रूप दो दीक्षित पोते—एक पूज्य गुरुदेव जी म., दूसरे श्री शास्त्री पद्म चन्द्र जी म.।

ऐसे महान् बाबा के महान् कुल में जन्मे थे हमारे आराध्य गुरुदेव। उनके असीम वात्सल्य के एकमात्र पात्र। उनकी भावनाओं, सम्भावनाओं और सपनों के साकार स्वरूप तथा उनके बुढ़ापे की लाठी। श्रीराम के अनुगामी लक्ष्मण जी की तरह उनके पीछे चलने वाले और भक्त श्रवण के समान उनके संयम-जीवन के आजीवन सहचर।

जितने महान् थे गुरुदेव के बाबा जी, उतने महान् थे गुरुदेव के पूज्य पिता बाबू चन्दगी राम जी सा. एवं मातुश्री श्रीमती सुन्दरी बाई। आइए, आप भी उनके जीवन की एक झलक लें।

बाबू चन्दगी राम जी बड़े धर्मनिष्ठ, सत्यप्रिय, सिद्धान्तवादी, परम विनीत और अतुलनीय प्रतिभा के धनी थे। उनकी स्मरण-शक्ति बड़े गजब की थी। चौथी कक्षा से ही वजीफा लेते रहे। चौथी, छठी, आठवीं, दसवीं, एफ.ए. और बी.ए. में हर बार प्रथम स्थान पर आए। एल.एल.बी. में भी प्रथम स्थान प्राप्त किया और तत्कालीन वाइसराय लार्ड विलिंगटन से दो स्वर्ण पदक प्राप्त किए। इतने मेधावी थे कि स्वयं बी.ए. में पढ़ते हुए भी बी.ए. के अन्य छात्रों को ट्यूशन पढ़ाते थे। श्री पृथ्वी चन्द्र जी म. के आचार्य-पद-समारोह पर प्रकाशित हुई एक लघुपुस्तिका में उनके साथ एम.ए. एल.एल.बी. पदवी लिखी हुई है। उन्हें नियम था कि कभी किसी झूठे मुकद्दमे की पैरवी नहीं करूँगा। जब वे लाहौर में बी.ए. की पढ़ाई कर रहे थे, तब गर्मी की छुट्टियों में रोहतक आए। वहाँ व्याख्यान-वाचस्पति गुरुदेव श्री मदन लाल जी म. विराजमान थे। उनसे जैन शास्त्र 'उत्तराध्ययन' पढ़ाने की विनति की। दिन में बाबू जी 'उत्तराध्ययन' की गाथाएँ याद कर लेते, रात को गुरुदेव उनका अर्थ समझा देते। एक घण्टे में 80 तक गाथाएँ वे याद कर लेते थे। गर्मी की छट्टियों में ही सारा उत्तराध्ययन सूत्र कण्ठस्थ कर लिया। आगमों को शीघ्र कण्ठस्थ करने की भावना से उन्होंने प्राकृत भाषा का 'अर्धमागधी-कोष' भी पढ़ा। उनकी इतनी गहरी धर्मरुचि देखकर ही तब बड़े गुरुदेव ने फरमाया था, 'बाबू जी, आपकी सन्तान में से कोई एक जरूर साधु बनेगा। वकील बनने के बाद कोर्ट से आकर वे रोज एक सामायिक करते। उसमें बड़ी साधु वन्दना, एक आनुपूर्वी और भृगुपुरोहित का अध्ययन जरूर पढ़ते। उनकी कुल चार शादियाँ हुई—पहली श्रीमती सुन्दरी देवी से। उनके निधन के बाद दूसरी झज्जर के प्रसिद्ध वकील श्री लछमन दास जी की सुपुत्री से। वे कुल ग्यारह महीने तक जीवित रहीं और पीहर में ही दिवंगत हुई। तीसरी शादी की नकली रस्म एक जाण्डी वृक्ष से की गई। इस बहम के निवारण के लिए कि कभी तीसरी पत्नी का भी देहान्त न हो जाए। चौथी शादी बख्तावरपुर के प्रसिद्ध वैद्य श्री घीसूमल जी की सुपुत्री चमेली देवी से हुई।

बाबू जी का स्वास्थ्य प्रायः ढीला रहता था। साथ ही उन्हें एक और चिन्ताजनक व्यसन भी लग गया था। रोहतक के प्रसिद्ध परिवार गांधरा वालों के साथ उठने बैठने से उन्हें भी सट्टा (मुजफ्फरनगर का बीजक का धन्धा) करने का शौक लग गया था। वकालत में जितना कमाते, सब इसी की भेंट चढ़ा देते। बाबा जी ने इस आदत को छुड़ाने की बहुत कोशिश की। कई बार विरोध-स्वरूप पचौले तक भी किए, पर सफल नहीं हो पाए। बाबू जी की इच्छा हमारे गुरुदेव को जज बनाने की थी, यद्यपि वे स्वयं जानबूझकर जज नहीं बने। उन्होंने न्यायपालिका की परीक्षा भी दी थी, पर यही सोचकर उत्तर-पुस्तिका में सब उत्तर काट दिए कि जज बन जाने पर रिश्वत लेनी पड़ेगी और मृत्यु-दण्ड देना पड़ेगा। वे अपने पूज्य पिताजी एवं सुपुत्र (गुरुदेव) की दीक्षा पर उपस्थित नहीं हुए, क्योंकि उनका ख्याल था कि हमसे दीक्षा देखी नहीं जाएगी। यद्यपि दोनों ही दीक्षाओं का सारा खर्च उन्होंने मनीआर्डर से भिजवा दिया था। जब गुरुदेव ने अपनी दीक्षा के भाव उनके समक्ष प्रकट किए, तो बड़े प्रसन्न मन से उनका समर्थन और उत्साह-वर्धन किया। ये भी कहा कि 'तेरी दीक्षा के समक्ष मेरे ये सोने के तगमे तुच्छ हैं।' दुर्भाग्य से वे 48 वर्ष की अल्पायु में ही इस असार संसार से विदा हो गए।

पूज्य गुरुदेव की माता जी का नाम सुन्दरी देवी था। वे दिल्ली के पास नजफगढ़ की थी। इनके दादा सेठ गंगाराम जी और पिता श्री किरोड़ीमल जी थे। इनके एक भाई व तीन बहनें और थी। भाई नन्हूराम शादी के बाद रोगग्रस्त होकर सपत्नीक ही काल-कवलित हो गया, इसलिए श्री किरोड़ीमल जी का वंश आगे नहीं चल सका। हाँ, उनके बड़े भाई श्री छोटूराम जी के पारिवारिक-जन अब भी नजफगढ़ में आर्यसमाज वाली गली में रहते हैं। सुन्दरी देवी का स्वभाव बड़ा सुन्दर था। एक कट्टर सनातन परिवार की कन्या होकर भी वह शीघ्र ही जैन संस्कारों में ढल गई। सन्तों को निर्दोष आहार-पानी देने की भावना बहुत रखती थी। पूज्यपाद, दृढ़ अनुशास्ता, गणावच्छेदक श्री छोटे लाल जी म. उनकी विवेकशीलता की चर्चा करते हुए फरमाया करते कि एक बार उनके घर

सन्त गोचरी को पधारे। सुन्दरी बाई भोजन बना रही थी। चूंघट निकाले हुए थी। बाबा जग्गूमल जी गोचरी की दलाली में थे। आहार बहराने लगे, तो सुन्दरी बाई ने अंगुलि हिलाकर मना करना चाहा। सन्त समझ गए। जग्गूमल जी को एक तरफ किया। तब सुन्दरी बाई ने बताया कि 'आहार के पात्र से पकौड़ों की प्लेट छू रही है और प्लेट जलती हुई लकड़ी से छू रही है, इसलिए संघट्टा है।' उनकी इस जागरूकता एवं विवेक-सम्पन्नता से सन्त बड़े प्रभावित हुए।

सुन्दरी बाई जी बड़ी शान्तिप्रिय और सहिष्णु प्रकृति की थी। कलह, क्लेश और उपालम्भ तो मानो उन्हें आता ही नहीं था। जब गुरुदेव दो-तीन वर्ष के शिशु थे, तब एक बार गली में किसी ने उनको पीट दिया। रोते-रोते घर आए, तो माँ ने उन्हें अपनी गोद में समेटकर चुप कर दिया। ये भी देखने बाहर नहीं आई कि मेरे बेटे को किसने मारा है। उनके इस मधुर स्वभाव से घर के बुजुर्ग बड़े खुश थे। पर वह देवी अधिक समय तक जीवित न रह सकी। द्वितीय प्रसूति में एक शिशु को जन्म दिया, फिर कुछ ही दिन में परलोक सिधार गई। तीन दिन बाद वह शिशु भी विदा हो गया। पीछे रह गए निर्मातृक पूज्य गुरुदेव! उस समय उनकी आयु कुल चार वर्ष की थी।

2. घायल बचपन

जब गुरुदेव का जन्म हुआ, तो पूरे परिवार में हर प्रकार की सुख-समृद्धि थी। बाबा जी की समाज में प्रचुर प्रतिष्ठा, पिता जी की कोर्ट से खासी आमदनी, साधु-सन्तों की अपार कृपा और नियमित धर्म-आराधना। शिक्षा की दृष्टि से भी परिवार की सारे इलाके में छाप थी। ऐसे मंगल-सुमंगल समय में बैशाख बदी तृतीया संवत् 1980, तदनुसार 4 अप्रैल 1923, बुधवार, प्रातः सूर्योदय के समय, लगभग 6.15 बजे, मीन लगन में, बाबू चन्दगी राम जी की धर्मसंगिनी श्रीमती सुन्दरी देवी की कुक्षि से एक धर्म-सूर्य का उदय हुआ। बाबा जग्गूमल जी की तीसरी पीढ़ी में खिले प्रथम पुष्प को ईश्वर-कृपा मानकर सबने शिशु को 'ईश्वर' नाम दिया। सवा महीने का होते ही इन्हें बाबा जी स्थानक में लाने लगे। जब वे घुटनों के बल (गूडलिया) चलने लायक हुए, तो स्थानक में सन्तों के पात्र से नीचे डुला हुआ पानी चाटने लगे। ऐसे लघु शिशु की 'चप-चप' की ध्वनि सुनकर सन्त हँस कर कहते, 'जग्गू! तेरे पोते ने सन्तों का पानी पीया है, इसलिए यह बड़ा होकर साधु बनेगा।' **'ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति'**, अर्थात् तपः पूत ऋषि जो मुंह से निकाल देते हैं, वह पत्थर की लकीर हो जाती है।

गुरुदेव को अपनी मातुश्री के सम्बन्ध में केवल दो घटनाएं याद थी। उनका वे अपने प्रवचनों में अनेक बार भाव-विभोर होकर उल्लेख करते थे। उन्हीं के शब्दों में—

1. "जब मैं कुल तीन साल का था, तो माँ की गोद में ठाकुर द्वारे में गया। पुजारी ने हम दोनों को प्रसाद का एक-एक पेड़ा दिया। आते समय मेरे हाथ से पेड़ा छूटकर नाली में गिर गया। मैं रोने लगा तो माँ ने

अपना पेड़ा मुझे दे दिया"। मातृत्व का यह मधुर प्रसाद गुरुदेव की स्मृति का प्रथम समुल्लास था।

2. "मैं उस समय चार साल का था। जब मेरे छोटे भाई का जन्म हुआ। माँ की हालत गम्भीर थी। घर की एक अंधेरी कोठड़ी में माँ और बच्चा दोनों थे। द्वार पर पर्दा लटकाया हुआ था। बाहर एक हारा (आग का बड़ा चूल्हा) था, जिसमें राई और अजवायन डालकर आगंतुक को भीतर जाने दिया जाता था। ये उस समय की निर्जीवीकरण की विधि थी। मैंने भी वैसा ही किया। भीतर गया। माँ सुन्दरी बहुत ही सुन्दर लग रही थी। देह-दृष्टि से दुर्बल थी, पर नयनों में प्रेम का नूर भरा था। अपने हाथों से शिशु को उठाकर मेरे हाथों में दिया और बोली– 'ये तेरा छोटा भाई है।' भाई बहुत सुन्दर था। कुछ देर बाद मैं बाहर आ गया।" जब गुरुदेव की माँ का देहान्त हुआ, तो उनको पड़ौसियों के घर भेज दिया गया था। इसलिए उस समय के प्रसंग के विषय में गुरुदेव को कुछ याद नहीं था।

माँ की असामयिक मृत्यु से गुरुदेव का बचपन बुरी तरह घायल हो गया। अब बालक के लिए घर में बचा ही क्या था? लेकिन ये पीड़ाएँ ही शायद महानता के बीज अपने में समेटे हुए होती हैं।

मैंने पीड़ा की डाली पर फूल खिलाना सीखा है,
रो-रोकर के भी जीवन में गीत बनाना सीखा है।
उसका जीवन अमृत-घट है, उसकी दुनिया रस-भीनी,
जिसने आंसू पीकर मन की प्यास बुझाना सीखा है ॥

गुरुदेव प्रारम्भ से ही गम्भीर प्रकृति के थे। चपलता उनके स्वभाव में नहीं थी। माँ की मृत्यु ने जीवन को और संजीदा बना दिया। पिता जी के पुनर्विवाहों ने भले ही उनके जीवन में अस्थायी बहार ला दी हो, पर मन में एक गहरी उदासी और रिक्तता स्थायी रूप से बस गई थी। फिर भी गुरुदेव बहुधा हँस कर बताते थे कि मैं उन विरले सौभाग्यशालियों में हूँ, जिन्होंने अपने पिता जी की शादी Attend की है। बाबा जी ने उनके सकल भरण-पोषण, संवर्धन और शिक्षण का भार अपने कन्धों

पर ले लिया। उनके दुलार में गुरुदेव को माता, पिता और बाबा इन तीनों सम्बन्धों का सुख मिलता था। बाबा जी ने तो उन्हें 'ईश्वर' की बजाय 'सख-दर्शन' कहना शुरू कर दिया था, क्योंकि उन्हें इनके दर्शन में 'सुख' मिलता था। पर्यूषणों में जब ये अर्जुनमाली की जीवन-गाथा में सुदर्शन श्रावक की धर्म-दृढ़ता सुनकर खुशी से झूमने लगते, तो वहाँ विराजित सन्त-विशेषतः पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. उनको 'सुदर्शन' कहने लगे। वैसे विद्यालय के कई शौकीन लड़के उनको 'दुख-दर्शन' या 'सूखे-दर्शन' भी कह देते थे, क्योंकि गुरुदेव के पास उनको खिलाने-पिलाने के लिए कुछ अधिक नहीं होता था। 'सुदर्शन' यह स्थायी नाम तो उन्हें वाचस्पति गुरुदेव ने ही दिया– सम्यग्दर्शन-सुदर्शन को आधार बनाकर।

गुरुदेव की स्कूली शिक्षा अनियमित रही। पहली, दूसरी कक्षा रोहतक, तीसरी दिल्ली, चौथी, पांचवी फिर रोहतक, छठी दिल्ली, सातवीं रोहतक तथा आठवीं, नौवीं, दसवीं फिर दिल्ली में पूर्ण की। इस कारण वे तीव्र मेधा के धनी होते हुए भी कुछ विषयों में असाधारण योग्यता प्राप्त नहीं कर पाए। अपने बाबू जी की तीव्र इच्छा होते हुए भी उर्दू-फारसी पर पूर्ण अधिकार नहीं कर सके। गणित, इतिहास, भूगोल, अंग्रेजी उनके प्रिय विषय थे। अर्थशास्त्र पर तो इतना गजब का अधिकार था कि दसवीं में पढ़ते हुए ही Economics Made Easy नामक पुस्तक लिखी। वह मा. शाम लाल जी के नाम से छपी भी, और खूब बिकी भी।

गुरुदेव का कुछ प्रारम्भिक अध्ययन जैन स्कूल रोहतक में हुआ। वहाँ धर्म की कक्षा भी ली जाती थी। मा. रविन्द्र कुमार जी (अथवा देवेन्द्र कुमार जी) और शिवराम जी बच्चों को भजन, नाटक सिखाते। 'दशलक्षण' के दिनों में वे रथयात्रा में भाग लेते और समय-समय पर 'बड़ी पूजा' में भी। इसी सिलसिले में कई बार ब्रह्मचारी शीतल प्रसाद जी के भी दर्शन किए। गोहाना, पानीपत आदि जाकर स्कूली कार्यक्रम दिए। 'बेमेल विवाह' के विरुद्ध नाटक, एकांकी भी प्रदर्शित किए। रोहतक के 'वैश्य स्कूल' और दिल्ली के 'महावीर जैन स्कूल' में शिक्षा प्राप्त की। शिक्षा और पढ़ाई के अतिरिक्त उनका और कोई अधिक शौक नहीं था। पान,

ताश, बीड़ी, सिग्रेट, सिनेमा, थियेटर की ओर कभी ध्यान नहीं गया। जब रोहतक में रामलीलाएँ होती, तो उनमें देशभक्ति या संस्कृति से जुड़े नाटक ही देखने जाते। 'श्रवण भक्त,' 'सत्यवादी हरिश्चन्द्र', 'वीर हकीकत राय' आदि नाटकों को देखकर प्रेरणा और प्रसन्नता दोनों हासिल करते। कई बार भावुक होकर रोने भी लगते। एक बार वृन्दावन से एक रास-मण्डली आई। उसमें एक युवक बड़ा अच्छा अभिनय करता था। गुरुदेव उसके पीछे-पीछे घूमते और उसमें सच्चे राम की छवि देखते। पर एक बार उसे बीड़ी पीते हुए देख लिया, तो उसके प्रति रही हुई भावना टूट गई। उनकी निस्पृहता का कितना सबल प्रमाण है कि वे कितने ही साल दिल्ली में रहे, पर कभी 'कुतुब मीनार' देखने नहीं गए। 'लाल किला' भी बाहर से ही देखा, भीतर से नहीं। चाँदनी चौंक स्थानक के नीचे से प्रतिवर्ष निकलने वाला 26 जनवरी का जलूस भी कभी नहीं देखा।

गुरुदेव का स्वास्थ्य प्रारम्भ से ही अच्छा नहीं रहा। इसका कारण आनुवंशिक भी हो सकता है। पिता जी प्रायः अस्वस्थ रहते थे। गुरुदेव को क्रीड़ा या व्यायाम की रुचि नहीं थी। खुराक भी नियमित और पोषक नहीं थी। घर में प्यार की कमी से मन पर चिन्ताओं का भार भी रहता था। उनको अनारदाना और आमपापड़ा खाने का अधिक शौक था। इससे भी पेट ठीक नहीं रहता था तथा पाचन-शक्ति भी प्रायः मन्द होने से सेहत उभर नहीं पाई। फिर भी बुद्धि की तीव्रता के कारण वे स्कूल में अपनी कक्षा के 'मोनीटर' बनते रहे। सब बच्चों की कापियाँ जाँचते। सैनी परिवार का एक लड़का सेहत में काफी तगड़ा था। उसके सवालों को वे काट देते। वह बाहर आकर उन्हें पीटता। ये क्रम रोज का बन गया। एक दिन दोनों में ये समझौता हुआ कि गुरुदेव उसकी कापी स्कूल के बाहर ही ठीक कर देते, बदले में वह उनको आमपापड़ा खिला देता। पिटाई से भी बचाव हो गया, उसकी कापी भी सुरक्षित रहने लगी तथा मास्टर जी के डण्डों से भी वह बच गया। वही लड़का जब S.H.O. के रूप में सन् 60 में रोहतक में गुरुदेव को मिला, तो गुरु म. ने उसे पहचान लिया और पुरानी खट्टी-मीठी यादों से उसे सराबोर कर दिया।

गुरुदेव का धार्मिक विकास पूज्य बाबा जी के कारण तो हुआ ही, रोहतक में दीर्घकाल से स्थिरवासी मुनिराजों का संसर्ग भी इसमें वरदान बना। पारिवारिक परम्परा के अनुरूप वे प्रतिदिन ठाकुरद्वारा और शिवालय जाते तथा मंगलवार का प्रसाद लेने मन्दिर में जाते। पुजारी भी उनके लिए प्रसाद सुरक्षित बचाकर रखता। वह सामुद्रिक शास्त्र का भी जानकार था। गुरुदेव के शरीर-लक्षणों को देखकर उसने कई बातें बताई, जो बाद में सत्य हुई। एक अन्य ज्योतिषी ने गुरुदेव का हाथ व जन्मपत्री देखकर उसमें 'राजयोग' बताया कि घर में रहेगा तो ऊंचा पद मिलेगा, घर छोड़ा, तो ऊँचा साधु बनेगा। जैन स्कूल में दिगम्बरत्व के विचार मिले। पं. शिवराम का सिखाया हुआ 15 कड़ी का भजन 'वे गुरु मेरे उर बसे जे भव-जलधि जहाज' (पं. भूधर कृत) उनको अन्त तक याद था और बहुधा प्रवचन में भी सुनाते रहते। पूज्य पिता श्री चन्दगी राम जी की दृढ़ सामायिक-निष्ठा देखकर भी धर्म-क्रियाओं में दृढ़ता आई। उनकी लाइब्रेरी में कानूनी पुस्तकों के अतिरिक्त कई आगम और प्राकृत व अंग्रेजी के कई कोष भी थे। वे समय-समय पर आगमों का अर्थ गुरुदेव को सुनाते रहते थे।

पूज्य श्री जवाहर लाल जी म.सा. जब सन् 1932 में राजस्थान से रोहतक, दिल्ली, यू.पी. में पधारे, तब बाबा जी के कहने पर गुरुदेव ने उनसे 'समकित' (गुरु-धारणा) ली। तत्पश्चात् स्थानक में कई-कई सामायिकें लेकर बच्चों की टोली के साथ बैठ जाते। कई बार ऊब जाते, तो घड़ी की सूई आगे सरका के सामायिक पूरी कर लेते। विराजित सन्त उन्हें 'अरे कुबुद्धि' कहकर डाँटते। मा. बनारसीदास जी के भाई मा. जवाहरलाल जी बालकों में धर्मरुचि को प्रोत्साहित करने हेतु ईनाम देते। सामायिक के पाठ (अर्थ-सहित), पच्चीस बोल आदि शीघ्र याद करके गुरुदेव ने कई ईनाम जीते। आयु बढ़ने के साथ-साथ गुरुदेव एक आसन से कई-कई सामायिकें करने के अभ्यासी हो गए।

गुरुदेव के जीवन में जो वात्सल्य-आपूर्ति का अभाव था, उसकी पूर्ति उन्होंने धर्मश्रद्धा और सन्त-सेवा से करनी शुरू की। घर पर जाना प्रायः बन्द था। खाना भी बाबा जी की दुकान पर खाते। वहीं रहते और वहीं

सोते। कभी बीमार हो जाते, तो भी वहीं लेटे रहते। बाबा जी को कहीं जाना होता। तो दरवाजा बन्द करके चले जाते और वे भीतर अकेले में अपनी पीड़ाओं और दर्दो को सहलाते रहते।

पर-कटे पंछी के मन की वेदना-सा, आज यह लाचार जीवन रह गया,
गीत क्या हैं, खून आंसू के बहे हैं, खोलकर गम के फसाने रख दिए हैं।
दर्द सदियों का समेटे धड़कनों में, सिसकियों पर सिसकियां भरते रहे हैं,
गीत पीड़ा के लिखें हैं जिन्दगी-भर, जिन्दगी का नाम 'पीड़ा' रह गया ॥

बाबा जी को गुरुदेव से असीम ममता और स्नेह था। गुरुदेव को दो-तीन बार चार-चार महीने तक टाइफाइड बुखार रहा। बाबा जी, प्राचीन मान्यतानुसार, इनके सिरहाने कुछ चीजें रखते और आधी रात को श्मशानों में डालकर आते। उन्हें डर नहीं लगता था। एक बार रोहतक में साम्प्रदायिक दंगे हुए। मस्जिद के आगे हिन्दुओं का जुलूस निकल रहा था। बैण्ड बज रहे थे। तभी मुसलमानों ने पथराव किया। साम्प्रदायिक उन्माद बढ़ गया। एक दर्जी मारा गया। उसकी शहादत के जलूस पर पुलिस ने गोलियाँ चलाई। गुरुदेव भी भीड़ में थे। किसी तरह बचकर अपने परम मित्र हंसराज के घर जा छिपे। गोलियों की बारिश के बीच बाबा जी अपने पोते की तलाश में इधर-उधर भटकते फिरते रहे। रात हो गई, वे हंसराज के घर मिले। बाबा जी ने उनसे काफी गिला-शिकवा किया कि 'मैं तेरे मोह में मरा जा रहा हूँ और तू यहाँ छिपा बैठा है।'

गुरुदेव की धर्म-धारा को और अधिक अन्तर्मुखी बनाने में इस परममित्र हंसराज का भी कुछ-कुछ हाथ है। इन दोनों का हृदय अभिन्न था। दोनों ने इकट्ठे ही साधु बनने की ठानी थी, पर हंसराज के घरवालों ने उसका विवाह कर दिया। गुरुदेव के परिणाम भी तब कुछ मन्द पड़ गए। संसार बसाने की क्षणिक भावना भाई, पर अन्तर्मन में गहरे वैराग्य का अंकुर फूट चुका था। एक बार हंसराज यमुना में स्नान करने गया और वहीं डूब कर मर गया। उसकी इस अकस्मात् मृत्यु से गुरुदेव सन्न रह गए। उसके परिवार वालों का, विशेषकर उसकी पत्नी का विलाप गुरुदेव

सह नहीं सके। उन्होंने मित्र-पत्नी को धैर्य तो बहुत दिया, पर खुद भीतर ही भीतर संसार से अधीर हो गए। मृत्यु की भीषणता और जीवन की क्षण-भगुरता का गहरा अहसास उस रोज जिन्दगी में पहली बार हुआ। सारी रात उसकी चिता के पास खड़े रहे। और उसी रात ये दढ़ संकल्प ले लिया कि अब दीक्षा अवश्य लूँगा। गौतम बुद्ध ने भी रोग, वार्धक्य और मृत्यु के दर्शन करके निष्क्रमण का पथ अपनाया था और गुरुदेव ने भी।

रोहतक व दिल्ली में विराजित सन्तों के दर्शन, प्रवचन-श्रवण व चर्चा-वार्ता ने गुरुदेव की वैराग्य-भावना को और अधिक पुष्टि प्रदान की। पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. की सिंह-गर्जनाएँ उन्होंने खूब सुनी। इनका आसन अग्रिम पंक्ति में बिछता था। एक दिन इन्हें कुछ देर हो गई। एक भाई ने इनका आसन हटाकर अपना बिछाना चाहा, तो श्री प्रेमचन्द जी म. ने बीच में ही लताड़ लगाई, 'ओए, ये आसन मत हटा। ये जग्गू के पोते का है'। और वह चुपचाप हट लिया। तभी गुरुदेव पहुंच गए। पूज्य श्री अमीलाल जी म. की लम्बी-लम्बी कहानियां, योगिराज श्री राम जी लाल जी म. के भजन तथा तपस्वी श्री निहाल चन्द जी म. की सरल जीवन-शैली गुरुदेव को बहुत भाती थी। तपस्वी निहाल चन्द्र जी म. तो गुरुदेव से इतने खुश थे कि दवाई भी उन्हीं के हाथ से लेते। सेवा-रत मुनिराज भी उनके हाथ से ही दवाई दिलाते। यदि कोई सन्त अपनी ओर से कोई गोली आदि दे देते, तो एक तरफ जाकर थूक आते। पर जब गुरुदेव आकर देते, तो सहर्ष ले लेते। पूज्य श्री शांति स्वरूप जी म. के जीवन-प्रसंग में ऐसा कोई उल्लेख है कि एक बार उन्होंने गुरुदेव जी म. को किसी ओघड़ बाबा के तांत्रिक प्रकोप से बचाया था, पर गुरुदेव जी म. ने इस वक्तव्य में कोई सत्यता नहीं मानी। हां, अपने मन का दुःख-दर्द कभी कभार उनको कह देते थे, तो उनसे आश्वासन या 'लोगस्स' का पाठ करने की प्रेरणा मिल जाती थी।

सातवीं पास करने के पश्चात् गुरुदेव अगली पढ़ाई के लिए दिल्ली गए। वहाँ चाचा मास्टर शामलाल जी की शीतल छत्रछाया में गुरुदेव का जीवन पुनः लहलहाने लगा। अपनी चाची कलावती की प्यार-भरी गोद

गुरुदेव को मां से भी अधिक ममतामयी लगी। अच्छा स्कूल, चाँदनी चौंक बारादरी में मुनिराजों का सतत सम्पर्क, मा. जी का मार्ग-दर्शन, परीक्षा में ऊँचे अंक, ये सब सुखी जीवन के लिए पर्याप्त था। इन सबके बीच सन् 1937 में बाबा जी की अचानक दीक्षा हो गई। उसने गुरुदेव की ममता के सभी सूत्रों को एकदम छिन्न-भिन्न कर दिया। ये एकदम सकते में आ गए। दीक्षा के बाद वाचस्पति गुरुदेव रिवाड़ी पधारे। मास्टर जी एवं गुरुदेव जी दर्शन हेतु रिवाड़ी पहुँचे। गुरुदेव तो बस बाबा जी के चरण पकड़ कर रोने लगे। रोते रहे, रोते रहे। एक ही सवाल बार-बार पछते कि 'आप मुझे छोड़कर साधु क्यों बने? जब घण्टा भर हो गया तो वाचस्पति गुरुदेव ने बाबा जी म. को संकेत किया कि 'अब इसे चुप भी करो।' बाबा जी म. ने एक ही बात कही "मैंने दीक्षा तेरे लिए ही ली है। अब तेरा रास्ता खुल गया है। घर में मेरे अलावा और कोई तुझे रोकने वाला नहीं था। अब मैं साधु बन गया हूँ, तो तू भी अपनी तैयारी कर"। ये शब्द गुरुदेव के लिए चिन्तामणि बन गए। आँसू तो थमे ही, अंधेरे में रोशनी भी जगमगाने लगी। दिशाएँ स्पष्ट हो गई, चिंगारी ज्वाला बन गई और विचार संकल्प बन गया। रिवाड़ी जाना गंगा-स्नान बन गया, जिसमें से परम पवित्र होकर घर लौटे।

इसी दौरान जैन-स्कूल के छात्रों का एक समूह बिरला मन्दिर, दिल्ली में गांधी जी के दर्शन करने गया। गुरुदेव भी उसमें थे। सब छात्र पंक्तिबद्ध होकर दर्शन कर रहे थे। गांधी जी चर्खा कात रहे थे। गुरुदेव के मन में विचार आया कि यदि गांधी जी मेरे सिर पर हाथ धर दें, तो मेरी भावना सफल हो जाए। जैसे ही गुरुदेव का नम्बर आया, उसी समय गांधी जी के चर्खे का तार टूट गया। गुरुदेव ने उनको प्रणाम किया। गांधी जी ने मुख उठाकर गुरुदेव की ओर देखा और सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। गुरुदेव निहाल हो गए।

चाची कलावती गुरुदेव के प्रति काफी दयाशील थी, पर उनसे घर के काम भी पूरी तरह कराती थी। कई बार गुरुदेव गेहूँ पिसवाकर कनस्तर सिर पर रखकर लाते। चाची कनस्तर नीचे उतरवाती। सिर का स्पर्श गर्म

देखकर चिन्ता करती कि कहीं इसे बुखार तो नहीं हो गया। उन दिनों कलावती जी के भाई सीताराम जी गोयल भी वहीं रहकर पढ़ते थे। भाई के प्रति बहन का अधिक लगाव स्वाभाविक था, इसलिए उनको गृहकार्यों से मुक्त रखा जाता था और पढ़ाई का समय अधिक दिया जाता था। (सीताराम जी गोयल बाद में Voice of India प्रकाशन संस्थान के सुप्रसिद्ध लेखक बने।) घर के कामों में अधिक उलझने पर पढ़ाई बाधित होने का खतरा रहता है, अतः गुरुदेव ने उससे बच निकलने का भी खास उपाय ढूंढ निकाला था। चाची कलावती अपने पुत्र हरीश को खिलाने के लिए गुरुदेव को दे देती। अधिक देर हो जाती तो गुरुदेव बच्चे को चूंटी भर देते। बच्चा रोता तो मां संभाल लेती और गुरुदेव को छुट्टी मिल जाती। छुट्टियाँ होने पर गुरुदेव रोहतक आ जाते। पिता जी की साइकिल चलाते। एक दो पंक्चर भी किए। बाबू जी की डाँट भी खाई। घड़ी में चाबी देने लगे, तो फैनर टूट गया। पैन से लिखने लगे, तो निब टूट गई। इस तरह की छिटपुट घटनाएँ गुरुदेव अपने श्रीमुख से सुनाते, तो अद्‍भुत आनन्द आता था।

अपनी वैराग्य-भावना को अंतिम रूप देने के लिए गुरुदेव ने दिल्ली बारादरी को अपना मुख्य केन्द्र बना लिया। वहाँ पर बड़े-बड़े त्यागी, तपस्वी, प्रावचनिक मुनिराज पधारते। गुरुदेव उनका भरपूर लाभ लेते। तपस्वी श्री रोशन लाल जी म. की संयम-साधना, जीवन-चर्या एवं आगमिक दृष्टि गुरुदेव की नजरों में बहुत अच्छी लगती। परस्पर अंग्रेजी भाषा में भी वार्तालाप करते। जैन-धर्म-दिवाकर श्री चौथमल जी म. एवं आचार्य श्री खूबचन्द्र जी म. की सेवा भी खूब की। जैन-दिवाकर श्री चौथमल जी म. की धर्मसभा में गुरुदेव का आसन अग्रिम पंक्ति में होता था। आ. श्री खूबचन्द जी म. के चरणों में तो वे घंटों बैठे रहते। बड़ी आत्मशान्ति मिलती थी। गुरुदेव के वैराग्यपूर्ण गंभीर जीवन को देखकर एक दिन श्री खूबचन्द जी म. ने कहा, 'सुदर्शन, हमारा शिष्य बन जा'। गुरुदेव ने विनम्रभाव से कहा, "दीक्षा तो मैं वहीं लूंगा, जहां मेरे बाबा जी हैं, पर आपके प्रति भी मेरी श्रद्धा और धर्मानुराग पूरा है"। दिन का अधिकांश

समय 10-11-12 सामायिकें करने में, स्वाध्याय और आत्म-चिन्तन में व्यतीत होता। पर्युषणों में पौषध तो वे बचपन से ही करते थे। जब वे कल आठ वर्ष के थे तो संवत्सरी से पहले दिन उनको भिरड़ों ने काट लिया। मन में संवत्सरी के पौषध की ही चिन्ता थी। नवकार मंत्र पढ़ने लगे। उसके प्रभाव से सोजिश नहीं आई। आराम से पौषध हुआ, पर पारणे वाले दिन फिर सोजिश हो गई। अन्य प्रसंगों पर भी पौषध करते। वे पढ़ी हुई स्वाध्याय-सामग्री में से लिखकर नोट्स भी तैयार करते थे।

धर्म-क्रियाओं पर गुरुदेव को अगाध आस्था थी। दसवीं कक्षा की परीक्षाओं में, उनके विचारानुसार, एक पेपर काफी खराब हो गया था। मन बड़ा उदास था। उस उदासी को दूर करने के लिए उनके पास एक ही उपाय था– नवकार मंत्र का भावपूर्ण स्मरण। वे जाप में जुट गए। मन शान्त हुआ। शेष पेपर ठीक हो गए। और आश्चर्य ये कि उस 'खराब' पेपर में भी पूरे अंक मिले। अपनी श्रद्धानुसार उन्होंने ये नवकार मंत्र के जाप का परिणाम माना। मैट्रिक पास करके गुरुदेव रोहतक लौट आए। आगे पढ़ने का मन नहीं था। पिता जी की इच्छा उनको जज बनाने की थी, पर गुरुदेव ने उनको अपना संकल्प बता दिया। सुनकर वे मौन रहे। एक दिन बाबू जी ने ये भी कहा, 'देख सुदर्शन, मैं तेरे लिए संयम-मार्ग, के पक्ष में हूँ, पर मुझे परिवार और समाज के व्यवहार को भी निभाना है, अतः ऊपर से मैं तुझे दीक्षा लेने से रोकूँगा, पर मन से नहीं। मुझे भृगुपुरोहित के अध्ययन से संयम की प्रेरणा मिलती है।' समय काटने के लिए गुरुदेव बाबू जी के साथ कोर्ट चले जाते। कुछ नक्शे आदि बनाकर अपना खर्च निकाल लेते। शादी के लिए कई स्थानों से पेशकश आई, पर इन्कार कर दिया। एक इच्छुक व्यक्ति तो संयोगवश गुरुदेव के पास ही आ गया और पूछने लगा कि 'वकील साहब का बेटा कैसा है'? गुरुदेव उसका आशय समझ गए। झट से उत्तर दिया कि "वो तो पागल है, दिन-भर मुंहपट्टी बांधे बैठा रहता है"। आगन्तुक चला गया। गुरुदेव बड़े प्रसन्न हुए कि चलो, बला टली।

उन्हीं दिनों पंजाब केसरी आ. श्री कांशीराम जी म. बम्बई जाते हुए रोहतक पधारे। सारे शहर में चहल-पहल थी। गुरुदेव भी उनकी आराधना करते। एक दिन वे कुछ घरों में दर्शन देने पधारे। रास्ते में गुरुदेव ने भी विनति की। साथ के सन्त ने मना किया, पर गुरुदेव को जग्गू मल जी का पोता जानकर घर पधारे और एक बासी परांठा और अचार लेकर गए। आचार्य श्री के प्रति गुरुदेव की श्रद्धा में और अभिवृद्धि हुई।

गुरुदेव के हृदय में समाज के प्रति भी पूरी कर्त्तव्यनिष्ठा थी। एक रोज वे अपनी दुकान पर बैठे थे। कोर्ट नहीं गए। बाबू जी कोर्ट में थे। उसी समय जैन समाज के कुछ गणमान्य व्यक्ति चन्दा लेने दुकानों पर घूम रहे थे। वे पहले तो दुकान पर चढ़े, पर बाबू जी को वहाँ न पाकर नीचे उतरने लगे। गुरुदेव कारण समझ गए। खड़े होकर सबको 'जय जिनेन्द्र' की तथा पूछा कि 'आप सब वापिस क्यों मुड़ लिए? ये ठीक है कि बाबाजी दीक्षित हो चुके हैं और बाबू जी कोर्ट में हैं, पर मैं आपको खाली नहीं जाने दूंगा'। जेब में पहले दिन कमाए हुए पचास रु. थे। तुरन्त निकाल कर समाज को दिए और ये भी कहा कि बाकी सामाजिक चन्दा आप बाबू जी से ले लेना। गुरुदेव ने बचपन में अपना एक गुल्लक बनाया हुआ था, जिसमें काफी रुपये इकट्ठे कर रखे थे। जब वे वैश्य स्कूल में पढ़ते थे, तो बिहार में भूकम्प आया। उसके लिए चन्दे की अपील हुई, तो गुरुदेव ने गुल्लक फोड़कर सारी राशि भूकम्प-राहत-कोष में दान कर दी।

ये तो चन्द जलवे हैं, जो झलक आए हैं।
रंग और भी बहुत हैं, जिन्दगी के गुलशन में ॥

अब गुरुदेव का ध्यान दीक्षा की अनुमति लेने में ही लग गया था। परिवार वाले मोह और सामाजिक अपयश के भय से आज्ञा नहीं दे रहे थे। उन्हें डर था कि दुनिया कहेगी कि मौसी ने घर से निकाल दिया आदि-आदि। पर गुरुदेव तो एक क्षण के लिए भी घर में रहने को तैयार न थे। एक दिन वे अपनी सारी पुस्तकें, कपड़े, कुछ स्व-अर्जित रुपये तथा स्वहस्त-लिखित ज्ञान-संग्रह की डायरियाँ ट्रंक में लेकर चुपचाप घर से चल

दिए। ये भी पता नहीं था कि वाचस्पति गुरुदेव व बाबा जी म. कहाँ हैं? पहले हांसी पहुंचे। तपस्वी श्री निहाल चन्द जी म. के दर्शन किए। वहाँ से हिसार गए। वहाँ श्री कस्तूर चन्द्र जी म. थे। फिर सिरसा पहुंचे। वहाँ तपस्वी श्री केसरी चन्द्र जी म. (तपस्वी श्री केसरी सिंह जी म. से भिन्न) थे। ये एकल विहारी सन्त थे। कठोर चर्या पालते थे। अधिक पानी आ जाता, तो पैरों पर नहीं डालते थे। कहते कि आज तो फालतू पानी पैरों पर डाला है, कल धोने के लिए फालतू लाना पड़ेगा। इनके पास कई दिन ठहरना हुआ। वहीं से सही पता चला कि वाचस्पति जी म. फिरोजपुर विराजमान हैं। अपना ज्ञान-संग्रह एक डिब्बे में रखकर एक श्रावक को दे दिया कि मैं बाद में ले जाऊँगा। पर वह उससे गुम हो गया और फिर कभी मिला ही नहीं। गुरुदेव को इस हानि का काफी दिनों तक मलाल रहा।

गुरुदेव फिरोजपुर पहुंचे। वाचस्पति गुरुदेव ने घर पर समाचार भिजवा दिया। घर वाले तो शुरू दिन से ही परेशान थे। पता चलते ही गुरुदेव के नाना श्री किरोड़ीमल जी व चाचा मा. शामलाल जी फिरोजपुर पहुँचे और जबरदस्ती घर ले आए। चलते समय बहुसूत्री श्री नाथू लाल जी म. ने मुट्ठी बन्द करके पक्के रहने की प्रेरणा दी। गुरुदेव उनके उस संकेत और आदेश को समझ गए। जिस समय घर पहुँचे तो सारी गली आदमी व औरतों से भरी हुई थी। कई औरतें रो रही थी। गुरुदेव ने पूछा, 'क्या हो गया, किसे रो रही हो?' औरतें बोली– 'रोना किसे था, तुझे रो रही हैं।' तब गुरुदेव ने स्थिति की गंभीरता को समझा। हर कोई उनको हतोत्साहित करने की कोशिश करता। घर की धोबिन, नाइन, जमादारनी तक आकर समझाती। एक दिन गुरुदेव ने मेहतरानी से पूछ ही लिया कि मेरे दीक्षा लेने में तुम्हें क्या दिक्कत है? वह बोली कि तेरी शादी होगी, तो मुझे भी कुछ न कुछ मिलेगा। गुरुदेव रहस्य समझ गए। उसे एक चांदी का सिक्का देकर सन्तुष्ट किया। फिर तो वह गुरुदेव के लिए दीक्षा की दुआएं मांगती चली गई।

दरिया को अपनी मौज की तुग़यानियों से काम।
कश्ती किसी की पार हो, या दरमियां रहे ॥

गुरुदेव को ननिहाल ले जाया गया, पर वहाँ भी उनकी वैराग्य भावना दब न सकी। ननिहाल वालों ने दुकान पर बैठा दिया, ताकि कुछ काम-धंधे में मन लग जाएगा। गुरुदेव को सामान के भाव-ताव की सही जानकारी नहीं थी। औने-पौने दामों पर माल बेचने लगे। मामा को चिन्ता हुई और उन्हें घर भेजने में ही फायदा समझा। गुरुदेव को भी इस तरह मिली हुई छुट्टी रास आ गई।

जमाने ने मेरे आगे भी दुनिया पेश कर दी थी।
मगर मैंने तो अपना फायदा इंकार में समझा ॥

फिर रोहतक आ गए। केवल एक ही काम रह गया– अधिक से अधिक सामायिकें। एक दिन इकट्ठी ही 17 सामायिकों का पच्चक्खाण ले लिया। लगभग 14 घंटे एक ही आसन से बैठकर आत्मलीन होने का संकल्प लिया। मन में चिन्तन था कि दीक्षा की ये बाधाएँ कब दूर होंगी। सामायिक में ही कुछ अद्‌भुत दृश्य दिखाई दिया, जिसका स्पष्टीकरण अभी तक नहीं हो पाया है कि इसे समाधि कहें या स्वप्न-दर्शन। गुरुदेव को अपनी दिवगंत माता के दर्शन हुए। वह गुरुदेव को सशरीर उठाकर स्वर्ग में ले गई। एक स्वर्णिम शिला पर बैठाकर दिव्य नृत्य दिखाया। बड़ा स्नेह दिया तथा एक आर्शीवाद भी दिया कि “अब तू चला जा, तेरा काम बन जाएगा। कोई दिक्कत कभी आए, तो मुझे याद कर लेना, मैं तेरी सहायता करुंगी। वैसे भी मैं तेरे ऊपर अपनी छाया रखूंगी।” फिर नीचे छोड़ गई। गुरुदेव एकदम चौंके। बात समझ में आ गई और दृढ़ निश्चय कर लिया। अपने निश्चय को एक पत्र में लिखा। पन्द्रह पृष्ठ का वह पत्र अपने आप में ज्ञान-वैराग्य-प्रधान द्वादश भावनाओं का एक दस्तावेज था। चाचाजी के एकमासीय पुत्र पद्‌म को एक चांदी का रुपया दिया। पिताजी की फाइल में वह पत्र रखा और चल दिए पटियाला की ओर। वहाँ पहुँच कर विशेष शान्ति मिली। घर वाले भी वहाँ पहुँचे, पर इस बार बाबा जी म. ने मजबूत stand लिया कि “तुम इसे इतना तंग क्यों कर रहे हो, मेरा भी तो इस पर अधिकार है। ये यहीं रहेगा, वापिस

नहीं जाएगा।" आखिर घरवालों को झुकना पड़ा। वापिस लौट गए। घर जाकर आज्ञा-पत्र भेज दिया। इस प्रकार प्रारम्भ हो गया गुरुदेव के जीवन का नूतन अध्याय-बड़ा मनोरम, बड़ा मनोहर, बडा रमणीय, बड़ा कमनीय और बड़ा अनुकरणीय।

द्वितीय प्रहर

1. नया परिवार-नया परिवेश

पटियाला आने पर गुरुदेव चिन्ता-मुक्त हो गए। वर्षों का नहीं, युगों-युगों और भव-भवों का भार उतरने लगा। योग्य शिष्य की प्राप्ति से वाचस्पति गुरुदेव एवं बाबा जी म. तो प्रमुदित थे ही, सर्वाधिक प्रसन्नता मिली बहुसूत्री सरलात्मा श्री नाथू लाल जी म. को। उन्होंने ही गुरुदेव को संयमानुकूल प्रशिक्षण देने का दायित्व संभाला। एकदा उन्होंने पूछा, 'सुदर्शन जी, आपका दीक्षा लेने का प्रमुख कारण क्या है? गुरुदेव ने सरलता से कहा, "बाबा जी के कारण दीक्षा ले रहा हूँ।" विचारों की दिशा को खूबसूरत मोड़ देते हुए बहुसूत्री जी म. फरमाने लगे कि "नहीं, बाबा के मोह के कारण दीक्षा नहीं लेनी। ये तो मात्र आपके भव-सागर तरने में निमित्त मात्र हैं। आप सतत इस दोहे का भाव ध्यान रखना

छूटूं पिछला पाप से, नवा न बांधू कोय।
श्री गुरुदेव-प्रताप से, सफल मनोरथ होय ॥

अभी गुरुदेव को पटियाला आए 5-6 दिन हुए थे। एक दिन बहुसूत्री जी म. ने पूछा, 'सुदर्शन जी, 'न सरहाना, न बिसराना', ये कहां लागू होता है?' गुरुदेव ने सोचकर बताया कि 'भिक्षाचरी में लाए हुए भोजन के प्रति ये उक्ति लागू बैठती है कि भिक्षा में स्वादिष्ट पदार्थ आए तो प्रशंसा नहीं करनी, अरुचिकर आए तो निन्दा नहीं करनी।' ये सुनकर बहुसूत्री जी म. परम प्रसन्न हुए। गुरुदेव ने भी उत्साहित होकर उसी दिन आहार-पानी के 47 दोष याद करके सुना दिए।

बहुसूत्री जी म. की समझाने की शैली बड़ी सरल, मनोरम और अन्तर् में उतर कर क्रान्ति घटित करने वाली होती थी। वे हर छोटी से छोटी बात को भी प्रयोगात्मक स्तर पर समझाते कि 'कपड़ा खूटी पर नहीं सुखाना। खड़े-खड़े हाथ नहीं धोना। घुटनों से अधिक ऊँचाई से पानी नहीं डालना आदि।' शास्त्र, तत्त्व, थोकड़े एवं ज्ञान-ध्यान के अलावा उन्हें अन्य किसी कार्य में रुचि नहीं थी। वे मानते थे कि गोचरी लाने की जिम्मेवारी स्थविर गीतार्थ मुनियों की होनी चाहिए। अतएव वृद्धावस्था होने पर भी वे प्रायः स्वयं गोचरी जाते तथा अधिकांशतः अजैन घरों से और समीपवर्ती गाँवों में जाकर आहार लाते। पसीने से लथपथ चादर को जमीन पर सुखाते थे। उन्हें देखकर ऐसा लगता था मानो संयम और साधना, शान्ति और समता मूर्तरूप धारण करके धरती पर अवतरित हुए हों। ऐसे पावनतम पूज्य दादा गुरुदेव के सान्निध्य में रहकर गुरुदेव को असीम आनन्द प्राप्त होता था।

वैरागी बनते ही गुरुदेव धर्मशास्त्रों के अध्ययन, स्मरण और पारायण में जुट गए। अतिशीघ्र ही प्रतिक्रमण, नवतत्व, 26 द्वार, दशवैकालिक सूत्र एवं अन्य सामग्री कण्ठस्थ कर ली। साधु-प्रतिक्रमण केवल डेढ़ दिन में याद करके सबको चमत्कृत कर दिया। प्रखर प्रतिभा और स्मरण-शक्ति विरासत में मिली थी। पितृ-परम्परा और गुरु-परम्परा, दोनों की ही बौद्धिक क्षमता का समर्थ भण्डार गुरुदेव को मिला। बाबू चन्दगी राम जी एक घण्टे में 80 गाथाएँ याद कर लेते थे, वाचस्पति गुरुदेव 60 गाथाएँ। उसी क्रम में गुरुदेव ने भी एक घण्टे में 40 गाथाएँ याद करके दिखाई। इस उपलब्धि पर वाचस्पति गुरुदेव ने उन्हें बहुत दुलार और प्रोत्साहन दिया। पटियाला में ही एक विचित्र घटना घटी कि एक बार गुरुदेव के पैर में चोट लग गई। पास में ही किसी डाक्टर के पास पट्टी कराने जाते थे। वह निस्सन्तान था। बड़े प्यार से पट्टी करता। एक दिन उसने। आग्रह-पूर्वक प्रस्ताव रखा कि मैं तुम्हें गोद लेना चाहता हूँ। गुरुदेव इससे आशंकित हो गए। अगले रोज से वहाँ जाना ही बन्द हो गया और चोट धीरे-धीरे स्वतः ठीक हो गई।

सन् 41 का वाचस्पति गुरुदेव का चातुर्मास अहमदगढ़ मण्डी में था और बहसूत्री जी म. का धूरी में। करीब 40 कि.मी. का अन्तर था। गुरुदेव अहमदगढ़ गुरुचरणों में रहते थे, पर हर रविवार को धूरी दर्शन करने जाते। बहुसूत्री जी म. उनके आगमन की बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा करते और उनके आने पर ही प्रवचन प्रारम्भ करते। जहाँ प्रवचनों में आगम का नवनीत उंडेलते, वहाँ बाद में संयम की शिक्षाओं से भी मन की झोली को भरपूर कर देते। अहमदगढ़ में ज्ञानार्जन के साथ-साथ गुरुदेव कुछ भजन भी लिखने लगे। इस छिपी हुई विलक्षणता को वाचस्पति गुरुदेव ने और अधिक उभारा। एक दिन एक भजन लिखने की आज्ञा दी। उस समय गुरुदव ने जो भजन लिखा, उसे देखकर वे आश्चर्यचकित रह गये। अपनी ओर से एक कड़ी और मिलाकर उस पर अपनी स्वीकृति की मोहर लगाई। वह भजन यों है–

गुरुओं का ध्यान है पूजा हमारी।
आज्ञा में चलना है अर्चा हमारी ॥टेक॥

गुरुओं की पूजा, प्रभु की है पूजा,
गुरुओं से बढ़कर, नहीं और दूजा।
गुरु काट देते हैं अर्न्त-बीमारी ॥1॥

गुरु की कृपा बिन, सफल हो न साधक,
गुरु की कृपा बिन, न झड़ते हैं पातक।
गुरु के चरण में छिपी सिद्धि सारी ॥2॥

गुरु ब्रह्मा, विष्णु, गुरु शिव-हितंकर,
वही पूज्य बनता जो गुरु-चरण-किंकर।
किंकर वही बनता न जो अंहकारी ॥3॥

वाचस्पति गुरुदेव द्वारा जोड़ी कड़ी–

दीक्षा भी लोगे, संयम भी पाले,
जीवन में तेरे, लगेंगे रंग निराले।
भजन देख पुलकित है आत्मा हमारी ॥

ये पुण्य प्रसंग विजय-दशमी (दशहरा) के शुभ दिन का है।

वैराग्य-काल में गुरुदेव को उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. की चरण-सेवा का सौभाग्य भी मिला। गूजरवाल और रायकोट में साथ-साथ विचरण हुआ। उपाध्याय जी म. मार्ग में किसी सघन तरु की प्राकृतिक सुषमा को देखकर वहीं बैठ जाते और स्वाध्याय में लीन हो जाते। उस समय ऐसा प्रतीत होता, मानो कोई देवता देवलोक के नन्दन-वन में विहार कर रहा हो। रायकोट के बाहर एक ऐसे ही प्रसंग पर गुरुदेव ने उनके सान्निध्य में बैठकर अपूर्व शांति का अनुभव किया था।

गुरुदेव की दीक्षा-विषयक शीघ्र भावना को जानकर वाचस्पति गुरुदेव ने संगरूर में दीक्षा करने का मन बनाया। इसके लिए माघ शुदी द्वितीया सं. 1998, तदनुसार 18 जनवरी 1942, रविवार का दिन निर्धारित हुआ। उस समय कुल तीन दीक्षाएँ हुई– 1. गणी श्री शाम लाल जी म. के धर्म-परिवार में श्री प्रेमचन्द्र जी म.सा. के चरणों में वैरागी कस्तूर चन्द जी की, 2. उपा. श्री आत्मा राम जी म.सा. के धर्म-परिवार में पं. श्री हेमचन्द्र जी म. के श्रीचरणों में वै. श्री स्वरूपचन्द्र जी की और 3. गुरुदेव की। दीक्षा-समारोह पर उस समय के प्रमुख मुनिराजों का पदार्पण हुआ, यथा बहुसूत्री श्री नाथू लाल जी म., उपा. श्री आत्मा राम जी म., वाचस्पति गुरुदेव श्री मदन लाल जी म., आचार्य श्री पृथ्वी चन्द्र जी म., गणी श्री शाम लाल जी म., कवि श्री अमर मुनि जी म., श्री पन्ना लाल जी म. एवं श्री चन्दन मुनि जी म. आदि 33 महामुनिराजों के विराजने से संगरूर शहर सारे उत्तर भारत का केन्द्र बन गया। संगरूर में वाचस्पति गुरुदेव के परमभक्त सुश्रावक श्री खूबचन्द जी जैन रहते थे। उनकी दृढ़ श्रद्धा के कारण ही बड़े गुरुदेव ने अपना सन् 36 का चातुर्मास संगरूर दिया था, यद्यपि उस समय संगरूर में कुल 20 जैन घर थे। संगरूर राजघराने में खूब चन्द जी का काफी प्रभाव था, अतः दीक्षा की हर व्यवस्था में राजकीय सामग्री उपस्थित हो गई। हाथी, बैण्ड, झांकियाँ तथा जुलूस की अन्य चीजें राजघराने से आई। सब काम आनन्द से सम्पन्न हो रहे थे। उसी समय असामयिक वर्षा ने उलझन पैदा कर दी। विराजित सन्तों ने

कुछ निरवद्य उपाय किए तथा कुछ उन दीक्षार्थियों का भी पुण्य था कि मौसम साफ हो गया। मौसम साफ होने पर भी वर्षा का पानी दीक्षा के पंडाल में तो भरा हुआ था ही। समाज की सामूहिक शक्ति ने उस का सामना किया। रातों-रात मैदान से पानी उलीच दिया, ताकि आगन्तुक सहधर्मियों को असुविधा न हो। दीक्षा पर काफी जन-समूह था। आज भी उस समय के प्रत्यक्ष-द्रष्टा लोग उस अवसर का स्मरण करके भाव-विभोर हो जाते हैं। जैसे ही गुरुदेव हाथी पर आरूढ़ हुए, उन्हें अपने बाल्यकाल की एक सुषुप्त घटना का स्मरण हो आया। एक बार रोहतक में, जब उनकी आयु 6-7 वर्ष की होगी, तो प्रातःकाल मुनिराजों के दर्शन करने गए। उस समय के रिवाज के मुताबिक मुनियों ने गुरुदेव को उस दिन हाथी की सवारी न करने का नियम करा दिया। जैसे ही वे नीचे उतरे, संयोगवशात् बाजार में अस्थल बोहर के बाबा का हाथी घूम रहा था। पीछे-पीछे बच्चों की भारी भीड़ थी। महावत उन बच्चों को चार-चार आने में सवारी करवा रहा था। गुरुदेव का मन भी सवारी करने को मचला। तुरन्त सन्तों के पास गए और बताया कि 'चार-चार आने में सवारी हो रही है'। सन्तों ने नियम की स्मृति दिलाकर मना कर दिया। गुरुदेव नीचे आए। उनकी मुखाकृति देखकर महावत ने उन्हें केवल दो आने में ही बिठाने की आफर दी। फिर ऊपर गए, पर सन्तों ने फिर मना कर दिया। तीसरी बार नीचे आए। तो महावत ने उनको मुफ्त में ही सवारी कराने की पेशकश की। गुरुदेव फिर ऊपर गए और सन्तों से अर्ज करी कि अब तो मुफ्त में ही सवारी मिल रही है। सन्त हँस कर बोले "अरे, ये क्या हाथी है, तू तो कभी राजा के हाथी की सवारी करेगा।" ये सुनते ही गुरुदेव का मन एकदम बदल गया। आज उसी प्रसंग को याद करके वे गद्गद हो रहे थे। सन्तों की वाणी पर श्रद्धा और अधिक प्रगाढ़ हो गई। गुरुदेव का दीक्षा-भाषण बड़ा ओजस्वी और ज्ञान-गर्भित था। आमतौर पर ऐसे अवसर पर दीक्षार्थी किसी और के द्वारा लिखा भाषण पढ़ते हैं, पर गुरुदेव ने तो वह स्वयं ही लिखा था। लगभग आधा घण्टे तक वे धाराप्रवाह बोलते रहे। बीच में ध्वनियन्त्र बन्द हो गया था, परंतु फिर भी उनकी

आवाज आखिरी तक जन-जन को सुनाई देती रही। दीक्षा-पाठ पढाने की कृपा की उपाध्याय-प्रवर पूज्य श्री आत्माराम जी म.सा. ने। दीक्षा-गुरु मिले-चारित्र-चूड़ामणि नवयुग-सुधारक, व्याख्यान वाचस्पति श्री श्री 1008 श्री मदन लाल जी म.सा.। उस समय गुरुदेव के परिवार का कोई सदस्य उपस्थित नहीं था। अतः ला. रघुवीर सिंह जी एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मनभरी देवी ने धर्म-पिता-माता बनने की औपचारिक रस्म अदा की। दीक्षा की प्रथम रात्रि में वाचस्पति गुरुदेव ने इनको उपा. श्री आत्माराम जी म. के चरणों में बैठकर वैयावृत्य करने और कुछ शिक्षा ग्रहण करने का आदेश फरमाया। गुरुदेव वहाँ पर गए। गुरु-आज्ञा-अनुसार विनय-प्रतिपत्ति निभाई। उपाध्याय श्री जी ने कुछ सूत्रों द्वारा शिक्षा फरमाई कि "आप की दीक्षा से पूर्व यहाँ 33 (३३) मुनिराज थे। ३३ में दोनों अंकों का रुख एक ही दिशा में है, अतः आप भी सदा गुरुदेव के पीछे-पीछे ही अनुचर होकर चलना। जो दिशा गुरु की हो, वही आपकी हो। ऐसा करने से कोई संघर्ष या अशान्ति नहीं होगी। दीक्षा के पश्चात् विद्यमान सन्तों की संख्या 36 (३६) हो गई। ३६ संख्या में दोनों अंकों का रुख एक-दूसरे से विपरीत दिशा में हैं, अतः आप भी अपना रुख संसार से भिन्न दिशा में रखना, इससे आपको दीक्षा लेने का वास्तविक फल मिल जाएगा"। इसके अतिरिक्त तीन बातें और फरमाई—1. अपने गुरुओं से कभी कुछ भी नहीं छिपाना, 2. अपनी मर्जी नहीं चलानी, गुरुओं की मर्जी चलानी। गुरु-आज्ञा को भगवान् की आज्ञा मानना, 3. जिस श्रद्धा-भावना से आज दीक्षा ले रहे हो, उस भावना को सदा कायम रखना।' फिर उनसे ढेरों आशीर्वाद लेकर अपने गुरुदेव के चरणों में हाजिर हुए और प्राप्त हुई शिक्षा-सम्पत्ति का सार सुनाया। तदनन्तर गुरुदेव अपने आराध्य दादा गुरुदेव बहुसूत्री श्री नाथू लाल जी म. की सेवा में उपस्थित हुए। उन्होंने अपने शान्त-शीतल स्वभाव के अनुरूप पहले एक गाथा गुरुदेव को याद कराई

विणएण नरो, गंधेण चंदणं, सोमयाइ रयणीयरो।
महुर-रसेण अमयं, जण-पियत्तं लहइ भुवणे ॥

अर्थात् जिस प्रकार चन्दन अपनी सुगन्ध से, चन्द्रमा अपनी सौम्यता से तथा अमृत अपनी मधुरता से जन-प्रिय होता है, उसी प्रकार मनुष्य अपने विनयगुण से जन-जन का प्रिय बनता है। इसके बाद बहुसूत्री जी म. ने उन्हें आगम की एक गाथा देकर उसकी माला करने को कहा और ये भी कहा कि यदि रात्रि को कोई स्वप्न आए, तो प्रातः हमें बताना। गुरुदेव ने श्रद्धा और उत्सुकता से वह पाठ किया। रात को देखा कि गोल-गोल सौम्याकार चन्द्रमा गगन-मण्डल से उतरकर उनके मुख में प्रवेश कर रहा है। तत्काल आँखें खुली और वे बैठकर स्वाध्याय में लीन हो गए। प्रातः बहुसूत्री जी म. और वाचस्पति गुरुदेव को स्वप्न बताया। बहुसूत्री जी म. ने पूछा कि 'चन्द्रमा सम्पूर्ण था या अपूर्ण'? तब गुरुदेव ने उपयोग लगाते हुए बताया कि 'बिल्कुल पूर्ण तो नहीं था, पर लगभग पूर्ण था।' तब बहसूत्री जी म. ने फरमाया, 'भविष्य में तेरा यश चन्द्रमा की भाँति सर्वत्र फैलेगा। तू अपने जीवन में आचार्य तो नहीं, पर आचार्य के तुल्य ही बनेगा। तेरी संपदा आचार्यों जैसी होगी'। भावी जीवन के स्पष्ट-द्रष्टा बहुसूत्री जी म. के वे बोल आगे चलकर अक्षरशः सत्य प्रमाणित हुए।

एक सप्ताह बाद गुरुदेव की बड़ी दीक्षा (छेदोपस्थापन-चारित्रारोहण) धूरी में हुई।

दीक्षा लेने के पश्चात् गुरुदेव का लक्ष्य गुरुजनों की सेवा, अधिकाधिक स्वाध्याय और संयम-नियमों का दृढ़ता से पालन करना बन गया। बड़ों की विनय-भक्ति करने में उन्हें बड़ा रस आता था, इसलिए हर रत्नाधिक मुनिराज उनसे प्रसन्न रहता था। 12 फरवरी 1942 को वाचस्पति गुरुदेव ने उनको बुलाकर एक प्रश्न किया और उत्तर भी स्वयं ही देते हुए फरमाया, "देखो सुदर्शन जी, तुमने संयम लिया है। इसका एकमात्र लक्ष्य मोह-विजय ही होना चाहिए। इसके लिए तीन बातों का ध्यान रखना 1. अपनी रसना-इन्द्रिय पर विजय प्राप्त करना, 2. मन में मान-प्रतिष्ठा का कीड़ा नहीं लगने देना, 3. संसार को समभाव से देखना, किसी के प्रति राग-द्वेष नहीं करना।"

गुरुदेव का विद्याध्ययन जारी था। जीवन शान्तभाव से गतिमान् था। मन में संयम-वृद्धि के साथ-साथ सुख और आनंद की अमृत-वृष्टि हो रही थी। गुरुकृपा का मेघ हृदय-भूमिका को सरसा रहा था। वाचस्पति गुरुदेव की तेजो-मण्डित आभा से जीवन का कण-कण आलोकित हो रहा था, तभी अचानक एक अचिन्तित और अकल्पित-सी घटना घटित हो गई। उसी साल गर्मी के मौसम में बहुसूत्री जी म. खरड़ पधारे और अचानक अस्वस्थ हो गए। उन्हें लगा कि अंतिम समय निकट आ रहा है। उन्होंने वाचस्पति जी म. को खबर भिजवाई कि, 'सुदर्शन मुनि जी को सेवा में मेरे पास भेज दो, क्योंकि मेरा अंतिम समय नजदीक है'। समाचार पाकर सभी सन्त सन्न रह गए। वाचस्पति गुरुवर ने गुरुदेव को बुलाकर कहा, 'सुदर्शन! तू कितना सौभाग्यशाली है कि गुरु म. ने तुझे बुलाया है। हमें नहीं। हम उनके चरणों मे कितने सालों से हैं। पर हमें याद नहीं किया।' सभी वरिष्ठ मुनिराज खरड़ पहुँचे और बहुसूत्री जी म. को समाधि-पूर्वक संथारे के साथ देह-त्याग में सबने साज दिया। ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी, 23 जून 1942 को एक उज्ज्वल जीवन इस सृष्टि को अनाथ कर गया। वाचस्पति गुरुदेव की स्थिति उस समय बालकों की तरह व्याकल और विह्वल हो गई थी। तब योगिराज श्री रामजीलाल जी म. ने अपने अभिन्न हृदय-साथी को संभाला और हौंसला दिया। उनके परामर्श से वाचस्पति गुरुदेव ने अपने गुरुदेव की स्मृति में प्रतिवर्ष सम्पूर्ण 32 शास्त्र चितारने का संकल्प लिया। गुरुदेव जी म. भी उस वियोग-व्यथा से आहत तो थे, पर शीघ्र ही अपने मन को समाहित कर लिया। बस इसी बात का मलाल रहा कि उनका सान्निध्य बहुत कम मिल पाया। कुछ और वर्ष मिल जाता, तो संयम-दृष्टि और पुख्ता बन जाती। वाचस्पति गुरुदेव तो जनता से घिरे रहते थे, उन्हें इतना समय नहीं मिल पाता था। संयम-प्रतिमा घड़ने वाले शिल्पी तो बहुसूत्री गुरुदेव ही थे।

सन् 1942 का चातुर्मास सढ़ौरा में हुआ। गुरुदेव जन-संकुलता से बचकर अपना समय स्वाध्याय और गुरु-सेवा में लगाते थे। वैयावृत्य करने की रुचि गुरुदेव में प्रारम्भ से ही थी। पूरे चातुर्मास में उन्होंने ये नियम-सा

बना लिया था कि सायंकालीन प्रतिक्रमण के बाद वाचस्पति गुरुदेव एवं योगिराज श्री रामजीलाल जी म. की शरीर-वैयावृत्य अवश्य करनी। दोनों महापुरुषों की एक-एक घण्टा वैयावृत्य करके जो पसीना बहाया, उसे गुरुदेव ने जीवन-परिवर्तन के लिए 'रसायन' का नाम दिया था। सेवा करने से उनको आनंद तो प्राप्त हुआ ही साथ ही, देह का स्नायु-तन्त्र भी अतिपुष्ट हुआ। जैसे व्यायाम से शरीर सशक्त बनाया जाता है, गुरुदेव ने सेवा से वह कार्य संपन्न किया। गुरुदेव के हाथों की पकड़ इतनी मजबूत हो गई कि कोई चाहे कितना ही जोर लगा ले, उनसे अपना हाथ नहीं छुड़वा सकता था। इसी चातुर्मास में रोहतक से बाबू चन्दगी राम जी गुरु-दर्शन-हेतु आए। गुरुदेव की दीक्षा के पश्चात् वे प्रथम बार ही आए थे। अधिकांश समय वे वाचस्पति गुरुदेव के श्रीचरणों में ही बैठे। गुरुदेव के विषय में उनसे केवल एक ही प्रश्न पूछा, 'क्या सुदर्शन मुनि जी आपकी पूरी विनय करते हैं?' वाचस्पति जी महाराज इस प्रश्न से बड़े प्रसन्न हुए और बोले, 'बाबू जी, आपने एक प्रश्न पूछकर सारा ही जीवन पूछ लिया। मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि सुदर्शन मुनि बहुत विनीत है। मेरी आत्मा इससे बहुत खुश है।' गुरु के मुख से शिष्य का गुणानुवाद सुनकर बाबू जी परम संतुष्ट हुए। कुछ देर गुरुदेव के पास भी बैठे, पर उनसे कोई पुरानी बात या सांसारिक चर्चा नहीं की। गुरुदेव तो प्रायः मौन ही रहे। बाबू जी ने भी संक्षेप में आगमों की कुछ शिक्षाएँ दी तथा संयम-ग्रहण का औचित्य सिद्ध करते हुए कहा कि 'मुझे जो वाइसराय के हाथों से दो गोल्ड मैडल मिले हैं, वे इस मुनि-जीवन की तुलना में सर्वथा निस्सार और मूल्य-रहित हैं। संयम की कभी कोई कीमत नहीं आँकी जा सकती। इस संयम को सदा आगे बढ़ाते रहना।' इतना कह कर वे उठ गए। ये था एक तत्वज्ञ श्रावक पिता का एक संयमी पुत्र को उद्‌बोधन!

पर्यूषणों से पूर्व गुरुदेव अस्वस्थ हो गए। कई दिन बुखार रहा। दुर्बलता बहुत थी। लोच के दिन भी आ रहे थे। बड़े सन्तों को चिन्ता थी कि नवदीक्षित मुनि का लोच कैसे करें? पहला ही लोच था। व्याधि की तीव्रता को देखते हुए ऐसा भी विचार बना कि क्षुर-मुण्डन करा दें, बाद में

योग्य प्रायश्चित्त दे देंगे, पर गुरुदेव ने दृढ़तापूर्वक मना कर दिया। लोच कराने का ही संकल्प दोहराया। **'देहदुक्खं महाफलं'** मुनि के लिए शरीर को साधना, कष्ट देना भी कल्याणकारी ही है। गुरुकृपा से लोच आराम से हो गया। किसी शायर ने लिखा है–

हम डूबने वाले मौजों की तौहीन गवारा क्यों करते?
कश्ती का सहारा क्यों लेते, चप्पू की तमन्ना क्यों करते?
बिजली की चमक, बादल की गरज, तारीक फिजा, पुरजोर हवा,
खुद आग नशेमन को दे दी, तिनकों का भरोसा क्यों करते?

वाचस्पति गुरुदेव सढौरा का चातुर्मास सम्पन्न करके बलाचौर पधारे। वहाँ एक भगत रामचन्द्रजी होते थे। वे पंजाब में भावड़ों के रिश्ते, शादी कराने वाले मध्यस्थ के तौर पर प्रसिद्ध थे। कभी-कभी किसी सम्मोहन की-सी अवस्था में कुछ भविष्यवाणी भी कर देते थे, जो कई बार सही भी हो जाती थी। एक दिन जब वे प्रवचन सुनकर नीचे उतरने लगे, तो ऊँची आवाज लगाने लगे– 'एक, दो, तीन, चार'। किसी भी भाई को उनकी बात समझ नहीं आई। अपने-अपने अनुमान लगाते रहे। तब वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि 'लगता है, मुझे चार शिष्यों की प्राप्ति होगी'!

उन्हीं दिनों पंचकूला में श्री जैनेन्द्र गुरुकुल का वार्षिक अधिवेशन हो रहा था। वाचस्पति गुरुदेव मुनि-मण्डल सहित वहाँ पधारे। वहीं पर दिल्ली चाँदनी चौंक का श्रीसंघ सन् 1943 के चातुर्मास की विनति लेकर आया। ओसवाल समाज के मुख्य श्रावकों के अलावा श्री गूगन मल जी घसो वाले एवं श्री बदरी प्रसाद जी (घोर तपस्वी श्री बदरी जी महाराज) भी शिष्ट-मण्डल में सम्मिलित थे। श्री बदरी प्रसाद जी ने वाचस्पति जी महाराज से अलग में निवेदन किया, "आप दिल्ली पधारो, आपको महान् लाभ होगा। मैं निवृत्ति की ओर बढ़ रहा हूँ तथा अपने दोनों पुत्रों व श्रीराम जी नगूरा वालों को भी मैं तैयार कर लूँगा।" वाचस्पति गुरुदेव को भगत रामचन्द्र की वाणी सत्य प्रतीत होती दिखाई दी और दिल्ली

पधारने का कार्यक्रम बना लिया। सन् 1943 का चातुर्मास दिल्ली चाँदनी चौंक ही हुआ।

इधर सन् 1942-43 में दिल्ली में आंदोलन, दंगे आदि हुए। उनके कारण श्री बदरी प्रसाद जी ने अपने दोनों सुपुत्रों– श्री प्रकाशचन्द्र जी एवं श्री रामप्रसाद जी को दिल्ली से अपने गाँव रिंढाणा, बणवासा आदि भेज दिया था। वाचस्पति गुरुदेव के दिल्ली-प्रवेश के पश्चात् उन्हें गाँव से पुनः दिल्ली बुला लिया। दिल्ली आने पर वाचस्पति गुरुदेव जनता-जनार्दन के मध्य अत्यधिक व्यस्त हो गए। दोनों सलौने बालकों को अपने परम विनीत शिष्य (हमारे गुरुदेव) को सौंपते हुए फरमाया, "तुझे इन दोनों के जीवन का निर्माण करना है। वैराग्य-भावना भरने के साथ-साथ इन्हें धार्मिक अध्ययन भी कराना है। मैं तो उलझा रहता हूँ, इनकी पूरी जिम्मेवारी तेरी है, इन्हें कोई दिक्कत न आए।" और गुरुदेव ने अपने गुरुदेव की आज्ञा का अक्षरशः पालन किया। दोनों बालकों के निश्छल, निर्दोष, विनय-मण्डित, सौम्य, सलौने मुख-मण्डल को देखकर गुरुदेव का मन हर्ष-विभोर हो गया। दोनों की प्रखर प्रज्ञा और अद्भुत ग्रहण-शक्ति को देखकर उनके प्रति बहुत लगाव हो गया। उन दोनों के विकास को ही अपना विकास मानते। दोनों ने भी इस विद्यादान के प्रतिदान रूप में अपनी श्रद्धा का अर्घ्य गुरुदेव को दिया। गुरुदेव की भव्य मुखाकृति, मलिन वस्त्र, धूलि-धूसरित चरण, संयम के प्रति समर्पित मन, वचन एवं काया को देखकर दोनों ये विचार करते थे कि 'यदि असली संयम है, तो यहीं पर है'। दोनों के अध्यापन के साथ-साथ गुरुदेव का स्वयं का अध्ययन भी निर्बाध चलता रहा। प्रमाद तो उनके जीवन में था ही नहीं। कई बार आधी-आधी रात तक भी जागकर स्वाध्याय करते। यदि रात चाँदनी होती तो नए श्लोक एवं गाथाएँ पढ़कर याद कर लेते। संस्कृत, व्याकरण, न्याय, छन्द, काव्य, साहित्य का अध्ययन निरन्तर हो रहा था।

सन् 1944 में बिहार के सुप्रसिद्ध संस्कृत प्राध्यापक श्री शुकदेव जी पाठक गुरुदेव को पढ़ाने आए। उन्हें संस्कृत व्याकरण व न्याय का तलस्पर्शी ज्ञान था। अपना अथाह ज्ञान-भण्डार बांटने के लिए उन्हें गुरुदेव

के रूप में पात्र भी सर्वथा योग्य मिले। पाठक जी की युवावस्था थी, पढ़ाने की लगन भी बलवती थी, पर वे भी कई बार गुरुदेव को पढ़ाते-पढ़ाते थक जाते थे। जो अध्ययन सामान्यतया चार वर्षों में पूर्ण होता, उसे गुरुदेव ने एक वर्ष में ही संपूर्ण कर दिया। पण्डित जी का दिया हुआ सारा काम गुरुदेव पूर्णरूपेण करते। कभी शिकायत का अवसर नहीं दिया। गुरुदेव पण्डित जी की साधूचित, कल्पानुकूल विनय-प्रतिपत्ति भी सम्यक् प्रकार से करते थे। केवल तीन वर्ष के स्वल्प अध्ययनकाल में ही गुरुदेव ने संस्कृत व्याकरण की लघु सिद्धान्त कौमुदी, सिद्धान्त-कौमुदी, अमरकोष, भट्टिकाव्य, तर्कसंग्रह, न्याय-मुक्तावली, दशवैकालिक, नन्दी, उत्तराध्ययन, आचारांग-सूत्रकृतांग के प्रथम-श्रुतस्कन्ध, सुखविपाक, अनुत्तरोववाई एवं अन्य कई ग्रन्थ अर्थ-सहित कण्ठस्थ कर लिए तथा उनको चितारने की पूरी व्यवस्था बनाई। बाद में जब उन्हें आँखों के लिए चश्मा लेना पड़ा, तो इस आशंका से कि भविष्य में नेत्र-ज्योति ही न चली जाए, सारा अन्तकृद्दशांग सूत्र भी याद कर लिया, ताकि पर्यूषण-पर्वों में सुनाया जा सके। गुरुदेव की स्मरण-शक्ति और परिश्रम-शीलता अपने आप में बेजोड़ थी।

उसी वर्ष पंजाब प्रान्तीय आचार्यप्रवर पूज्यपाद श्री कांशीराम जी म. सा. बम्बई आदि विचरण कर दिल्ली पधारे। उस समय वाचस्पति गुरुदेव के नेतृत्व में उनका शाहाना स्वागत हुआ। उस समय तक आते-आते आचार्य श्री का बलिष्ठ शरीर पूरी तरह झटक गया था। नयनों में एक दिव्य आभा शेष थी, जिसकी एक झलक पाने के लिए सैंकड़ों साधु-साध्वी लालायित थे। वे बिरला मन्दिर से सदर बाजार पधारे। उनकी डोली उठाने का सौभाग्य गुरुदेव को भी मिला। वाचस्पति गुरुदेव के संयमनिष्ठ, तपोमय, बेलाग, बेखौफ, आदर्श व्यक्तित्व से आचार्य श्री इतने प्रभावित हुए कि पिछली सभी मानसिक दूरियाँ दूर हो गई। दोनों युग-पुरुषों को मानसिक रूप से निकट लाने में एक श्रावक का नाम अवश्य उल्लेखनीय है-श्री शादी लाल जैन, मुम्बई वाले। आ. श्री जी ने वाचस्पति जी म. को बड़े निकट से देखा, जाना और समझा। अपने मन के भावों को आकार देते हुए उन्होंने वाचस्पति जी म. को फरमाया कि 'मेरे बाद में

या तो आप पंजाब के आचार्यपद की बागडोर संभालें या अपने शिष्य सुदर्शन मुनि को ये दायित्व सौंपें।' परन्तु वाचस्पति गुरुदेव ने दोनों ही बातों से विनम्रतापूर्वक इन्कार कर दिया। इतनी लघु दीक्षा-पर्याय में ही आचार्य श्री जी ने गुरुदेव की क्षमताओं को परख लिया था, यह भी एक आश्चर्यकारी और अविश्वसनीय-सी घटना है।

वाचस्पति गुरुदेव का सन् 1944 का चातुर्मास सदर बाजार दिल्ली में था। गुरुदेव का उस वर्ष का चातुर्मास यू.पी. में बड़ौत नगर में पूज्य श्री मूलचन्द जी म., बाबा श्री जग्गूमल जी म. के श्री-चरणों में हुआ। इसलिए दोनों भ्राताओं—श्री प्रकाशचन्द जी एवं श्री रामप्रसाद जी को अध्ययन-विषयक कोई मार्गदर्शन उस वर्ष नहीं मिला। हालांकि उन दिनों वे प्रतिदिन चाँदनी चौंक से चलकर सदर की स्थानक में जाते थे, सामायिक संवर भी करते थे और यथासुलभ ज्ञान-ध्यान भी सीखते रहते थे।

2. मिली राम-लखन सी जोड़ी

18 जनवरी 1945 को नारनौल में 'मनोहर सम्प्रदाय' के आचार्य श्री पृथ्वीचन्द्र जी म. के सान्निध्य में दो दीक्षाओं का आयोजन रखा गया था। वाचस्पति गुरुदेव उनसे अपने स्नेह-सम्बन्धों के कारण सपरिवार वहाँ उपस्थित हो रहे थे। श्री बदरी प्रसाद जी ने इस अवसर को बिल्कुल सहज और निर्दोष जाना। वे अपने दोनों होनहार, विनीत, विद्या-बुद्धि-सम्पन्न, परम विलक्षण सुपुत्रों के साथ दीक्षा लेने हेतु नारनौल पहुँच गए। ला. श्रीराम जी का विचार शिथिल पड़ गया और दीक्षा लेने से वंचित रह गए। उसी समय यू.पी. में सिरसली गाँव के बारहव्रती श्रावक श्री रामचन्द्र जी भी वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में दीक्षा लेने की भावना से आए। आचार्य श्री कांशी राम जी म. उनको दीक्षा की आज्ञा प्रदान करने में सहमत नहीं थे, क्योंकि श्री रामचन्द्र जी का सहोदर भाई मुनि हुक्मचन्द उनके गण में पहले से दीक्षित था और उसका स्वभाव काफी उग्र तथा प्रकृति बड़ी विचित्र थी। उसी विषमता की आशंका से वे आज्ञा प्रदान नहीं कर रहे थे। इसके लिए श्री रामचन्द्र जी ने श्री बदरी प्रसाद जी से सहायता की याचना की। आचार्य श्री जी श्री बदरी प्रसाद जी का बहुत आदर करते थे। उनकी सिफारिश होने से वे भी इंकार नहीं कर सके। श्री बदरी प्रसाद जी ने ये भी विश्वास दिला दिया कि मैं इन्हें स्वयं संभाल लूंगा। इस प्रकार 18 जनवरी 1945 को वाचस्पति गुरुदेव के श्री चरणों में चार दीक्षाएँ सम्पन्न हो गई और भगत रामचन्द्र की 1-2-3-4 की पुकार भी चरितार्थ हुई।

गुरुदेव जी म. को इस अवसर पर सर्वाधिक प्रसन्नता हुई, क्योंकि उन चारों में से गुरुदेव को तपस्वी बदरी प्रसाद जी म. के रूप में श्रद्धेय

पितृ-तुल्य गुरु-भ्राता मिले तथा उनके दोनों पुत्रों के रूप में अपने ही सत-समान, अनुज-समान और आत्म-समान गुरुभ्राता मिले। दीक्षा की प्रथम रात्रि को ही गुरुदेव ने श्री तपस्वी जी म. से निवेदन किया कि "आप मेरे पिता के समान हैं तथा आज से आपके दो नहीं, अपितु तीन बेटे हैं। आप श्री जी की जो भावना व आज्ञा होगी, उसे मैं सहर्ष स्वीकार करूँगा"। और इतिहास साक्षी है कि गुरुदेव ने श्री तपस्वी जी म. की कभी भी कोई आज्ञा नहीं टाली। उनकी हर इच्छा को स्वीकार किया। तथा यह भी संघ का गौरवपूर्ण अध्याय रहा है कि श्री तपस्वी जी म. ने भी गुरुदेव की किसी भी इच्छा को नहीं टाला। इस अन्योन्याश्रित स्नेह संबंध की आधार-शिला 18 जनवरी 1945 की रात को ही रख दी गई थी।

वाचस्पति गुरुदेव ने श्री सेठ प्रकाश चन्द्र जी म. और श्री रामप्रसाद जी म. की शिक्षा का, सारणा-वारणा-धारणा का और शारीरिक-मानसिक विकास व समाधि का सम्पूर्ण दायित्व गुरुदेव को सौंप दिया। इन दोनों ने भी अपने गुरुभ्राता को सहजभाव से गुरु-रूप में ही स्वीकार कर लिया। इस स्वीकति में कोई औपचारिकता, दबाव या बाह्य प्रेरणा नहीं थी। गुरुदेव के प्रति उनमें आत्मीयता इतनी गहरी, सच्ची और स्थायी थी कि कहीं भी कृत्रिमता का अंश नहीं उभरा। गुरुदेव ने उनकी प्रखर प्रतिभा का आकलन करके अपनी समग्र शक्ति उनके निर्माण में लगा दी। 'लघु सिद्धान्त कौमुदी' की सारी टिप्पणियां लिखकर इतनी सरलता और सरसता से समझाई कि अग्रिम अध्ययन के लिए मजबूत नींव तैयार हो गई। दोनों मुनिराज अपनी मानसिक आकांक्षाओं या अभीप्साओं को निर्व्याज रूप में गुरुदेव के समक्ष प्रकट कर देते थे। ये दोनों गुरुभ्राता गुरुदेव से किस कद्र प्रभावित रहे हैं, इसकी झलक उनके द्वारा लिखित पुराने पत्रों से मिल रही है, यथा-अप्रैल 1966 में उनके द्वारा लिखित एक दीक्षा-सन्देश में—"मैं अपने श्रद्धेय, महान् प्रभावक श्री सुदर्शन लाल जी म. के विषय में क्या कहूँ? उनके मुझ पर बहुत उपकार हैं। जब मैं गुरुदेवों के चरणों में दीक्षित हुआ, तब आपने मेरे ऊपर इतनी मेहनत की, जितनी इन छोटे मुनियों पर अपना शिष्य बनाकर भी नहीं की होगी। मानों गुरुदेव एक

शिल्पकार थे और आप ज्ञान, ध्यान, संवेग-निर्वेद, विनय और सहिष्णुता का मसाला डालने वाले। आज आप स्वयं शिल्पकार हैं, अपने दायित्वों को मेरे से बहुत अधिक समझने वाले और निभाने वाले हैं।"

गुरुदेव की संयम दृष्टि से श्री तपस्वी जी म. बहुत प्रभावित थे। दीक्षा के प्रारम्भिक नौ, दस वर्ष तक गुरुदेव ने वस्त्र-प्रक्षालन के निमित्त साबुन का प्रयोग नहीं किया। वस्त्र बिल्कुल काले होते थे। मुनि हरिकेशी का 'पंतोवहिउवगरणे' विशेषण उन पर सटीक बैठता था। ऐसा उदात्त, उदार संयम-प्रधान जीवन श्री तपस्वी जी म. को बहुत भाता था।

सन् 1945 का चातुर्मास वाचस्पति गुरुदेव का हांसी में हुआ। गुरुदेव भी चरण-सेवा में थे। एक दिन शाम के समय वाचस्पति गुरुदेव बाहर दिशा से स्थानक लौटे। गुरुदेव ने अभ्युत्थान-पूर्वक उनका स्वागत किया और उनके पैर पौंछ कर पाटिए तक साथ लाए। बड़े गुरुदेव ने बैठने पर उनको एकदम आदेश फरमाया 'सुदर्शन मुनि! अब से तुम भी कमाओ और खाओ'। गुरुदेव चकित-से हो गए। इस वाक्य की गहराई को नहीं समझ पाए। तब वाचस्पति जी म. ने ही स्पष्ट किया कि तुम अब प्रवचन करना प्रारम्भ कर दो। कथा करना सीख जाओगे, तो समाज में प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त कर लोगे, क्योंकि समाज कथाकार सन्तों को ही अधिमान देता है। इससे तुम्हारे बाबा जी म. की सेवा भी सम्यक् हो सकेगी, क्योंकि मैं तो दूर-दूर विचरता हूँ और बाबा जी म. लम्बा चलने में असमर्थ हैं। इनकी सेवा की जिम्मेदारी तुम पर है और स्वतंत्र विचरण के लिए कथा आवश्यक है।' गुरुदेव अपने बड़ों की आज्ञा को वैसे ही कभी नहीं टालते थे, फिर ये आज्ञा तो काफी अर्थपूर्ण और व्यवहारिक भी थी। गुरुदेव प्रवचन के क्षेत्र में आ गए। इस बात से वाचस्पति गुरुदेव को काफी खुशी हुई। फरमाने लगे– 'सुदर्शन! तूने एक बार भी कथा की आज्ञा का इंकार नहीं किया, अतः तुझे पूर्ण सफलता मिलेगी। यदि तू मना कर देता, तो सफलता नहीं मिलती'। किसी बात को पहले 'ना' करना। फिर टालमटोल करना, फिर 'हाँ' भरना, ये गुरुदेव की कभी आदत नहीं रही। बड़ों की बातें बड़ी अर्थपूर्ण और सारगर्भित होती हैं। गुरुदेव ने अपने

गुरुदेव की आज्ञा को एकदम 'तहत' कह कर माना। इसलिए हर क्षेत्र में सफल रहे। वाचस्पति जी म. ने हमारे गुरुदेव को व्याख्यान के सम्बन्ध में कुछ आवश्यक निर्देश दिए, जो उनके लिए जीवन-पर्यन्त ब्रह्मवाक्यवत् पालनीय रहे, यथा 1. शास्त्र का पन्ना हाथ में रखना, इससे कोई उत्सूत्र-प्ररूपणा नहीं होगी। 2. कोई वचन शास्त्र-विरुद्ध निकल जाए, पता लगने पर वापिस लेने में संकोच नहीं करना। फौरन 'मिच्छामि दुक्कडं' करके उस बात को शुद्ध करके सुनाना। 3. गृहस्थों को कोई कठोर शब्द नहीं कहना। यदि छद्मस्थतावशात् कहा भी जाए, तो तत्काल क्षमा मांगनी। इसका कारण ये है कि साधुओं की गाँठ तो देर-सवेर खुल भी जाती है, गृहस्थ के मन की गाँठ खुलने में बड़ा समय लगता है। इन शिक्षाओं का गुरुदेव ने जीवन-भर पालन किया, इसी कारण वे प्रवचन-कला में अद्वितीय बनकर चमके।

गुरुदेव ने व्याख्यान-सामग्री का संग्रह भी खूब किया। परिश्रमी तो वे थे ही, अद्भुत आत्मविश्वास और मनोबल के धनी भी थे। आवाज बड़ी सरस, स्पष्ट, सुरीली और तीक्ष्ण थी। प्रवचन में उनके उत्साह-वर्धन के लिए श्री तपस्वी जी म. साथ जाते थे। बाद में वाचस्पति गुरुदेव का पदार्पण होता। उनके आने पर धर्मसभा का रंग अपने यौवन पर आ जाता। व्याख्यान के क्षेत्र में, उस युग में उनका कोई सानी नहीं था। सभी रसों पर उनका पूर्ण अधिकार था। हजारों की भारी भीड़ उनका प्रवचन सुनने उमड़ती। और फिर हांसी तो उनका सुपोषित क्षेत्र था। वहाँ हजारों की रौनक होती थी। उस चातुर्मास में संवत्सरी पर उन्होंने निरन्तर आठ घण्टे प्रवचन दिया था। ऊपर से आसमान बरसता रहा। नीचे वे। उस चातुर्मास का ये भी कमाल था कि शुरू में, जब गुरुदेव प्रवचन प्रारम्भ करते, तो कुल तीन-चार श्रावक ही सामायिक किए होते थे। भीड़ धीरे-धीरे बढ़ती थी। इसलिए कथा का पूरा तार नहीं बँध पाता था। वे पूरी तैयारी करके जाते पूरे जोश से सुनाने का मन होता, पर थोड़े से श्रोताओं को देखकर मन ठंडा पड़ जाता। एक दिन उनके उदास चेहरे को देखकर वाचस्पति गुरुदेव ने मन के भावों को भांप लिया और खुद ही फरमाने लगे, 'श्रावकों

की क्यों फिक्र करता है? चिन्ता न कर। आज यदि तेरी कथा में तीन श्रावक आते हैं, तो वो भी समय आएगा, जब तीन-तीन हजार श्रोता भी आया करेंगे'। ये सुनकर गुरुदेव का मन खिल गया। फिर इस विषय में कभी सोचा ही नहीं कि श्रोता कितने हैं। श्रोताओं की संख्या गुरुदेव की दृष्टि में सदैव गौण रही है। प्रवचन-क्षेत्र में गुरुदेव ने अपने जीवन-काल में जिन बुलंदियों को छुआ है और जितनी जनता को आकर्षित किया है, वह उत्तरी भारत क्या, सम्पूर्ण भारत के स्थानकवासी समाज में एक मिसाल है। कई-कई हजारों की भीड़ में कई बार जब गुरुदेव प्रवचन शुरू करते, तो प्रारम्भ में अपने गुरुदेव की स्तुति करके मानो उसी गुरु-ऋण से उऋण होने की कोशिश करते थे। वे फरमाते थे कि 'ये सब भीड़ें तो मेरे गुरुदेव की ही देन है, वरना मेरे पास तो तीन-चार श्रोता ही होते थे'। ऐसा निरपेक्ष और तटस्थ जीवन था गुरुदेव का। हाँसी चातुर्मास में गुरुदेव अपने प्रवचन में काफी सामग्री-भजन, कहानी, मुक्तक, शेर आदि सुनाते थे। एक दिन वाचस्पति गुरुदेव ने कहा, 'जितनी सामग्री में चार दिन में सुना पाता हूँ, उतनी तुम एक ही दिन में सुना देते हो। तुम्हारे पास इतनी सामग्री कहाँ से आएगी?' ये सुनकर गुरुदेव ने उनके चरणों को हाथ लगाकर कहा, 'इन चरणों से आएगी।' ये सुनकर वाचस्पति गुरुदेव ने उनको आशीर्वादों से भरपूर कर दिया।

पूज्य गुरुदेव का अगला चातुर्मास सन् 1946 का पूज्यपाद श्री मूलचन्द जी म., स्वामी श्री फूलचन्द जी म. तथा बाबा श्री जग्गूमल जी म. की सेवा में अहमदगढ़ मण्डी में करना तय हुआ। दोनों बड़े महापुरुषों को कारणवश मूनक बुलवा लिया गया। वहां रह गई केवल बाबा-पोते की अमर जोड़ी। वाचस्पति गुरुदेव अपने उदीयमान शिष्य की बहुमुखी प्रतिभा और क्षमता के प्रति पूर्णतः आश्वस्त थे कि चातुर्मास में किसी प्रकार की कमी नहीं रहेगी और हुआ भी वही। कथा, सेवा, आहार-पानी आदि समग्र दायित्व का वहन अकेले गुरुदेव ने किया।

प्रवचन को रुचिपूर्ण बनाने के उद्देश्य से उन्होंने 'शीलश्री' कथानक को काव्यबद्ध किया। यह एक परिमार्जित एवं परिसंस्कृत रचना का रूप

थी, जो श्रोताओं की धार्मिक रुचि को भी तृप्त करती थी। हिन्दी की कविताओं तथा उर्दू की शायरी का पर्याप्त प्रयोग करना गुरुदेव के प्रवचन का स्थायी स्तम्भ था। इस प्रकार गुरुदेव ने अपने पहले ही चातुर्मास में धूम मचा दी। जैन समाज को एक नया प्रवचन-कुशल, संयम-निष्ठ मुनि मिल गया, इससे सब लोग बड़े प्रमुदित थे। सभी उनमें एक उदीयमान देदीप्यमान नक्षत्र की छवि देखने लगे। अनेक प्रसंगों पर उनकी कई स्तुतियाँ एवं प्रशस्तियाँ भी पढ़ी गई, पर गुरुदेव ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। गुरुदेव के प्रवचनों का अधिकतर विषय वैराग्य-प्रधान और परिवार की सुरक्षा का होता था। नए कथानक, नए भजन, नई-नई उपमाएँ, ये गुरुदेव के प्रवचनों की विलक्षणता थी। बाबा जी म. स्वयं प्रवचन में साथ बैठते, निगरानी के लिए। पर गुरुदेव तो स्वयं ही सब बातों में प्रबुद्ध थे। इस चातुर्मास की एक रोचक घटना का गुरुदेव कई बार वर्णन किया करते थे। विदाई का दिन था। सबकी जबान पर चातुर्मास की सफलता की चर्चाएँ थी। भाई-बहनें रुंधे गले से अपने उद्‌गार प्रस्तुत कर रहे थे। वहीं के एक माननीय श्रावक जंगीरी लाल जी भी अपना वक्तव्य देने खड़े हुए। कहने लगे, 'ए तां साड्डी छात्ती सी, जे तुहाडा प्रवचन झेल गए (ये तो हमारी ही छाती थी, जो आपका प्रवचन हम झेल गए)।' ये सुनकर गुरुदेव तनिक घबरा-से गए कि न जाने मैंने श्रावक जी को कब क्या कह दिया। गुरुदेव बाबा जी म. की ओर देखने लगे और बाबा जी गुरुदेव की ओर। पर तभी अपनी बात को पूरा करते हुए श्रावक जी ने कहा, 'जे साड्डी थां होर कोई हुंदा, तां साधु बणके पट्टे उत्ते हुंदा' । (हमारी जगह यदि और कोई होता, तो दीक्षा लेकर पट्टे पर बैठा होता)। ये सुनकर गुरुदेव की जान में जान आई।

वाचस्पति गुरुदेव ने अपने प्रिय शिष्य की चातुर्मासिक सफलता पर बहुत शाबासी दी। एक दिन उन्होंने फरमाया– 'इस साल मैंने तेरे लिए लाट्री निकाली है। तुझे कल्पवृक्ष की सेवा में रहना है। पूज्यपाद, शान्ति के देवता, संघ के आराध्य, गणावच्छेदक श्री बनवारी लाल जी म. के श्री चरणों में तुझे मूनक में रहना है। उनको पूरी तरह प्रसन्न रखना।

उनकी सेवा कभी खाली नहीं जाती'। गुरुदेव इस दायित्व को पाकर फूले नहीं समाए। अपने जीवन-काल के 76 वर्षों में 'स्वर्णिम समय' (Golden Period) के रूप में उन्होंने 1947 का वर्ष ही उल्लिखित किया, जब वे श्री बनवारी लाल जी म. की सेवा में नियुक्त रहे। उस समय श्री बनवारी लाल जी म. की नेत्र-शक्ति क्षीण हो चुकी थी। उन दिनों वे संलेखना कर रहे थे अर्थात् ठोस आहार छोड़कर केवल तरल पदार्थ ही लेते थे। शान्ति तो उनका पर्याय थी। अपनी शारीरिक जरूरतों की पूर्ति के लिए उन्हें एक सन्त की सतत आवश्यकता रहती थी। मकान भी सुविधाजनक नहीं था। तपस्वी श्री फकीरचन्द जी म. एवं बाबा जी म. की सेवा का सारा भार भी गुरुदेव ही वहन करते थे। हर कार्य इतना व्यवस्थित और नियमित होता था कि बहुधा गुरुदेव फरमाया करते, 'मैं मशीन की तरह काम करता था। आराम का तो काम ही नहीं था। तीन समय आहार लाना, सारा पानी लाना, प्रवचन करना, श्री बनवारी लाल जी म. को नन्दीसूत्र सुनाना, उनकी हर जरूरत का ख्याल रखना, वस्त्रादि-प्रक्षालन करना अर्थात् सारा दिन व्यस्त, अतिव्यस्त रहना। श्री बनवारी लाल जी म. रात के दस बजे के बाद आराम करते, उनके बाद मैं लेटता और उनके उठने से पूर्व ही प्रातः 3 बजे के करीब उठ जाता।' एक बार गुरुदेव को तेज बुखार हो गया। लेकिन बड़ों को होने वाली तकलीफ के भय से किसी को बताया नहीं। सारे काम पूर्ववत् करते रहे। दवा भी नहीं ली। लेते तो किससे पूछकर? पूछते, तो बुखार का बताना पड़ता। जब शाम को श्री बनवारी लाल जी म. को शौचादि के लिए सहारा देकर ले जाने लगे, तो उन्होंने महसूस किया कि हाथ गर्म है। कारण पूछा। गुरुदेव का सारा शरीर टूटा जा रहा था। कहना पड़ा कि बुखार है। वे बोले—'फिर तूने बताया क्यों नहीं?' गुरुदेव की आँखों में आँसू आ गए। चरणों में गिरकर बोले कि 'इसलिए नहीं बताया कि आपको तकलीफ होती'। सुनते ही वे गद्गद हो गए। नीचे ले गए। सिर पर हाथ फेरा। मांगलिक सुनाई। कहा, 'थोड़ी देर आराम कर ले, ठीक हो जाएगा' और सचमुच ही आधे घण्टे में बुखार उतर गया।

मूनक क्षेत्र पूर्वजों की पुण्यभूमि था और स्थिरवास के लिए उपयुक्ततम क्षेत्र माना जाता था। वहां पर गणावच्छेदक पूज्य श्री जवाहर लाल जी म. कई वर्ष ठाणापति रहे। इतना होने पर भी वहाँ अपने समाज की कोई स्थानक नहीं थी। दस घर भावड़ों के थे और पचास घर अग्रवाल जैनों के। अधिकांश लोग चाहते थे कि समाज की अपनी स्थानक हो, ताकि सभी घरों का जुड़ाव हो। पर समाज के कुछ मुखिया लोग आपसी रंजिश के कारण बात सिरे नहीं चढ़ने देते थे। बड़े-बड़े सन्तों ने मसला सुलझाने की कोशिश की, पर फिर वही ढाक के तीन पात। यहाँ तक कि आचार्य श्री कांशी राम जी म. ने भी मनमुटाव मिटाने की कोशिश की, पर मिटा नहीं सके। पूज्य श्री बनवारी लाल जी म. इस मसले को सुलझाना चाहते थे। पर इस आशंका से भी चिन्तित थे कि कहीं स्थानक बनाने के चक्कर में ही कुछ घर रूठ और टूट न जाएँ। पर जब उन्होंने गुरुदेव की प्रवचन-कला, व्यवहार-कुशलता, विनयशीलता, ओजस्विता, कर्मठता और उत्साह-शक्ति आदि गुणों को देखा, तो सोचने लगे कि ये काम केवल अभी हो सकता है। 'अभी नहीं तो कभी नहीं', वाली स्थिति थी। उन्होंने गुरुदेव को संकेत कर दिया कि इस मसले को सिरे लगा। बड़ों की आज्ञा और कृपा पाकर गुरुदेव निश्चिन्त और निर्भीक हो गए। प्रवचन में जोश था, मन-मस्तिष्क में होश था, अतः सारी समाज को झिंझोड़ना शुरू कर दिया। सब प्रमुख व्यक्तियों की चाल बदलने लगी। गुरुदेव किसी से व्यक्तिगत रूपेण रोष और तोष नहीं रखते थे। प्रवचन में भले ही कितनी लताड़ लगाते, पर बाद में किसी को मुँह नहीं लगाते थे। उनकी इस निष्पक्ष दृष्टि से लोगों की विचारधारा में परिवर्तन आने लगा। गुरुदेव ने ये कार्य बड़ों के आदेश व निर्देश के अनुरूप उठाया था, अतः व्यक्तिगत प्रतिष्ठा का तो प्रश्न ही नहीं था। अन्ततः क्षेत्र का नया स्वरूप सामने आया। वर्षों का रुका काम चालू हो गया। लोग हैरान थे कि पाँच वर्ष की दीक्षा के मुनि ने वह कार्य कर दिखाया, जो बड़े-बड़े धुरन्धर मुनिराज नहीं कर सके। इसी कारण मूनक समाज प्रारम्भ से ही गुरुदेव का परम आभारी रहा है। तपस्वी श्री फकीर चन्द जी म. तो गुरुदेव

पर इतने मेहरबान थे कि खुले आम कहा करते "भाई, सुदर्शन का क्या कहना? ये तो एक दिन आचार्य भी बन सकता है"। बड़े भोले और सरल उस तपस्वी महामुनि के शब्दों को मूनक वाले आज भी दोहराते हैं। मूनक के मौलिक परिवर्तन से संतुष्ट होकर वाचस्पति गुरुदेव ने चातुर्मासोपरान्त कहा था कि 'सुदर्शन, जितनी छोटी उम्र में तेरा पुण्य उदय में आया है, इतना मैंने और कहीं नहीं देखा।'

समाज के इस रूपान्तरण की प्रक्रिया में गुरुदेव को इस बात का भी भान था कि समाज-जागति की स्थिति में स्थानक-भवन का निर्माण भी होगा (और हुआ भी) और उस आरम्भ-समारम्भ में मैं भी परोक्षरूप में भागीदार बनूँगा। अतः उन्होंने श्री बनवारी लाल जी म. से इस प्रसंग में होने वाले किसी भी सम्भावित अतिचार-दोष के लिए दण्ड भी ले लिया था। समाज का जागरण और एकीकरण उनका लक्ष्य था। स्थानक-निर्माण उसका आनुषंगिक फल था। अपनी संयम-मर्यादा के प्रति उनमें कितनी जागरूकता थी, इस बात का एक प्रसंग वहाँ के प्रधान श्री जगदीश राय जी जैन यदा-कदा सुनाते है, "मैं बाजार से सब्जी का थैला लेकर आ रहा था। सामने से तपस्वी फकीर चन्द जी म. और गुरुदेव आ रहे थे। मैंने वन्दना की। तपस्वी जी म. ने तो हाथ उठाकर मेरी वन्दना ले ली, पर गुरुदेव चुपचाप आगे बढ़ गए। निवास पर पहुँचकर तपस्वी जी म. ने गुरुदेव से कहा कि तूने जगदीश श्रावक की वन्दना क्यों नहीं ली? गुरुदेव ने निवेदन किया कि 'उस समय श्रावक जी के हाथ में कच्ची सब्जी थी'। तपस्वी जी म. इतने सरल थे कि कहने लगे, तू ठीक था, मैंने ही गल्ती की है। ऐसे महापुरुषों की महानता ही संसार को धन्य बनाती है।"

गुरुदेव ने नए-नए परिवारों को, व्यक्तियों को धर्म से जोड़ने में गहन प्रयास किया। ला. जसवन्तराय जी का परिवार उस काल की विशिष्ट उपलब्धि के रूप में आंका जाता है। किसी भी समाज-निर्माता मुनिराज को किन-किन विचित्र परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है उसका एक रोचक उदाहरण मूनक में भी घटित हुआ। एक रुचि-विहीन भाई को गुरुदेव ने नियम करवा दिया कि प्रतिदिन एक बार गुरुदर्शन अवश्य

करने। उसने नियम निभाना शुरू तो कर दिया, पर गैर-माकूल वक्त पर। वह रात के दस बजे के बाद दर्शन करने आता, जबकि वृद्ध संत विश्राम कर रहे होते। उसके आने से विक्षेप होना तो स्वाभाविक ही था। एक दो दिन तो यह समझा गया कि इसे अपने नियम की याद देर से आई होगी। दूसरी बात ये कि इसकी आदत दर्शनार्थ आने की बन जाएगी, तो धीरे-धीरे समय भी बदल लेगा। पर उस भक्त भाई ने अपना समय नहीं बदला और नियम-भंग भी नहीं किया। गुरुदेव को तो व्यक्तिगत रूप से कोई असुविधा नहीं थी, पर बुजुर्ग मुनियों की असुविधा को देखते हुए गुरुदेव ने उस भाई का नियम निभवाने का नायाब तरीका ढूँढ निकाला। दिन में किसी समय उसके घर चले जाते और फरमा देते कि तेरे दर्शन का नियम पूरा हो गया है। अब मैं प्रतिदिन तुझे घर पर ही दर्शन दे जाया करूँगा। बेचारा भाई असमंजस में पड़ गया। उसने अपने क्रम को ठीक किया और सही समय पर दर्शन करने आने लगा। समय पर आने से उसे धार्मिक बोध भी दिया जाने लगा। फिर तो उसकी धर्मरुचि स्वतः ही प्रस्फुटित हो गई और वह समाज के प्रमुख प्रबुद्ध श्रावकों की पंक्ति में गिना जाने लगा।

मूनक की समाज, अपनी ही समाज के एक युवक मंगूमल की प्रवृत्तियों से शर्मिन्दा रहती थी। व्यंग्य की भाषा में लोग उसे 'सर्वगुण संपन्न' कहते थे। कई प्रमुख संतों ने अपने तीर आजमा कर देख लिए थे, पर नाकामयाब। गुरुदेव जी म. उसे घर से निकालकर स्थानक में लाए। फिर प्रवचन व सामायिक तक बढ़ाया। सब कुव्यसन छूटे। प्रतिक्रमणधारी श्रावक बन गया। आज तो मंगूमल श्रावक का नाम सम्मान से लिया जाता है।

एक बार गुरुदेव अपने आराध्य श्री बनवारी लाल जी म. के चरणों में बैठे थे। अपने बड़ों के चरणों में बैठना उनका स्वभाव, शौक और धर्म था। बैठे-बैठे पूछने लगे-"गुरु म., मैं आपके चरणों में रह रहा हूँ, आप मेरी सेवा से संतुष्ट तो है ना? मेरी कमी हो तो फरमा देना, मैं तुरन्त सुधार कर लूँगा" पूछते-पूछते गुरुदेव की आँखें नम हो गई। श्री बनवारी

लाल जी म. भी भाव-विभोर हो गए। कहने लगे, "मैं तुझसे बहुत खुश हूँ। तुझसे मेरी आत्मा ठण्डी है। तेरी सेवा से मैं पूरी तरह संतुष्ट हूँ। मेरा मन गवाही देता है कि तेरे हाथों अनेक भव्य आत्माओं का निर्माण होगा। तेरी शिष्य-सम्पदा विशाल होगी।" गुरुदेव के लिए ये शब्द सदा स्मरणीय रहे। यह आशीर्वादमय अनमोल थाती पाकर ही गुरुदेव ने उस वर्ष को अपने जीवन का 'स्वर्ण-काल' कहा था।

सन् 1946 के अन्त में एक दिन गुरुदेव ने श्री बनवारी लाल जी म. को निवेदन किया कि 'मुझे रात को स्वप्न आया है कि पश्चिम दिशा में भयंकर आग लगी हुई है। आकाश बिल्कुल लाल है, खून के रंग जैसा'। श्री बनवारी लाल जी म. ने फरमाया मि 'लगता है देश में झगड़े और दंगे होंगे और खून बहने की सम्भावना है'। सन् 1947 आया। देश की आजादी नजदीक दिखने लगी, पर देशवासियों को उसके लिए भारी कीमत भी चुकानी पड़ी। हिन्दू-मुसलमानों में साम्प्रदायिक दंगे हुए। बिहार, बंगाल, यू.पी. और पंजाब में हिंसा का नंगा नाच हुआ। ऐसे माहौल में भी गुरुदेव ने रोजाना प्रवचन में शान्ति और सद्भाव का उपदेश दिया। सभी मूनक वालों से पुरजोर अपील की कि 'मूनक की धरती पर शान्ति का देवता बैठा है। इनकी छत्र-छाया में किसी का भी बाल बाँका नहीं होगा। तुम भी शान्ति रखना। किसी भी मुसलमान को मूनक में न मरने दिया जाए, न सताया जाए और न ही लूटा जाए।' गुरुदेव के प्रवचनों का बड़ा अच्छा असर पड़ा। मूनक पूर्णतः शान्त और हिंसा-मुक्त रहा। वहाँ के श्रावक लाला विलायती राम जी जैन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के मुख्य कार्यकर्ता थे। गुरुदेव ने उन्हीं की ड्यूटी लगाई कि यहाँ के प्रत्येक मुसलमान की रक्षा तुम्हें करनी है। उनकी ड्यूटी लगने के बाद तो और कहीं से कोई खतरा था ही नहीं। मूनक में सामने ही मुसलमान रांगड़ों का एक अमीर परिवार था। उस पर कुछ लोगों की नजर थी। लेकिन गुरुदेव की प्रेरणा-स्वरूप श्री विलायती राम जी के प्रभाव के कारण कोई गलत हरकत न कर सका और वह सारा परिवार सुरक्षित पाकिस्तान पहुँच गया। वहाँ पहुँचकर हसन मुहम्मद के बेटे शाह मुहम्मद ने ला. विलायती

राम जी को पत्र भिजवाया था। उस पत्र में उसने शुक्रिया करते हुए लिखा था कि "उस जैन पीर की मेहरबानी से और आपकी मदद से हम जान-माल-सहित सही ठिकाने पहुंच गए। उनको हमारा सलाम कहना"। मूनक वालों के मुख से गुरुदेव की यशोगाथाएँ सुन-सुन कर वाचस्पति गुरुदेव हर्ष-विभोर हो जाते। गुरुदेव की भावना थी कि मैं स्थायी रूप से ही श्री बनवारी लाल जी म. की सेवा में नियत हो जाऊँ क्योंकि उनकी परम प्रसन्नता का कपा-प्रसाद उनको अनेक बार प्राप्त हो चुका था। परन्तु वाचस्पति गुरुदेव प्रतिवर्ष वहाँ की ड्यूटी बदलते रहते थे। इसलिए सन् 1948 में सेवा का दायित्व तपस्वीराज श्री बदरी प्रसाद जी म. को मिला। उनकी सेवा अपने आप में बड़ी अनूठी थी। गुरुदेव जी म. बहुधा फरमाया करते कि श्री बनवारी लाल जी म. की सच्ची सेवा तो श्री तपस्वी जी म. ने ही की। संथारे में जितना सच्चा साज तपस्वी जी म. ने दिया, उतना कोई दे नहीं सकता। उस दौरान उन्हें कोई दोष नहीं लगने दिया। उसी सेवा का सुफल ये हुआ कि श्री तपस्वी जी म. को 72 दिन का संथारा उदय में आया।

गुरुदेव का सन् 1948 का चातुर्मास सुनाम का स्वीकृत हुआ। पूज्य तपस्वी श्री नेकचन्द जी म., बाबा श्री जग्गूमल जी म., श्री रामेश्वर जी म. एवं गुरुदेव जी म., इन चार मुनियों का चातुर्मास सुनाम के लिए एकदम नया था। इससे पूर्व सुनाप क्षेत्र श्री मयाराम जी म. की मुनि परम्परा से जुड़ा हुआ नहीं था। वाचस्पति गुरुदेव सुनाम की अपेक्षा संगरूर को अधिमान देते थे। वहाँ पर कई चातुर्मास किए, दीक्षाएँ की और मुनि-सम्मेलन किए। वहाँ घर थोड़े होते हुए भी बाबू खूबचन्द जी के कहने से चातुर्मास-हेतु तैयार हो जाते थे।

आज सुनाम क्षेत्र का जो यश, गौरव और वर्चस्व है, उसकी आधार-शिला गुरुदेव ने रखी थी और बाद में भी उसे सींच-सींच कर उस पर धार्मिक प्रासाद का निर्माण किया। उस वर्ष वाचस्पति गुरुदेव का चातुर्मास पास में संगरूर में था। सुनाम में प्रारम्भ में ही उत्साह पैदा हो गया और धीरे-धीरे वह उत्साह क्रान्ति में परिवर्तित हो गया। जैनों में

तो धर्मध्यान और सामायिक-संवर की ज्योति जगी ही, अजैन परिवारों में भी जैन धर्म के प्रति जो श्रद्धा बनी, वह पूरे इलाके के लिए अभूतपूर्व और अश्रुतपूर्व थी। सैंकडों नए घर जैन धर्म से जुड़ गए। गुरुदेव दो समय प्रवचन करते। नई-नई रचनाएँ बनाकर सुनाते। सेवा का सारा भार संभालते। उपदेशों का ये आलम था कि त्याग-वैराग्य-प्रधान प्रसंगों को सुनकर श्रोता रोने लगते थे। स्थानकवासी, मूर्तिपूजक, सनातनी, आर्य समाजी हर वर्ग के लोग गुरुदेव के प्रवचनों के दीवाने थे। श्वेताम्बर मूर्तिपूजक समाज के वर्तमान मूर्धन्य आचार्य श्री नित्यानन्द जी म. की माता जी उस समय कुमारी थी। वे रोज प्रवचन में आती। गुरुदेव के वैराग्यपूर्ण प्रवचनों को सनकर कहा करती कि यदि मैं लडका होती तो आपके चरणों में दीक्षा लेती। (बाद में उन्होंने साध्वी-दीक्षा ली और सन् 95 में लुधियाना में गुरुदेव के दर्शन भी किए)। सुनाम चातुर्मास में जैन समाज का जो रूप निखरा, वह आज तक कायम है। पर जो सैंकड़ों अजैन घर लगे थे, उनकी श्रद्धा कुछ स्थानकवासी सन्तों के क्रियाकलापों ने खराब कर दी। तेरापन्थ समाज ने उसका लाभ उठाया और उनमें से अधिकांश तेरापन्थी बन गए। इस चातुर्मास में अतिकठिन परिश्रम करने के कारण गुरुदेव के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। जो शरीर पुष्ट, सुदृढ़ और गठीला था, उसमें काफी शिथिलता आ गई।

गुरुदेव का सन् 1949 का चातुर्मास अपने बड़ों के चरणों में जीन्द निर्धारित किया गया। वयोवृद्ध श्री अमीं लाल जी म., तपस्वी श्री नेकचन्द जी म. सरीखे महान् सन्तों की सेवा का सौभाग्य भी मिला और जीवन में आगे बढ़ने के सूत्र भी उनसे प्राप्त हुए। गुरुदेव की तपस्या की भावना भी बनी। प्रथम बार नौ दिन की कठोर तपस्या की। पूरे नौ दिन नींद नहीं आई। दुर्बलता भी बहुत आई, पर दृढ़ संकल्प-शक्ति के बल पर लक्ष्य पर्ण किया। गुरुदेव की तपस्या से श्रीसंघ में भी खब लहर आई और घर-घर में तप हुए। पर इस तपस्या का एक दुखद पक्ष ये रहा कि गुरुदेव का पारणा निर्विघ्न नहीं रहा। जिन दो छोटे सन्तों की सेवा की जिम्मेवारी थी, उनकी आपस में खटपट हो गई और काम से छुट्टी ले ली। बड़े सन्तों

के समझाने पर भी नहीं माने। अन्ततः गुरुदेव को ही गोचरी लानी पड़ी और पानी भी एक-एक पात्रा करके कई बार लेकर आए। इससे मन में असमाधि बननी स्वाभाविक थी, पर गुरुदेव शिवशंकर बनकर विषपान की साधना करते रहे।

३. दिल्ली का दायित्व

पूज्यपाद बाबा श्री जग्गूमल जी म. धीरे-धीरे विहार करने में असमर्थ होते जा रहे थे। बड़ों का विचार बना कि उनके सुदीर्घ वास के लिए दिल्ली बारादरी (चाँदनी चौंक) उपयुक्त रहेगी। इस विचार को लेकर दिल्ली पधार गए। 26 जनवरी 1950 को श्री बाबा जी म. एवं गुरुदेव जी म. दिल्ली सदर बाजार पधारे। वहाँ से चाँदनी चौंक में प्रवेश किया। सौभाग्यवश उन्हीं दिनों राजस्थान से आचार्य-प्रवर श्री गणेशी लाल जी म. सा. का भी दिल्ली में पावन पदार्पण होने जा रहा था। आप आचार्यप्रवर श्री हुक्मी चन्द जी म. के सातवें पाट पर विराजमान थे। संयम, सरलता और सादगी के जीवन्त रूप थे। सारे चाँदनी चौंक में उनके पदार्पण की खुशी थी। गुरुदेव को भी उनके स्वागत का स्वर्णिम अवसर प्राप्त हो गया। सकल समाज को संगठित किया और बड़े भव्य रूप में आचार्यप्रवर का मंगल प्रवेश कराया। 'प्रथम दृष्टि का प्रेम' वाली उक्ति उन पर चरितार्थ हुई। गुरुदेव तो स्वभाव से ही परम विनीत, सेवा-भावी और गुणग्राही रहे हैं। आचार्य श्री को भी वे बहुत भाए। स्वास्थ्य के कारण से आचार्य श्री को वहाँ एक वर्ष तक विराजना पड़ा और गुरुदेव तो वहाँ गए ही ठहरने हेतु थे। आचार्य श्री जी गुरुदेव को अपने ही शिष्य के समान प्यार और दुलार देते थे। उनके पट्टधर सुशिष्य आचार्यप्रवर श्री नाना लाल जी म. सा. भी उस समय उन के चरणों में ही थे। वे बहुत स्वाध्यायशील और एकान्तप्रिय थे। उनकी जीवन शैली से गुरुदेव बहुत प्रभावित थे। एक दिन आचार्य श्री ने गुरुदेव से अपने तत्रस्थ मुनियों के विषय में पूछा तो गुरुदेव ने निष्पक्ष भाव से अर्ज करी कि आप के मुनिसंघ में श्री नानालाल जी म. बहुत उत्तम मुनिराज हैं और ये आपके धर्मवंश को बहुत आगे

बढ़ाएँगे। आचार्य श्री जी गुरुदेव के इस निष्कर्ष से परम सन्तुष्ट हुए। उन दोनों में किसी बात के लिए दुराव या पर्दा नहीं था। आचार्य श्री जी गुरुदेव को समय-समय पर बहुमूल्य हित-शिक्षाओं से भरपूर करते रहते थे और गुरुदेव उन्हें अपने मस्तिष्क में एवं पन्नों में अंकित कर लेते थे। उनके द्वारा फरमाए गए अमृत-वचनों को वे जीवन- भर अपने प्रवचनों में दुहराते रहे तथा आभार मानते रहे।

राजस्थान से आने वाले बड़े-बड़े श्रावकों से आचार्य श्री जी गुरुदेव का परिचय इस प्रकार करवाते, 'ये वाचस्पति जी के शिष्य हैं और मेरे भी शिष्य हैं'। आचार्य श्री जी मध्याह्न में विश्राम करते, तो गुरुदेव दरवाजे पर बैठकर आगन्तुकों को रोका करते। एक दिन एक भारी भरकम श्रावक राजस्थान से आया। पौड़ियाँ चढ़ते-चढ़ते उसकी साँस फूल गई। गुरुदेव से कहने लगा कि आचार्य श्री के दर्शन करने हैं। गुरुदेव ने विश्राम की बात कहकर उसे रोक दिया। वो फिर कहने लगा कि आचार्य श्री से कहो कि 'साण्ड आया है'। गुरुदेव जी म. उसकी आकृति और इस शब्द का तालमेल बैठाने लगे। तभी आचार्य श्री ने स्वयं ही आवाज देकर उस श्रावक को बुला लिया। आचार्य श्री ने श्रावक से गुरुदेव का परिचय कराया। तब श्रावक जी ने विनयपूर्वक उठ-बैठकर गुरुदेव को वन्दना की। बाद में गुरुदेव को पता लगा कि 'साण्ड' उनका गोत्र था।

गुरुदेव जी म. आचार्य श्री के चरणों में घण्टों बैठे रहते। उन्हें टहलाते, वैयावृत्य करते। आचार्य श्री स्वयं भी श्री जग्गूमल जी म. को "बाबा जी म." कहते। गुरुदेव पूछते 'आचार्य प्रवर, आप इन्हें बाबा क्यों कहते हैं?' वे फरमाते 'तेरे बाबा, तो मेरे भी बाबा।' इतनी घनिष्ठ आत्मीयता आपस में बन गई थी। कभी-कभार यदि बाबा जी म. को पेट में वायु का प्रकोप होता, तो आचार्य श्री जी खुद उन्हें घुमाने लगते। आचार्य श्री गुरुदेव के प्रवचनों से भी बहुत प्रभावित थे। मारवाड़ी श्रावकों से कहते कि इनका व्याख्यान सुनो। 'मेरो व्याख्यान जूनो (पुराना है), इनको नयो है।' इस कथन में उनका कृपा-प्रसाद तो निहित था ही, एक यथार्थ की स्वीकृति भी थी।

घर में रहते हुए तथा दीक्षा के पश्चात् दूसरे वर्ष में गुरुदेव चाँदनी चौंक की बहारों के द्रष्टा रहे थे, पर इस वर्ष उन बहारों के स्रष्टा बनकर आए थे। पूज्यपाद आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. की छत्रछाया ने उन बहारों में और भी सौन्दर्य भर दिया। वहाँ पर्यूषणों के नजारे तो सबसे अनूठे होते ही हैं। संवत्सरी पर जो समा बंधा, वह एक इतिहास का हिस्सा ही था। और हाँ, संवत्सरी के अगले दिन दिनभर वर्षा होती रही, जिससे उस दिन भी सब युवा, वृद्ध, स्वस्थ-अस्वस्थ मुनियों को चौविहार बेला ही करना पड़ा। संतों ने तो छठ के दिन भी संवत्सरी का ही आनन्द लिया।

गुरुदेव ने बारादरी-स्थित 'महावीर जैन लाइब्रेरी' से बहुत लाभ उठाया। वे अपना अधिकतम समय पुस्तकों के वाचन में लगाते थे। जन-सम्पर्क से बहुत दूर थे। दर्शनार्थियों का तो कोई प्रपंच था ही नहीं। कोई आता भी, तो ध्यान नहीं देते थे। अपनी पढ़ाई में लीन रहते। कभी-कभार कोई बहन यदि दो-चार मिनट के लिए कुछ पूछने बैठ जाती, तो श्री बाबा जी म. फौरन टोक देते कि 'क्यों बातों में समय बरबाद कर रहा है, अपनी स्वाध्याय कर'। उस वर्ष गुरुदेव के साथ श्री रामचन्द्र जी म. एवं उनके भाई श्री हुक्म चन्द्र जी म. भी चातुर्मास में थे। दोनों की प्रकृति बड़ी विषम और उग्र थी। बात-बेबात पर आपस में झगड़ने लगते। बीच-बचाव गुरुदेव को करना पड़ता और कई बार उनका कोप भी झेलना पड़ता। इससे गुरुदेव के मन पर कई बार असमाधि भी बन जाती। अपने मन की व्यथा किसे बताते? अन्ततः उन्होंने एक दिन आचार्य श्री जी को अपनी सारी व्यथा-कथा बता दी। उन्होंने उपाय सुझाया कि प्रतिदिन 'विनय चन्द चौबीसी' का तन्मय भाव से सस्वर पाठ करो। गुरुदेव ने बड़ी भावना से पढ़नी शुरू कर दी। इसका बड़ा आश्चर्यकारी परिणाम तब देखने को मिला, जब दोनों भाइयों ने चातुर्मासोपरान्त विहार करने की घोषणा कर दी। यद्यपि इससे पूर्व दोनों यही कहते थे कि हम तो यही रहेंगे। उनके जाने से गुरुदेव का मानसिक भार काफी कम हुआ और पूर्ण समाधि-भाव से अपने दैनिक कृत्यों में लीन हो गए।

आचार्य श्री जी के विहार के पश्चात् गुरुदेव जी म. श्री बाबा जी म. के साथ कोल्हापुर रोड़ पधार गए। सन् 1951 का चातुर्मास वहीं हुआ। पूज्य आचार्य श्री गणेशी लाल जी म. के सुशिष्य श्री नाना लाल जी म. भी अस्वास्थ्य के कारण कोल्हापुर रोड़ पर ही विराजमान रहे। उनकी सेवा में श्री सुन्दर लाल जी म. थे। इस तरह दोनों परम्पराओं का घनिष्ठ स्नेह पनपता रहा। प्रवचन आदि का सारा दायित्व गुरुदेव जी म. ही वहन करते थे। रावलपिण्डी के श्रावकों पर गुरुदेव की अमिट छाप पड़ी और वे सदा-सदा के लिए गुरुदेव के अनुयायी बन गए। चातुर्मास के दौरान एक बार श्री बाबा जी म. को अचानक 105° बुखार हो गया। दवाई का उनको त्याग था। शरीर एकदम निढाल हो गया। गुरुदेव का मन अनेक कुशंकाओं से ग्रस्त हो गया। वाचस्पति गुरुदेव सुदूर पंजाब में थे। यदि बाबा जी म. को कुछ अनहोनी हो गई, तो ये फिर निपट अकेले

और असहाय रह जाते। आँखों में आँसू भर लाए। आहार भी नहीं लाया गया। बाबा जी म. ने देख लिया। तुरन्त उठ बैठे। बोले, 'घबराता क्यों है? जा, लिकड़ा (थर्मामीटर) ले आ। चार बजे देख लेना, बुखार ठीक हो जाएगा'। एक बजे बुखार 105° था। चार बजे कैसे उतरेगा, ये बात गुरुदेव की समझ से परे थी। परन्तु तीन बजे अचानक ही बाबा जी म. को जोरदार पसीना आया। चार बजे देखा तो तापमान 99° था। वे बैठ गए और कहने लगे, "मैं अभी कहीं नहीं जाता। तेरे चेले बना कर ही मरूँगा"। ये भविष्यवाणी किसी आम व्याक्ति की नहीं, एक वचन-सिद्ध महापुरुष की थी।

इस चातुर्मास के अन्त में गुरुदेव को अपैण्डिक्स की तकलीफ हुई। शल्य-चिकित्सा के अलावा और कोई चारा नहीं था। किसी समर्थ, सेवानिष्ठ मुनिराज को सेवा-हेतु छोड़ने का सवाल आया तो वाचस्पति गुरुदेव ने श्री भण्डारी जी म. को नियुक्त कर दिया। यद्यपि श्री भण्डारी म. को वाचस्पति गुरुदेव से अलग करना असम्भव-सी बात थी। क्योंकि वे ही उनका सारा कार्यभार संभालते थे। उनकी हर छोटी-बड़ी जरूरत का बड़ी आत्मीयता और तत्परता से ध्यान रखते थे। गुरुदेव की सेवा में

उनकी नियुक्ति को सबने विस्मयकारी माना। वाचस्पति गुरुदेव के साथ श्री भण्डारी जी म. का उस समय रहना वैसे भी परम आवश्यक था, क्योंकि वाचस्पति गुरुदेव एक विशेष अभियान पर गतिमान् थे। 1933 के बाद 1952 में स्थानकवासी मुनियों को एकसूत्र में आबद्ध करने के लिए सादड़ी (राजस्थान) में सम्मेलन होने जा रहा था। पंजाब के प्रतिनिधि के रूप में जाने के कारण उनके ऊपर कार्य का बहुत भार था। समाज को भी बड़ी आशाएं थी। समय अल्प और सफर अधिक। ऐसे में एक समर्थ सेवा-परायण मुनिराज तो साथ होना ही चाहिए था। पर बड़े गुरुदेव जानते थे कि सुदर्शन मुनि को आराम का मौका नहीं मिला, तो इसका स्वास्थ्य प्रभावित हो जाएगा। इस युवा मुनि में सेवा के प्रति अदम्य उमंग है। अपने बाबा जी की शुश्रूषा में लीन रहने से ये अपनी सेवा की चिन्ता नहीं करेगा। अतः मेरी आवश्यकता से ज्यादा जरूरत इसकी है। इस भावना से अपने सुयोग्य शिष्य की सेवा में संघ के सर्वोत्तम सेवा-भावी मुनि-प्रवर श्री भण्डारी बलवन्त राय जी म. को रखा। अपैण्डिक्स का आपरेशन तो बड़े गुरुदेव ने अपने सामने ही करवाया, पर सम्मेलन का समय अतिनिकट होने से शीघ्र ही सादड़ी की ओर प्रस्थान कर दिया। निरंतर तीन वर्ष तक श्री भण्डारी जी म. पूज्य गुरुदेव पर अपनी सुखद कृपा बरसाते रहे।

कोल्हापुर रोड़ के बाद गुरुदेव जी म. फिर बारादरी चाँदनी चौंक में पधार गए। 1952 का चातुर्मास चाँदनी चौंक में ही हुआ। तब पूज्यपाद श्री योगिराज जी म. भी पधार गए। प्रवचन की कमान उन्हीं के हाथों में थी। पूज्यपाद श्री योगिराज जी म. का वात्सल्य भी गुरुदेव के प्रति असीम था। उनकी छत्रछाया में गुरुदेव को पूर्ण समाधि रही। सन् 1952 से सन् 1959 तक निरंतर आठ वर्ष वहीं पर श्री बाबा जी म. की सेवा में स्थिरवासी रहे। वहाँ पर जो धर्म-श्रद्धा का गहरा बीज-वपन गुरुदेव के हाथों हुआ, उसके ऋण से क्षेत्र से बच्चा-बच्चा आज तक अपने को ऋणी महसूस करता है। वहाँ की युवा पीढ़ी के जीवन को गुरुदेव ने अपने हाथों में लिया और एक कुशल शिल्पी किंवा पारखी जौहरी की तरह खूब घड़ा। उनको जैनत्व का तलस्पर्शी ज्ञान दिया। धर्म, धर्मगुरु और धर्मस्थानक से

उनको जोड़ा तथा कार्य करने की लगन, दिशा और उत्साह-शक्ति उनमें भरी। गुरुदेव ने स्वयं अपने ज्ञान-क्षितिज का भी खूब विस्तार किया। वहाँ स्थित 'महावीर जैन लाइब्रेरी' की प्रायः हर उपयोगी पुस्तक को गुरुदेव ने पढ़ डाला। महान् शास्त्रज्ञ सुश्रावक श्री मोहन लाल जी गन्धी से गुरुदेव ने तीस आगमों (चन्द्र-प्रज्ञप्ति, सूर्य-प्रज्ञप्ति को छोड़कर) का कई बार पारायण किया। सन् 1953 के चातुर्मास में श्री तपस्वी जी म., श्री सेठ जी म. तथा गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने भी श्रावक जी से आगमों की वाचना ली। गुरुदेव श्रावक जी की बड़ी विनय करते थे। आगमज्ञान के अतिरिक्त उनसे संयमानुकूल अन्य शिक्षाएँ भी लेते थे। श्रावक जी पान खाने के अभ्यस्त थे, पर गुरुदेव ने उनको कभी नहीं टोका। श्रावक जी को कई बार पढ़ाते-पढ़ाते नींद की झपकी भी आ जाती थी, पर उनका आगमों पर इतना अधिकार था कि उस स्थिति में भी शास्त्र-पाठ अस्खलित रूप में चलता रहता थ। गुरुदेव ने उनके उपकार को केवल उसी समय स्वीकार नहीं किया, अपितु जीवन-पर्यन्त अपने प्रवचनों में उसका उल्लेख करते रहे और उनका आभार मानते रहे।

चाँदनी चौंक के बड़े-बड़े दिग्गज श्रावक भी गुरुदेव के प्रवचनों से प्रभावित थे। सब ओर प्रवचनों की धूम थी। कई तो ऐसे दीवाने थे कि गुरुदेव प्रवचन फरमाते, तो ही बारादरी आते, वर्ना नहीं। श्री चम्पालाल जी चोरड़िया बड़े सुकोमल सुखसीलिए, नजाकत और नफासत वाले श्रावक थे। ऊपर-नीचे चढ़ने-उतरने में तकलीफ मानते थे। अतः पहले नौकर भेज कर पता करा लेते कि आज कथा कौन करेंगे। गुरुदेव करते, तो ही वे आते, वर्ना छुट्टी कर लेते। गुरुदेव का ये असूल था कि बारादरी में कोई भी आगन्तुक सन्त आते, तो कथा उन्हीं को सौंप देते। ये कहते कि 'हम तो यहाँ हैं ही, आप कथा फरमाएँ'। बारादरी के 8-9 वर्ष के प्रवास के दौरान गुरुदेव प्रायः प्रतिदिन प्रवचन करते और कमाल ये कि रोजाना ही नया विषय, नई सामग्री, नई कहानी, नए शेरो-सुखन और नई कविताएँ सुनाते। सबका आधार आगम-मूलक होता था और श्रोता सुनकर चकित हो जाते थे। यदि कभी गुरुदेव को नजला-जुकाम हो जाता या गले पर

दबाव पड़ जाता, तो भी प्रवचन करने की कोशिश रहती। ऐसे मौके बाबा जी म. का आग्रह रहता कि 'प्रवचन जरूर करना है। भले ही थोड़ी देर कर, चाहे आगम की केवल दस गाथा ही सुनाकर आ जाना। संघ की सेवा का अनमोल अवसर नहीं खोना चाहिए'। और गुरुदेव कर देते। गुरुदेव ने स्वयं भी कई सुन्दर-सुन्दर ढालें और भजन बनाए। अनेकों एकांकी, कहानी, नाटक और रूपक लिखे। उन जैसा संग्रहकार शायद ही कोई हो। बड़ी तेज स्पीड से उदाहरण को लिख लेते थे, मानो कोई Short Hand में लिख रहा हो। सन् 1991 में गुरुदेव ने स्वरचित काव्यों और ढालों की 20-25 मोटी डायरियाँ फाड़कर परठवा दी। श्री आदीश मुनि जी ने कारण पूछा तो फरमाने लगे कि 'ये भी एक परिग्रह है, इनकी ममता नहीं करनी'। दूसरी एक आशंका उन्हें और भी थी कि उनके बाद कोई संत इन्हें प्रकाशित न करा दे।

गुरुदेव का चिन्तन और आचरण बड़ा विलक्षण था। उन ऊँचाइयों को शायद ही कोई समझ और बूझ सकता है। प्रवचन-कला में सिद्धहस्त और ख्याति प्राप्त होने के बावजूद भी गुरुदेव को इस उपलब्धि पर कोई अभिमान नहीं था। उसमें निरन्तर विकास की आशा और प्रयास रखते। स्वयं भी, औरों के द्वारा भी। इसके लिए उन्होंने शुरू से ही चाँदनी चौंक के कुछ गम्भीर, सुविज्ञ एवं हितैषी श्रावकों की ड्यूटी लगा रखी थी कि कथा में किसी भी प्रकार की कोई कमी देखें, तो निस्संकोच कहना, ताकि उसका परिष्कार हो सके। उन मान्यवर श्रावकों में गुजराती भाई जमनादास जी, निहाल चन्द जी चोरड़िया, दीपचन्द चोरड़िया तथा मा. शाम लाल जी थे। बाद में सुश्रावक श्री केसरी चन्द जी पालावत एवं श्री पन्ना लाल जी छजलानी को भी गुरुदेव ने यह भार दिया था। गुरुदेव सदा यही मानते थे कि प्रवचन अपने आप में साध्य नहीं है। यह तो केवल शासन-प्रभावना का साधन मात्र है। प्रवचन सुनाते समय भी यही भावना रहती थी कि मैं अपने को सुना रहा हूँ, श्रावक तो मात्र माध्यम हैं। प्रवचन सुनाने के बाद भी वे कभी अहंभाव का उदय नहीं होने देते थे। 'गुरुदेवों की कृपा से जो मुझे मिला है, आपके समक्ष रखूगा,' यह वाक्य भी गुरुदेव

ने ही प्रारम्भ किया। विनम्रता का सूचक ये वाक्य आगे उनके शिष्यों में भी प्रचलित हुआ। गुरुदेव ने दिल्ली में गांधी-साहित्य का भी काफी अध्ययन किया और उसका प्रभाव अन्त तक उनके ऊपर रहा। यद्यपि गुरुदेव के प्रवचनों का विश्लेषण या मूल्यांकन करना सर्वथा असम्भव है, क्योंकि वे अपने आप में बेजोड़ थे, फिर भी कुछ बिन्दुओं पर गौर करने से निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं-1. उनकी वाणी स्पष्ट और तेज थी। कितनी ही भीड़ क्यों न हो, अन्त तक एक-एक अक्षर साफ सुनाई देता था। 2. विषय बहुत सरल और सर्वजनग्राह्य होता था। कोई भी प्रसंग हो, उसमें अपनी आत्मा उंडेल देते थे। 3. समाज-जागरण के अनमोल सूत्र प्रस्तुत करते थे। 4. भाषा शब्दाडम्बर से रहित, हृदय को छूने वाली होती थी। 5. विभिन्न दिवसों सामायिक-दिवस, तपस्या-दिवस, बाल-दिवस, महिला दिवस, मित्र-मिलन-दिवस आदि के आयोजनों द्वारा समाज में नई चेतना का संचार करते थे। 6. सभी धर्मों के, विशेषकर रामायण के, प्रसंग निष्पक्ष भाव से सुनाते थे। 7. हास्य रस का पुट भी बराबर डालते थे। सभी आयुवर्गों में शायद ही कोई श्रोता ऐसा हो, जिसका मन हास्यरस से न गुदगुदाता हो। 8. अपने व्यक्तिगत जीवन एवं पूज्य मुनिराजों के जीवन-प्रसंगों का प्रचुरता से उल्लेख करते थे। 9. भजन दोहे शेर आदि काव्य-विधाओं का सहारा लेते थे। सब श्रोता जब उनमें पीछे-पीछे बोलते, तो अजीब लहर आ जाती थी। 10. सामाजिक रूढियों और करीतियों पर स्पष्ट और सारगर्भित चोट करते थे। 11. एक मूल कथा प्रारम्भ करके दस अवान्तर कथाएँ भी प्रक्षिप्त कर दें, तो भी मूल कथा को नहीं भूलते थे। प्रवचन के अतिरिक्त श्रोताओं के लिए आकर्षण का जो कारण बनता था, वह थी गुरुदेव की स्मरण-शक्ति। उनकी धर्म-सभा में जो भी व्यक्ति एक बार आ जाता था, उसका नाम एवं पूरा परिचय उन्हें सदा याद हो जाता था। इससे श्रावक-वर्ग का उनसे आत्मीयता-पूर्ण सम्बन्ध बन जाता था।

गुरुदेव के प्रवचनों से सैंकड़ो, हजारों भव्यजनों के जीवन में मोड़ आया। कइयों का अन्तर्मन वैराग्य-भावना से भावित हुआ तथा कितने ही युवक-युवतियों ने संसार छोड़कर दीक्षा ग्रहण की। दिल्ली-प्रवास में गुरुदेव

को अपने गण के अतिरिक्त भारत-भर के अन्य सम्प्रदायों के मुनियों के पावन दर्शन भी हुए। उनकी सेवा और सान्निध्य का लाभ भी उनको मिला। गुरुदेव सबकी विनय करते, सब के प्रति मधुर व्यवहार रखते थे। ऐसे पूज्य पुरुषों की सुदीर्घ श्रृंखला में आचार्य श्री गणेशी लाल जी म., श्री नाना लाल जी म., आचार्य श्री हस्ती मल जी म., ज्योतिषाचार्य श्री कस्तूर चन्द्र जी म., मालव-प्रान्तीय श्री विनय मुनि जी म., उपाध्याय श्री पुष्कर मुनि जी म. एवं तपस्वी श्री रोशन लाल जी म. प्रमुख थे। सदर बाजार में विराजित सरल-आत्मा श्री भागचन्द जी म. एवं श्री त्रिलोक चन्द्र जी म. के दर्शन तो गुरुदेव बहुधा करते ही रहते थे। श्री भागमल जी म. गुरुदेव को संयम-सुमेरु चारित्र-चूडामणि श्री मयाराम जी म. के विषय में बहुत कुछ जानकारी देते थे। उनके शिष्य पंडित श्री त्रिलोक चन्द्र जी म. का लोच करने भी गुरुदेव ही जाते थे। उनको लोच के लिए आया देखकर हँस कर कहते, 'हमारा नाई आ गया'। श्री विनय मुनि जी म. की प्रवचन-शैली से गुरुदेव बड़े प्रभावित थे। उन्होंने भी गुरुदेव की विनय से प्रभावित होकर अपने सारे भण्डार खोल कर रख दिए और बहुत-सी सामग्री गुरुदेव को लिखने को दी। उनके मुख पर बड़े श्रोताओं के लिए 'बापू' शब्द चढ़ा हुआ था। गुरुदेव के मन पर उनकी कथा का ऐसा जादू था कि उनके विहार के बाद गुरुदेव ने भी कथा में 'बापू' शब्द का व्यवहार करना शुरू कर दिया। इस पर सुश्रावक श्री जमनादास जी ने एक बार वन्दना करते हुए गुरुदेव को अर्ज की कि 'अपने मुँह पर अपने ही शब्द अच्छे लगते हैं, किसी और के नहीं।' गुरुदेव ने तत्काल उस शब्द का प्रयोग छोड़ दिया।

जीवन के हर मोड़ पर गुरुदेव ने अपने संयम और गुरुजनों की संयम-परम्परा का ध्यान रखा। श्री बाबा जी म. भी गुरुदेव को समय-समय पर चेताते रहते थे। एक बार श्री विमलमुनि जी बारादरी आए। महावीर जैन स्कूल में प्रवचन का कार्यक्रम था। गुरुदेव भी पधार रहे थे। जब चलने से पूर्व बाबा जी म. को वन्दना की, तो वे फरमाने लगे, 'देखना, लाट फकीर (लाउड स्पीकर) में नहीं बोलना। गुरु महाराज की मनाही है।

हमें तो संयम पालना है, कोई इज्जत के झण्डे नहीं गाडने'। इस प्रकार के संयमीय परिवेश में गुरुदेव ने साँस लिए थे। चाँदनी चौंक का आबालवृद्ध इस तथ्य की सगर्व घोषणा करता है कि अपनी भरपूर जवानी की उम्र में गुरुदेव दिल्ली में लगातार नौ साल रहे, पर क्या मजाल कि कोई जरा-सा भी छींटा उनके संयम की दुग्ध-धवल चादर पर लगा हो। 'जहा पोम्मं जले जायं णोवलिप्पई वारिणा' के मूर्तिमान् उदाहरण थे गुरुदेव।

सन् 1953 में गुरुदेव जी म. को टाईफाइड बुखार हो गया। चातुर्मास का समय निकट था। बारिशें प्रारम्भ हो गई थी। किंकर्तव्यविमूढ़ता की स्थिति थी। अन्ततः ला. दुलीचन्द जी के जरिए जीन्द में विराजित घोर तपस्वी श्री बदरी प्रसाद जी म. सा. को पधारने की प्रार्थना की गई। श्री तपस्वी जी म. का चातुर्मास कसून माना हुआ था, परन्तु सेवा के किसी भी अवसर से वे चूकते नहीं थे। और अब तो गुरुदेव के चरणों में जाना था। गुरुदेव से उनकी गहरी आत्मीयता थी। किसी भी कष्ट की परवाह न करते हुए तीनों महामुनिराज दिल्ली के लिए चल पड़े। वर्षा के कारण सब रास्ते बन्द हो गए थे। केवल रेलवे लाइन का रास्ता था, वह भी रोड़ियों से और फिसलन से भरा था। पड़ावों के लिए गाँव भी कम थे। बारिशों का दौर था। कई-कई घण्टे बाद वर्षा थमती और खाली पेट भूखे ही विहार करना पड़ता। रातें भी कई बार स्टेशनों पर ही काटी, लेकिन श्री तपस्वी जी म. परीषह-विजेता थे। सेवा-साधना के अनुपम प्रतिमान थे। दिल्ली पहुँचकर सेवा की कमान संभाल ली। प्रवचन की कमान संभाली आगम-रत्नाकर गुरुदेव श्री रामप्रसाद जी म. ने। ये चातुर्मास गुरुदेव के लिए बहुत साता-समाधि-कारक रहा।

बाबा श्री जग्गूमल जी म. की सन् 1951 में की गई भविष्यवाणी का अब असर शुरू हो गया। सन् 1953 में गुरुदेव के श्रीचरणों में कई बालक वैराग्य-भावना लेकर आए। गुरुदेव सबको धर्म-शिक्षा देते। वे खाना-पीना अपने घर में करते और शेष समय गुरु-चरणों में रहते। वे वैरागी भी थे, गृहस्थ भी थे। इसी क्रम में सन् 1955 में एक युवक प्रेमचन्द जैन (परिवर्तित नाम प्रमोद मुनि) गुरुचरणों में प्रव्रजित भी हुआ, पर उसे सन्

1971 में निष्कासित करना पड़ा। मुख्य रूप से गुरुदेव जी म. के श्री चरणों में आने वाले थे—श्री प्रकाशचन्द जी म, श्री शास्त्री पद्म चन्द्र जी म. एवं श्री शान्ति मुनि जी म.। उनके साथ कई और बालक भी आए, पर वे दीक्षा तक नहीं पहुँच पाए। इस क्रम में मैं मधुकान्त भाई का उल्लेख जरूर करना चाहूँगा। चाँदनी चौंक में एक गुजराती परिवार था— श्री बाबू भाई एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सविता जैन का। दोनों ही परम धर्म-निष्ठ थे। आगम की भाषा में उन्हें 'अट्ठिमिज्जा-पेमाणुरागरत्ते' कह सकते हैं। वे गुरुदेव के भक्त थे और गुरुदेव भी उनके प्रशंसक थे। जब उनकी प्रथम सन्तान गर्भ में थी, तभी उन्होंने आजीवन शीलव्रत ग्रहण कर लिया था। पुत्र-लाभ हुआ। नाम रखा मधुकान्त भाई। दोनों पति-पत्नी एकान्तर तप की साधना करते थे। बाब भाई तो एक व्रत से बढ़ते-बढ़ते बेले-तेले और चौले के एकान्तर तक पहुँच जाते थे। वे साधारण कारोबार से संतुष्ट रहते। उनका पुत्र मधुकान्त गुरुचरणों में प्रवचन सुनने व धर्म सीखने आता। धीरे-धीरे दीक्षा की भावना बनी। माता-पिता से पूछा। दोनों ने सहर्ष आज्ञा दे दी। जब ये बात गुरुदेव को पता लगी तो वे गंभीर चिन्तन में लीन हो गए। मधु के माता-पिता से कहा कि "यदि आप दोनों भी दीक्षा लेना चाहते हो, तो मधु को हम अपने पास रख सकते हैं। अन्यथा ये आपकी सेवा करे, यही समुचित है। ये आपका एकमात्र पुत्र है। आगे भी आपको यावज्जीवन शील का नियम है, इसलिए वार्धक्य में आपकी सेवा का भार इसे ही वहन करना चाहिए। पितृ-ऋण से उऋण होकर ही यह निवृत्ति-पथ पर जाए, हमारी यह भावना है। मुझे शिष्य-वृद्धि की भावना नहीं है। यह आप सरीखे महान् तपस्वी-युगल की सेवा करे, यही सर्वोत्तम धर्म है"। माता-पिता दोनों ने फिर भी गुरुदेव को मधु को दीक्षित करने व स्वयं द्वारा बाधा न बनने की भावना जताई, पर गुरुदेव ने मधु को उसी दिशा में चिन्तन करने की प्रेरणा दी और धीरे-धीरे वह भी समझ गया।

श्री प्रकाशमुनि जी म. को सन्त-सेवा का काफी शौक था। आचार्य श्री गणेशी लाल जी म. से इन्होंने गुरु-धारणा ली थी। उनका विहार होने पर गुरुदेव से अनुराग जुड़ा। पूजनीय माता श्रीमती चमेली देवी जी एवं

पिता श्री पन्ना लाल जी भंसाली का प्रोत्साहन मिला, तो दीक्षा के भाव जागृत हुए। गुरु-चरणों में आकर हिन्दी की 'रत्न', 'प्रभाकर' तथा संस्कृत की 'विशारद' परीक्षा उत्तीर्ण की। इनके समकाल ही श्री पद्‌म मुनि जी म. का आगमन हुआ। इनका आगमन भी एक करुणा, प्रेम तथा प्रायश्चित्त का समन्वित अध्याय है। पूज्य गुरुदेव अपने गृह-त्याग से पूर्व जाते-जाते इनको एक रूपया देकर गए थे। शायद वही आकर्षण इन्हें इधर खींच लाया। दूसरा एवं मुख्य कारण था- इनकी माता श्रीमती कलावती जी का संकल्पात्मक भाव। गुरुदेव के दिल्ली-प्रवास में उन्होंने खूब धर्मलाभ लिया। 'जवाहर-किरणावली' की संपूर्ण श्रृंखला पढ़ी। बारादरी के समीप जैन कन्या पाठशाला की बिल्डिंग में रहकर अठाई तप किया। गुरुदेव के प्रवचन सुनकर उनका कण-कण भाव-विभोर हो जाता था। हृदय में एक बात बार-बार उठती कि 'यदि मुझे पहले पता होता तो मैं घर में श्री सुदर्शन मुनि जी से काम नहीं कराती। खुद ही इनकी सेवा करती। उस मानसिक अपराध का मैं क्या प्रायश्चित्त करूँ? हाँ, यदि मेरा कोई सुपुत्र इनके चरणों में दीक्षित होकर इनकी सेवा करे, तो मेरा प्रायश्चित्त हो जाएगा'। उनके ये भाव जानकर गुरुदेव का ध्यान कलावती जी के तृतीय सुपुत्र हरीश जी पर गया, पर खुद कलावती जी को सर्वाधिक प्रिय कनिष्ठ पुत्र पद्‌मचन्द्र जी थे। इस प्रकार उनको ही गुरुदेव को समर्पित कर उसने भार हल्का किया। श्री पद्‌मचन्द्र जी की बुद्धि बड़ी कुशाग्र थी। उन्होंने संस्कृत की 'शास्त्री' उत्तीर्ण की और आजकल तो 'श्री शास्त्री जी म.' के नाम से ही जाने जाते हैं। इस नाम के आद्य प्रस्तोता हैं— परम् आराध्य गुरुवर्य श्री राम प्रसाद जी म.। बाद में धीरे-धीरे यही नाम लोकप्रिय होता गया। श्री शास्त्री जी म. की दीक्षा से पूर्व कलावती जी कैंसर रोग से ग्रस्त हो गई थी। देह दुर्बल होती जा रही थी।

मृत्यु-शय्या पर लेटे-लेटे ही उन्होंने अपने पतिदेव मा. शामलाल जी को बुलाकर ये वचन लिया कि 'मेरी मृत्यु हो जाने की स्थिति में मोह में फंसकर पुत्र पद्‌म को गुरु-चरणों से वापिस नहीं लोगे।' मास्टर जी संत पुरुष थे। तुरन्त स्वीकृति दे दी और उनके व अपने वचन का निर्वाह

किया। मा. शामलाल जी सर्वथा अजातशत्रु, समाज-सेवी एवं धर्मनिष्ठ श्रावक थे। 'महावीर जैन स्कूल' के लिए वे मात्र अध्यापक ही नहीं, प्राण-भूत और सर्वस्व-भूत थे। श्री शान्ति मुनि जी म. नगूरा ग्राम के समृद्ध सेठ श्री सरूप चन्द जैन के सुपुत्र थे। ये भी गुरुदेव के चरणों में लगभग सन् 1956 में आए और ज्ञान, ध्यान, गुरु-सेवा और आराधना से अपने को योग्य बनाते रहे।

श्री शास्त्री जी म. का ये अनुभव रहा है कि जब भी इनकी परीक्षाओं का समय निकट आता, तभी गुरुदेव को परीक्षा में आने वाले प्रश्न-पत्रों का स्वप्न में दर्शन हो जाता। इससे इनको परीक्षा में बहुत सुविधा रहती।

सन् 1956 में चाँदनी चौंक में मालव-केसरी उपाध्याय श्री कस्तूर चन्द्र जी म. पधारे। वे ज्येतिर्विद्या के प्रकाण्ड पंडित थे। गुरुदेव के विनम्र स्वभाव से प्रभावित होकर एक बार उन्होंने गुरुदेव को अपना ज्योतिष-सम्बन्धी संपूर्ण ज्ञान देने की भावना प्रकट की, परन्तु गुरुदेव की ज्योतिष के प्रति गहन रुचि नहीं थी। एक बार वाचस्पति गुरुदेव ने भी गुरुदेव की प्रतिभा को देखते हुए उन्हें ज्योतिष सिखाने का मन बनाया था, लेकिन श्री बाबा जी म. ने स्पष्टतः निषेध कर दिया। कहने लगे, 'मैंने इसे संयम पालने के लिए ही साधु बनाया है, ज्योतिष की दुकानदारी चलाने के लिए नहीं'। गुरुदेव को ज्योतिष पर विश्वास तो था और कुछ आवश्यक ज्ञान भी था, परन्तु गृहस्थों के लिए इसका प्रयोग नहीं करते थे।

उपा. श्री कस्तूर चन्द जी म. के एक सन्त श्री हुक्मचन्द जी म. लोच करने में बड़े सिद्ध-हस्त थे। वे दोनों हाथों से लोच कर लेते थे उनके किए लोच का पता भी नहीं चलता था कि कब शुरू किया और कब खत्म किया। स्वयं गुरुदेव भी लोच करने के विशेषज्ञ माने जाते रहे हैं। एक बार रात्रि के समय अपना लोच स्वयं भी किया। छह घण्टे लगे। मूर्तिपूजक आ. विजयेन्द्र सूरि के लोच करने भी गुरुदेव कई बार गए। गुरुदेव दोनों हाथों से लोच कर लेते थे। अपने सब शिष्यों को भी उन्होंने लोच की कला सिखाई। कपड़े सीने, पात्रे रंगने आदि के कार्य गुरुदेव ने

पूज्यपाद श्री भण्डारी बलवन्त राय जी म. से सीखे थे। शुरू-शुरू में तो कपड़े सीने में काफी दिक्कतें आई। कभी धागे की गाँठ लगाना भूल जाते। कभी धागा टूट जाता। कभी चादर के दो पाटों की बजाय एक पाट को ही तुरुप देते। परन्तु 'करत-करत अभ्यास के' गुरुदेव हर कला में प्रवीण हो गए। किसी भी कार्य में वे सर्वथा पर निर्भर नहीं रहना चाहते थे।

1953 से लेकर 1960 तक चाँदनी चौंक में 'बारादरी' की प्रबन्ध व्यवस्था को लेकर सामाजिक विवाद प्रारम्भ हो गया। इसका मूल कारण था कि 1952 के सादड़ी सम्मेलन में ये निर्णय हुआ था कि समग्र भारत में स्थानकों का अधिकार 'वर्धमान स्थानकवासी श्रावक संघ' नामक संस्था के अधीन हो। पर चूंकि बारादरी का संचालन ट्रस्ट के नाम से होता था, अतः स्थानीय समाज दो भागों में बँट गई। अग्रवाल, पंजाबी भावड़े तथा चाँदनी चौंक के कुछ ओसवाल भाई सादड़ी की व्यवस्था के पक्षधर थे। उन्होंने उपर्युक्त नाम से एक संस्था का गठन भी कर लिया, जबकि अधिकांश ओसवाल पुरानी व्यवस्था को ही लागू रखना चाहते थे। विवाद बढ़ता गया। शोर-शराबे, नारेबाजी, धरने-पिकेटिंग तक की नौबत आई। बड़े-बड़े संत चातुर्मासार्थ आए, तो असमाधि के शिकार रहे। प्रकाण्ड ज्योतिषी उपाध्याय कस्तूर चन्द जी म. को आषाढी पूर्णमासी (चौमासी के रोज) को विहार करना पड़ा। गुरुदेव जी म. को इस बात का काफी मलाल रहा। वाचस्पति गुरुदेव ने भी सन् 54 में मसला निपटाने का भरसक प्रयत्न किया, पर बात सिरे नहीं चढी।

समाज की इस ज्वलन्त समस्या के प्रति गुरुदेव की ये धारणा थी कि ये मसला केवल आपसी समझबूझ से ही हल होगा। कोई बाहरी शक्ति इस समस्या को निपटाने में समर्थ नहीं है। एक दिन इस विषय मे उन्होंने प्रवचन के मध्य फरमाया कि 'अच्छा है कि आप अपने झगड़े स्वयं ही निपटा लें। यदि मैं दिल्ली से विहार करके अन्यत्र भी चला जाऊँगा, तो भी यदि आप एकरूप होकर आओगे, तो ही मैं पुनः यहाँ आना चाहूँगा।' गुरुदेव का यह कथन 1961 जनवरी में सत्य साबित हुआ। 8 जनवरी दोपहर कांफ्रेंस के महामंत्री श्री आनन्दराज की सुराणा की अध्यक्षता में

उनके आवास पर एक ग्यारह सदस्यीय 'श्रावक-प्रबन्धक समिति' का गठन हुआ, जिसका अध्यक्ष श्री सुराणा जी को नियुक्त किया गया। इसमें 5 सदस्य ट्रस्ट के और 5 सदस्य श्रावक-संघ के मनोनीत किए गए। संत-सतियों के चातुर्मास, विनति, सेवा आदि गतिविधियों का संचालन इस समिति के अन्तर्गत रखा गया। समिति के निर्माण के तुरन्त बाद सभी लोग जीन्द पहुंचे और वाचस्पति गुरुदेव से विनति की कि श्री सुदर्शन लाल जी म. को चाँदनी चौंक पधारने की आज्ञा फरमाओ। पर चूँकि उस समय सकल मुनिमण्डल पंजाब जाने के लिए तत्पर था, अतः समिति को समझाकर, सन्तुष्ट करके वापिस भेज दिया गया। वह विनति 1964 में जाकर पूरी हुई।

विवाद और झगड़ों की उठती हुई उन लपटों के बीच भी गुरुदेव सर्वथा अछूते रहे, ये अपने आप में एक सुखद आश्चर्य है। इसका मुख्य कारण यही था कि बाबा जी म. तथा गुरुदेव जी म. का दोनों ही पक्षों पर पूर्ण प्रभाव था। कोई एकाध व्यक्ति यदि वहाँ गुरुदेव के विराजने पर ऐतराज करता, तो अन्य लोग उसे चुप कर देते थे। कई बार गुरुदेव को कुछ चिन्ता भी हो जाती थी कि कहीं इस झगडे के कारण उन्हें भी वहाँ से विस्थापित न होना पड़े। परन्तु बाबा जी म. कहते, 'तू फिक्र न कर, हमारा कुछ बिगड़ने वाला नहीं है'। बड़ों की कृपा से, बाबा जी म. के पुण्य से तथा अपने कुशल और निर्लेपतापूर्ण व्यवहार से गुरुदेव उस पूरे घटनाचक्र में सुरक्षित रहे।

गुरुदेव जी म. की ये विशेषता रही कि कभी प्रतिकूल प्रसंगों में भी अपना मानसिक संतुलन नहीं खोते थे। आगंतुक सन्तों से अपना व्यवहार मधुर रखते, हालांकि संयमीय मर्यादाओं के प्रति कभी किसी से समझौता नहीं करते थे। बारादरी सभी प्रसिद्ध मुनिराजों के लिए अपरिहार्य क्षेत्र था, इसलिए भिन्न-भिन्न मानसिकता वाले साधु-सतियों से वास्ता पड़ता रहता था। इसी क्रम में श्री सुशील मुनिजी भी अनेक बार वहाँ आते। गुरुदेव जी म. का उनसे बड़ा आदरपूर्ण सम्बन्ध रहा, परन्तु उनकी बाह्य प्रवृत्तियों को गुरुदेव पसन्द नहीं करते थे। एक बार वे बारादरी में आए। गुरुदेव

जी म. ने उनसे ही बोलने के लिए कहा, पर मुनि जी के आग्रह को देखते हुए कुछ देर के लिए शुरू में गुरुदेव कुछ बोले। साधु-जीवन में संयम की आवश्यकता पर बल देते हुए गुरुदेव ने फरमाया, 'यदि मछली को जीना है, तो पानी में रहना पड़ेगा। पानी से बाहर आने पर मछली के लिए जीना असम्भव है। साधु के जीवन की कीमत भी संयम से है, संयम से बाहर जाने पर तो साधुता को खतरा ही खतरा है'। इस तथ्य के समर्थन में गुरुदेव धारा-प्रवाह बोलते चले गए और श्रोताओं की भीड़ एकटक होकर सुनती चली गई। लोग गुरुदेव को ही सुनना चाहते थे, पर गुरुदेव ने श्री सुशील मुनि जी को बोलने हेतु कहा। वे बोले, अच्छा बोले। गुरुदेव के द्वारा प्रस्तुत की गई संयमीय दलीलों का अप्रत्यक्ष विरोध भी किया, पर सभा में जम न सके। गुरुदेव के एक भी तर्क को वे काट न सके। बाद में सदर बाजार जाने पर श्री सुमन मुनि जी म. ने उनको समझाया कि श्री सुदर्शन मुनि जी की उपमाओं और दलीलों को काटने की आप में हिम्मत नहीं है। अगले दिन श्री सुशील मुनि जी गुरुदेव से कहने लगे कि प्रवचन तो आप ही करें, मैं तो केवल प्रार्थना ही किया करूँगा। और उस दिन के बाद उन्होंने कभी भी गुरुदेव के समक्ष प्रवचन नहीं किया।

गुरुदेव से सम्पर्क बनाए रखने के पीछे श्री सुशील मुनि जी की मानसिकता थी कि इन संतों के पीछे समाज का बड़ा वर्ग है, जो अपनी धार्मिकता के संवर्धन में अधिक संलग्न रहता है। यदि वह वर्ग भी इनके माध्यम से मेरे साथ आ जाए, तो मेरी व्यापकता बन जाएगी। इस दृष्टि से उन्होंने गुरुदेव जी म. से निवेदन किया कि 'आपका नए और पुराने सभी संतों में अच्छा प्रभाव है, आप मुझे सहयोग दें। 30 जनवरी-गांधी जयन्ती को मैं अहिंसा-दिवस के रूप में मनाना चाहता हूँ।' पूज्य गुरुदेव जी म. ने फरमाया कि 'अहिंसा-दिवस की सार्थकता तब है, जब आप संवत्सरी और महावीर-जयन्ती के प्रसंगों पर सरकार से पशु-हिंसा बन्द करवाएँ। वर्ना इस तरह गांधी जी के नाम पर अपनी राजनीति करने का कोई अर्थ नहीं है।' उनके पास इसका कोई माकूल जवाब नहीं था। इसलिए आगे के लिए

यह विषय समाप्त ही हो गया। वैसे कुछ समय तक श्री सुशील मुनि जी म. का ये सिक्का काफी चला, पर क्रमशः अप्रासंगिक होता चला गया।

सन 1956 में व्याख्यान वाचस्पति श्री मदन लाल जी म. ने 'श्रमण-संघ' के प्रधानमंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया। 1957 के चातुर्मास में आचार्य-प्रवर, उपाचार्य श्री जी एवं समस्त कार्यकारिणी के द्वारा साधु-सतियों के लिए ध्वनिवर्धक यंत्र का प्रयोग न करने का अध्यादेश जारी किया गया था। इस अध्यादेश को हरियाणा और दिल्ली में प्रान्तमंत्री पंजाब केसरी श्री प्रेम चन्द्र जी म. ने प्रचारित-प्रसारित भी कर दिया था परन्तु विश्वधर्म-सम्मेलन से जुड़े कुछ प्रमुख संत तथा कुछ उनके समर्थक संत इसका खुलेआम उल्लंघन करने लगे। इस कारण से वाचस्पति गुरुदेव के माइक पर बोलने वाले साधु-सतियों से आहार-पानी और वंदना-व्यवहार के सम्बन्ध टूट गए। उस समय का माहौल बड़ा उत्तेजनापूर्ण था। उन्हीं दिनों सन् 1958 जनवरी मास की घटना है कि श्री सुशील मुनि जी अपने दलबल के साथ बारादरी आए। वे गुरुदेव को वन्दना करने लगे। गुरुदेव ने उनको एकान्त में ले जाकर समझाया कि 'अब आपके और हमारे वन्दनादि के सम्बन्ध नहीं हैं, अतः आप हमें वन्दना न करें। चूँकि मेरा छोटा सन्त आपको वन्दना नहीं करेगा, इसलिए आप भी मुझे वन्दना न करें'। इस पर वे रुष्ट हो गए और कहने लगे कि 'आप एक कसाई की तो वंदना ले सकते हैं, पर एक साधु की वन्दना नहीं ले सकते'। गुरुदेव ने उनको पुनः बड़े मधुर ढंग से समझाया कि 'बात वन्दना की नहीं, समाचारी-पालन की है। आप तो मुझे वन्दना करें और मेरा सन्त आपको वन्दना न करे, ये अच्छा नहीं लगेगा'। ये सुनकर सुशील मुनि जी शांत हो गए और वहाँ से चले गए। रात को कांफ्रेंस के अध्यक्ष श्री आनंदराज जी सुराणा आए। बड़े भड़के हुए थे या भड़काए हुए थे। उनको उस समय सुनाई कम देता था, अपनी ही बोलते जाते थे। अमर्यादित रूप में काफी कुछ बोले, 'सुदर्शन मुनिजी! आप एक कसाई की वंदना ले सकते हो, पर एक सन्त की वन्दना नहीं ले सकते'। गुरुदेव समझ गए कि सुराणा जी के माध्यम से कौन बोल रहा है। वे पूर्ण शान्त रहे, पर सुराणा जी बोलते

गए, 'मैं आज तक आपको एक बहुत अच्छा साधु समझता रहा था, पर आप तो पक्षपात करते हो'। उसका यह अभद्र व्यवहार पर-प्रेरित है, ऐसा गुरुदेव स्पष्ट समझ रहे थे।

किं एत्तो पावयरं, सम्म अणहिगय-धम्म-सब्भावो।
अण्णं कुदेसणाए कट्ठयरागम्मि पाडेइ ॥

अर्थात् इससे अधिक और बुरी बात क्या होगी कि धर्म-स्वभाव को सही ढंग से नहीं समझने वाले आदमी औरों को भी बरगला कर संकट में डाल देते हैं। गुरुदेव ने सुराणा जी को और कुछ न समझाकर केवल इतना ही कहा। "सुराणा जी। आप पहले मुझे बहुत अच्छा साधु समझते थे और वन्दना कर लेते थे। अब नहीं समझते, तो आगे से वन्दना मत करना। हम और हमारे संत किसको वंदना करें और किसकी वन्दना लें, इसका निर्धारण हमारे गुरु म. करेंगे। यदि आज हमारे गुरु म. हमें ये आज्ञा दें कि किसी पत्थर को वन्दना करनी है, तो हम उसको भी वन्दना करने को तैयार हैं। आप गुरु म. से आज्ञा ले आओ, हम सुशील मुनि से भी वन्दना-व्यवहार खोल लेंगे"। बड़े शांत भाव से गुरुदेव ने सुराणा जी को समझाने की चेष्टा की, पर वे अपनी मनमर्जी के अनुसार असम्बद्ध प्रलाप करते रहे। उसी अवसर पर अनारगली में रहने वाले 'बाल' गाँव के श्रावक श्री सन्तलाल जी भी वहीं बैठे थे। वे गुरुदेव के परम भक्त शिष्य थे। सुराणा जी के अनर्गल प्रलाप को सुनकर वे बड़े रुष्ट हुए। गुरुदेव के समक्ष तो वे कुछ बोले नहीं। पर नीचे उतरकर सुराणा जी को पीटने का मन बनाया। सुराणा जी नीचे जाने लगे, तो साथ ही सन्तलाल जी भी उठ लिए। गुरुदेव जी म. उनके मनोभाव समझ गए और उनको रोककर जाने का कारण पूछा। उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि 'सुराणा जी को पीटना है। इनकी ये हिम्मत कैसे हो गई कि मेरे गुरुदेव को इस तरह के शब्द कह दें'। गुरुदेव को स्थिति बिगड़ती नजर आई, तो सन्त लाल जी को सख्त हिदायत दी कि "यदि आपने सुराणा जी को हाथ लगा दिया और थप्पड़ मार दिया, तो समझ लेना कि आपने मुझे ही थप्पड़ मारा

है। इस समय उसे कुछ भी कहना सुदर्शन मुनि को ही कहना है"। बड़ी मुश्किल से गुरुदेव ने उसे नीचे जाने से रोका। जब पता चल गया कि सुराणा जी अपने घर पहुंच गए हैं, तभी सन्तलाल जी को नीचे उतरने दिया। सुराणा जी का जोश भी जब थम गया, तो अगले दिन क्षमा मांगने आए 'अन्नदाता! माफ करना'। पर गुरुदेव ने तो पहले दिन ही क्षमा कर दिया था। समाज में विभिन्न चर्चाएँ भी हुई। एक शिष्ट-मण्डल वाचस्पति गुरुदेव के दर्शन करने गन्नौर मण्डी में गया और घटना का ब्यौरा दिया। तब वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि मेरे शिष्य ने जो किया है, बिल्कुल ठीक किया है। बड़ों की मुहर लग जाने से श्रावक वर्ग का समाधान हो गया। साथ ही गुरुदेव जी म. को भी हार्दिक संतुष्टि हुई तथा गुरुओं की कृपा के साक्षात् फल का दर्शन भी हुआ।

एकाध ऐसी घटना को छोड़ दें, तो गुरुदेव के लिए चाँदनी चौंक के उस प्रवास में मधुरता ही मधुरता रही। अपने परिवार के पूज्य मुनियों का सहकार तो मिला ही, अन्यान्य संप्रदायों के मुनियों के साथ भी मधुर प्रेमभाव रहा। "जैन प्रकाश" की तत्कालीन कुछ उपलब्ध फाइलों में एक दो प्रसंग प्रकाशित मिले हैं। उनका सारांश ये है—1954 में स्थविर श्री ताराचन्द जी म., श्री पुष्कर मुनिजी म. बारादरी में थे। श्री पुष्कर मुनिजी म. का Hospital में operation हुआ। श्री गुरुदेव जी म. ने सेवा-कार्य से उनकी आराधना की। वैसे पूज्य भण्डारी श्री बलवन्त राय जी म. सबकी सेवा करते ही थे।

दीपावली पर मंत्री श्री पुष्कर मुनि म. तथा गुरुदेव जी म. का जो प्रवचन हुआ, वह लोगों के लिए विशेष मार्गदर्शक था। नवम्बर 1955 के अन्त में तथा दिसम्बर के प्रारंभ में पूज्य श्री कस्तूर चन्द जी म. बारादरी पधारे। महावीर जैन स्कूल में उनका तथा गुरुदेव का संयुक्त प्रवचन हुआ। 4 दिसम्बर के दिन जैन कन्या पाठशाला का वार्षिक अधिवेशन बारादरी भवन में किया गया। पूज्य गुरुदेव के अतिरिक्त पं. श्री त्रिलोक चन्द्र जी म. भी पधारे। दिल्ली के स्वास्थ्य मंत्री भी उपस्थित हुए।

पूज्य श्री त्रिलोक चन्द्र जी म. का वात्सल्य भाव अवर्णनीय था। गुरुदेव के पास होने वाली प्रथम दीक्षा पर श्री त्रिलोक चन्द्र जी म. विशेष रूप से कांधला से विहार करके आए थे और उन्होंने ही दीक्षार्थी को दीक्षा-पाठ पढ़ाया था। उस अवसर पर वाचस्पति गुरुदेव के गुरु-भ्राता श्री मूल चन्द जी म., श्रद्धेय तपस्वी जी म. व श्रद्धेय श्री राम प्रसाद जी म. भी उपस्थित थे।

दिल्ली में जो भी सामाजिक गतिविधि होती थी, यदि उसमें समाचारी-विरुद्ध व्यवस्था न हो, तो गुरुदेव प्रायः पधारते थे। जैसे कि 27 फरवरी 1955 के रोज वीर नगर (जैन कालोनी) बसाने के लिए रावलपिण्डी वालों ने एक सभा का आयोजन किया था। उसमें पूज्य श्री त्रिलोक चन्द्र जी म. के साथ पूज्य गुरुदेव जी म. भी सम्मिलित हुए थे और गुरुदेव का उद्‌बोधन बड़ा प्रभावशाली रहा था। सन् 56 के अन्त में मालवा के प्रसिद्ध सन्त श्री विनय मुनि जी म. दिल्ली पधारे। उनमें बड़े श्री नगीन चन्द जी म. थे। 30 दिसम्बर को श्री विनय मुनि जी म. का तथा पूज्य गुरुदेव जी म. का संयुक्त रूप से सार्वजनिक प्रवचन हुआ था। जिसमें मुख्य विषय था-मानव और उसका हृदय। 5 जनवरी 57 को जब महावीर जैन स्कूल में कार्यक्रम रखा, उसमें श्री मनोहर मुनि जी म. भी उपस्थित थे।

सन् 1958 में आचार्य-प्रवर श्री हस्तीमल जी म. सा. का दिल्ली में पदार्पण हुआ। गुरुदेव जी म. ने दरियागंज जाकर उनका श्रद्धासिक्त स्वागत किया और चाँदनी चौंक लेकर आए। उनके साथ पधारे वयोवृद्ध श्री अमरचन्द्र जी म. की एकान्तप्रियता गुरुदेव को बहुत भाती थी। वे आचार्य श्री जी से दीक्षा में वरिष्ठ थे, पर आचार्य--पद की गरिमा रखने हेतु एकान्त में बैठते थे। एक रात गुरुदेव उनके चरणों में बैठने गए, तो एकांत अंधेरे में बैठे देख कर प्रश्न किया कि 'आप क्या कर रहे हैं'? वे फरमाने लगे, "मैं अपने काँटे निकाल रहा हूँ।" गुरुदेव समझ गए कि इनका आशय पैरों में लगे काँटे नहीं, अपितु आत्मा में लगे कषाय के काँटों से हैं। काँटे निकालने का वह प्रयास गुरुदेव को बड़ा अच्छा लगा और जीवन-भर इस प्रसंग का उल्लेख करते रहे।

पूज्य गुरुदेव ने चाँदनी चौंक के युवकों में सामायिक-स्वाध्याय की जो लौ जलाई थी, वह उस समय के स्थानकवासी समाज में पहली मिसाल थी। गुरुदेव सप्ताह में एक दिन प्रवचन में केवल स्वाध्याय ही सिखाते थे। भक्तामर, कल्याण-मन्दिर, वीर-स्तुति, नमि-पव्वज्जा तथा अन्यान्य तात्विक विषयों को कण्ठस्थ करवाते थे। यह धार्मिक प्रशिक्षण बाद के वर्षों में-जैसे 1959 में बड़ौत चातुर्मास के दौरान कक्षा और परीक्षा के रूप में स्थापित हुआ। गुरुदेव द्वारा सिखाई गई धर्म-सामग्री का संकलन मा. शामलाल जी ने किया, जो 'अल्प-बोध, 'सरल-बोध' एवं 'धर्म-बोध' इन तीन पुस्तकों के रूप में बाद में प्रकाशित हुआ। वाचस्पति गुरुदेव ने इस योजना को अच्छा समझा, पर साथ में एक आज्ञा भी भिजवाई कि 'किसी संस्था का निर्माण नहीं करना।' इसलिए गुरुदेव ने कभी किसी स्वाध्याय-संघ की स्थापना नहीं की। गुरु-आज्ञा-पालन ही तो धर्मशिक्षा का प्रथम और अंतिम ध्येय होता है। गुरुदेव की इस शिक्षण-पद्धति से आचार्य-प्रवर श्री हस्तीमल जी म. बहुत अधिक प्रभावित हुए। उन्होंने राजस्थान पधार कर उन सूत्रों का भरपूर विस्तार किया, जिस कारण से आचार्य श्री जी को 'सामायिक-स्वाध्याय' का पर्याय ही माना जाने लगा। गुरुदेव के दिल्ली-प्रवास को स्पष्ट करने के लिए एक शेर मौजूं रहेगा—

हुजूमे-बुलबुल हुआ चमन में, किया जो गुल ने जमाल पैदा!
कमी नहीं कद्रदां की 'अकबर', करे तो कोई कमाल पैदा ॥

अनेक वर्षों के विद्या एवं वैराग्य-भाव के अभ्यास के उपरान्त श्री प्रकाश चन्द्र जी आदि तीन विरक्तों की दीक्षा का शुभ प्रसंग आया। गुरुदेव जी म. ने रोहतक में विराजमान व्याख्यान-वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में विनति अर्ज की कि आप श्री जी पधारने की कृपा करें। उन दिनों वाचस्पति गुरुदेव श्रमण-संघ के प्रधानमंत्रित्व से त्यागपत्र दे चुके थे। ध्वनिवर्धक यंत्र के मसले पर अनेक आत्मीय साथियों से संबंध टूट चुके थे। ऐसे में उन्हें बड़ा संकोच था कि दिल्ली में कितने ही नजदीकी साध-साध्वी होंगे। सभी मिलेंगे। मिलने पर अनावश्यक चर्चाएं होंगी और

मान-मनौवल की औपचारिकताएं बढ़ेगी। अपने ही प्रेमी मुनि पास हों और उन्हें दीक्षा जैसे महत्त्वपूर्ण आयोजन पर न बुलाएं, तो ये अटपटा लगेगा। और यदि बुलाएं तो समाचारी-विधान की कलमें आड़े आएँगी। इसलिए उन्होंने समाचार भिजवा दिया कि मैं दिल्ली आने को उत्सुक नहीं हूँ। कुछ समय अलग-थलग-से इलाकों में, विशेषतः हरियाणवी क्षेत्रों में विचरना चाहता हूँ। वाचस्पति गुरुदेव की इस दुविधापूर्ण स्थिति को गुरुदेव जी म. बखूबी समझते थे। मगर दिल्ली के इतने निकट होकर भी, वे अपने होनहार पौत्र-शिष्यों के दीक्षा-महोत्सव पर न पधारें, यह बात तो बिल्कुल ही अव्यवहारिक प्रतीत होती थी। लोकमानस ये तो समझ सकता है कि समाचारी के कारणों से अन्य मुनि-वृन्द समारोह में अनुपस्थित रहें, पर अपने ही परिवार के सर्वप्रमुख वाचस्पति गुरुदेव अनुपस्थित रहें, यह हजम होने वाला नहीं है। गुरुदेव जी म. का मन इस बात के लिए कथमपि तैयार नहीं था, अतः स्पष्ट सूचना भिजवा दी कि 'आपके सान्निध्य में ही दीक्षाएं होंगी, अन्यथा नहीं। जब आप श्री जी पधारेंगे, तब ही यह महान कार्य सम्पन्न होगा'। अन्ततः अपने प्रधान, विनयवान्, दूरदृष्टि सम्पन्न शिष्य के अनुनय-पूर्ण आग्रह को वाचस्पति गुरुदेव ने अधिमान दिया और आने की स्वीकृति फरमा दी। दीक्षा-मुहूर्त के लिए पूज्य श्री कस्तूर चन्द्र जी म. को अर्ज किया और उन्होंने माघ सुदी त्रयोदशी सं. 2014 (2 फरवरी 1958) का दिन निर्धारित किया। दिल्ली आने से पूर्व वाचस्पति गुरुदेव को महासाध्वी श्री सुन्दरी जी के चरणों में होने वाली साध्वी भागवन्ती जी म. की दीक्षा के लिए बुटाना जाना पड़ा। फिर गन्नौर से सोनीपत आते हुए रेलवे फाटक के पास तपस्वी श्री बदरी प्रसाद जी म. के पैर में चोट लगी। इससे वे चाहकर भी 26 जनवरी से पूर्व दिल्ली नहीं पधार सके। जब पधारे तो दिल्ली में बहार आ गई। वाचस्पति गुरुदेव के करीबी कई साधुवर्य मिलने पधारे, मगर दीक्षा पर श्री मयाराम जी म. के पारिवारिक समीपस्थ मुनियों के अलावा किसी को भी निमंत्रण नहीं दिया गया। दूर-पास के अपने सभी सहयोगी प्रेमी साथियों को बुलाने वाले वाचस्पति गुरुदेव के लिए यह अवसर कितना अजीब लगा होगा, कल्पना ही की जा

सकती है। दीक्षा पर पूज्यपाद योगिराज श्री रामजीलाल जी म. अमीनगर सराय से पधारे। वाचस्पति गुरुदेव और उनका दीर्घकाल के अन्तराल के बाद मिलन हुआ था। बड़ा हृदय-हारी दृश्य था। पूज्य श्री मूलचन्द जी म. तथा श्री स्वामी फूलचन्द जी म. ने भी मुजफ्फर नगर से पधार कर दीक्षा की शोभा बढ़ाई।

गुरुदेव की इच्छा तो यही थी कि तीनों मुमक्षु बन्धु व्याख्यान वाचस्पति पूज्य गुरुदेव के शिष्य घोषित हों, परन्तु उन्होंने स्पष्ट घोषणा कर दी कि 'आगे से मैं अपने शिष्य नहीं बनाऊँगा। जो भी शिष्य बनेंगे, वे तुम्हारे ही बनेंगे'। गुरुदेव को उनकी आज्ञा माननी पड़ी। 2 फरवरी 1958 के शुभ दिन पूर्वोक्त त्रिवेणी की दीक्षा बारादरी के पीछे गांधी ग्राउन्ड में व्याख्यान-वाचस्पति पावन गुरुदेव श्री मदन लाल जी म. के पुनीत कर-कमलों से हुई। नवदीक्षितों का नाम-परिवर्तन भी किया गया, यथा श्री प्रकाश मुनि जी म. का मुनि शालिभद्र, श्री पद्मचन्द्र जी म. का मुनि समन्तभद्र एवं श्री शांतिचन्द जी म. का मुनि सुयशभद्र। पर ये नाम जनग्राह्य न होने से दीर्घकाल तक प्रचलित न रह सके। दीक्षा-उत्सव पर बड़ी खुशी, बड़ी चहल पहल और अद्भुत रंग था। सभा की अध्यक्षता अमृतसर के सुश्रावक श्री हरजस राय को अर्पित की गई, जिन्होंने दीर्घकाल तक पंजाब-संघ की उल्लेखनीय सेवाएँ की थी। मंच पर 'भाई-बहन के संवाद' के रूप में एक नाटिका का मंचन भी किया गया, जिसे श्रोताओं ने इतना सराहा कि उसी समय फिर दोबारा उसका मंचन करना पड़ा। उस भव्य अवसर को भव्यतर और अमर बनाने के उद्देश्य से एक लघु-पुस्तिका 'त्रिवेणी' का प्रकाशन किया गया। लेखक थे श्री कालीकान्त झा। दीक्षा-समारोह की एक उल्लेखनीय बात ये थी कि पुत्र-दीक्षा के भावुक वातावरण में भी मा. शामलाल जी ने मंच-संचालन किया। संघ-वृद्धि पर चहुँ ओर से मंगल बधाइयाँ मिली। तीनों नवदीक्षितों को बारादरी लाया गया। सबने श्री बाबा जी म. को वन्दना की। उन्होंने तीनों को दुलार दिया। पर तभी एक भविष्य-द्रष्टा ऋषि के समान उद्घोष भी किया, "मैं इनके साथ केवल एक चौमासा और करुंगा, दूसरा नहीं"। उस शुभ

वेला पर ये शब्द सुनकर सब स्तब्ध रह गए, पर उन्होंने जो कहना था, कह दिया। ऋषि के दर्शन में जो प्रतिबिम्बित हुआ, वह वाग्गोचर हो कर सुनाई दे रहा था।

गुरुदेव जी म. आज विचित्र प्रकार के अनुभव से गुजर रहे थे। सिर पर पूज्य गुरुदेवों का साया था और चरणों में अवनत शिष्य-वृन्द था। एक ही क्षण में वे शिष्य भी थे और गुरु भी। स्याद्वाद-शैली को सुगमता-पूर्वक समझाने के आप उदाहरण बन गए थे। दीक्षा की प्रथम रात्रि को तीनों नवदीक्षितों को गुरुदेव के हाथों में सौंपते हुए वाचस्पति गुरुदेव ने कहा था, "सुदर्शन! तेरे शिष्य बना दिए हैं, आगे और बनेंगे। एक बात का ध्यान रखना-अपना जीवन ऐसा बनाए रखना कि शिष्यों के मन में तेरी प्रतिष्ठा बनी रहे। अपने शिष्यों में ऐसी भावना भरना कि वे तेरे पास बैठने में और अपना दिल खोलने में संकोच न करें। ऐसा होने पर ही गुरु-शिष्य के सम्बन्ध हित-रूप और मंगल-रूप होंगे"।

अपने पूज्य गुरुदेवों की शिक्षाओं पर गुरुदेव शत-प्रतिशत चलते रहे और उसका मधुर फल पाते रहे। उनका जीवन यों तो पहले से ही सधा हुआ था, पर शिष्य-निर्माण के बाद उनको संभालने के लक्ष्य से और अधिक जागरूक और अप्रमत्त रहने लगे। उस वर्ष से धर्म-शिक्षण की प्रक्रिया भी सघन एवं व्यवस्थित कर दी, क्योंकि अब मुनि-संख्या अधिक होने से अधिक समय निकाला जा सकता था।

4. दिल्ली से विदाई

तीन दीक्षाओं के पश्चात् वाचस्पति गुरुदेव जी म. दिल्ली के कुछ क्षेत्रों को पावन करते हुए यू.पी. में बड़ौत पधार गए। पूज्य गुरुदेव जी म. श्री बाबा जी म. की छत्र-छाया में नव मुनियों के नव-निर्माण में जुट गए। उनको आगम-अध्ययन के साथ-साथ संघ-प्रभावना के निमित्त प्रवचन आदि में भी प्रेरित किया। हिन्दी, संस्कृत एवं अंग्रेजी में बोलने का उनको अभ्यास कराया। श्री शास्त्री जी म. से प्रथम चातुर्मास में ही कल्प-सूत्र की वाचना कराई। बारादरी धर्म-ध्यान का केन्द्र बन गई।

1 मई सन् 1959 को श्री बाबा जी म. अचानक पौड़ियों में गिर पड़े। नीचे से ऊपर लाए गए। संथारे का जिक्र करने लगे। उनको मृत्यु का कोई भय नहीं था। डेढ़ माह पूर्व उन्होंने दो नए वस्त्र मंगाए थे—एक चादर, एक चोलपट्टा। गुरुदेव से कहा—"अभी सी दे"। गुरुदेव ने तुरन्त सिलाई की। फिर बाबा जी म. कहने लगे कि 'मेरे मरने के बाद इन्हें मेरे शरीर पर डाल देना'। गर्मी की अधिकता होने के कारण गुरुदेव जी म. उनको संथारा कराने का साहस नहीं जुटा पाए। श्री बाबा जी म. ने फरमाया, 'मेरी ढीली तबीयत के समाचार गुरु महाराज को मत देना। उनको खबर लग गई, तो आए बिना नहीं रहेंगे। गर्मी में उन्हें तकलीफ होगी। मेरे कुल दस दिन शेष रह गए हैं। मेरे से कोई मोह मत रखना। मेरे जाने के बाद दिल्ली में मत रुकना, जल्दी विहार कर देना। रुकोगे तो, कष्ट पाओगे।' अक्षय तृतीया 10 मई की रात को श्री बाबा जी म. ने स्वयं संथारा ग्रहण कर लिया। गुरुदेव उनकी सेवा में थे। छोटे मुनियों को गुरुदेव ने जगाया। ग्यारह बजे के बाद अचानक शरीर में काफी पसीना आया और वह दिव्य आत्मा औदारिक शरीर को छोड़कर वैक्रिय

शरीर धारण करने के लिए दिव्य देवलोकों में चली गई। अपनी अनथक सेवाओं से अपने आराध्य बाबा जी म. का ऋण अदा करके भी गुरुदेव उनके वियोग-जन्य दुःख से आक्रान्त थे। जिन हाथों से माता की ममता, पिता का संरक्षण, बाबा का दुलार और गुरु का अनुशासन मिला था तथा जिनके भरोसे गृहत्याग किया था और जिनके लिए जीए थे, आज उनके चले जाने पर मन पर जो वज्रपात हुआ, उस पीड़ा को मन ही मन समेट कर गुरुदेव हर व्यवस्था को पूर्ववत् संभालने में तत्पर हो गए। किसी की मामूली-सी पीड़ा भी जिनको सहन नहीं होती थी, वे अपनी इस विराट पीड़ा को कैसे झेल पाए, इस जटिल प्रश्न का उत्तर केवल गुरुदेव का धीरोदात्त जीवन ही है। तभी तो कवि ने कहा है—

वज्रादपि कठोराणि, मृदूनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हति ॥

अर्थात् महापुरुषों के जीवन जहाँ फूल के समान कोमल होते हैं, वहाँ अवसर पड़ने पर वज्र से भी कठोर हो जाते हैं। उनको समझ पाना बड़ा मुश्किल है।

बाबा जी म. के दिवंगत होने पर वाचस्पति गुरुदेव जी म. की भावनाओं को अभिव्यक्त करता हुआ गुरुदेव श्री रामप्रसाद जी म. का पत्र एक 'मास्टरपीस' के रूप में पठनीय हैः—

"श्रद्धेय श्री सुदर्शन लाल जी म., सविनय चरण वन्दना। पत्र मिला। महाराज श्री के विछोह से होने वाली नैसर्गिक अन्तर्वेदना को जब मैं आपके अपने शब्दों में पढ़ रहा था, तो मन कुछ भर-भर आता था। सम्बन्धों के सम्पर्क में इस प्रकार की मनः स्थिति हो ही जाती है। आपके जीवन-भर की चिर चिरन्तन छाया अकस्मात् विलीन हो गई, यह सर्वानुभूत सत्य है। पर इस छाया में रहते-रहते आप स्वयं लघु नहीं, विशाल छाया बने हैं, जिसकी तराई में कुछ और अंकुर भी विकास की आशा लिए पल्लवित हो रहे हैं, यह उससे अधिक और प्रबल तथ्य है।

वियोगमूलक पूर्व सत्य को ये भावी उत्तर-सत्य अपने में समेटकर सुखद बनाएगा, क्यों न हम ऐसी आशा करें? ---- स्वप्न में भी सोचा न था -------। पर क्या सोचने पर घटित होने वाली घटना का जीवन पर इतना प्रभाव पड़ता, जितना कि बिना सोचे होने वाली की? साथ ही, ऐसी घटनाएँ जो बुद्धि से, विचार से, तर्क से और कल्पना से अगम्य हों, के लिए हमारे पूर्वाचार्यों ने अवश्यंभावि-भावत्वात् का कितना प्रशस्त समाधान दे दिया है। आप जैसे समर्थ पुरुषों की सहिष्णुता तथा कर्मठता मेरे जैसे लघुतरों के लिए सदातन आदर्श रही है। परिस्थितियों के इस रूपान्तर में भी हम आपसे यही आशा कर सकते हैं। विहार की कोई विकलता, विह्वलता अपेक्षित नहीं है। सहज रूप से चलने में ही आनंद है। हम और आप कुछ भी तो दूर नहीं है। स्वास्थ्य को प्रधानता देते हुए ही इधर कदम उठाना चाहिए। आपके इस भीष्म ग्रीष्मकालीन विहार की कठिनाइयों की चर्चा हम प्रायः कर लेते हैं। शेष सुख-शान्ति। चातकों की नई उड़ान के लिए अनेक अनेक प्रोत्साहन। योग्य सुख- शान्ति वंदन। गुरुदेव तथा अपनी ओर से मिले-जुले रूप में लिख गया हूँ।

यद् गतं तद्गतं तत्र का चिन्तना, तत्र यत् सद्गतं तत्कृते कामना।
एतदनेनाथवा साम्प्रतं, चिन्तनीयं सदा यद् गतं तद् गतम् ॥

जो जा चुका, सो जा चुका, उसकी क्या चिन्ता करनी। हाँ, उसमें जो अच्छा है उसके लिए कामना करनी चाहिए। अथवा अब तो यही सोचना उचित है कि जो गया, सो गया।

पूज्य बाबा जी म. को खोकर गुरुदेव जी म. शीघ्रातिशीघ्र गुरु चरणों में पहुँचना चाहते थे, पर परिस्थितियाँ कुछ ऐसी बनती गई कि गुरुदेव को चाँदनी चौंक ही रुकना पड़ा। महासाध्वी श्री मोहनदेई जी म. के चरणों में श्री राजकुंवरी जी म. की शिष्या श्री सुलक्षणा जी म. की दीक्षा होनी थी। उनका दीक्षा पर उपस्थित रहने के लिए काफी आग्रह था। वस्तुतः उनकी वैराग्य-भावना के पीछे भी गुरुदेव के प्रवचन ही कारण बने थे, अतः गुरुदेव ने भी रुकने का मन बना लिया। क्षेत्रवासियों का भी ऐसा

ही आग्रह था। गुरुदेव वहाँ रुक तो गए, पर पहले तो श्री प्रकाश मुनि जी म. बीमार हुए। जब वे कुछ ठीक हो गए, तो फिर गुरुदेव स्वयं बीमार हो गए। अन्ततः 31 मई को विहार सम्भव हो सका। विदाई के दिन जो जनता-जनार्दन उमड़ा, वह क्षेत्र के इतिहास में अभूतपूर्व था। लगभग पाँच हजार की जनमेदिनी श्रद्धा, समर्पण और वियोगजन्य पीड़ा के भाव समेटे चरणों में बिछी पड़ी थी। लाल किले पर आकर वर्षा हो गई। लोगों में चर्चा हुई कि गुरुदेव के विहार में मानों आसमान भी आँसू डाल रहा है। वर्षा होने के बावजूद भी कोई भाई-बहन वापिस नहीं गया। आधा घंटा बाद वर्षा रुकी। धूप खिली, कदम बढ़े और गांधीनगर तक सब साथ आए। तब तक गांधीनगर जैन क्षेत्र के रूप में विकसित नहीं हुआ था। श्री कृपाराम, राजाराम जैसे गुरुभक्त श्रावक वहाँ रहते थे। वहाँ के लक्ष्मी सिनेमा में दो प्रवचन करके गुरुदेव ने यू.पी. के लिए प्रस्थान किया। गर्मी का भीषण परीषह था। नवदीक्षित मुनियों के लिए तो ये प्रथम ही अनुभव था। सैंकड़ों दिल्ली-वासी जौहरियों के लिए इतनी भयंकर गर्मी में चलना अग्निपरीक्षा सरीखा था, पर क्या मजाल कि कोई पीछे मुड़ा हो। लोनी पहुँच कर ही दम लिया। फिर मण्डोला गाँव का धूलि-धूसरित मार्ग, जिसमें उष्ण, जल्ल-मल एवं पिपासा परीषहों का युगपत् आक्रमण हुआ। नव दीक्षितों का साहस दर्शनीय था। गुरुदेव तो ऐसे अवसरों पर सागर-वर-धीर, वीर और गम्भीर रहते ही थे।

यू.पी. में बामनौली गाँव में गुरुदेव जी म. ने अपने पूज्य गुरुदेव के पावन दर्शन किए। इसी धरा पर 45 वर्ष पूर्व वाचस्पति गुरुदेव की दीक्षा हुई थी। दर्शन करके मन का भार हल्का किया। आज्ञा मिली कि इस बार सन् 1959 में बड़ौत चातुर्मास करना है। वाचस्पति गुरुदेव का चातुर्मास पास ही 25 कि. मी. दूर कांधला के लिए स्वीकृत हो चुका था। चातुर्मास बैठने से पूर्व गुरुदेव ने कुछ ग्राम, नगरों में विचरण किया। वह स्वल्प प्रवास जन-जागरण की दृष्टि में महाप्रभावक कहा जा सकता है। हर क्षेत्र में पर्यूषण-पर्वो जैसा समुल्लास था। एक जगह ऐसी भी दबी जबान से चर्चा थी कि सुदर्शनमुनि जी का अभी अपने क्षेत्रों में चातुर्मास

करा लो, कुछ समय गुजरने के बाद तो इनके चातुर्मास काफी महंगे हो जाएंगे। अपने शिष्य द्वारा प्रवर्तित धर्म-चक्र को देखकर वाचस्पति गुरुदेव की आत्मा भी परम प्रमुदित थी। उस वर्ष के बड़ौत और कान्धला, दोनों चातुर्मास मानों एक होकर रह गए थे। प्रातः प्रवचन बड़ौत होता, मध्याह्न में कान्धला में। इससे दर्शनार्थियों को भी सुविधा रही। दिल्ली में प्रारम्भ किए धर्मशिक्षण अभियान को गुरुदेव ने बड़ौत में और अधिक गति और व्यवस्था प्रदान की। वहाँ के बुजुर्ग श्रावक आज भी उन दिनों को भूल नहीं पाते, जब वे पाठ याद किया करते और परीक्षा-कक्ष में बैठा करते। चातुर्मास के मध्य में डॉ. चेतनलाल जी ने एक पत्र 'जैन प्रकाश' में प्रेषित किया था, जिसमें चातुर्मास की ठोस उपलब्धियों का अनुभूत वर्णन हैः—

"यहाँ पर हमारे अहोभाग्य से व्याख्यान-वाचस्पति श्री मदन लाल जी म. के सुशिष्य, महान् उद्यमशील व नवयुवक-हृदय-सम्राट् श्री सुदर्शन मुनि जी म. ठाणे-5 का चातुर्मास-काल सानन्द व्यतीत हो रहा है। महाराज श्री हमारी समाज के बच्चे-बच्चे में धर्म के संस्कार पैदा करने में जुटे हुए हैं। उनका यह उद्यम और उत्साह प्रत्येक मानव को प्रभावित करता है। इस थोड़ी-सी अवधि में ही महाराज श्री ने हमारी समाज का कोई घर नहीं छोड़ा, जिसे टटोला न हो और प्रातःकाल से लेकर रात्रि के नौ बजे तक इसी उद्यम में संलग्न रहते हैं। उनकी यही भावना और प्रेरणा रहती है कि कैसे हमारी समाज का बच्चा-बच्चा संस्कार-शील हो और अपने धर्म की जानकारी करे। व्याख्यान में भाई-बहन बड़े उत्साह व प्रेम से अच्छी संख्या में उपस्थित होते हैं। व्याख्यान में सामूहिक रूप से सर्वप्रथम ज्ञान-दीप जगाने का अलौकिक कार्य करते हैं, जो हमारी समाज के लिए बिल्कुल नवीन है, आत्मस्पर्शी है, सबके मन को उन्नत करने वाला है। इसमें वीर-स्तुति, भक्तामर, सामायिक के दोष, बारह भावना, धर्म-ध्यान के 16 भेद आदि सिखाते हैं। हमें तो अपने यहाँ यह चातुर्मास एक अपूर्व प्रतीत हो रहा है। लगता है कि इस चातुर्मास में किया हुआ कार्य हमारी समाज के लिए अति उपयोगी व ठोस साबित होगा। रविवार को धर्मगोष्ठी लगती है। इसमें बहुत से बच्चे लाभ उठा रहे हैं।" दर्शनार्थी भाइयों का

बसें लेकर संयुक्त रूप से आने का क्रम भी इसी वर्ष प्रारम्भ हुआ, क्योंकि दिल्ली की जनता गुरुदेव के दर्शनों के लिए बहुत बेताब रहती थी।

दिल्ली-प्रवास के शुरू के वर्षों में गुरुदेव ने जनता का अधिक परिचय नहीं किया। किसी बहन का नाम पूछने का तो प्रश्न ही नहीं था। बाद के वर्षों में कुछ-कुछ परिचय करने लगे थे। पर इधर यू.पी. में तो परिचय नया ही था। गुरुदेव की स्मरण-शक्ति बड़ी विलक्षण और अद्‌भुत थी। प्रवचन में सैंकड़ों आदमी भी नए होते, तो बाद में एक-एक करके उनका नाम पूछते और अगले रोज बिना किसी त्रुटि के उनके नाम बोलकर उनको सम्बोधित कर देते थे। ऐसी चामत्कारिक प्रतिभा का निदर्शन अन्यत्र कम ही मिल पाता है। उस चातुर्मास में सुश्रावक श्री इलमचन्द जी की सुपुत्री कु. सुदर्शना जी ने गुरुदेव के चरणों से सम्यग् दर्शन, ज्ञान और यम-नियमों की पूंजी अर्जित की। वह उसके समग्र जीवन के उत्थान में तो उपयोगी सिद्ध हुई ही, उत्तर भारत का जैन समाज भी इस उत्तम श्राविका के अवदानों से प्रभावित हुआ है। दिल्ली दरियागंज के सुश्रावक श्री अरिदमन जी के सुपुत्र श्री सुकुमाल चन्द जी की धर्मसंगिनी बनकर कुल और समाज को इस देवी ने नया रूप प्रदान किया है। इस देवी के जीवन का कण-कण गुरुदेव जी म. के मार्गदर्शन का ऋणी है।

सुदर्शना जी का भाई जिनेन्द्र जैन उस वर्ष आठवीं क्लास में पढ़ रहा था। लगन तो थी ही। प्रतिदिन सामायिक करता, पाठ सीखता। एक दिन पूज्य गुरुदेव ने उसे 'मंगल-वाणी' प्रदान की। साथ ही उस पर लिख दिया "डाक्टर जिनेन्द्र जैन"। बालक प्रसन्न हो गया। आगे चलकर उसने मैडिकल के लिए टैस्ट दिया, पर Admission के समय प्रवेश-सूची में न आकर Waiting में रह गया। मन पर मायूसी आई। पर गुरुदेव के लिखे का भरोसा था। पहली लिस्ट से एक छात्र हट गया और उसे प्रवेश मिल गया। फिर तो एम.एस. करके दिल्ली में अपना विख्यात 'जैन नर्सिंग होम' बनाया। राजनीति की पौड़ियां चढ़ी और राज्यसभा में एम.पी. बना। एक छोटे से शब्द की इतनी लम्बी यात्रा की कल्पना करके रोमांच-सा होता है।

'शरीरं व्याधिमन्दिरम्', रोग न जाने कब उभर जाए। ऐसा ही हुआ। गुरुदेव जी म. को हल्का बुखार, दुर्बलता, अरुचि होने लगी। डॉ. महेश्वरी से जाँच करवाने पर ज्ञात हुआ कि प्लुरसी है। इस रोग में फेफड़ों में पानी भर जाता है। उपचार के साथ-साथ विश्राम की भी सख्त जरूरत थी। मुख्य प्रवचनकार स्वयं थे। बाकी सब संत छोटे-छोटे थे। रोग के कारण गुरुदेव ने स्वयं तो प्रवचन नहीं किया, पर श्री प्रकाश मुनि जी म. को पूरा प्रवचन लिखकर देते और इस कला में प्रशिक्षित करते थे। वे भी गुरु-कृपा और आत्मोत्साह से प्रवीण हो गए। एक माह तक प्रवचन से विश्राम लेकर भी गुरुदेव ने विश्राम नहीं किया। प्रकारान्तर से सक्रिय ही रहे।

जिस डॉ. महेश्वरी से गुरुदेव ने इलाज करवाया, उनसे प्रगाढ़ धर्म-स्नेह हो गया। वे भी गुरुदेव के भक्तों में अपने को मानने लगे। एक दिन डॉक्टर सा. प्रतिदिन की भाँति गुरुदेव के समक्ष बैठे थे। अपनी प्रकृति के अनुसार गुरुदेव उन्हें ऊपर से नीचे तक निहारने लगे। चेतना के गहनतम स्तरों से कोई अन्तर्ध्वनि प्रकट होने को हुई। डॉक्टर सा. को एक

ओर बुलाकर कहा कि आज 15 ता. है (सितम्बर अथवा अक्टूबर मास)। आप नियम कर लें कि 30 ता. तक वाहन का प्रयोग नही करना। डॉक्टर सा. ने गुरुदेव की बात मान ली। फिर भी पक्का करने के लिए गुरुदेव ने उनकी धर्मपत्नी को कहा। उन्होंने डॉक्टर सा. की मोटर साईकिल को स्टोर में रखवा दिया और स्टोर को ताला लगाकर चाबी अपने पास रख ली। 27 ता. को उनकी धर्मपत्नी आवश्यक कार्य से अपने पीहर चली गई। 29 ता. को बड़ौत से तीन किलोमीटर पर स्थित बावली गाँव के कुछ लोग आए। कहने लगे कि हमारा नौजवान लड़का बीमार है। आप चलकर देख लें। उस समय अच्छे सुशिक्षित डाक्टर बड़ौत में कम थे। डॉ. महेश्वरी मेरठ से नई पढ़ाई करके लौटे थे। उनका यश काफी हो गया था। अतः समीपवर्ती गाँव के लोग भी उन्हीं से उपचार करवाना पसन्द करते थे। बावली वाले लोग काफी आग्रह करने लगे। डाक्टर सा. को चलने को मजबूर होना पड़ा। मोटर साइकिल ताले में थी। ताला तोड़ा और मरीज को देखने चल दिए। एक कि. मी. ही गए होंगे। मोटर

साईकिल फिसल गयी और वे एक झटके से जमीन पर गिर गए। गहरी चोट आई। उन्हें मेरठ ले जाया गया, पर वहाँ पहुँचने से पहले ही दम तोड़ गए। उस भीषण त्रासदी से लगभग सारा बड़ौत आहत हुआ। पूज्य गुरुदेव जी म. को भी आंतरिक दुःख हुआ। जब गुरुदेव एवं समाज के भाई उनके घर संवेदना प्रकट करने पधारे, तो उनकी धर्मपत्नी ने गुरुदेव के द्वारा कराए नियम की सबको जानकारी दी।

चातुर्मास में जो धर्म-शिक्षा का भव्य कार्यक्रम चला, उसकी पूर्णता के रूप में परीक्षा का आयोजन किया गया। बच्चे, युवा, वृद्ध, महिलाएं सबने परीक्षा में बढ़चढ़ कर भाग लिया। श्री नरेश मुनि जी म. के पिता श्री वकील मुनि जी म. उस समय बड़ौत में नगरपालिका में सर्विस कर रहे थे। वे भी उस शिक्षा, परीक्षा के प्रमुख छात्र थे। वे अपनी ज्ञान-धारा और वैराग्य-भावना का प्रथम उद्गम उस चातुर्मास को ही मानते थे। धार्मिक परीक्षा में सारा बड़ौत उमड़ पड़ा। बड़ा हृदयंगम दृश्य था। विद्यार्थियों में एक भावना थी कि गुरुदेवों की आज्ञा माननी है और उनके हाथों से सर्टिफिकेट (प्रमाण-पत्र) लेना है। 'जैन धर्म विकास परिषद्' के नाम से सब विद्यार्थियों को प्रमाण-पत्र दिया गया। सब प्रमाण-पत्रों पर गुरुदेव ने अपने हस्ताक्षर भी किए। स्वयं के हस्ताक्षर देने की बात वाचस्पति गुरुदेव को उचित नहीं लगी और आज्ञा दी कि आगे से अपने हस्ताक्षर से युक्त प्रमाण-पत्र नहीं देना। पूज्य गुरुदेव जी म. ने अपने गुरुदेवों की आज्ञा का सर्वदा ही पालन किया है, अतः उसके पश्चात् उन्होंने कभी भी स्व-हस्ताक्षरित प्रमाण-पत्र नहीं दिया। उन्होंने परीक्षा-सम्बन्धी सारी व्यवस्था मा. शामलाल जी को सौंप दी।

धार्मिक प्रशिक्षण के अलावा और भी अनेकानेक कार्यक्रम बड़ौत चातुर्मास में चालू रहे। एक बार आयम्बिल-दिवस मनाया गया, जिसमें 900 आयम्बिल हुए।

चातुर्मास की विदाई पर अनेकानेक काव्यों, भजनों, गीतिकाओं के माध्यम से जनता ने अपने भाव समर्पित किए थे। उनमें से डॉ. चेतन लाल

जी द्वारा प्रस्तुत की गई कविता में पूज्य गुरुदेव तथा उनके गुरुदेवों को-जो कि कांधला में विराजमान थे- धन्यवाद ज्ञापन किया गया है। निःसन्देह इस काव्य के रचयिता हैं—गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म.।

ज्ञान-गरिमा के महत् आगार तुमको धन्यवाद
मूर्ति संयम तेज की साकार तुमको धन्यवाद ॥

1. **थे बुझे सब दीप अंधियारा प्रबलतम छा रहा था,**
उत्पथों के शून्य में जीवन भटकता जा रहा था।
उस अंधेरे में मिला आलोक का वह पुंज हमको,
दूसरों को जगमगाने के लिए जो जा रहा था।
जगमगाती रोशनी की धार तुमको धन्यवाद।
जो हैं इस ज्योति के भी आधार उनको धन्यवाद ॥

2. **जिन्दगी की नाव भटकी थी विकल्पों के भंवर में,**
दिख न सकता था किनारा वारिपथ के इस डगर में।
हिम्मतें यों डूबती थी, डूबकर खो ही न जाए,
पर मिला संबल-सहारा अब तुम्हारे क्रान्त स्वर में।
कर दिया बेड़ा हमारा पार तुमको धन्यवाद।
जो तुम्हारे भी हैं खेवनहार उनको धन्यवाद ॥

3. **जैन शासन के खजाने क्यों न मालामाल हों?**
इस तरह के रत्न हों, जब इस तरह के लाल हों।
अब कहें क्यों कर हमारे पास कुछ भी है नहीं,
जगमगाती जब कि ऐसे हीरकों की माल हों।
गुण-ग्रथित अनमोल मुक्ताहार तुमको धन्यवाद।
जिनके रत्नों का है ये भण्डार उनको धन्यवाद ॥

4. **जिनकी करुणा की लहर इस क्षेत्र को लहरा रही है,**
पल्लवित पुष्पित बनाकर सब तरह सरसा रही है।
तृप्ति होने को नहीं, फिर भी सर्व प्रकार से,
सींच कर इस क्षेत्र को ये आज गंगा जा रही है।

उमड़ती बहती हुई जल-धार तुमको धन्यवाद।
जिस भगीरथ का है ये उपकार उनको धन्यवाद ॥

5. प्रार्थना है हम पे यों उपकार करते ही रहेंगे,
भावना है हम पे यों आभार करते ही रहेंगे।
हम न दें कुछ भी तुम्हें, आप दें सब कुछ हमें,
इस तरह इकतरफा ये व्यापार करते ही रहेंगे,
है किया अब तक यही व्यापार तुमको धन्यवाद।
जिनसे तुमको भी मिला शत बार उनको धन्यवाद ॥

सन् 1959 में पश्चिमी यू.पी. के छोटे से इलाके में हमारी परम्परा के चार चातुर्मास थे। कांधला में वाचस्पति गुरुदेव ठाणे-3, बामनौली में श्री मूलचन्द जी म., श्री फूलचन्द जी म. ठाणे-2, अमीनगर सराय में पं. रणसिंह जी म., तपस्वी श्री बद्री प्रसाद जी म. ठाणे-4, तथा बड़ौत में पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. ठाणे-5 से धर्मोद्योत कर रहे थे। रचनात्मकता की दृष्टि से बड़ौत बहुत ऊँचाईयों पर पहुँचा। क्षेत्र भी बड़ा था और प्रेरणा भी अधिक थी। चातुर्मास के बाद चारों चातुर्मासिक गुरुजनों का मिलन होना था। केन्द्रीय स्थान बड़ौत ही था। गुरुदेव को सबका स्वागत करने का सौभाग्य मिलना था। पर चातुर्मास के बाद वहाँ रुक नहीं सकते थे, क्योंकि कल्प पूरा हो रहा था। अपने से दीक्षा-पर्याय में ज्येष्ठ किसी भी गुरुजन के सान्निध्य में ही अब ठहरना कल्पता था। अतः चातुर्मास-पूर्ति के अगले दिन ही हिलवाड़ी के लिए विहार कर दिया। चन्द दिनों में ही बामनौली से पूज्य श्री मूलचन्द जी म. तथा स्वामी श्री फूलचन्द जी म. बड़ौत मण्डी में पधार गए। तब गुरुदेव जी म. भी मण्डी में पधार गए। वाचस्पति गुरुदेव के कदम भी बड़ौत की ओर बढ़ रहे थे। बड़ौत के समीपवर्ती गाँव बावली में ठहरे हुए थे, तभी पूज्य गुरुदेव ने श्री प्रकाश चन्द्र जी म. तथा श्री पद्म चन्द्र जी म. को श्रीचरणों की सेवा में भेज दिया। रात भर वहीं रहे। अगले दिन शाहाना अंदाज में बड़ौत

मण्डी में प्रवेश हुआ। अमीनगर सराय से भी चारों पूज्य गुरु भगवन्तों का पदार्पण हो गया। इस तरह बड़ौत मण्डी में 14 महामुनियों का मंगल मिलन हुआ। 14 मुनियों के लिए स्थानक छोटा होने के कारण मुसद्दीलाल की धर्मशाला में मुनिसंघ का विराजना हुआ। फिर शहर में सभी का पदार्पण हुआ। सब की जुबान पर बड़ौत चातुर्मास के चर्चे थे। बाचस्पति गुरुदेव इस अद्भुत सफलता से विशेष ही प्रसन्न थे। इससे पिछले वर्ष 1958 में बड़ौत में वाचस्पति गुरुदेव का भी चातुर्मास था। वर्तमान चातुर्मास पूर्व से भी सवाया रहा। एक गुरु के लिए इससे ज्यादा और क्या आत्मीय संतुष्टि देने वाली बात हो सकती है?

यू.पी. के गाँव-गाँव में ये लालसा थी कि गुरुदेव जी म. हमारे यहाँ फरसना करें। उन गाँवों से निकलकर दिल्ली में बसे हुए गुरुभक्त लोगों की भी पुरजोर विनति थी कि गुरुदेव उनके गाँवों में धर्मोद्योत करें और वे भी दिल्ली से आकर अपनी पुरातन स्मृतियों को ताजा करें। इस सिलसिले में मलकपुर वालों का तो बहुत ही आग्रह था, अतः गुरुदेव ने एक सप्ताह के लिए वहां का कार्यक्रम बना लिया। धर्म-प्रभावना का निराला ही रंग था। वहाँ स्थानीय और दिल्लीवासियों ने ठाठ लगा दिये। प्रवचन रात को ही होता था। उसी प्रसंग पर वाचस्पति गुरुदेव भी वहाँ पधार गए। फरमाने लगे, 'आज रात को मैं भी प्रवचन करूँगा।' यद्यपि बड़े प्रवचनकार संतों का रात में कथा करने का रिवाज कम ही है। बड़ौत वाले श्रद्धालु-जन भी भारी संख्या में पहुँच गए। वाचस्पति गुरुदेव ने जितना ओजस्वी, जोशीला और बुलन्द प्रवचन वहाँ किया, उसकी तुलना कुछ इने-गिने प्रसंगों से ही की जा सकती है। यहाँ तक कि बड़ौत वालों ने भी कहा "ऐसा जोश गत वर्ष के पूरे चौमासे में भी नहीं देखा"। एक सहज भाव का समुल्लास था वह प्रसंग।

जब करेगा दिल तभी तो गुनगुनाया जाएगा।
आपके आदेश से हमसे न गाया जाएगा।

एक-दो रात में करामात-सी करके वाचस्पति गुरुदेव छपरौली पधार गए। पूज्य गुरुदेव जी म. ने गाँव को और भी सींचा। जिस रोज गुरुदेव छपरौली पहुँचे, वाचस्पति गुरुदेव ने हरियाणा-प्रवेश के लिए प्रस्थान कर दिया। मार्ग में यमुना महानदी थी। पुल आदि की कोई व्यवस्था न होने से नौका का सहारा लिया। गुरुदेव जी म. अपने पूज्य गुरुओं का प्रत्युद्गमन-विदाई करने यमुना-तट तक गए। उस किनारे गुरु, इस किनारे शिष्य, पर दोनों का मन विपरीत किनारों पर था।

गच्छति पुरः शरीरं, धावति पश्चादसंस्तुतं चेतः।
चीनांशुकमिव केतोः प्रतिवातं नीयमानस्य ॥

अर्थात् शरीर आगे जा रहा था, पर मन पीछे भाग रहा था। हवा के विरुद्ध ले जाए जाने वाले झण्डे का दण्ड आगे बढ़ रहा होता है और ऊपर का वस्त्र पीछे की ओर झांकता रहता है।

जब गुरुदेव जी म. ने छपरौली में प्रवचन प्रारम्भ किए, तो एक क्रान्ति-सी घटित होने लगी। सकल समाज से एक ही गुहार उठने लगी कि महावीर जयंती छपरौली में हो। चार महीने बाद होने वाले प्रोग्राम की इतनी शीघ्र घोषणा करना भी कठिन था। तदपि भावनाओं को देखते हुए कांधला जाकर कुछ कहने का संकेत किया। सारा इलाका गुरुदेव की बाट जोह रहा था। कुछ क्षेत्र तो चातुर्मास से पूर्व कृतार्थ हो चुके थे। बाकी क्षेत्रों की प्यास उन्हें पुकार रही थी। गाँव-गाँव में जैन परिवार थे। अतः गुरुदेव ने ये निर्णय लिया कि किसी भी गाँव को नहीं छोड़ा जाएगा, चाहे कितना ही फेर खाना पड़े। चाहे कितना ही रूट या रूटीन बदलना पड़े। जहाँ प्रातः प्रवचन की व्यवस्था थी, वहाँ प्रातः जहाँ मध्याह्न में व्यवस्था थी, वहाँ मध्याह्न में प्रवचन किए। हर जगह रौनकों की बाढ़! एक-दो रोचक वाकये उल्लेखनीय हैं। 1. किरठल गाँव से विहार की तैयारी थी। दो परिवारों की विनति को मान देकर उनके घर दर्शन देने चले गए। अन्य श्रावकों ने भी विनति करनी शुरू कर दी, पर गुरुदेव ने टाल दिया। इस पर श्रावकों को न जाने क्या सूझी, जयकारे लगाने शुरू कर दिए

और शोर मचा दिया कि 'गुरु म. ठहर गए, ठहर गए।' बड़ी उलझन-भरी स्थिति थी। श्रावकों ने खुद ही विनति की और खुद ही मान ली। अन्ततः गुरुदेव को उसी मानी हुई विनति को पूरा करना पड़ा तथा एक प्रवचन और दिया। 2. लिसाड़ गाँव में प्रवचन किया। रात को भी धर्म-प्रभावना की। अगले रोज विहार करना था। सुबह बाहर निकलने लगे तो देखा कि भक्त श्रावकों ने बाहर से ताला लगा रखा था। श्रावक बाहर खड़े थे। कहने लगे कि ठहरोगे, तो ताला खोलेंगे, नहीं तो बन्द। ऐसी निर्दोष भक्ति के आगे तो भगवान् झुक ही जाते हैं। लिसाड़ वालों को जब एक दिन का और वरदान मिला, तब ताला खुला। मानतुंगाचार्य के ताले खुलने का राज भी संभवतः यही होगा। याच्नामेकान्त-भक्तानां स्वामिनः खण्डयन्ति न-एकान्त भक्तों की भावनाओं का स्वामी कभी तिरस्कार नहीं करते।

छपरौली में महावीर-जयंती मनाई गई। पूरे इलाके में अपनी किस्म की वह पहली ही महावीर-जयंती थी। उसमें गाँव-गाँव के जैनों ने भाग लिया था। करीबन 3-4 हजार की जनता ने गुरुदेव के सान्निध्य में प्रभु वीर को श्रद्धा-सुमन अर्पित किए।

एकदा गुरुदेव ऐलम गाँव में प्रवचन फरमा रहे थे। फरमाने लगे कि चार व्यापारी होते हैं। एक रेत लेकर जाता है, खाण्ड वापस लाता है। दूसरा खाण्ड लेकर जाता है, रेत लेकर आता है। तीसरा रेत लेकर जाता है और रेत ही लेकर लौटता है। चौथा खाण्ड लेकर जाता है और खाण्ड ही लेकर आता है। इसी चौभंगी की तरह चार तरह के आदमी होते हैं, आदि-आदि। प्रवचन करते-करते गुरुदेव ताड़ गए कि लोगों के चेहरों के भाव ऊपर-नीचे होने लगे हैं। समझ गए कि लोग खाण्ड के भावों में तेजी की कल्पना कर रहे हैं। तुरन्त सावधान करते हुए गर्जना की, "कोई भी भाई खाण्ड का काम इस दृष्टान्त से प्रेरित होकर न करे। यदि करेगा, तो पछताएगा"। लोग संभल गए। वर्ना उस युग में उस इलाके में इस तरह की सामान्य प्रवृत्ति थी कि लोग प्रवचन के शब्दों को आधार बनाकर काम-धन्धा कर लेते थे। यदि वे खाण्ड का व्यापार करते, तो भारी नुक्सान में जाते, क्योंकि उस साल खाण्ड में भारी मंदा आया और कितनी ही

जमी-जमाई फर्मे फेल हो गई। उस व्यापक विचरण से जनमानस इतना प्रभावित हुआ कि सब आश्चर्य-चकित रह गए। लोगों को वह समय याद आ गया, जब आचार्य श्री जवाहर लाल जी म. का विचरण हुआ था। उनके बाद ऐसा प्रभावशाली विचरण गुरुदेव का ही हुआ है।

यू.पी. भ्रमण के बाद हरियाणा जाना निश्चित ही था। एक तो उधर ही चातुर्मास की संभावना थी, दूसरे वाचस्पति गुरुदेव के दर्शन भी करने थे, क्योंकि कुछ दिन पूर्व उन्हें हृदय की दिक्कत हो गई थी। हरियाणा जाने के लिए यमुना पार करनी पड़ती थी और उस युग में दिल्ली के बाद कहीं भी पुल नहीं था। नौका का सहारा लेना पड़ता था। सभी संत इसी विधि से यमुना पार करते थे। गुरुदेव जी म. को भी नौका से जाना था। इसलिए पुनः बड़ौत, मलकपुर और छपरौली पधारे। तब तक गर्मी का मौसम आ गया था, यमुना का जलस्तर कई जगह कम हो गया था। अतः कुछ दूर तो नौका का आश्रय लेना पड़ा, आगे जाने पर नौका का चलना असंभव हो गया, तो पैदल भी कुछ पानी को लांघना पड़ा। आपवादिक स्थिति थी। फिर उसका शास्त्र-सम्मत दण्ड-प्रायश्चित्त लिया गया। हथवाला गाँव में आए। पूज्य गुरुदेव और शिष्यमण्डली के लिए वो इलाका सर्वथा नवीन था। सरल, सीधे, अशिक्षित से ग्रामीण लोगों में श्री मयाराम जी म. के प्रत्येक मुनि के प्रति जो सहज श्रद्धा का झरना बहता था, उससे गुरुदेव जी म. प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। राकसेड़ा गाँव में आए, तो देखा कि जैनों के अलावा प्रजापति तथा अन्य जाति के लोग भी सामायिक-संवर करते हैं।

जिस दिन राकसेड़ा से विहार किया, उस दिन एक स्मरणीय घटना बनी। कुछ प्रजापति श्रावक साथ थे। गाँव से बाहर निकले। गुरुदेव ने सब श्रावकों को मंगल-पाठ सुनाकर विदा कर दिया। कच्चे रास्ते पर चढ़े। आगे कहीं मुड़ गए। पूछा— फलां गाँव का रास्ता किधर जाता है। बताया गया— इधर। उधर चले। कुछ दूर जाकर फिर रास्ता पूछा, फिर किसी ने बता दिया। दो घण्टे बाद एक गाँव में पहुँचे, पर वह वही गाँव निकला— राकसेड़ा। हम जहाँ से थे चले, क्या फिर वहीं आना हुआ, आज का यह

दृश्य कुछ लगता है पहचाना हुआ। धरती गोल है, ये सिद्धान्त उस दिन तो साबित हो ही गया। ठहर गए वहीं पर। अगले दिन चले, पर पूरी सावधानी के साथ कि कहीं दोबारा राकसेड़ा न पहुँच जाएँ। आज ठीक ठिकाने 'देहरा' गाँव में पहुँच गए। एक-एक दिन लगाते हुए मतलौड़ा पहुँचे। स्थानक गाँव में था। ज्यादातर परिवार मण्डी वाले भाग में रहने लगे थे। गुरुदेव के लिए सारा इलाका नया था। पता था नहीं, अतः गाँव में ठहर गए। प्रवचन में कोई भाई नहीं आया। बड़ा आश्चर्य हुआ। जबकि सुना ये था कि मतलौड़ा वाले बड़ी रौनक लगाते हैं। ये राज तो विहार के बाद में खुला कि मण्डी में ठहरते, तो ठाठ लगता। खैर, अगले ही दिन सफीदों में पूज्य गुरुवर श्री वाचस्पति जी म. के चरणों में पहुँचे। तपती गर्मी में भी गुरु-कृपा का अमृत-मेघ बरसा। वाचस्पति गुरुदेव का स्वास्थ्य सुधार पर था। वहाँ से गुरुदेव को चातुर्मास-स्थल रोहतक की ओर प्रस्थान करना था। ग्रीष्म अपने यौवन पर था। समय स्वल्प था, अतः छोटे मार्ग से हाट, गंगाना होते हुए बुटाना पधारे। सभी जैन परिवार कृषि करते थे। फिर भी धर्मरुचि अच्छी थी। स्थानक साताकारी था। स्थानक के नीचे वाले भाग में एक बुजुर्ग चारपाई पर लेटे रहते थे। अस्वस्थ थे। गुरुदेव उनको मंगलपाठ सुनाते। उनका नाम था ला. श्री मोतीराम जी। सन् 1957 के अन्त में जब वाचस्पति गुरुदेव बुटाना पधारे थे, तब साध्वी भागवन्ती जी म. की दीक्षापाठ के बाद ही ला. मोतीराम जी की धर्मपत्नी सोना देवी का देहान्त हो गया था। और संयोग देखिए, पूज्य गुरुदेव के रहते हुए ही ला. मोतीराम जी का भी देहावसान हो गया। उन्हीं पूतात्माओं की सबसे छोटी संतान श्री हुक्म चन्द जी पूज्य गुरुदेव के चरणों में 1964 में वैरागी बने तथा 1967 में दीक्षा ग्रहण की। आज वे ही पूज्य श्री विनय मुनि जी म. के नाम से विख्यात हैं। ये अपने सौम्य, पावन जीवन से मुनिमण्डल और श्रावक-समाज को धन्य कर रहे हैं।

गुरुदेव को एक मुकाम और छूना था। रोहतक पहुँचने से पूर्व, वह मुकाम था रिंढाणा गाँव। वस्तुतः उन दिनों में हरियाणा के गाँव ही स्थानकवासी परम्पराओं के संरक्षक और ध्वजवाहक थे। रिंढाणा को तो

गुरुदेव के गुरुभाई तपस्वी श्री बद्री प्रसाद जी म., सेठ श्री प्रकाश चन्द्र जी म. तथा पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. की जन्म-भूमि होने का गौरव प्राप्त हुआ था। वहाँ जाने से पहले 'वनवासा' भी फरसा। वहाँ तपस्वी श्री बद्री प्रसाद जी म. की चाची रहती थी, जिसके पास सेठ श्री प्रकाश चन्द्र जी म. तथा श्री रामप्रसाद जी म. का बचपन व्यतीत हुआ था। उस देवी के ऋण का अहसास करते हुए, अहसान मानते हुए रिण्ढाणा पधारे। वहाँ की मिट्टी की सौंधी-सौंधी महक को मन में बसाया। अपने गुरुभ्राताओं के महान् जीवन के प्रति शुभकामना की और चले जुलाना की ओर। पर ये क्या? नहर पार करते ही जोरदार आंधी ने घेर लिया। बचाव का कोई साधन नहीं। पहले तो शरीर पर पसीना खूब था और हवा भी आई तो धूल लेकर। शरीर का एक-एक रोम धूल से लथपथ हो गया। जल्ल-मल के परीषह को सहते हुए जुलाना पहुँचे। फिर रोहतक की ओर प्रस्थान किया।

श्री वाचस्पति गुरुदेव ने सन् 1960 का चातुर्मास सोनीपत मण्डी स्वीकार किया। तब सोनीपत में जैन स्थानक नहीं था। अग्रवाल धर्मशाला में ही चातुर्मास बिताया। पूज्य श्री तपस्वी जी म. की आग्रह-भरी विनति पर बड़े गुरुदेव ने सोनीपत चातुर्मास किया। सम्भवतः उन्होंने सोनीपत की छिपी सम्भावनाओं को पहचान लिया था और वे उसे मूर्त रूप देना चाहते थे।

उस वर्ष गुरुदेव का चातुर्मास रोहतक में स्वीकृत हुआ। रोहतक गुरुदेव की जन्म-भूमि है। शैशव-काल की सैंकड़ों-हजारों स्मृतियाँ गुरुदेव के एवं जनता के मानस-पटल पर तैर रही थी। रोहतक ऐतिहासिक नगरी है। कभी ये रोहतास-गढ़ था। कुछ वैयाकरण विद्वान् 'रोहतक' शब्द को रोहीतक (रोहीड़ा) वृक्ष की बहुलता से सम्बद्ध करते हैं। आज रोहतक के 'खोखरा कोट' भू-भाग में बड़े-बड़े टीले हैं, जहाँ सदियों पुराने खण्डहर अपनी गोद में ऐतिहासिक तथ्यों को समेटे हुए पड़े हैं। पुरातत्वविद् वहाँ समय-समय पर खुदाई करते रहते हैं। रोहतक में शहर का क्षेत्र पुराना और मण्डी का नया है। गुरुदेव का चौमासा मण्डी में था। चातुर्मास प्रवेश

से पहले दिन गुरुदेव शहर के बाहर 'गोकर्ण' नामक रमणीय स्थल पर ठहरे हुए थे। वहाँ रात्रि को गुरुदेव को एक आश्चर्यकारी स्वप्न आया कि रोहतक का निचला हिस्सा (शहर को छोड़कर सारा रोहतक) भीषण बाढ़ से घिरा हुआ है। स्वप्न-दर्शन से हृदय कुछ आशंकित हुआ। फिर अपने पूज्य गुरुदेवों का स्मरण किया और कुछ पाठ किया। अन्तःकरण में ध्वनि पूँजी, 'होनहार को टाला नहीं जा सकता, पर तुम पर कोई आँच नहीं आएगी'। गुरुदेव ने सर्वथा निर्भार होकर मंगल प्रवेश किया और जनता को अधिकाधिक धर्माराधन की प्रेरणा दी। उस वर्ष नगर में 19 जून को प्रवेश हुआ था। चातुर्मास में बाढ़ आई। इस कारण 19 तारीख के प्रति गुरुदेव के मन में शंका-सी बैठ गई। जीवन-भर वे 19 ता. को कोई भी शुभ कार्य प्रारम्भ करने से बचते रहे। गुरुदेव के प्रवचनों से सारे नगर में धार्मिक तूफान-सा आ गया। रोहतक शुरू से ही सम्प्रदाय-निरपेक्ष नगरी रही है। किसी भी सम्प्रदाय का कोई विशिष्ट अतिशय-सम्पन्न मुनिराज यहाँ आए, तो सभी वर्गों के लोग पूरा लाभ लेते हैं। दिगम्बर, श्वेताम्बर, सनातनी एवं अन्य सभी कौमें प्रवचनों में आती हैं। पूज्यपाद चारित्र-चूडामणि श्री मयाराम जी म., वाचस्पति गुरुदेव जी म., योगिराज श्री रामजी लाल जी म. एवं आचार्यप्रवर श्री कांशीराम जी म. ने रोहतक के रंग देखे थे और इस बार बारी थी रोहतक के ही लाल-मुनि सुदर्शन लाल जी की। अपनी जन्मभूमि का ऋण उतारने आए थे गुरुदेव। इतना जन-सम्मर्द लम्बे अरसे से रोहतकवासियों ने नहीं देखा था। समाज-सुधार गुरुदेव का मुख्य विषय था। दहेज-प्रथा के विरुद्ध एक आन्दोलन-सा चला। पूरा अग्रवाल समाज उसकी परिधि में आ गया। गुरुदेव की वाणी की वेधकता और बुलन्दी, मधुरता और भावप्रवणता, तार्किकता और सर्वांगीणता से सारे शहर का जनमानस हिल उठा। भीड़ का अंदाजा लगाना मुश्किल हो गया था। हजारों व्यक्तियों ने जीवन-पर्यन्त दहेज न लेने का नियम लिया, जिसे बहुतों ने निभाया भी। एक वद्धा प्रतिदिन प्रवचन में आती पर भीड होने से बैठने में परेशानी मानती। उठते समय ऐलान करके जाती कि 'कल प्रवचन में बिल्कुल नहीं आऊँगी।' पर अगले

दिन फिर आ जाती। रोज मना करती, रोज आती। एक दिन किसी ने पूछा लिया, 'माताजी, आप तो कल मना कर रही थी, फिर क्यों आई?' वह बोली-'क्या करूँ, जब टाइम होता है तो 'सुदर्शन' की आवाज कानों में गूंजने लगती है और मैं अपने को रोक नहीं पाती।'

एक दिन गुरुदेव स्थानक में बैठे थे। पीछे से एक ब्राह्मणी आई और सिर पर हाथ फेर कर बोली 'रे सुन्दरो के छोरे, राजी सै'? गुरुदेव ने उसे समझाया कि जैन संत को छूना नहीं। वह बोली, 'पता तो मुझे भी था, पर तुझे देखकर रुका नहीं गया।'

गुरुदेव बाहर दिशा को जा रहे थे। साथ में एक पुराना जैन मित्र भी था। सड़क पर गुरुदेव के परिवार का पुराना जमादार (भंगी) खड़ा था। वह गुरुदेव के चरण स्पर्श करना चाहता था, पर हीन जाति का होने से मन में शंकित भी था। साहस करके चरण छने की आज्ञा मांगी। गुरुदेव ने सहर्ष दे दी। चरण छू लेने के बाद गुरुदेव ने उससे तीन चीजों की मांग की– 1. शराब नहीं पीना 2. मांस नही खाना 3. खरगोश का शिकार नहीं करना (वस्तुतः उनके परिवार में हिंसा के नाम पर केवल खरगोश ही मारा जाता था)। उसने तीनों ही नियम सहर्ष ले लिए। एक भंगी द्वारा चरण-स्पर्श करने पर उस सहगामी भाई ने बाद में गुरुदेव से ऐतराज किया। तब गुरुदेव ने बेलाग शब्दों में उससे कहा, 'मैं तेरे जीवन की डायरी भी जानता हूँ। तू मेरे साथ-साथ चल रहा है, तो तू भी जीवन-भर के लिए शराब न पीने का नियम ले ले।' इस पर वह आनाकानी करने लगा, तो गुरुदेव ने उसे डाँटते हुए उपालम्भ दिया कि 'तुझ से तो वह भंगी ही अच्छा है।' इस पर वह भाई भी प्रबुद्ध हुआ।

रोहतक चातुर्मास में भी गुरुदेव ने पूरी द्रुत गति से प्रशिक्षण-अभियान को आगे बढ़ाया। स्वल्पकालीन लाभ तो सैंकड़ों ने लिया। दीर्घकालीन लाभ लेने वालों में थे– श्री राजकुमार जी जैन आई.ए.एस.। ये उस समय करनाल में जज लगे हुए थे। गुरु-दर्शनार्थ रोहतक आए। 'धर्म-बोध' ले गए। याद करके परीक्षा दी। तब से प्रारम्भ हुआ उनका स्वाध्याय-क्रम

आज भी अभग्न रूप में चल रहा है। वैश्य स्कूल और वैश्य कॉलेज में पढ़ने वाले अनेक जैन नवयुवकों ने तभी से धर्म-प्रेरणा ली और गुरु-धारणा ग्रहण की।

रोहतक की रौनकों की गूंज सारे हरियाणा में थी। संवत्सरी पूरे उत्साह के साथ मनाई गई। उसके बाद वर्षा की अधिकता के कारण ड्रेन नं. आठ में पानी का स्तर बढ़ने लगा। गुरुदेव को अपना स्वप्न सत्य होने का खतरा महसूस होने लगा। बाढ़ से होने वाली धन-जन की विपुल हानि की कल्पना से उनका मन सिहर उठा। शहर के सम्भ्रान्त लोग ड्रेन का पानी देखने और वहाँ पिकनिक मनाने के लिए जाने लगे। गुरुदेव के कोमल मन को ये बहुत अखरा। उन्होंने प्रवचन में ललकार लगाई, 'क्यों सज-धज कर पानी देखने जाते हो? समय आने वाला है, जब तुम्हारे घरों और दुकानों तक भी पानी आएगा।' ये सुनकर लोग चौंक उठे। घरों और दुकानों के सामान को यथासंभव सुरक्षित स्थानों पर पहुँचाने का प्रयास किया। कुछ दिन बाद सचमुच वही घटित हुआ। ड्रेन नं. आठ टूट गया। पानी शहर की ओर बढ़ने लगा। सारे शहर में तरह-तरह की अफवाहें थी। केवल एक ही चर्चा थी कि 'पानी यहाँ तक पहुँच गया, वहाँ तक पहुँच गया'। गुरुदेव के मन में पूरा निश्चय था कि केवल बाबरा मोहल्ला ही सुरक्षित रहेगा। श्रावकों ने कई बार गुरुदेव से स्थानक छोड़कर अन्यत्र पधारने का आग्रह किया, पर गुरुदेव ने हर बार यही फरमाया कि 'अभी चिन्ता मत करो, हम समय रहते ही स्थान-परिवर्तन कर लेंगे'। एक दिन अचानक ही गुरुदेव ने सन्तों से तैयार होने और उपधि-उपकरण समेटने का आदेश दिया। सन्त एकदम तैयार हो गए। सवा तीन बजे स्थानक से उतरे। चार बजे शहर की स्थानक में पहुंचे। वहाँ स्थान स्वल्प होने से ला. सीताराम धर्मदास जी गांधरा वालो के मकान में उतरे। इधर पाँच बजे सारा रेलवे रोड बाढ़ के पानी से जल-मग्न हो गया। गुरुदेव का सपना इस रूप में अपना रंग दिखा रहा था।

उसी समय एक भीषण दुर्घटना भी होते-होते बची। उसकी लपेट और चपेट में सारा शहर आ सकता था। इस बचाव का श्रेय भी गुरुदेव

की अन्तर्दृष्टि और उनके प्रभाव को ही जाता है। सरकारी कॉलेज की प्रयोगशाला में दुनिया का सर्वाधिक घातक विष– 'पोटैशियम साइनाइड' बर्तन में भरा रखा हुआ था। उसकी ओर किसी का ध्यान नहीं गया। गुरुदेव को पता लगा। उन्होंने बाबूलाल आदि कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों के माध्यम से प्रशासन को सक्रिय कर उस जार को वहाँ से हटवाया। उस महापुरुष ने इस तरह अपनी जन्म-भूमि की रक्षा की। दीपावली से पर्व 17 अक्टूबर के दिन पुनः मण्डी में पधार गए। अनाज मण्डी में सार्वजनिक प्रवचन हुआ। 4-5 हजार की श्रद्धालु जनता ने अपने धरती पुत्र की सिंह-गर्जना सुनी।

रोहतक चातुर्मास सम्पन्न करके गुरुदेव गोहाना पधारे। इधर वाचस्पति गुरुदेव भी सोनीपत श्रीसंघ की रचना करके गोहाना पधारे। पतित-पावनी गंगा विराट् सागर में विलीन हो गई। वाचस्पति गुरुदेव का हृदय अपने शिष्य की फैलती हुई यशःसौरभ से सुवासित था। एक दिन अन्तरंग वार्तालाप के प्रसंग में वे फरमाने लगे, 'सुदर्शन! मुझे खुशी है कि तू दोनों बाढ़ों से बच गया। एक पानी की बाढ़ से, दूसरी जनता की बाढ़ से। पानी की बाढ़ की अपेक्षा जनता की बाढ़ से बचना ज्यादा कठिन है। वो काम तूने कर दिया, इसलिए मेरी आत्मा तुझसे प्रसन्न है'। अपने गुरुओं की प्रसन्नता से अधिक एक शिष्य को और क्या चाहिए?

रोहतक से आते समय, धामड़ से कान्ही गाँव के मार्ग में गुरुदेव के पैर में एक तीक्ष्ण काँटा चुभ गया था। वेदना बहुत थी। एक सप्ताह ठहरे। सब उपाय निष्फल रहे। गोहाना आने पर पूज्यपाद सेठ श्री प्रकाश चन्द्र जी म. ने उस स्थल को जरा-सा छेड़ा, तो काँटा एकदम बाहर आ गया। गुरु-दर्शन एवं बन्धु-मिलन तो सदा सर्वदा मंगलकारी होता है।

उन दिनों सन्तों में श्रावकों को सामायिक आदि सिखाने की भावना प्रबल हो चली थी। कुछ प्रसंग ऐसे भी आए कि अध्येताओं में केवल अकेली बहनें ही होती थी। यह बात वाचस्पति गुरुदेव को नहीं ऊंची। उन्होंने सन्तों का बुलाकर अकेली बहनों को पढ़ाने का निषेध कर दिया।

उन्होंने इसे स्वीकार किया। तभी वाचस्पति जी म. ने नवदीक्षित तीनों सन्तों को अपने पास बुलाकर गुरुदेव के माध्यम से सबको फरमाया—'सुदर्शन मुनि ! नए सन्तों को अनुशासन में रखना। यदि इनको सयंम पालना है और तुझे इनका संयम पलवाना है, तो इन्हे स्त्रियों के अधिक सम्पर्क से बचाए रखना'। गुरुदेव ने व अन्य सबने उनके इस आदेश को सिर झुकाकर स्वीकार किया। गुरुदेव उस समय अपने संघ की तीन पीढ़ियों के मध्य सेतुभूत थे।

गुरुदेव जी म. के ऊर्वर मस्तिष्क में संघ-संरचना की एक योजना काफी दिनों से उत्पन्न हो रही थी। वे चाहते थे कि वाचस्पति गुरुदेव के महान् व्यक्तित्व से प्रभावित, सुपोषित हरियाणा-संभाग के क्षेत्रों का एक संगठन बनाया जाए। उस संगठन की समग्र रूप-रेखा तैयार करके उन्होंने अपने गुरुदेव जी म. के चरणों में अर्पण कर दी। वाचस्पति गुरुदेव उस नूतन सकल्पना से प्रभावित तो बहुत हुए, पर उसे क्रियान्वित करने के लिए सहमत नहीं हुए। कहने लगे कि 'नूतन संगठन के निर्माण से क्षेत्रों में श्रावकों का विभाजन हो जाएगा, अतः श्रावक-समाज को पूर्ववत् ही चलने दें।' पूज्य गुरुदेव ने अपने गुरुओं की भावना को सकारात्मक रूप से स्वीकार किया और सदा के लिए उस योजना को निरस्त कर दिया। अपनी कल्पनाओं से भी बड़ों की आज्ञा को अधिमान देना जानते थे गुरुदेव।

5. पंजाब की पुकार

पूज्य गुरुदेव जी म. अपने गुरुदेव के श्री चरणों में जीन्द विराजमान थे। वाचस्पति गुरुदेव को कुछ हृदय की तकलीफ रहने लगी थी। उन की भावना थी कि मै पंजाब-भ्रमण करूँ तथा अपने शिष्य सुदर्शन मुनि जी को भी पंजाबी क्षेत्रों का परिचय करा दूं। श्री तपस्वी जी म. की इच्छा थी कि हरियाणा के क्षेत्रों में ही अधिकाधिक विचरण हो। जालन्धर के मुख्य श्रावक-बाबू केसरदास जी, सतीश जी, राजकुमार जी आदि विनति-हेतु आए हुए थे। गुरुदेव जी म. ने अपने गुरुओं की भावनानुसार ही पंजाब-पदार्पण का संकेत देकर प्रवचन में वातावरण बनाया। बाद में जब श्री तपस्वी जी म. ने कहा कि 'आपने ये क्या कह दिया', तो गुरुदेव ने फरमाया कि 'हमारी भी इच्छा है कि गुरुदेव के सामने पंजाब देख लें।' इस पर श्री तपस्वी जी म. भी सहमत हो गए। वे गुरुदेव की हर इच्छा को अधिमान देते थे। मूनक की ओर विहार हुए।

वाचस्पति गुरुदेव को अधिक सफर नहीं बढ़ाना था, अतः बांगर के गाँवों में गुरुदेव पधारे। यहाँ के ग्राम्य वातावरण का आनन्द लिया और जन-जागरण का महनीय कार्य संपन्न किया। बड़ौदा की धर्म-धरा पर सप्ताह-भर अपने पूर्वजों की यशो-गाथाएँ गाई और सुनाई। चौ। दरिया सिंह द्वारा रचित मुंशीराम की छाप से युक्त हरियाणवी भजनों का समां बंधा। स्वयं भी इस विधा को अपनाया तथा मुनियों को भी हरियाणवी भजन सिखवाए। खटकड़ गाँव में रुके हुए थे, तब ज्ञात हुआ कि वाचस्पति गुरुदेव बड़ौदी पधार गए है। मन में भावना उमड़ी और दर्शन करने चले गए। गुरु-दर्शनों से कभी तृप्ति नहीं होती थी एवं निरन्तर तृष्णा बनी ही रहती थी। सुराणा खेड़ी जैसे भक्ति-प्रधान गाँव को तृप्त कर हांसी, हिसार

गए। उकलाना ओर मध्यवर्ती अनेक गाँवों का स्पर्श करते हुए नरवाना पधारे। टोहाना से मूनक पधारे। वहाँ का उत्साह दर्शनीय था।

मूनक में दो जैन परिवारों में विवाद चल रहा था, जिस कारण उन घरों में तो अशांति का वातावरण था ही, सामाजिक समरसता में भी भंग पड़ने के आसार बन जाते थे। सम्बन्धित व्यक्तियों ने वाचस्पति गुरुदेव से निवेदन किया कि इस विवाद को सुलझा दो। उन्होंने दोनों परिवारों के मुख्य व्यक्तियों को कहा कि 'तुम अपनी-अपनी समस्याएं श्री सुदर्शन मुनिजी तथा श्री बद्री प्रसाद जी म. के सामने रखें, फिर मै उनसे परामर्श करके निर्णय दूंगा, दोनों पक्षों की बात सुनकर पूज्य गुरुदेव तथा तपस्वी जी म. ने सही स्थिति का आकलन किया। उसका हल सोचा तथा वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में अपने विचार प्रकट कर दिए। वाचस्पति गुरुदेव संतुष्ट हुए और उन्होंने दोनों परिवारों को अपने निर्णय से अवगत करा दिया। उन परिवारों ने भी सहर्ष स्वीकृति दी। इस तरह विवाद का निपटारा हो गया।

वाचस्पति जी म. की इच्छा थी कि अपने शिष्य का चातुर्मास जालन्धर कराऊँ। जालन्धर उस मौके पंजाब का बड़ा विशाल और केन्द्रीय क्षेत्र था। वहाँ की समाज गुरुदेव से और उनकी क्षमता से परिचित नहीं थी, अतः उनके चातुर्मास के प्रति अनुत्सुक दिखाई दी। अन्ततः वाचस्पति गुरुदेव का सन् 1961 का चातुर्मास जालन्धर हुआ। गुरुदेव का चातुर्मास अमृतसर करवाने का मन बना, पर उस समय अमृतसर श्रीसंघ भी विभाजित था। पार्टीबाजी पूरे जोरों पर थी। अतः शीघ्र निर्णय नहीं लिया, सोचा कि अमृतसर जाकर ही स्थिति का आकलन करेंगे और फिर निर्णय लेंगे।

पंजाब की ओर प्रस्थान हुआ। वाचस्पति गुरुदेव का लाडला, पाला-पोसा पंजाब। गुरुदेव जी म. के लिए काफी कुछ नया, अछूता पंजाब। उत्सुकता भी थी और सावधानी भी। नए के प्रति उत्सुकता सहज ही है, पर सावधानी इसलिए कि पहले तो पंजाब के संतों मे निर्विवादता थी

अब कुछ सालों से विवाद ने अपना जाल फैला दिया था। पहले वाचस्पति गुरुदेव आचार्य श्री आत्मा राम जी म. के सर्वाधिक निकट थे। लेकिन 1956 में प्रधानमंत्री पद से त्यागपत्र के बाद सम्बन्धों में निकटता नहीं रही थी। मुनियों ने अपने-अपने ढंग से वाचस्पति गुरुदेव की छवि को मलिन भी किया था। फलतः उन्हें और उनके मुनि-परिवार को विरोध का सामना करने की संभावना रहती थी। इस कारण बोलने में, व्यवहार में सावधानी अपेक्षित थी। मूनक से वाचस्पति गुरुदेव ने बुढलाडा, मानसा, बरनाला का रास्ता लिया और गुरुदेव जी म. के लिए उन्होंने सुनाम, संगरूर, धूरी, मलेरकोटला, अहमदगढ़ आदि क्षेत्रों को सिंचित करने का आदेश दिया। रायकोट में मिलने का प्रोग्राम बनाया। जहाँ-जहाँ विचरण हुआ, कहीं भी विषमता प्रतीत नहीं हुई। वही पुराना श्रद्धा-भाव, वही हार्दिक समर्पण। मुनियों से भी मिलन होता रहा। मलेरकोटला में श्री राजमल जी म. के दर्शन हुए। अहमदगढ में श्री प्रेमचन्द जी म., श्री फूलचन्द जी म. 'श्रमण' जी के चरण-स्पर्शन का सौभाग्य मिला। श्री 'श्रमण' जी का तो जीवन ही विलक्षण और अनुपम था। आत्मीयता के उत्कृष्ट निदर्शन थे।

इस विचरण-क्रम में रायकोट, जगरावां आदि एकाध स्थानों पर पूर्वतः विराजित मुनियों द्वारा वातारण को बिगाड़ने कोशिश की गई, परन्तु गुरुदेव जी म. ने सर्वत्र समाजों को शान्त किया और स्वयं शासन-प्रभावना में लीन रहे। जगरावां से मोगा पहुँचे। गर्मी अपने यौवन पर थी। जब पहुँचे तो पता चला कि श्री रघुवर दयाल जी म. के शिष्य श्री अभयमुनि जी म. स्थानक में विराजमान हैं। उन्हें सन् 1950 में वाचस्पति गुरुदेव ने गहन आत्मीयता के साथ आगमों का अध्ययन करवाया था। उन्हीं अभय मुनि जी को जब ज्ञात हुआ कि नीचे वाचस्पति जी म. के सुशिष्य श्री सुदर्शन लाल जी म. आए खड़े हैं, तो उन्होंने नीचे आकर स्वागत करने तथा मिलने की औपचारिकता को तो दर-किनार किया ही, आगन्तुक मुनिराज अधिक हैरान-परेशान हों, इस उद्देश्य से प्रवचन भी प्रतिदिन के समय से लम्बा कर दिया। पूज्य गुरुदेव समता से नीचे बैठे रहे। **"जो तोको काँटा बुवै ताको बो तू फूल, तुझको फूल ही फूल है, वाको शूल**

त्रिशूल"। तब श्री अभयमुनि जी का क्या पता था कि भविष्य में हरिद्वार जाकर भगवा वेष धारण करना पड़ेगा। दिन-भर ऐसा ही रूखा व्यवहार रहा। रात भी एक गर्म बरामदे में गुजारनी पड़ी। पूज्य गुरुदेव ने अगले ही दिन प्रस्थान कर जीरा में पदार्पण किया। पर मन में ये सोचा कि इन मुनियों के रहते वाचस्पति गुरुदेव का मोगा में पदार्पण समाधिमय नहीं रहेगा। अतः समाचार भिजवा दिया कि मोगा पधारने की बजाय जगरावां से कोई और मार्ग चुन लें तो बेहतर रहेगा। वाचस्पति गुरुदेव ने जगरावां से सिंधवांबेट होकर नकोदर का रास्ता स्वीकार किया। उस मार्ग में उन्हे शारीरिक असाता तो हुई, पर मानसिक संक्लेश और सामाजिक कटुताओं से बचाव रहा।

पूज्य गुरुदेव जी म. को अब अमृतसर जाकर चातुर्मास आदि के संबन्ध में निर्णय करना था। समय थोड़ा रह गया था। अतः लम्बे-लम्बे विहार करने अनिवार्य हो गए थे। जीरा में श्री शास्त्री जी म. की गर्दन में तीव्र दर्द भी हो गया। पर रुकने का वक्त नहीं था। दर्द को झेलते झेलते चल दिए। अपरिचित-सा इलाका था। मक्खू, हरिके-पत्तन से आगे छोटा सा गाँव है-बुर्ज। वहाँ मध्याह्न में पहुँचे। एक महन्त (बाबा) का डेरा ठहरने का ठिकाना बना। आटे की चक्की से निकलता हुआ गर्म पानी लिया। गाँव से कुछ रोटियां मिल गई। गुजारा हो गया। अमृतसर समाज के कुछ श्रावक भी यहाँ-वहाँ तलाशते-तलाशते शाम को वहाँ पहुँचे। गुरुओं की साता पूछते-पूछते, अपनी तलाश की कहानी भी सुनाते रहे। भूख उन्हें भी लगी थी। संतों की तरह गोचरी तो कर नहीं सकते थे। उस डेरे वाले महन्त से ही उन्होंने बात की। उसने कहा—आटा, राशन, सामान दे देता हूँ, बना लो और खा लो। एक श्रावक भगवान दास भोजन बनाना जानता था। उसने उस दिन सेवा का लाभ लिया। भोजन बनने के बाद वे गुरुदेव जी म. से भी विनति करने आए। मगर गुरुदेव जी म. ने साफ इंकार कर दिया। पट्टी जाकर शास्त्री जी म. को दवा दिलाई और उन्हें दर्द से राहत मिली।

अमृतसर पधारना था। समाज दो विभागों में विभक्त था। वाचस्पति गुरुदेव के प्रति सब श्रद्धाशील थे, मगर पारस्परिक संघर्षो में धर्मश्रद्धा भी आहत तो होती ही है। पूज्य गुरुदेव सर्वप्रथम चौरस्ती अटारी वाली स्थानक में पधारे। प्रवचन और जीवन, संयम और व्यवहार, जोश और होश का अद्‌भुत समन्वय देखकर अमृतसरवासी चातुर्मास के लिए परम आग्रहशील हो गए। गुरुदेव जी म. ने भी उपयुक्त वातावरण देखकर चातुर्मास का मन बना लिया तथा वाचस्पति गुरुदेव को सूचित कर दिया। समाज गई और स्वीकृति हो गई। यों तो गुरुदेव जी म. के लिए अमृतसर बिल्कुल नया था, पर दिल्ली में इन लोगों का आना रहता था, अतः बहुतों से पुराना परिचय था। संपर्क बनने में देरी नहीं लगी। चौरस्ती अटारी का स्थानक चातुर्मास के लिए अधिक अनुकूल नहीं होने से 'जैन भवन' में ठहरने का सामूहिक विचार बना। चातुर्मास प्रारम्भ होने में अभी कुछ दिन शेष थे। अतः उन बचे दिनों का सदुपयोग करने के लिए जंडियाला गुरु पधार गए। फिर वहाँ से चातुर्मासार्थ प्रवेश किया।

वाचस्पति गुरुदेव की कृपा तथा अपना विवेक, दोनों ने मिलकर अमृतसर समाज का रंग बदलना शुरू कर दिया। वाचस्पति गुरुदेव के अनन्य उपासक श्रावकों– चाचा हंसराज, विजय, परजन, ज्ञान चन्द, कपूर चन्द, अमृत लाल आदि के अलावा अनेक नए श्रद्धालुओं ने गुरुचरणों का कृपा-प्रसाद पाया। शास्त्रों के मर्मज्ञ सुश्रावक श्री रलाराम जी को गुरुदेव के प्रति गहन आस्था थी। उनके भतीजे श्री कश्मीरी लाल जी ने उस चातुर्मास में सेवा-उपासना की वो मिसाल कायम की कि सारे अमृतसर में चर्चा का विषय बन गई। गुरुदेव जी म. कहीं भी जाते, वह युवक आगे-आगे हाजिर रहता। गुरुदेव जी म. कहते ये हमारा "झण्डा" है। और आज तक "झण्डा" जी की गुरुभक्ति उसी तरह लहरा रही है। गुरुदेव का स्वभाव था कि कभी किसी को अपना विरोधी नहीं मानते थे। कोई अधिक आए, कम आए, या न आए, सबको वे अपना ही समझते थे। सब घरों में दर्शन देने जाना, सब घरों से गोचरी लाना और सबसे प्रेम से बोलना। गुरुदेव का ऐसा जबरदस्त आकर्षण था कि किसी बड़े से

बड़े चौधरी से दबते भी नहीं थे और अपनी बात भी साफ कह देते थे। उनके मुखारविन्द से एक ब्रह्मघोष हमने भी कई बार सुना है, "इज्जत" करेंगे छोटे बालक की भी, पर खुशामद नहीं करेंगे खुदा की भी। यदि हमें खुशामद ही करनी होती, तो घर में रहकर अपने माँ-बाप की करते।"

सामाजिक विभाजन के बावजूद सबने गुरुदेव के प्रति समान श्रद्धा-भक्ति का परिचय दिया। जब उनकी ओजस्वी वाणी निहित स्वार्थी तत्वों को ललकारती, तो हृदय-भूमिका गहराई तक हिल जाती थी। कुछ लोग जालन्धर जाकर वाचस्पति गुरुदेव से भी संकेत करते कि सुदर्शन मुनि जी बहुत दहाड़ते हैं। ऐसा कहते हैं, वैसा कहते हैं आदि। इस पर वे फरमाते कि 'सुदर्शन मुनि की जगह मैं बोल रहा हूँ। वो जो कुछ कह रहा है, सही कह रहा है और मेरी आज्ञा से कह रहा है'। उनकी ओर से इतना ठोस समर्थन देखकर श्रावक भी चुप हो जाते। पूज्य वाचस्पति गुरुदेव जहाँ अपने शिष्य का इतना सम्मान और समर्थन करते, वहाँ कुछ जायज बातों को गुरुदेव तक पहुंचा भी देते थे और सावधानी रखने की हिदायत भी दे देते थे। ऐसे करुणा-वरुणालय गुरुओं का आलम्बन और संरक्षण पाकर कौन शिष्य अपने को धन्य-भागी नहीं कहेगा?

हरियाणा के बुटाना गाँव के एक भाई श्री किशोरी लाल जी ने अमृतसर गुरुदेव-चरण में जाकर 41 दिन की दीर्घ तपस्या की। समाज में श्रद्धा का विशेष भाव उमड़ा। तपः पूर्ति पर अधिकारी वर्ग ने प्रतिपक्षी वर्ग को अपेक्षित प्रमुखता नहीं दी, तो वे स्थल को छोड़कर बाहर आ गए। सामाजिक समन्वय में दरार न पड़े, इसके लिए गुरुदेव जी म. ने बहुत सूझबूझ और संतुलित ढंग से उनकी आहत भावनाओं को शान्त किया। फिर वही समरसता की मंदाकिनी कल-कल बहने लगी। ये बात दीगर है कि तपस्वी श्रावक ने पारणे के बाद कुछ लोगों से पैसा और गर्म शाल लेकर तपस्या की महिमा को कम कर दिया। गाँव में इस बात की काफी प्रतिकूल प्रतिक्रिया हुई। चातुर्मास सम्पन्नता पर जो विहार की रौनक थी, वह पूज्य गुरुदेव के कर्तृत्व की मुँह बोलती तस्वीर थी। ऐसी भीड़ें इतिहास में कभी-कभार ही होती हैं। अमृतसर से चलकर भले ही

गुरुदेव जण्डियाला पधार गए, पर अमृतसर वालों ने तो जण्डियाला को भी अमृतसर बना दिया।

कपरथला पधारे। वहीं वाचस्पति गुरुदेव का भी पदार्पण हुआ। वह क्षेत्र छोटा होते हुए भी महान् पुरुषों के समागम से महान् हो उठा। वहाँ के प्रमुख श्रावक श्री पृथ्वी राज जी पंजाब के असरदार व्यक्तियों में से एक थे। सामायिक-संवर की रुचि इतनी थी कि पाँच सामायिक किए बिना मुँह से पानी छूते भी नहीं थे। वाचस्पति गुरुदेव की संयम-दृष्टि के समर्थक थे। विश्वस्त चर्चाओं में अंतरंग थे। वहाँ से कर्तारपुर होते हुए जालन्धर पधारे। जालन्धरवासी वाचस्पति गुरुदेव के तो दीवाने थे ही, जब गुरुदेव के व्यक्तिव, वक्तृत्व, और कर्तृत्व को समझा, सुना और देखा, तो भौंचक्के रह गए। उन्हें याद आया कि वाचस्पति गुरुदेव ने मूनक में कहा था कि सुदर्शन मुनि का चातुर्मास मुझसे भी सवाया होगा। उनकी वह वाणी शत-प्रतिशत सत्य थी। अपने द्वारा की गई आनाकानी का उन्हें पश्चात्ताप हुआ। जालन्धर में एक कल्प किया। उसी दौरान पूज्य गुरुदेव ने मण्डी फैण्टनगंज में भी प्रवचन किया और एक लघु क्षेत्र का श्रीगणेश हो गया। फैण्टनगंज में हरियाणा संभाग के अग्रवाल जैन रहते हैं। ओसवाल जैनों के बीच उनका अस्तित्व विलीन-प्रायः रहता था। उन्हें चातुर्मास में विशेष पहचान मिली थी और अब पूज्य गुरुदेव ने वहाँ प्रवचन करके उस पहचान को सार्वजनिक मान्यता दिला दी। उन दिनों जालन्धर में श्री ज्ञान चन्द जी जज लगे हुए थे। वे हमेशा रात को ही दर्शन करने आते। एक बार गुरु म. ने पूछा– 'रात को क्यों?' उत्तर दिया 'आपके बचाव के लिए-दिन में आऊँगा, तो श्रावक लोग सिफारिश कराने के लिए आपको परेशान करेंगे।'

6. निर्णायक क्षण

सन् 1961 के अंतिम माह में पंजाब जैन समाज चिन्ता और आशंका के कोहरे में लिपटता जा रहा था। लुधियाना में विराजमान युगपुरुष, आगम-रत्नाकर, आचार्य प्रवर श्री आत्मा राम जी म. का स्वास्थ्य क्रमशः क्षीण होता जा रहा था। अनिष्ट की दबी-दबी आवाजें होठों से निकल रही थी। श्रमण-संघ के प्रमुख मुनिराज और साध्वियाँ दर्शनों के लिए लुधियाना के लिए प्रस्थानरत थे। पूज्य गुरुदेव जी म. जालन्धर में थे। वहाँ इस तरह के समाचारों की चर्चा काफी मुखर थी। इस परिप्रेक्ष्य में गुरुदेव जी म. के मस्तिष्क में एक विचार कौंधा कि हमारे मुनिसंघ को आचार्य श्री जी के दर्शन करने चाहिएँ। वाचस्पति गुरुदेव के निकटतम श्रावक श्री केसरदास जी से इस विषय की चर्चा की। वे भी इस विचार से सहमत थे। इस चिन्तन-बीज को लेकर वे सुल्तानपुर लोधी वाचस्पति गुरुदेव की खिदमत में पहुँचे। गुरुदेव के विचारों से अवगत कराया। वाचस्पति गुरुदेव सिद्धान्ततः इस विचार से सहमत थे, परन्तु उन्हें बहुत कुछ सोचना था। भावना तो उनकी भी सदा रही थी कि आचार्य श्री जी के पावन दर्शन करूँ। जीवन-भर साथ-साथ रहे थे। पर पिछले 5 साल से कुछ ऐसी आधियाँ चली कि पत्ता-पत्ता बिखर गया। 'दो शरीर-एक जान' बनकर जीने वाले एक दूसरे से मिलने को तरस गए थे। कुछ अनधिकारी पुरुषों ने आचार्य श्री जी के अधिकारों का दुरुपयोग किया और संघ की बंधी बुहारी तार-तार हो गई। ऐसे में वाचस्पति गुरुदेव कुछ सधे हुए कदम ही उठाना चाहते थे, जल्दी में नहीं। अतः केसरदास जी से कहा कि मैं नहीं चाहता कि 'जाने से तनाव बढ़े। इस तनाव से तो अच्छा है कि दूर से ही श्रद्धा रखें। फिर भी आप अपने साथियों से परामर्श कर

मुझसे मिलें।' केसरदास जी ने पृथ्वीराज जी, सतीश जी, त्रिलोक चन्द जी, सुरेन्द्र नाथ जी, दौलत राम जी, दीनानाथ जी आदि को एकत्र कर विचार-विमर्श किया और वे भी सुल्तानपुर पहुँचे। केसरदास जी पीछे रहे। अन्य मुखिया श्रावकों ने निवेदन किया कि 'भगवन्, आचार्य श्री जी का शरीर ढल रहा है। हमारी इच्छा है कि आप उनके दर्शन करें।' वाचस्पति गुरुदेव ने उत्तर दिया कि 'आप आचार्य श्री जी से पहले दो आश्वासन लेकर आओ। प्रथम ये कि यदि हम स्थानक से भिन्न किसी समीपवर्ती मकान में ठहरें, तो उन्हें कोई ऐतराज न हो। दूसरा ये कि श्रमण-संघ के सम्बन्ध में कोई चर्चा न हो। कारण कि इस समय उनकी तबीयत इन मुद्दों को छेड़ने लायक नहीं है। उन्होंने अपने सब अधिकार छोड़कर उपाध्याय आदि पाँच सदस्यीय समिति को सौंप रखे हैं। और मैंने भी इस्तीफा दे रखा है। अतः श्रमण-संघ का मसला न उठाया जाए। यदि उनको ये स्वीकार हो, तो हम उनके दर्शनों का लाभ ले सकेंगे'। शिष्ट मण्डल ने लुधियाना जाकर आचार्य श्री जी से अन्तरंग वार्तालाप कर पूरा आश्वासन ले लिया और वाचस्पति गुरुदेव को स्थिति से परिचित करवा दिया। इस सुन्दर संभावना से वाचस्पति गुरुदेव का मन भाव-विभोर हो गया। स्वयं दर्शनार्थ जाने के साथ-साथ सभी मुनियों को साथ ले जाने का मन बना लिया। गुरुदेव जी म. को समाचार भिजवाया कि ठाणे 12 को लुधियाना जाना है। तैयार हो जाओ। गुरुदेव जी म. का विचार साकार हो गया।

दोनों सिंघाड़ों का फिल्लौर में मिलन हुआ। पारस्परिक चर्चा के बाद ये भी तय हुआ कि लुधियाना जाकर प्रवचन नहीं करना, केवल दर्शनों तक सीमित रहना है। पंजाब-भर में खबर हो चुकी थी कि वाचस्पति श्री मदन लाल जी म. आचार्य श्री जी के दर्शनार्थ जा रहे हैं। पंडित श्री शुक्लचन्द जी म., श्री प्रेमचन्द जी म. (पंजाब केसरी), श्री रघुवर दयाल जी म., श्री श्रमण जी म., पं. हेमचन्द जी म., श्री ज्ञानमुनि जी म., श्री विमल मुनि जी म. जैसे नामवर दिग्गज संत वहां मौजूद थे या

पहुँच रहे थे। एक उत्सुकता थी, एक आशा थी, पर किन्हीं दिमागों में कुटिलता भी रही होगी।

मौसम में सर्दी का प्रभाव था। 15 जनवरी का दिन था। 16 कि. मी. का सफर। वृद्ध, थकी और वातावरणीय दबाव से बोझिल काया लेकर वाचस्पति गुरुदेव अपने धीरोदात्त कदमों से लुधियाना की ओर बढ़े। कई वरिष्ठ मुनिराज अगवानी के लिए दूर तक आए। चुंगी पर पहुँचकर कुछ विश्राम किया। मध्याह्नोत्तर तीन बजे के लगभग स्थानक में पहुँचे। आचार्य श्री जी को धूप सेंकने के लिए सबसे ऊपर छत पर, पाट पर लिटाया हुआ था। 60-70 साधु-साध्वियाँ झलक पाने के लिए बेताब थे। वाचस्पति गुरुदेव ने सश्रद्ध, सविधि घुटने टिकाकर आचार्य श्री जी को वंदन किया। फिर दैवसिक, सांवत्सरिक क्षमायाचना की। आचार्य श्री जी ने भी मंद स्वर में दैवसिक, सांवत्सरिक क्षमायाचना की। दोनों महापुरुष अपनी सहज करबद्ध मुद्रा में एक दूसरे को अपलक निहारते रहे। चिरकाल पश्चात् मिलन की भावुकता आँखों में तैर गई। तरल सजल नयनों का मंजर हल्का करने के लिए सहवर्ती मुनियों ने वाचस्पति गुरुदेव को पानी पिलाया। समय अल्प था। सर्दी के दिनों में दिन शीघ्र अस्त होता है, व्यवस्थाएँ भी जमानी होती हैं, अतः पुनः वन्दना कर नीचे आ गए। स्थानक के निकट, मुनिलाल लौहटिया के मकान के सामने अग्रवाल धर्मशाला में ठहरे। मन में प्रसन्नता थी कि आचार्य श्री जी के मंगलमय दर्शन हो गए। परन्तु किसी को वह प्रसन्नता और सुखद मिलन शायद रास नहीं आया और रातोंरात एक चर्चा फैला दी कि आचार्य श्री जी ने संघ-एकीकरण के लिए वाचस्पति जी म. के सामने झोली फैला दी, लेकिन वाचस्पति जी ने बेरुखी से ठुकरा दी। इस बात का दुष्प्रचार खूब जोरों से किया गया। वाचस्पति गुरुदेव तथा सभी मुनिराज इस कुप्रचार से बेखबर अपनी व्यवस्थाओं को दुरुस्त कर रहे थे। जब पृथ्वीराज जी जैसे मुख्य श्रावकों को इस चर्चा की भनक लगी, तो मिलकर स्पष्टीकरण लेने आए। बात सुनकर वाचस्पति गुरुदेव को आश्चर्य तो हुआ ही, आघात भी लगा। क्या निराधार प्रचार किया जा रहा है? उन्होंने शिष्ट-मण्डल

को एक बात कही कि 'इस चर्चा के पीछे सार नहीं है। इस सारी घटना के चश्मदीद गवाह श्रमण श्री फूलचन्द जी म. हैं। आप उनसे पूछ सकते हैं। यदि वे इस बात को सही बता दें, तो मैं कोई भी दण्ड-प्रायश्चित्त ले सकता हूँ। शिष्टमण्डल यों तो वाचस्पति गुरुदेव के कथन से ही संतुष्ट हो गया था, फिर भी सर्वजन-संतोषाय श्री श्रमण जी म. के पास भी गया। उनसे झोली फैलाने और ठुकराने वाली बात में होने वाली सत्यता के सम्बन्ध में पूछा। श्रमण जी म. ने फरमाया, "ये बात बिल्कुल असत्य है। न आचार्य श्री जी ने झोली फैलाई, न वाचस्पति जी म. ने ठुकराई। उन्होंने तो आचार्य श्री जी की इतनी विनय की है, जिसकी कोई उम्मीद भी नहीं कर सकता। उन्होंने आचार्य श्री जी के मान के खिलाफ कोई व्यवहार नहीं किया। जो इस तरह की बात उछाल रहे हैं, उनके लिए मैं इतना ही कह सकता हूँ कि उन्हें सद्बुद्धि मिले।" अब सन्देह के लिए कोई गुंजाइश नहीं थी। उन्होंने यथाशक्ति इस चर्चा का खण्डन किया।

उन्हीं दिनों श्री सत्येन्द्र मुनि जी म., श्री लखपत राय मुनि जी तथा श्री पद्म मुनि जी म. भी लुधियाना आए। वे संयम-प्रधान शैली के समर्थक थे, इसलिए अग्रवाल धर्मशाला में ही वाचस्पति गुरुदेव के साथ ठहरे। जन-संपर्क का कार्य पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. एवं गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. संभालते रहे। पूज्यपाद श्रमण श्री फूलचन्द जी म. धर्मशाला में पधारे। वे वाचस्पति गुरुदेव के शिष्यवत् प्रिय थे। उन्होंने संकेत में कहा कि 'जरा सावधानी रखना, क्योंकि कुछ संत आपको बदनाम करने का इरादा रखते हैं। वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि, "हम अपनी ओर से कोई प्रतिकूल आचरण करेंगे नहीं, आगे जैसे उनकी आत्मा जाने।" प्रतिदिन दोपहर बाद समस्त मुनिमण्डल स्थानक में दर्शनार्थ पहुँच जाता था। आचार्य श्री जी का स्वास्थ्य शिथिलतर होता जा रहा था। वार्तालाप सामान्य, नितान्त सामान्य किस्म का ही होता था। अधिक बोलने की क्षमता नहीं थी। लगता था कि जीवन के दीपक का स्नेह चूक गया है, केवल बाती जल रही है। मगर अन्तरात्मा का आलोक पूर्व से

भी प्रबलतर और प्रखरतर हो रहा था। मुनिसंघ उस युग-पुरुष, युगावतार की अलौकिक आभा में स्वयं को कृतार्थ मान रहा था।

18 जनवरी के रोज कांफ्रेंस के तत्कालीन महामंत्री श्री धीरजभाई तुरखिया अपने साथियों के साथ लुधियाना आए। श्रमणसंघ के निर्माण में तुरखिया जी की अहम भूमिका रही है। वे आचार्य श्री जी से श्रमणसंघ के विषय में कुछ वार्तालाप करना चाहते थे। पर आचार्य श्री जी स्वस्थ नहीं थे, अतः कहने लगे कि सभी प्रमुख सन्त यहाँ हैं, इनसे बात कर लो'। वाचस्पति गुरुदेव, पं. शुक्ल चन्द जी म., पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म., पं. हेमचन्द जी म., ज्ञानमुनि जी म. आदि की सन्निधि में तुरखिया जी आदि श्रावकों ने मौजूदा हालात की समीक्षा करनी शुरू की। उस समय वाचस्पति गुरुदेव ने उचित अवसर जानकर अथ से इति तक समग्र घटनाचक्र का सप्रमाण खुलासा किया। जो-जो तथ्य उन्होंने प्रस्तुत किए, जो-जो प्रश्न उन्होंने पछे उनका किसी भी संत के पास कोई उत्तर नहीं था। समग्र वार्तालाप में कटुता का अंश नहीं आया। भले ही एकाध मुनिराज का अहं आहत हुआ होगा।

मेरठ के प्रतिनिधि भी आए हुए थे। एक पक्षीय धारणाओं से ग्रस्त थे। अतः जब वाचस्पति गुरुदेव के पास आए, तब उन्हें खरी-खरी सुनने को मिली। क्षोभ तो उनके मन में बना, पर जुबान खोलने की हिम्मत नहीं थी। पूज्य गुरुदेव जी म. ने भांप लिया कि मेरठ वाले वाचस्पति गुरुदेव की सपाट-बयानी को हजम नहीं कर पा रहे हैं, तो उन्हें एक ओर ले गए। शांत माहौल में उन्हें अपने मुनिसंघ की स्थिति समझाई और उन्हें संतुष्ट किया। अपने गुरुजनों की शान पूज्य गुरुदेव ने हर मौके पर बढ़ाई थी।

पाँच दिन का वह दर्शन-प्रवास अपेक्षाकृत शांत वातावरण में पूर्ण हो गया। 20 जनवरी को विहार का प्रोग्राम था। वाचस्पति गुरुदेव सभी मुनियों को लेकर आचार्य श्री के दर्शन व मंगलपाठ-श्रवण-हेतु स्थानक आए। उनका मंगलमय आशीर्वाद लेकर नीचे उतरने ही लगे थे, एक ड्रामा-सा शुरू हो गया। उसी दिन लुधियाना में पहुँचे श्री विमल मुनि जी

म. अपने अंतरंग साथियों के संग राह में खड़े हो गए। मानो उन्हें जाने से रोकने का अनुरोध कर रहे हों। उस पोज को कैमरे में कैद करने के उद्देश्य से एक फोटोग्राफर को भी बुला लिया था, ताकि बाद में फोटो के माध्यम से लोगों में प्रचारित किया जा सके कि हम वाचस्पति जी म. को रोकते रहे और वो सबकी भावनाओं को ठुकरा कर चल दिए। फोटोग्राफर को श्री शास्त्री जी म. ने देख लिया तथा पूज्य गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. के नोटिस में ला दिया। उन्होंने तुरन्त कैमरामैन को फोटो लेने से रोक दिया। इस प्रकार एक कुचक्र का अंश खंडित हो गया।

आचार्य श्री जी के पावन दर्शनों से स्वयं को कृतार्थ और सौभाग्यशाली मानते हुए वाचस्पति गुरुदेव मुनि-मण्डल के साथ फगवाड़ा पधार गए। झोली फैलाने और ठुकराने की बातें कुछ अर्से तक हवाओं में तैरती रही, मगर मुनिमण्डल की प्रतिक्रिया-रहित शान्ति के आगे वे चर्चाएं धीमी पड़ गई। मौसम में धुंध और शैत्य का प्रकोप बढ़ रहा था। तभी भयंकर समाचार मिला कि आचार्य श्री आत्मा राम जी म. का देवलोक-गमन हो गया। दिन था 30 जनवरी 1962। गाँधी जी की शहादत की याद के साथ आचार्य श्री जी का देवलोक-गमन भी जुड़ गया।

वाचस्पति गुरुदेव ने उस रोज उपवास रखा। दिन भर किसी से बोले नहीं। बस संताप-भरी आहों का संवेदन सभी को हुआ। उनके शिष्य-वर्ग के लिए 'संवेदना-पत्र' भिजवाया।

आचार्य श्री जी के बाद जनता को अपनी श्रद्धा के केन्द्र वाचस्पति गुरुदेव ही नजर आए। मिथ्या भ्रान्तियों का कोहरा क्रमशः विलीन हो गया। अब विहार-यात्राओं की बारी थी। वाचस्पति गुरुदेव चले बंगा की ओर तथा पूज्य गुरुदेव चले होशियारपुर की ओर। होशियारपुर में तो एक चमत्कार-सा हो गया। सारे क्षेत्र में एक ही आवाज सुनाई दी– चातुर्मास लेना है। एक कल्प वहाँ लगा। नवां शहर पहुँचे। मार्ग में जैजों में पं. श्री शुक्लचन्द जी म. के दर्शन का सौभाग्य भी मिला। नवांशहर वाले पूज्य गुरुदेव के प्रवचन, संयमी जीवन पर इतने फिदा हुए कि वे भी होशियार

पुर वालों की तरह चातुर्मास की जिद करने लगे। लाला खैरायती राम जी के सपत्र श्री टेकचन्द्र जी ने तो चातुर्मास की मांग पूरी करवाने हेतु धरना देने का ऐलान कर दिया। पूज्य गुरुदेव जी म. श्रावकों की भक्ति-भावना का तो प्रचुर सम्मान करते थे, पर धरने जैसी अतिरंजित हरकतों को कम पसन्द करते थे। अतः उन्हें प्रेम से समझाकर टिकाया।

नवांशहर के पास ही एक कस्बा है बलाचौर। छोटा क्षेत्र पर श्रद्धा से लबरेज। वहाँ के विशिष्ट व्यक्तियों में लाला बनारसी दास का नाम सर्वत्र विख्यात था। 12व्रती श्रावक थे। संयम-प्रधान परम्परा के हिमायती थे और चाहते थे कि मुनियों में त्याग-तप की ज्योति और अधिक प्रज्वलित हो। उनकी एक घटना जो बहुत लोगों की जुबान पर है, उसे गुरुदेव के मुखारविन्द से भी सुना है–

"गर्मी के मौसम में कोई मुनिराज श्रावक जी के घर गए। दो बर्तनों में दूध था। एक में गर्म था, दूसरे में ठण्डा। ठण्डे दूध में बर्फ का टुकड़ा तैर रहा था। साधु जी म. ने कहा, 'ये ठंडा दूध बहरा दो'। श्रावक जी हैरान कि बर्फ साधु के लिए अकल्पनीय है, फिर ये कैसे मांग रहे हैं? उसने साफ कह दिया कि 'म. सा., मैं साधु को सदोष आहार नहीं दूंगा। आप गर्म दूध की ही कृपा करें।' मुनिराज फिर भी नहीं समझे, तो श्रावक ने बर्फ के कारण वह सचित्त दूध देने से साफ रूप से मना कर दिया"।

उन्हीं श्रावक जी ने एकबार गुरुदेव के मुनियों की गोचरी में फूलगोभी की सब्जी देख ली। वह पूज्य गुरुदेव के चरणों में पहुंचा। निवेदन किया कि-'कई बार फूलगोभी में कीड़े प्रवेश कर जाते हैं। गृहस्थ नर-नारियों में स्वच्छता का, धोकर सब्जी बनाने का विवेक अल्प होता है, अतः वे मृत जीव खाने वालों के उदर में चले जाते हैं। आप संतों को इस विषय में विवेक रखना चाहिए'। श्रावक जी की त्याग-प्रधान प्रेरणा से गुरुदेव जी म. बहुत प्रमुदित हुए और अपने समीपस्थ सभी मुनियों को फूलगोभी का त्याग करवा दिया।

गुरुदेव का सन् 1962 का चातुर्मास होशियारपुर के लिए स्वीकृत हुआ। चातुर्मास से पूर्व हिमाचल प्रदेश की यात्रा की। उस युग में सर्वाधिक दर्शनीय स्थल के रूप में चर्चित 'भाखड़ा नंगल डैम' भी सहज भाव से देखने का संयोग बन गया। नंगल तो जाना ही था। कालोनी में श्री सन्त कुमार जैन Xen लगे हुए थे। उनकी विनति मानकर डैम भी देख आए।

पंजाब-केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. की जन्म भूमि 'दुभेटा' गाँव की पावन माटी का स्पर्श पाकर नालागढ़ पधारे। हिमालय की पर्वतीय श्रृंखला का आखिरी छोर नालागढ़ को छूता है। मैदान, पहाड़ी दोनों हवाओं का सम्मिश्रण नालागढ़ में है। यहाँ से दूर-दूर तक पहाड़ियों का विहंगम दृश्य आँखों में बसने लगता है। यहीं पहुंचकर भाव बना कि शिमला भी फरसा जाए। नालागढ़ के ही दो चार परिवार शिमला में बसते थे। कभी 1938 में आचार्य श्री आत्माराम जी म. तथा वाचस्पति गुरुदेव शिमला में पधारे थे। अब उसी इतिहास की पुनरावृत्ति का संकल्प गुरुदेव के मन में जगा। रास्ता अज्ञात, लक्ष्य अपरिचित, नंगे पैर, पहाड़ी की उतराई-चढ़ाई, फिर भी अदम्य उत्साह मन में लिए चल दिए शिमला के धार्मिक हिम को पिंघलाने। एक भाई गुलाबचन्द साथ-साथ चला। उसका गाँव के मार्गों से और जनता से परिचय था। यदि कोई शार्ट कट रास्ते जानता है, तो दस मील का सड़क वाला मार्ग 4 मील से भी छोटा हो सकता है। उस भाई ने वही काम किया। वैसे तब तक पक्की डामर की सड़क रामपुरा, कुनिहार, टूटू की बनी नहीं थी। केवल गधों के जरिए ही सामान की आमदोरफ्त होती थी। गुरुदेव का और मुनियों का ये अनुभव रहा कि पहाड़ों की चढ़ाई में बेशक काफी थकान हो जाती थी, पर कुछ देर वृक्षों की छाया में विश्राम करते ही थकान दूर हो जाती और आगे चलने की ऊर्जा तैयार हो जाती। शिमला में ठहरने के लिए गैण्डामल हेमराज वालों ने 'जैन आश्रम' बना रखा था। माल रोड़ के एक छोर पर बना यह मकान उनकी अपनी जायदाद है। यदा-कदा साधु साध्वी आते हैं, तो ठहर जाते हैं। गुरुदेव वहीं ठहरे।

वहाँ के श्रावक लाला निरंजन दास जी बड़े गुरुभक्त श्रावक थे। गुरुदेव ने उनको कथा की व्यवस्था करने को कहा। इस पर वे हँसने लगे। बोले, 'गुरु म.! यहाँ तो जितने भी सन्त आते हैं, सब टूरिस्ट (सैलानी) के तौर पर आते हैं। दो चार दिन रुक कर चले जाते हैं। भला यहाँ कथा कहाँ करोगे'? गुरुदेव ने स्पष्ट कर दिया कि 'हम टूरिस्ट नहीं है। कथा करेंगे, तो यहाँ ठहरेंगे, वर्ना कल ही विहार कर देंगे'। श्रावक जी असमंजस में पड़ गए। बोले कि 'कथा में केवल तीन श्रोता ही हो सकेंगे–मैं, मेरी पत्नी और घर का नौकर'। गुरुदेव ने यह स्वीकार कर लिया। अगले दिन से प्रवचन प्रारम्भ हुआ। श्रोताओं की संख्या बढ़ने लगी। कुछ जैन परिवार जो संगरूर आदि के इलाके से आकर वहाँ सर्विस करते थे, वे भी संपर्क में आए। दिल्ली से भी कुछ जैन परिवार सैर करने गए थे। बढ़ते-बढ़ते श्रोताओं की संख्या 300 तक पहुंच गई। सब आश्चर्यचकित थे। गुरुदेव लगभग 24 दिन वहाँ विराजे। उस पर्वतीय प्रवास के सभी पहलू सुखद रहे, पर एक दिन पहाडी से उतरते समय श्री शान्ति मुनि जी म. का पैर फिसल गया, और घुटने में चोट आई। वह चोट इतनी लम्बी चली कि सब प्रकार के उपचार असफल रहे। अन्ततः सन् 1965 में आप्रेशन ही करवाना पड़ा।

शिमला से वापसी का मार्ग सोलन, कसौली, कालका वाला पकड़ा। सोलन में पूज्य गुरुदेव जी म. की सांसारिक बहन विद्या का परिवार रहता था। बहन के घर भाई आया था। बहन की भावना का पार नहीं था। उनके पतिदेव श्री मदन लाल जी सनातन-धर्मी होते हुए भी गुरुदेव के प्रति, सांसारिक नाते से ही नहीं, धर्मदृष्टि से भी विशेषतः आकृष्ट थे। उनका कारोबार काफी अच्छा था। सामाजिक प्रतिष्ठा थी। पर गुरुदेव से धर्म का बोध पाया, तो जीवन की सार्थकता को माना। पूज्य गुरुदेव जी म. ने सांसारिक सम्बन्धों को कभी अहमियत नहीं दी। 'सब अपने या कोई न अपना, जग को समझा झूठा सपना।' सोलन से कालका और गुरुकुल पंचकूला का नम्बर लगा। गुरुदेव गुरुकुल पंचकूला में 1943 में पधारे थे। अब व्यवस्थापकों में फरीदकोट के श्रावक श्री रूपचन्द जी का

वर्चस्व था। श्री धनी राम जी, कृष्ण चन्द्र जी उस समय वहीं थे। अपने लगाए बाग (गुरुकुल) को फूलता फलता देखना चाहते थे। रोपड पहुँचे तो मूनक से समाचार आया कि वहाँ श्री मूलचन्द जी म. काफी अस्वस्थ हैं। अतः वाचस्पति गुरुदेव को संदेश भिजवा दिया जाए कि मुनियों की आवश्यकता है। पूज्य गुरुदेव जी म. ने वाचस्पति गुरुदेव के पास अपनी सेवाएं प्रस्तुत करते हुए सारी खबर प्रेषित कर दी।

ऐसी विकट स्थिति में क्या किया जाए, सबके मन में दुविधा थी। तब श्रद्धेय श्री तपस्वी जी म. फरमाने लगे, "उनकी सेवा में मैं और पं. रणसिंह म. जाएंगे। कारण कि श्री मूल चन्द जी म. को टी.बी. का भीषण प्रकोप है। अन्य सन्त अभी युवावस्था में हैं। यदि उनमें टी.बी. का संक्रमण हो गया, तो ठीक नहीं रहेगा। हम सब झेल लेंगे।" सेवा और बलिदान का वह अनूठा सेनानी इस मुनिसंघ का हिमगिरि था, जिसने सब आँधी और तूफान अपनी छाती पर झेल लिए, पर संघ को उनकी हवा तक नहीं लगने दी। संघ का पत्ता-पत्ता जो आज बच पाया है, वह उस महापुरुष की कृपा का ऋणी है।

संसार में कोई प्राणी ऐसा नहीं, जिस पर दुःख की कभी काली घटा न मंडराई हो। हमारे मुनिराज भी भला इससे अछूते कैसे रहते। सन् 1962 में जीरा शहर में पहले स्वयं वाचस्पति गुरुदेव ने, बाद में डाक्टरों ने घोषणा कर दी कि उनके गले में कैंसर है। आप्रेशन न करवाने का उनका निश्चय था। किसी हल्की-फुल्की दवा लेने का ही विचार था। सन् 1962 का उनका चातुर्मास फरीदकोट में हुआ। गुरुदेव का होशियारपुर में था। होशियारपुर क्षेत्र गुरुदेव को शान्ति, समाधि की दृष्टि से बड़ा अच्छा लगता रहा है। दूर-दूर तक पर्वतीय श्रृंखलाओं की मोहक छटा, वर्षा में 'चो' (बरसाती नदी) का उफनता वेग, शान्त जलवायु, श्रद्धा पूर्ण वातावरण तथा भद्र और विनीत श्रावक, ये सब वहाँ की विशिष्टताएँ थी।

चातुर्मास से पूर्व श्री सुशील मुनि जी म. का आगमन हुआ था। उनके कारण कुछ विषमता-सी बन गई थी। मगर गुरुदेव जी म. का

स्वभाव ही ऐसा था कि कहीं विषमता थमती ही नहीं थी। उस समय त्रिलोकचन्द जी प्रधान थे तथा तीर्थराम जी सैक्रेट्री। धार्मिक परीक्षाओं के आयोजन में सारा समाज सम्मिलित हुआ। बच्चा-बच्चा धार्मिक ज्ञान की वृद्धि से अतिशय प्रभावित था। महासाध्वी श्री सुभाषवती जी म., प्रवेश कुमारी जी म. तथा मोहनमाला जी म. ठाणे-3 का चातुर्मास भी साथ था। हार्दिक सौहार्द का वातावरण रहा। होशियारपुर में पूज्य गुरुदेव जी ने जो प्रवचन फरमाए, वे उत्कृष्ट कोटि के थे। उनके आधार पर कोई भी नया वक्ता मुनिराज परिपूर्ण वक्ता बन सकता है। एक शाम गुरुदेव जी म. छत पर टहल रहे थे। अचानक मस्तिष्क के एक कोने में से ध्वनि-सी फूटने लगी कि जाखल मण्डी में परेशानी है। कोई समाचार या संकेत कहीं से प्रकटतः आया नहीं था। यह तो मन की आवाज थी। श्रावकों से पूछताछ की, तो ज्ञात हुआ कि वहाँ बाढ़ आई हुई है तथा 7-8 फुट पानी में मण्डी डूबी हुई है। इस तरह का आभास कई बार गुरुदेव को हो जाता था।

उन्हीं दिनों राजस्थान में श्रमण संघ के उपाचार्य श्री गणेशी लाल जी म. सा. ने श्रमण-संघ से अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया था वे अपने प्राचीन 'साधुमार्गी-संघ' को पुनर्जीवित कर रहे थे। वाचस्पति गुरुदेव उनके समविचारक थे, अतः उन्होंने अपने संघ-गठन से पूर्व वाचस्पति जी म. को समाचार दिलाया कि "हम नया संघ बना रहे हैं, आप भी अपने मुनिमण्डल-सहित इसमें सम्मिलित हो जाएँ। हम अपने संघ का आचार्य आपके सुशिष्य श्री सुदर्शन मुनि जी को बनाएँगे"। वाचस्पति गुरुदेव ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। उनका उत्तर था कि "हमने श्रमण-संघ से त्यागपत्र नहीं दिया। केवल उसके 'प्रधानमंत्री' पद से त्याग-पत्र दिया है। उस समाचारी के अंतर्गत ही हम अपनी व्यवस्था चलाएँगे। कोई नया संघ या नया आचार्य बनाना हमारे विचाराधीन नहीं है। अब तक हम श्रमण-संघ के उपाचार्य होने के नाते आप श्री जी से आज्ञा मंगवाते रहे हैं, पर आपके द्वारा नए संघ के निर्माण होने के पश्चात् हम इस विषय में स्वतंत्र हैं।" वाचस्पति गुरुदेव का दृष्टिकोण बहुत स्पष्ट था। वे कभी पद के पीछे नहीं, अपितु चारित्र और संयम के पीछे थे। सन् 1946 में

ही उन्होंने सभी शास्त्रीय पदवियाँ लेने का त्याग कर लिया था और उन्हीं संस्कारों को अपने शिष्य वर्ग में डाला था। कई बार वे हमारे गुरुदेव को फरमाते, "सुदर्शन मुनि! आचार्य तो मैं तुझे आज बना दूँ। आज ही पद की चादर ओढ़ा दूँ, पर इससे तेरी राह में जगह-जगह काँटें बिछ जाएँगे। स्थान-स्थान पर नए स्थानक बनेंगे और श्रावकों का विभाजन हो जाएगा। अब तो सब अपने हैं। फिर कुछ ही व्यक्तियों तक केन्द्रित रह जाओगे"। उनकी दीर्घदृष्टि को गुरुदेव ने बखूबी समझा और अन्त तक उसका पालन किया।

इधर वाचस्पति गुरुदेव का स्वास्थ्य निरन्तर गिरता जा रहा था। फरीदकोट चातुर्मास के उत्तरार्ध में ही उन्होंने प्रवचन से विश्राम ले लिया था। एक बार टैस्टिंग के लिए उनके गले से एक छोटा-सा टुकड़ा डॉक्टर ने लिया। इससे उनकी पीड़ा और बढ़ गई। चातुर्मास समाप्ति पर मोगा पधारे। वहीं पर गुरुदेव ने उनके दर्शन किए। रोम-रोम पुलकित हो गया। प्रवचन का दायित्व स्वयं संभाल लिया। उन्हीं दिनों मोगा में श्री ज्ञानमुनि जी म. के दो शिष्य भी विराजमान थे। प्रवचन में साथ बैठे, प्रवचन किया भी। पर वह प्रवचन न होकर किसी अन्तस्थ आक्रोश की अभिव्यक्ति ही थी। बदमजगी के सिवाय और कुछ नहीं था। फरीदकोट के श्रावक काफी क्षुब्ध हुए। पर पूज्य गुरुदेव ने हमेशा आग पर पानी डालना ही सीखा था। उन्होंने अपना प्रवचन करते हुए एक चुटकला-सा सुनाकर विषय का रुख मोड़ दिया और श्रावकों की झंझालाहट को भी दूर कर दिया। कहने लगे-एक बहन सत्संग में आई। चप्पल उतारते समय सोचने लगी, कहीं रखूगी तो कोई उठा सकता है। अतः अपने पर्स में रख ली। कुछ देर बाद सभा में खड़ी थी, तो गर्मी लगी। अपना रुमाल पर्स से निकालने लगी, तो चप्पलें भी सभा में गिर गई। लोग कहने लगे-जिसके पर्स में जो होगा, वही तो बाहर आएगा। जिसके पास जो होता है, वही देता है। हमारे पास जो है, हम देंगे। और आगम का सार सरल शब्दों में समझाना शुरू कर दिया। माहौल ही बदल गया।

गुरुदेव जैतों पधारे। छोटे से क्षेत्र को 27 दिनों तक गुरुदेव की सिंह-गर्जना सुनने का सौभाग्य मिला। वहाँ से फरीदकोट फरसते हुए वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में पट्टी पहुँचे। उस समय वाचस्पति गुरुदेव काफी ढीले चल रहे थे और अपनी आत्मकथा लिख रहे थे। शारीरिक अस्वस्थता के कारण अधिक नहीं लिख पाए। केवल संवत् 89 तक ही लिख सके। पट्टी से वाचस्पति गुरुदेव जण्डियाला गुरु पधार गए। आगे जाना संभव न हो सका। तेरह अप्रैल की वैशाखी संक्रांति थी। उस दिन दर्शनार्थी भाइयों की काफी भीड़ थी। शोर अधिक होने से पूज्यपाद आगम-ज्ञान रत्नाकर श्री रामप्रसाद जी म. सभा को संभाल न सके। तब वाचस्पति गुरुदेव ने गले में भीषण वेदना (मानो कोई चाकू से गला काट रहा हो) के बावजूद भी जोशीला प्रवचन फरमाया। उनकी सिंह-गर्जना से सारी सभा शान्त हो गई। वह प्रवचन उनके जीवन का अंतिम उद्बोधन था। वीर जयंती के बाद गुरुदेव भी वहाँ पधार गए और प्रवचन आदि का सारा दायित्व संभाल लिया। उत्तराध्ययन सूत्र का 29वाँ 'सम्यक्त्व-पराक्रम' अध्ययन सुनाना प्रारम्भ किया। इसमें 73 विषय वर्णित हैं। 38वाँ विषय 'शरीर-प्रत्याख्यान' (शरीर का त्याग) है। गुरुदेव अपने अन्तर्मन से यही सोचते थे कि इस विषय को टालता रहूँ। इसी भावना से कई दिनों तक पूर्व विषयों को ही विस्तार देकर सुनाते रहे, पर आखिर इस विषय को भी तो सुनाना ही था। और 27 जून को प्रातः गुरुदेव ने 'शरीर-प्रत्याख्यान' का वह विषय सुना ही दिया।

इधर वाचस्पति गुरुदेव की पीड़ा बढ़ती जा रही थी। मुँह में कैंसर के कारण कोई चीज तो ली ही नहीं जा सकती थी। केवल पानी या दूध ही ले पाते थे। बोलने में काफी कष्ट होता था। गर्मी का मौसम था। स्थानक भी हवादार नहीं था। ऐसे में भी उनकी आत्मसमाधि बड़ी अपूर्व थी। शांति का सागर उनके मुख-मण्डल पर अठखेलियाँ करता था। उस समय वे 'अबोहि कलुसं कडं-' अज्ञानवशात् मैंने ही अपने अशुभ कर्म का बन्ध किया है' का अधिकाधिक जाप करते थे। सारा मुनि-मण्डल उनकी अनवरत सेवा में लीन था।

वाचस्पति गुरुदेव ने शुरू से ही अपने मुनिसंघ को बड़ा अनुशासित एवं संयमनिष्ठ बनाए रखा था। जैन समाज को उनकी कार्य-प्रणाली पर गर्व था। वे अपने बाद की कुछ सुदृढ़ व्यवस्था बनाना चाहते थे। 15 जून 1963 को जण्डियाला की स्थानक की मुंडेर का एक हिस्सा अचानक गिर गया। इससे उन्हें अपने अंतिम समय का कुछ आभास हो गया। 16 जून को प्रातः दस बजे संकेत से पैड और पैंसिल मंगाई और निम्नलिखित मर्यादा-पत्र लिखा- "मुनि रामकिशन ने लिखा है कि किसी भी कीमत पर संघ एक कर दो। उसका उत्तर– 20 सन्तों में जिसे श्रमण-संघ में रहना हो रहे, मेरी ओर से रुकावट नहीं। श्री छोटे लाल जी म. की नेश्राय के सन्त, अगर संघ-अनुशासन-व्यवस्था ठीक बन जाए, अपने संयम की उन्नति समझें, तो (श्रमण-संघ में) मिल सकते हैं, वरना पूज्य अमरसिंह जी, पूज्य कांशीराम जी की सम्प्रदाय के नाम पर चलें। उनमें सुदर्शन नेता, बाकी सब इसकी आज्ञा में रहें"। ये पत्र लिखकर उन्होंने गुरुदेव के हाथ में थमा दिया। गुरुदेव ने काफी आनाकानी की। बहुत कहा कि संघ में मुझसे भी अधिक योग्य मुनिराज हैं, उन्हें ये अधिकार दे दो। पर वाचस्पति गुरुदेव ने यही कहा कि 'मैनें जो करना था, कर दिया। अब मैं तुमसे निश्चिन्त और तुम मुझसे निश्चिन्त'। इतना कहकर वे अपनी अंगुलियों के पोरे गिरने लगे। गुरुदेव ने देखा कि वे 11 पर आकर रुक गए। स्पष्ट संकेत था कि ये ज्योति केवल 11 दिन तक ही आलोक फैलाएगी।

इसके पश्चात् वाचस्पति गुरुदेव ने सब मुनिराजों को बुलाकर अलग-अलग सूत्रों के पाठ जीवन-पर्यन्त के लिए दिए तथा सबको ये सामूहिक निर्देश भी दिया–

1. मेरे बाद मेरे नाम का कोई स्मारक नहीं बनवाना। कोई पुस्तकालय, औषधालय या विद्यालय नहीं खोलना। तुम ही मेरे जीवन्त स्मारक हो। तुम संयम में रहोगे, तो मै जिंदा रहूँगा।
2. कभी भी गृहस्थों से चन्दा नही माँगना। इससे तुम साधु नहीं, भिखारी हो जाओगे। साधु दाता होता है, याचक नहीं।

3. जीभ के चटोरे मत बनना, नहीं तो एषणा-समिति में दोष ही दोष लगेंगे।

4. औरतों के चक्कर से बचकर रहना। उनसे अधिक संपर्क नहीं रखना।

वाचस्पति गुरुदेव का देह-दीप भले ही मंद-मंदतर हो रहा हो, पर संयम-दीप दिन प्रतिदिन और अधिक जगमग-जगमग हो रहा था तथा उसकी ज्योति अन्य लघु दीपों में भी संक्रान्त हो रही थी। एक दिन उन्होंने हमारे गुरुदेव को बुलाकर कहा, 'रामप्रसाद (मुनि) बहुत भावुक है, इसका ध्यान रखना, ये भी तेरा शिष्य है'। भविष्य के विषय में आदेश दिया कि 'मेरे बाद पंजाब से हरियाणा की ओर विहार कर देना। वहाँ खूब चेले ही चेले मिलेंगे।

वाचस्पति गुरुदेव संथारे के लिए पुनः पुनः आग्रह करते रहे, लेकिन गर्मी की भीषणता तथा रोग की भयानकता के कारण कोई ऐसा कठोर निर्णय नहीं ले सका। ऐसे मौके वे श्री तपस्वी जी म. को विशेष रूप से याद करने लगे कि 'बदरी होता तो संथारा करवा देता। तुम मोह में फंस रहे हो, शरीर का क्यों मोह करते हो'?

अन्ततः 27 जून को सायं साढ़े चार बजे वाचस्पति गुरुदेव ने स्वयं ही संथारा ग्रहण कर लिया और धरती का वह बेताज बादशाह 15 मिनट बाद ही सबको अनाथ करके दिव्य देवलोकों की ओर प्रस्थान कर गया। बड़ा तेज भूकम्प था ये, जिसने सब उजाड़ दिया। फिर भी गुरुदेव जी म. अपनी धीर गम्भीर प्रकृति के अनुरूप स्वयं भी संभले रहे तथा मुनिसंघ और श्रीसंघ को भी संभालने लगे। परम्परानुसार वस्त्र-परिवर्तन आदि किए गए। श्रावक वर्ग फोटोग्राफरों को लेकर आए, पर गुरुदेव ने शरीर व्युत्सर्जन से पूर्व फोटो नहीं लेने दिया। सब आवश्यक विधान सम्पन्न करके, शरीर को वासिरा कर संघ को सौंप दिया और मुनिवर्ग को एक ओर ले गए। धीरता और निर्लेपता, गुरुभक्ति और संयम का विशुद्ध रूप गुरुदेव में उस समय झलक रहा था। इसका एक और ज्वलन्त प्रमाण ये है कि वाचस्पति गुरुदेव की अन्तिम यात्रा के अवसर पर स्थानीय मूर्तिपूजक

समाज के भाइयों ने अपनी परम्परा और श्रद्धा के अनुसार फूलों की वर्षा करनी शुरू कर दी। इसकी जानकारी गुरुदेव को स्थानक में लगी। उन्होंने तुरन्त सम्बन्धित व्यक्तियों को बुलाया और अपनी परम्परा का हवाला देकर सचित्त फूलों की वर्षा रुकवा दी।

दो दिन बाद श्रद्धांजलि-सभा का आयोजन हुआ। गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने "बुझ गई है जीवन-ज्योति, स्मृतियाँ ही सदा अमर हैं" इस अमर काव्य से तथा पूज्य गुरुदेव ने विस्तारपूर्वक प्रवचन से श्रद्धांजलि अर्पण की। अगले दिन के प्रवचन में जब आगम-रत्नाकर श्री राम प्रसाद जी म. ने प्रारम्भ में ये कहा कि "मुझ पर गुरुदेव की बड़ी कृपा थी", तो वे इतना कहते ही एकदम भावुक हो उठे। आँखें बरसने लगी, कण्ठ भर आया और फूट-फूट कर रोने लगे। गौतम बुद्ध के वियोग पर आनन्द न रोएँ और वाचस्पति गुरुदेव के वियोग पर श्री रामप्रसाद जी म. न रोएँ, ये कैसे सम्भव है? लेकिन गुरुदेव तो प्रारम्भ से ही गंभीर रहे हैं। अपने जज्बातों पर अंकुश लगा सकते थे। अतः सोचने लगे, 'यदि मैं भी ऐसे ही करूँगा, तो लोग क्या कहेंगे'? उस गहन वेदना को पी गए और खूब जोश में गुरुदेव के विषय में सुनाया। श्रावकों को निराशा में भी आशा की किरण दिखाई दी।

तृतीय प्रहर

1. वाचस्पति गुरुदेव के बाद

चातुर्मास का समय निकट था। गुरुदेव का विचार था कि नौ सन्तों में से कुछ संत जालन्धर चातुर्मास करें, कुछ कपूरथला। लेकिन पूज्यपाद महान् सेवाभावी भण्डारी श्री बलवन्त राय जी म. का विचार बना कि इस वर्ष सभी नौ सन्तों का संयुक्त चातुर्मास हो। गुरुदेव ने सहर्ष इस आज्ञा को स्वीकार किया और सभी का सन् 1963 का चातुर्मास अमृतसर हुआ। अपने पूज्य गुरुदेव के वियोग से उत्पन्न अपने मानसिक शून्य को गुरुदेव ने उनकी पावन स्मृतियों से, साथी मुनियों के शून्य को स्नेह-दान

और स्वाध्यायादि का अवलम्बन देकर तथा श्रावकों के शून्य को प्रवचन, प्रशिक्षण आदि के द्वारा दूर करने का प्रयत्न किया। सारा चातुर्मास अनेक उपलब्धियों से पूर्ण रहा। इसी चातुर्मास में एक विशेष निर्णय गुरुदेव ने अपनी अन्तरंग मुनि-मण्डली में लिया। पूज्यपाद श्री भण्डारी जी म. के पास ऐसे सैंकड़ों पत्र, दस्तावेज, प्रमाण आदि थे, जो वाचस्पति गुरुदेव के अधिकार में थे। चूँकि वे श्रमण-संघ के प्रधानमंत्री रहे थे एवं अपने युग के जन-मान्य प्रतिनिधि महामुनिराज भी थे, अतः साधु-साध्वियों के विषय में कई गुप्त रिपोर्ट उनके पास आती थी। उन पर योग्य कार्रवाई करने, न करने का उनका अधिकार था। श्री भण्डारी जी म. उन पत्रों की सार-संभाल करते थे। गुरुदेव ने सब दस्तावेज देखे और पाया कि वे अत्यन्त गोपनीय थे और कई साधुओं के विषय में उनमें आपत्ति-जनक सामग्री थी। गुरुदेव ने विचार करके निश्चय किया कि 'इन सबको हमें अपने पास नहीं रखना चाहिए। क्योंकि।आज तो हमारा मन साफ है,

भविष्य में यदि किसी का मन द्वेष-ग्रस्त हो जाए, तो वह कभी इनका दुरुपयोग भी कर सकता है। इस महान् अनर्थ से यदि अपना और समाज का बचाव करना है, तो इनको फाड़कर एकांत भूमि पर परठ देना चाहिए'। सभी ने गुरुदेव के विचार से सहमति जताई। तब गुरुदेव। ने अपने मुनिराजों के कुछ आवश्यक पत्रों के अतिरिक्त सबको फड़वा कर परठवा दिया। इस प्रकार गुरुदेव ने समाज-रक्षा का पहला कदम उठाया। कुछ आवश्यक पत्र जाखल में श्रावक श्री हंसराज जी जैन के पास रखवा दिए। चातुर्मास में आगम-रत्नाकर गुरुदेव से लघु मुनियों ने बहुत ज्ञान-ध्यान सीखा।

पूज्य गुरुदेव जी म. ने 'रायपसेणीय' सूत्र के आधार पर प्रवचन फरमाए, जिन्हें गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी ने लेखनी-बद्ध किया। उस वर्ष कार्तिक का महीना लौंद का महीना था अर्थात् कार्तिक मास दो बार आया। जैन समाज के सामूहिक निर्णय के अनुसार प्रथम कार्तिक पूरा होते ही गुरुदेव जी म. ने विहार कर दिया। जालन्धर पधारे। लोगों ने उस समय दीवाली का त्यौहार मनाया, क्योंकि पंचांग के अनुसार पर्व का आयोजन दूसरे कार्तिक में मान्य किया था। विहारों के दौरान दीपावली पर्व का आना प्रथम बार देखा था, अतः कुछ विचित्र और अटपटी-सा लगा। वाचस्पति गुरुदेव की स्मृति में आयोजित स्मृति-दिवस पर 825 आयम्बिल हुए तथा 500 भाइयों ने सामायिकें की।

अब हरियाणा गुरुदेव को पुकार रहा था, अतः गुरुदेव ने हरियाणा का मन बनाया। उसी क्रम में लुधियाना पधारे। वहाँ की धरती ने प्रथम बार गुरुदेव के देदीप्यमान जीवन का दर्शन किया। 15 दिसम्बर के दिन 'देवकी देवी हाल' में 1300 सामायिकों का जो अपूर्व ठाठ लगा, वह सबके लिए अविश्वसनीय प्रतीत होता था। जन-जन में गुरुदेव के प्रति श्रद्धा और आकर्षण का प्रथम बीजारोपण हुआ। वर्ष-भर पूर्व जब वाचस्पति

गुरुदेव और आचार्य श्री जी का मिलन हुआ था, उस समय वातावरण बड़ा सरगर्म था, पर आज बड़ा ही सौम्य और शान्त। समय बदलते देर नहीं लगती। पूज्य पं. श्री हेमचन्द जी म. तथा श्री मनोहर मुनि जी म. भी वहीं विराजमान थे। उनसे मधुरता-भरा मिलन रहा।

जब धूरी, संगरूर होकर सुनाम पधार रहे थे, तो कुनरा गाँव के गुरुभक्त लक्ष्मणदास जी, जो प्रतिवर्ष गुरुदेव के चरणों में आकर चौविहार अठाई किया करते, कहने लगे, गुरुदेव हमारे गाँव में भी चरण टिका दो। हमारे गाँव की जनता जैन संतों से अपरिचित है, आपके दर्शन और प्रवचन से उन्हें भी कुछ बोध मिलेगा'। गुरुदेव उसकी भावना को टाल नहीं सके। उसने भी जैन गुरुओं के प्रथम पदार्पण की खुशी में सैंकड़ों लोगों को दावत दी। सिक्खों के गाँव में उन्हीं की परम्परा को निभाते हुए कडाह-प्रसाद (हलवा) बनवाया। आहार के समय मुनियों से भी विनति की। मुनिराजों ने भी भगत की भक्ति देखते हुए गाँव की उत्तम मिठाई समझते हुए हलवा पर्याप्त मात्रा में ले लिया। आहार करने के बाद उससे वार्तालाप में पता चला कि हलवा देशी घी का न होकर विदेशी घी (डालडा) का बना हुआ था। उसके बाद कई दिन तक देशी विदेशी घी का ये प्रसंग चुटकला बनकर संतों को हँसाता रहा। जाखल में मुनि-सम्मेलन हुआ। स्वामी श्री फूलचन्द जी म. पंडित श्री रणसिंह जी म. तथा तपस्वी श्री बद्री प्रसाद जी म. आदि से बहुत दिनों बाद मिले थे।

वाचस्पति गुरुदेव के पश्चात् संघ-व्यवस्था का जिक्र चला, तो गुरुदेव ने अपना मन्तव्य प्रस्तुत किया, "पूज्य पाद, कृपासिंधु योगिराज श्री रामजी लाल जी म. हमारे बड़े हैं। गुरु म. के परम सहयोगी रहे हैं। हमारे लिए गुरु-तुल्य हैं, अतः संघ-प्रमुख का अधिकार उनको दे दिया जाए"। श्री तपस्वी जी। म. सा. इस बात पर जोर दे रहे थे कि 'जो वसीयत गुरु म. लिखकर गए हैं, उसी के अनुसार हम चलेंगे तथा आप को ही बड़ा मानेंगे'। मामला गंभीर था, पर गुरुदेव की दूरदृष्टि, प्रार्थना एवं प्रस्तुतिकरण की शैली से श्री तपस्वी जी म. इस विषय में यहाँ तक सहमत हो गए कि "आप अपने अधिकार श्री योगिराज जी म. को दे दें,

लेकिन हम अपने चातुर्मास की आज्ञा उनसे न मंगवा कर सीधे आप से ही मंगाएंगे। आप श्री सबकी समवेत आज्ञा श्री योगिराज जी म. से मंगालें। इससे आपकी भावना का भी और वाचस्पति गुरुदेव की आज्ञा का भी सम्यक् निर्वाह हो जाएगा"। इस निश्चित निष्कर्ष को मूर्तरूप देने के लिए श्री योगिराज जी म. के चरणों में जाना था। जीन्द में उनके सान्निध्य में श्री सुभद्रमुनि जी की दीक्षा का प्रसंग था। गुरुदेव के साथ में पूज्यपाद श्री भण्डारी जी म. एवं महामनीषी श्री रामप्रसाद जी म. भी 'थे। गुरुदेव की विशेष प्रार्थना पर श्री तपस्वी जी म. ने गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. को जींद तक साथ भेजा तथा श्री सेठ जी म. के साथ स्वयं मूनक में ठहरे। जींद में पावन दर्शन हुए। श्री चरणों में अपने विचार रखे। श्री योगिराज जी म. ने अपनी महानता का परिचय देते हुए कहा कि मैं लिखित पत्र के अनुसार चलने को (श्री सुदर्शन मुनि जी को नेता मानने को) पूर्णतः तैयार हूँ। पर गुरुदेव जी म. की आग्रह-भरी विनति को मान देते हुए उन्होंने मुनि-संघ का दायित्व अपने सुदृढ़ स्कन्धों पर वहन करने की स्वीकृति दे दी।

जीन्द के बाद गुरुदेव ने दिल्ली चाँदनी चौंक स्पर्शने का भाव बनाया। वहाँ की तीन वर्ष पुरानी पुरजोर विनति गुरुदेव के ध्यान में थी।

सन् 1964 के चातुर्मास के लिए सोनीपत मण्डी की घोषणा हुई। चार वर्ष पूर्व इस क्षेत्र की आधार-शिला वाचस्पति जी म. ने रखी थी और अब वहाँ पर एक भव्य स्थानक का निर्माण हो चुका था। व्यवसाय की दृष्टि से भी समृद्ध होने के कारण सोनीपत अपने समीपवर्ती ग्रामों का केन्द्र बन गया था। जैन परिवारों की संख्या निरंतर वर्धमान हो रही थी। गुरुदेव के पदार्पण से हरियाणा में धर्म-क्रान्ति नए आयामों में उद्घाटित हो रही थी। उस समय गाँव-गाँव में गुरुदेव ने सामायिकों का शंखनाद किया। प्रतिमास 'सामायिक-दिवसों' के आयोजन से क्षेत्रों में नवीन रक्त का संचार हुआ। सर्वत्र ही इस कार्य के लिए श्रावकों की ड्यूटी लगाने का भी श्री-गणेश हुआ।

वाचस्पति गुरुदेव के पूर्व कथनानुसार गुरुदेव को बुटाना से थोड़े-थोड़े समय के अंतराल से दो वैरागी मिले।

दिल्ली जाने से पूर्व रोहतक में योगिराज श्री रामजी लाल जी म. के मंगलमय दर्शन हुए। वे श्री फूलचन्द जी नवल के मकान में विराजमान थे। विहार के समय स्वयं योगिराज जी म. 'दिल्ली दरवाजे' तक छोड़ने आए। अपने पूजनीय महापुरुषों से मंगल-पाठ और कृपा का वरदान ले दिल्ली की ओर बढ़े।

गुरुदेव का दिल्ली-पदार्पण उल्लास और उमंग का पर्याय बन गया। न केवल समग्र समाज स्वागत में खड़ा था, अपितु महावीर जैन स्कूल तथा जैन कन्या पाठशाला के छात्र-छात्राएं भी पंक्ति-बद्ध खड़े हो गुरुदेव का स्वागत कर रहे थे। यहाँ यह अवश्य उल्लेख्य है कि पूज्य गुरुदेव जी म. इस तरह के स्कूली बच्चों के प्रायोजित स्वागतों के पक्ष में नहीं थे। समाज आत्म-श्रद्धा से अगवानी या विदाई करे, यह बात अलग है। कितनी ही बार बालकों को कृत्रिम अनुशासन के कारण धूप-छाया का कष्ट भी झेलना पड़ता है, जो गुरुदेव की रुचि के प्रतिकूल था।

दिल्ली प्रवेश के तुरन्त पश्चात् गुरुदेव ने पहले तो मुनियों को और फिर प्रवचनों में श्रावकों को आगाह किया कि देश किसी बड़े नेता से वंचित होने वाला है। गुरुदेव ने एक आकाशीय उल्का-पात को निमित्त बनाकर ऐसा निष्कर्ष निकाला था। सदर बाजार आए, तो हीरा लाल जैन हायर सैंकेड्री स्कूल में प्रवचन में स्पष्ट कह दिया कि देश की राजनीति में बहुत बड़ा परिवर्तन आने वाला है। उसी दिन सायं 27 मई को साढ़े तीन बजे देश के प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू का निधन हो गया। उन्होंने 17 वर्ष तक निरंतर देश की बागडोर संभाली, पर चीन से धोखा खाया और अपने प्राणों की आहति देनी पड़ी।

उन दिनों पूज्यपाद श्री त्रिलोक चन्द्र जी म. अस्वस्थ थे। उन्हें कोल्हापुर से सदर बाजार डोली में लाना था। गुरुदेव के सेवानिष्ठ मुनियों ने भी डोली-वहन का लाभ लिया। जब गुरुदेव ने शक्ति नगर होकर

रूपनगर में श्री राम लाल जी की कोठी पर प्रवचन किया, तब लाला कुज लाल जी के नेतृत्व में कुछ भाई विनति करने आए कि 'हम एक जैन कालोनी बसाना चाहते हैं, आप वहाँ प्रवचन करके हमें अनुगृहीत करें।' उनकी सपाट जमीन पर गुरुदेव ने प्रवचन फरमाया और कुछ ऐसी स्पष्ट घोषणाएँ की, जिन्हें आज भी लोग याद रखते हैं। नरेला में ज्ञात हुआ कि पूज्यपाद पंडित श्री त्रिलोक चन्द्र जी म. का स्वर्गवास हो गया। मन को गहरा आघात लगा। उनसे बड़ा आत्मीय नाता था। भावपूर्ण श्रद्धाजंलि-पत्र भिजवाकर उनको अपना अर्घ्य अर्पित किया।

दिल्ली विचरण के पश्चात् गुरुदेव पुनः हरियाणा पधारे। पीपली खेड़ा गाँव में ठहरे हुए थे। तब जंडियाला-गुरु से एक पत्र, साथ में एक पोस्टर आया, जिसमें उल्लेख था कि श्री सुमन मुनि जी म. के सान्निध्य में व्याख्यान-वाचस्पति गुरुदेव श्री मदन लाल जी म. का प्रथम पुण्य स्मृति-दिवस व्यापक पैमाने पर मनाया जा रहा है। पूज्य गुरुदेव ने तत्काल उस पत्र का उत्तर जण्डियाला जैन समाज के नाम भिजवा दिया कि हमारे गुरुदेव वर्षी आदि मनाने के पक्ष में नहीं थे, अतः ऐसे कार्यक्रम आगे से न रखे जाएं। पीपली खेड़ा से राजपुर पधारे। यह वाचस्पति गुरुदेव की पावन जन्म-भूमि है। दिन भी संयोग से 27 जून का आ गया। वाचस्पति जी म. के देवलोक-गमन को एक वर्ष पूरा हो रहा था। गुरुदेव ने सहज रूप से सोचा कि उनकी जन्मभूमि में ही उनके नाम और यश का गायन किया जाए। बड़ी भावना से उनके जीवन-वत्त को सुनाया, मगर पुण्यतिथि का रूप नहीं दिया। बाद के सालों में भी 27 जून के दिन वाचस्पति गुरुदेव के सम्बन्ध में कभी अवसर हुआ, तो सुना दिया, अवसर नहीं हुआ तो नहीं सुनाया। किसी कार्यक्रम के तहत 27 जून मनाने की व्यवस्था 1971 तक नहीं थी। हाँ। 1972 से निरंतर चल रही है। इससे पूर्व अपने किसी भी पूर्व-पुरुष की जन्म, दीक्षा या स्वर्गारोहण की तिथि का आयोजन नहीं किया जाता था। गुरुदेव द्वारा सूत्रपात करने से अन्य मुनिराजों ने भी इसका अनुकरण किया। फिर इस श्रृंखला में धीरे-धीरे वाचस्पति गुरुदेव का दीक्षा-दिवस, श्री मयाराम जी म. का जन्म, दीक्षा व देवलोक-गमन-दिवस

तथा तपस्वी श्री बदरी प्रसाद जी म. का संथारापूर्ति-दिवस भी जुड़ता चला गया। इन आयोजनों में गुरुदेव ने इतनी सावधानी जरूर रखी कि इन सब दिवसों को केवल स्थानीय क्षेत्रों तक सीमित रखा। जहाँ मुनिराज विराजित हों, वहीं के भाई-बहनों को सामायिक, अखण्ड पाठ एवं तपस्या की प्रेरणा दी जाती। बाहर के श्री संघों को किसी प्रकार का मौखिक या लिखित निमंत्रण नहीं भेजा जाता। बाहर के संघों को दीक्षा के अतिरिक्त अन्य किसी प्रसंग में कोई निमत्रंण-पत्र कभी नहीं दिया गया। अक्षय तृतीया के पारणों पर भी केवल तपस्वी परिवारों को ही निमंत्रण देने की सीमा रखी गई। यहाँ ये भी उल्लेखनीय है कि अपने पूज्य पूर्वजों की तिथियों को मनाने की तो गुरुदेव की रुचि थी, पर अपने स्वयं के जन्म और दीक्षा-दिवस को गुरुदेव ने कभी नहीं मनाने दिया। इन दो दिनों पर उनका कठोर निर्देश होता था कि मेरे विषय में कोई भजन या पद न बोला जाए। यदि कोई उनको जन्म-दिवस के विषय में वर्धापन देता, तो गुरुदेव फरमाते, 'जन्म की क्या खुशी? जन्म से तो पार होना है। न जन्म हो, न मृत्यु हो, यही हमारा लक्ष्य है।' कोई उन्हें दीक्षा-दिवस की बधाई देता तो वे कहते, 'साधु की तो प्रतिदिन ही दीक्षा है। कल भी दीक्षा थी, आज भी दीक्षा है। और आने वाले कल को भी दीक्षा होगी। दीक्षा को एक दिन से ही क्यों सीमित करते हो?

ग्रामों, मण्डियों को धर्मस्नेह से सिंचित करते हुए चातुर्मासार्थ सोनीपत मण्डी में पधारे।

सन् 1964 तक हरियाणा में लम्बी तपस्याओं का प्रचलन नहीं हुआ था, लेकिन गुरुदेव की प्रेरणा से सोनीपत में तपस्याओं की पंचरंगी हुई। उन दिनों हरियाणा में संवत्सरी के पौषधों का बड़ा माहात्म्य था। गाँव-गाँव से परे परिवार आकर चातुर्मास-स्थल पर पौषध करते। (सन् 1937 में वाचस्पति गुरुदेव के खेवड़ा चातुर्मास में 2000 पौषध हुए थे।) उनमें बड़ी उम्र के स्त्री, पुरुष तो पौषध करते, पर उनके बच्चों के लिए समाज द्वारा दिनभर खाने पीने का प्रबन्ध किया जाता। गुरुदेव ने संवत्सरी के दिन इतने आरम्भ-समारम्भ को अनुचित समझा और सोनीपत श्रीसंघ को

संकेत दे दिया कि 'संवत्सरी के दिन कोई भट्ठी न चढ़ाई जाए। बच्चों के लिए जो उचित हो, उसका प्रबन्ध श्रावकवर्ग अपनी मर्यादानुसार आगे-पीछे कर सकते हैं, परन्तु संवत्सरी के दिन को पूर्णतः निरारम्भ, रखा जाए। उस दिन स्थानीयं भाई अधिकाधिक संख्या में पौषध करें। लोगों को खिलाने-पिलाने में ही पर्व को बेकार न करे'। गुरुदेव का आदेश सकल श्रीसंघ को मान्य हुआ। वैसे भी सोनीपत श्रीसंघ सदा से ही आज्ञाकारी रहा है। संवत्सरी पर 500 पौषध हुए।

सन् 1964 में हरियाणा-पंजाब दोनों एक ही थे। विभाजन नहीं हुआ था। सरदार प्रताप सिंह कैरों की हत्या के बाद कामरेड रामकिशन पंजाब के मुख्यमंत्री बने। उन्होंने गुरुदेव के चरणों में कई बार समाचार भिजवाया कि मैं दर्शन करना चाहता हूँ, मुझे आप तारीख दे दीजिए। गुरुदेव ने उनको सप्रेम कहलवा दिया कि आप आने का कष्ट न करें। वस्तुतः गुरुदेव को राजनेताओं के प्रति विशेष रुचि नहीं थी और पूर्णतः एलर्जी भी नहीं थी। अपनी ओर से तो किसी राजनेता को प्रायः बुलाते ही नहीं थे। यदि कोई आ जाता, तो साधारण वार्तालाप कर लेते थे। अपने युग के ख्याति प्राप्त महामुनिराज होते हुए भी वे कितनी हद तक राजनेताओं से बचे रहे, ये जैन समाज का एक स्वर्णिम अध्याय और अनुपम उदाहरण है।

उन दिनों सोनीपत में बड़ी जल्दी-जल्दी भूकम्प के झटके आते थे। एक दिन तो काफी जोरदार भूकम्प आया। हानि तो नहीं हुई, पर जनमानस का भयभीत होना स्वाभाविक था। उस भय की निवृत्ति के लिए गुरुदेव ने, द्वारिका-रक्षा के आधार पर, आयम्बिलों का अखण्ड आराधन करवाया और सुखद संयोग बना कि उसके बाद भूकम्प आने बंद हो गए और लोग भयमुक्त हो गए। लोगों ने तारीखवार आयम्बिल शुरू किए। कई भाई-बहन तो आज तक भी उसी तारीख पर अमल करते हैं। श्री शांति मुनि जी म. की बीमारी के कारण चातुर्मास के बाद भी ठहरना पड़ा। कुल 7 महीने रुके।

पूज्य गुरुदेव का सन् 1965 का चातुर्मास रोहतक निश्चित हुआ। इससे पूर्व शेषकाल में उन्होंने हरियाणा की धरती को काफी हरा-भरा

किया। बहुत कम स्पृष्ट होने वाले क्षेत्रों में भी पधारे। रोहतक में भी खूब रंग रहा। श्री शांति चन्द्र जी म. सा. के घुटने का रोहतक मैडिकल कॉलेज में डॉ. मैनी साहब के द्वारा आपरेशन हुआ। उस समय श्रीमती ओमप्रभा जैन पंजाब सरकार में स्वास्थ्य-मंत्री थी। गुरुदेव के प्रति वे विशेष श्रद्धाशील थी। उनका भी इस आप्रेशन में काफी सहयोग रहा। रोहतक के वैश्य स्कूल और कालेज में अध्ययनरत जैन छात्रों को गुरुदेव ने काफी संभाला। उस युग में हरियाणा के अग्रवाल युवकों में चोरी-चोरी मद्यपान की प्रवृति आ रही थी। गुरुदेव ने उसे काफी हद तक चैक करके युवापीढ़ी को विनाश के गर्त में गिरने से बचाया।

सन् 1965 के भारत-पाक युद्ध के दौरान आम भारतीय जनमानस बड़ा संत्रस्त था, क्योंकि पिछले भारत-चीन युद्ध में देश पराजय का शिकार हो गया था। चीन-युद्ध भारत की राजधानी से बहुत दूरी पर था, जबकि पाक-युद्ध बहुत समीप था। ऐसे मौके पर गुरुदेव ने अपने प्रवचनों द्वारा लोगों को निर्भयता का संदेश दिया। देश-भक्ति और अहिंसा-प्रधान दृष्टि को देश के लिए हितकर बताया। लोगों में त्याग-भावना भरी। इससे सामान्य जनता को बहुत बल मिला।

रोहतक चातुर्मास सानन्द व्यतीत हो चुका था, पर अभी स्वास्थ्य के कारणों से वहीं विराजे हुए थे। इसी दौरान गुरुदेव के लघु गुरु-भ्राता मुनि रामचन्द्र के कारण समाज में असमाधि का वातावरण बना। पहले स्वामी श्री फूलचन्द जी म. के साथ वे मूनक गए। वहाँ पूज्यपाद भण्डारी श्री बलवन्त राय जी म. आदि से मिले। वहाँ भी अनुकूलता न बन पाई, तो ला. विलायती राम जी के जरिए योगिराज श्री राम जी लाल जी म. से उनके सम्बन्ध विच्छेद की आज्ञा मंगवाई गई। सारी परिस्थिति के मद्दे-नजर उन्होंने भी आज्ञा प्रदान की। उस समय पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. के चरणों में उन्हें शरण मिली। बाद में एकाकी रहे, अन्ततः सदर बाजार दिल्ली में उनका प्राणान्त हुआ।

सन् 1966 अप्रैल मास में बुटाना में श्री राम मुनि जी की दीक्षा हुई। फिर मूनक पधारे। सम्पूर्ण क्षेत्र में लहर थी। उदीयमान गायक रमेश

जैन ने जब “खुशी हर छोर छाई है, मेरे गुरुदेव आए है”, भजन की धुन उठाई, तो बच्चा-बच्चा झूम उठा। वहीं पर 1966 के चातुर्मास की स्वीकृति हुई। साथ ही जाखल को भी शामिल कर लिया गया। 19 वर्ष के सुदीर्घ अंतराल के बाद मूनकवासियों को गुरुदेव का सर्वथा नए रूप में सान्निध्य मिला। वहाँ सैकड़ों की संख्या में बालक, किशोर और युवक चोलपट्टे और दुपट्टे के परिधान में सामायिक करके, ‘सरलबोध’ व ‘धर्मबोध’ के पाठ याद करते थे। देखने वालों का मन मानों किसी अवान्तर लोक में विहरण करने लगता था। जब गुरुदेव शान्तात्मा श्री बनवारी लाल जी म. के साथ बीते हुए समय का सजीव चित्रण प्रस्तुत करते। तो लोगों की आँखें नम हो जाती। गुरुदेव का अमर गीत ‘अरी बहना, काली तो रानी गुणवती, वर्णन सूत्र-मंझार, झूला तो झूला तप का चाव से’ जब उनके कण्ठ से निकलता, तो तपस्या के झूले गगन की ओर चढ़ते दिखाई देते थे। उस वर्ष मूनक ने ‘तपोभूमि’ का खिताब पाया। सेवा और निर्व्याज श्रद्धा सदा से ही मूनक की विशेषता रही है।

चातुर्मास का आधा भाग जाखल में व्यतीत हुआ। यद्यपि मुनियों की दृष्टि से तो जाखल क्षेत्र पहले भी साताकारी था, पर आम जनता की नजरों में उसी वर्ष आया। वहाँ जैन-अजैन का कोई भेद नहीं रहा। श्री लब्भूराम जी के सुपुत्र श्री जिनेन्द्र जी तीव्र वैराग्य-भावना से ओत-प्रोत हुए, लेकिन परिवार की ओर से आज्ञा नहीं मिली। वह वैराग्य उस रूप में तो फलीभूत न हो सका, पर जब सन् 1982 में उन्होंने अपने द्वितीय सुपुत्र चिरं. आदीश को गुरुचरणों में समर्पित किया और 1989 में जाखल में ही दीक्षित करवाया, तो उन्होंने उन भावों को प्रकारान्तर से फलीभूत ही माना।

1966 में पूज्यपाद श्री भण्डारी जी म. की नेश्राय में एक चातुर्मास बुढ़लाड़ा भी हुआ। उसमें गुरुदेव ने अपने शिष्य श्री पद्म चन्द्र जी म. को गुरुवर श्री रामप्रसाद जी म. से भगवती-सूत्र की वाचना लेने हेतु छोड़ा। वहीं से श्री पद्म चन्द्र जी म. का नाम ‘शास्त्री’ प्रचलित हुआ।

चातुर्मास के अंत में ये तय हुआ कि वै। हुक्म चन्द जी की 30 जनवरी 1967 के दिन मूनक में दीक्षा होगी। दीक्षा से पूर्व पूज्य गुरुदेव

श्री शास्त्री जी म. को लेकर सुनाम पधारे। वहाँ की एक रोचक घटना का जिक्र गुरुदेव अपने प्रवचनों में प्रायः करते थे, तो सभा में हास्य-रस का प्रवाह बहने लगता था। गुरुदेव जी म. स्थानक में टहल रहे थे। एक 7-8 वर्ष का बालक आया। वंदना की और पूछने लगा कि 'आपके गुरु जी कहाँ हैं?' गुरुदेव को पहले तो प्रश्न समझ ही नहीं आया, पर फिर बालक का भाव भांप गए। वह बालक श्री शास्त्री जी म. को गुरुदेव का गुरु मान बैठा था, क्योंकि शास्त्री जी म. गुरुदेव की तुलना में स्थूलकाय थे और गुरुदेव उनसे कृश। गुरुदेव ने अपने को ही गुरु बताने में संकोच माना। पट्टे पर भी नहीं बैठे। ये सोचकर कि कहीं बालक कुछ अन्यथा न ले ले। टहलते रहे। थोड़ी देर बाद शास्त्री जी म. आए और आकर गुरुदेव को वन्दना की। तब बालक को पता चला कि गुरु कौन है और शिष्य कौन है। उसकी भ्रान्ति दूर होने पर ही गुरुदेव पट्टे पर आसीन हुए।

मूनक में 30 जनवरी 1967 को श्री विनय मुनि जी म. सा. की दीक्षा हुई। इनका पूर्व नाम हुक्मचन्द जी था। ये बुटाना के सुश्रावक श्री मोतीराम जी जैन एवं माता सोना देवी के सुपुत्र हैं। गुरुकृपा से मूनक चौमास में बीस दिन में दो अठाइयाँ करके सबको चकित कर दिया था। दीक्षा के कार्यक्रमों में पूर्व-रात्रि में पंजाब के प्रसिद्ध कलाकार, भजनीक श्री नत्थासिंह ने खूब वाहवाही लूटी तथा दिन में बंगा-निवासी श्री स्वर्ण कुमार ने बच्चों का प्रोग्राम प्रस्तुत कर सभा को जमाया। दीक्षा के भव्य आयोजन के पश्चात् गुरुदेव जंगल देश में व्यापक रूप से विचरे। पहली बार ही उस इलाके में पधारे थे। पूरा इलाका धर्मश्रद्धा के ज्वार से उद्वेलित हो उठा। जन-जागरण की दृष्टि से उस विचरण को 'न भूतमिव- अद्‌भुतम्' कहा गया है। सरदूलगढ़ जाते समय मार्ग में भण्डारी श्री पदमचन्द जी म. तथा श्री अमर मुनि जी म. से मिलन हुआ। जंगल-देश की केन्द्रीय नगरी भटिण्डा में सन् 1967 का चातुर्मास स्वीकृत हुआ।

चातुर्मास से पूर्व एक बार विहार-यात्रा के प्रसंग में श्री शास्त्री जी म. ठाणे 2 मलोट और अबोहर के बीच एक छोटी-सी ढाणी (कुछ घरों का समूह) में पहले पहुँच गए। गुरुदेव को पीछे से आना था। सन्तों को

आहार नहीं मिला। मात्र थोड़ा-सा पानी और लस्सी मिली। 'शाम को पानी पीकर खाली पेट रात काट लेंगे' इस इरादे से सन्त आराम करने लगे थे। तभी कुछ देर बाद गुरुदेव भी वहीं पर पधार गए। सन्तों के मन में चिन्ता हुई कि 'अब कैसे काम चलेगा। घर बहुत थोड़े हैं और सन्त ज्यादा हो गए। पहले वाले सन्त भी निराहार ही हैं।' गुरुदेव जी म. ने सारी स्थिति को भाँपा। बोले– 'निश्चिन्त रहो। चलो, मैं आहार को चलता हैं। पानी के पात्र भी उठा लो'। गुरुदेव का आदेश पाकर सन्त चले और गुरुदेव के पुण्यों का ये अतिशय कि सब सन्तों के लिए आहार व पानी भी मिल गया।

भटिण्डा चातुर्मास हर दृष्टि से अद्वितीय रहा। संवत्सरी से एक दिन पूर्व की एक घटना का वर्णन बहुधा गुरुदेव के मुख से सुना है। उस दिन भटिण्डा के कुछ भाई गुरुदेव के पास आए और कहने लगे कि 'हमें मंगल-पाठ सुना दो, संवत्सरी माछीवाड़ा जाकर मनाएंगे'। ये सुनकर गुरुदेव चकित-से हो गए कि ऐसा तो जीवन में पहली बार ही देखा है कि कोई अपने घर में बहती गंगा को छोड़कर बाहर संवत्सरी-पर्व मनाए। उन्होंने कारण पूछा तो वे भाई बोलें कि 'वहाँ पर श्री छगनलाल जी म. है और हम प्रतिवर्ष उनके चरणों में ही संवत्सरी मनाते हैं'। उनकी बात सुनकर गुरुदेव ने बड़े प्रेम से मंगल-पाठ सुना दिया। एक बार भी उनको रोकने की कोशिश नहीं की। जब वे भाई श्री छगनलाल जी म. के पास पहुँचे तो उन्होंने उनको उपालम्भ देते हुए कहा कि 'तुम इतना बड़ा चौमासा छोड़कर मेरे पास क्यों आए हो? और क्या सुदर्शन मुनि जी ने आपको नहीं रोका?' भाई बोले कि 'हम तो प्रतिवर्ष की प्रथा के अनुसार आपके पास आए। और रही बात रोकने की, गुरुदेव ने हमें एक बार भी नहीं रोका, अपितु बड़े प्रेम से हमें मंगली सुनाई।' गुरुदेव की इस उदारता का परिचय प्राप्त कर श्री छगनलाल जी म. बड़े प्रभावित हुए और कहने लगे कि 'श्री सुदर्शन लाल जी म. बहुत महान् सन्त हैं और भविष्य में उनका पुण्य-प्रताप बहुत फैलेगा'। वापिस आकर जब उन भाइयों ने गुरुदेव को ये बात सुनाई तो वे फरमाने लगे कि 'जब इतने मात्र से हमें बड़ों का आशीर्वाद मिलता है, तो हम किसी को क्यों रोके?' वैसे भी गुरुदेव

दर्शनार्थियों के आवागमन को अधिक महत्त्व नहीं देते थे। न वे कभी समाचार दे देकर दर्शनार्थियों को या बसों को बुलाया करते थे।

पूज्य गुरुदेव जी म. को भटिण्डा में टाइफाइड बुखार हो गया। बीमारी काफी लम्बी चली। शरीर काफी झटक गया। दुर्बलता के कारण चातुर्मास के बाद भी 3 महीने वहीं रुकना पड़ा। गुरुदेव का शरीर-तंत्र जन्म से ही दुर्बल रहा है। कई बार वे इसका रहस्योद्घाटन करते हुए फरमाया करते कि उनके जन्म के तुरन्त बाद बाबा जी ने उनकी जन्मपत्री अपने पारिवारिक पण्डित नत्थू से बनवाई। जब उसका फलितार्थ पूछा, तो पण्डित कहने लगा कि 'बच्चा बहुत प्रतापी बनेगा, पर हमेशा ही इसके मन में चिन्ता बनी रहेगी और तन में बीमारी बनी रहेगी'। माता सुन्दरी की मृत्यु, पारिवारिक परिस्थिति-जन्य चिन्ता तथा बाल्य-काल की लम्बी-लम्बी बीमारियों ने उस कथन को पुष्ट किया। जब 1942 में गुरुदेव ने दीक्षा ली, तो एक बार वाचस्पति गुरुदेव से वही जन्मपत्री वाली बात कही। ये सुनकर वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि 'संयम लेने से दोनों चीजों का उपचार हो जाएगा। आहार-पानी का मर्यादित सेवन करने से शरीर में असाध्य रोग नहीं होंगे तथा स्वाध्याय, ध्यान व गुरुकृपा से मन की चिन्ताएँ नियंत्रण में रहेगी'। फिर वाचस्पति गुरुदेव ने उनको कुछ पाठ दिए तथा उपधान-तप के रूप में कुछ आयम्बिल करने को कहा। और यह भी एक ऐतिहासिक सत्य है कि गुरुदेव जी म. जीवन-भर कई शारीरिक पीडाओं से तो जूझते रहे, पर असाध्य रोगों यथा-हृदय-रोग, उच्च रक्त-चाप, मधुमेह आदि से सदा मुक्त रहे। उनको मानसिक तनाव। के प्रसंग भी बहुत आए, पर अपने को सदा संयमित और संतुलित रखा। कभी जनता के बीच में लाकर बावेला खड़ा नहीं किया।

टायफाइड के दौरान उपचार के सम्बन्ध में श्री शांति लाल जी मोहर वालों ने विशेष सेवा-लाभ लिया। श्री चरणदास जी, नसीब चन्द, हरिचन्द जी के परिवारों में सेवा का, समर्पण का अतिरिक्त ही उल्लास और ध्यान था। श्री हुक्मचन्द जी। श्री हंसराज जी (श्री अरुण मुनि जी म. के ताया जी एवं पिता श्री जी) को धर्मध्यान की, गुरु-भक्ति की बहुत लगन लगी।

दर्शनार्थियों के प्रति सामाजिक दायित्व का निर्वाह श्री प्रकाश चन्द जी तथा धारसी भाई ने मन लगा कर किया।

सेवा का एक मजेदार प्रसंग ये है कि एक बार बीकानेर के कुछ भाई दर्शन करने और उधर पधारने की विनति लेकर आए थे। उस रोज दर्शनार्थियों की भोजन-व्यवस्था श्री कुंजलाल जी डसके वालों के घर पर थी। बीकानेरी श्रावकों ने भोजन करके अपनी थाली, कटोरी आदि अंगुलियों से साफ करके चाट ली। झूठन बिल्कुल नहीं छोड़ी। इस प्रक्रिया से प्रसन्न होने की बजाय श्री कुंजलाल जी कुछ खिन्न और क्षब्ध-से हो गए। क्योंकि उस युग मे कोई मेहमान झूठन न छोड़े, तो ये माना जाता था कि वह भूखा ही रह गया और उसे पर्याप्त भोजन नहीं मिला। और ये मेजबान का अपमान था। अपने मन का रोष लेकर वो गुरुदेव के चरणों में आया और कहने लगा कि ये राजस्थानी भाई तो बिल्कुल असभ्य हैं, जो थाली को बिल्कुल चट कर गए। झूठन बिल्कुल नहीं छोड़ी। गुरुदेव जी म. को उस श्रावक के भोलेपन पर हँसी आई। फिर उसे समझाया कि 'यह तो बहुत बड़े विवेक की निशानी है, जो उन्होंने झूठन नहीं छोड़ी। झूठा भोजन छोड़ना अन्न का अपमान है, अनर्थदण्ड है तथा निष्प्रयोजन जीव-हिंसा का कारण है। किसी भी मेहमान को झूठन तो छोड़नी ही नहीं चाहिए। दर्शनार्थी को तो विशेषतः'। उस समय में और आज के समय में कितना अन्तर आया है कि आज कोई झूठन छोड़ दे, तो उसे श्रावक और साधु सभी टोक देते हैं। प्रेरणा भी बराबर रहती है- मौखिक तथा लिखित रूप में।

चातुर्मास में गुरुदेव के तीनों लघु मुनियों ने अठाई और ऊपर का तप किया, जिससे श्रावक-वर्ग में भी तप की प्रेरणा बनी।

गुरुदेव के प्रवचनों का प्रभाव जैनों के अलावा अजैनों पर भी बहुत पड़ा। श्री नौरंग दास मित्तल जैसे कई भाई सदा-काल के लिए धर्म, समाज और गुरुओं से जुड़ गए। चातुर्मास में समाज ने स्थानक बनाने का संकल्प लिया और बाद में एक विशाल स्थानक का निर्माण किया भी। आज तो

उस स्थानक से भी बड़ी एक और नई स्थानक कपड़ा मार्किट में समाज का गौरव बढ़ा रही है।

भटिण्डा-चातुर्मास में ही यह अशुभ समाचार मिला कि करुणा वरुणालय योगिराज श्री रामजी लाल जी म. का देवलोक-गमन हो गया। वाचस्पति गुरुदेव के पश्चात् जिस पूज्य पुरुष पर अपने मुनिसंघ का भार डाला था, वह महावृक्ष भी उठ गया, इस शून्यता में सब खोए-खोए से थे। चातुर्मास बाद मूनक में मुनियों का मिलन निश्चित हुआ। श्री विजय मुनि की दीक्षा का प्रसंग भी था। सब मुनिराजों ने मिलकर गुरुदेव से सविनय निवेदन किया कि 'अब आप ही हमारे प्रमुख हो। वाचस्पति गुरुदेव ने अपने उत्तराधिकार-पत्र में जो आदेश हमें फरमाया है, उसे हमें पूर्णतः निभाना है'। सकल संघ के समक्ष परम श्रद्धेय, परम पूज्य, पण्डित-रत्न श्री रणसिंह जी म. ने घोषणा की कि 'आज से ये हमारे बड़े हैं। हम इनकी आज्ञाओं का पालन करेंगे'। पूज्य गुरुदेव जी म. ने सबके भावों को स्वीकार करते हुए फरमाया कि "मैं तो गुरुदेवों की एक छोटी-सी झोपड़ी हूँ, इसमें रहने वाले ही इसकी रक्षा करेंगे। मैं सबके चरणों की धूल हूँ। मुझ पर सब महापुरुषों का आशीर्वाद है, अतः मुझे किसी प्रकार की चिन्ता नहीं है।"

सब बड़े मुनियों की सहमति लेते हुए गुरुदेव ने एक व्यवस्था दी कि यद्यपि हमारे श्रमण-संघ के साथ सांभोगिक संबन्ध नहीं है, परन्तु हम एक छूट रखेंगे कि यदि श्रमण-संघ के आचार्य श्री जी से मिलना हो, तो उनको वन्दना की जाएगी। उल्लेखनीय है कि उस समय उत्तर भारत मे श्रमण-संघीय आचार्य-प्रवर श्री आनन्द ऋषि जी म. सा. विचरण कर रहे थे। उस परिप्रेक्ष्य में ये निर्णय लिया गया। संघ-भार लेते ही गुरुदेव का यह निर्णय समन्वय और सौहार्द की दिशा में बहुत बड़ा कदम था, जिसे सबने सहर्ष स्वीकार किया।

1958 से 1967 तक की इस दशाब्दी में हम देखते हैं कि गुरुदेव इकट्ठे ही शिष्य भी थे, गुरु भी थे, रहवर भी थे और पीछे-पीछे चलने वाले राहगीर भी।

2. धर्म-चक्र का हुआ प्रवर्तन

संघ-शास्ता का गुरुतर भार प्राप्त करके भी गुरुदेव पूर्ववत् नम्र ही बने रहे। गुरुदेव की महिमा को काव्यमय बनाते हुए आगम-रत्नाकर गुरुदेव श्री रामप्रसाद जी म. ने एक बड़ी मनोरम कविता की रचना की

सुदर्शन मुनि प्यारे हमारे मन में।
समाए, ज्यों पपीहा मगन घन में ॥

इसे जब मूनक में श्री विजयमुनि के दीक्षा-प्रसंग पर प्रख्यात कलाकार रमेश जैन ने सुनाया, तो इस भजन के बोल सहस्रों कण्ठों से ज्ञात-अज्ञात मोहल्लों में गूंजने लगे। इसे देखकर कवि का अन्तर्मन भी परम प्रमुदित हुआ। श्रद्धेय श्री रामप्रसाद जी म. सा. ने अब तक किसी जीवित महापुरुष पर अपनी लेखनी नहीं चलाई थी, यहाँ तक कि अपने गुरुदेव वाचस्पति जी म. पर भी नहीं, लेकिन उनके लिए गुरुदेव सबसे भिन्न थे। उनके विषय में कुछ कहने, सुनने और लिखने में उन्हें अपूर्व आनन्द आता था।

श्री विजय मुनि को पं. श्री रणसिंह जी म. का शिष्य घोषित किया गया। उस समय गुरुदेव के संघ में कुल 15 मुनिराज थे।

1967 के चातुर्मास की पूर्ति के पश्चात् श्रमणसंघ के तत्कालीन उपाध्याय श्री हस्तीमल जी म. ने पूज्य गुरुदेव से परामर्श मंगवाया कि 'श्रमण-संघ में रहने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ नहीं रही हैं, हमे क्या करना चाहिए?' पूज्य गुरुदेव ने समाचार भिजवाया कि हमारे पूज्य गुरुदेव वाचस्पति श्री मदन लाल जी म. ने यह निर्णय बहुत पहले ही ले लिया था। अब आपके लिए भी यही निर्णय समुचित है।' पूज्य गुरुदेव के परामर्श

के बाद उन्होंने भी श्रमण-संघ से किनारा कर लिया और संयमीय परम्परा को पालते हुए विचरने लगे।

इस वर्ष गुरुदेव के मन में राजस्थान में अलवर चौमासा करने का भाव जगा। उससे पूर्व आपकी परम्परा के प्रायः सभी दिग्गज महापुरुषों ने राजस्थान में जाकर धर्म-पताका फहराई थी। पूज्यपाद श्री मयाराम जी म. ने उदयपुर तक में अपने कठोर संयम की छाप छोड़ी थी। उदयपुर में उस समय दस आने (60 प्रतिशत) समकित उनके नाम की थी। दृढ़-अनुशास्ता श्री छोटे लाल जी म. एवं बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. तो थे। ही राजस्थान के मेवाड़-संभाग के। वाचस्पति गुरुदेव भी प्रायः सम्पूर्ण राजस्थान का विचरण कर चुके थे। इसलिए गुरुदेव का भी विचार बना कि मैं भी अपने पूर्व पुरुषों के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व को वहाँ जाकर देखूँ और उनकी स्मृतियों को पुनजीवित करूँ। गुरुदेव के इस विचार से उनके साथी मुनियों में भी करण्ट-सा दौड़ गया। अलवर चातुर्मास का मन में भाव था, पर वहाँ तपस्वी श्री रोशन लाल जी म. का स्वीकृत हो चुका था। अलवर वालों से जयपुर श्रीसंघ को इस बात की खबर लगी, तो वे सकल संघ की विनति लेकर जुलाना मण्डी आए। गुरुदेव ने उनको सन् 1968 के अपने चातुर्मास का आश्वासन दे दिया। यद्यपि जयपुर जाने के लिए जुलाना से रोहतक का रास्ता सीधा और समीप था, पर गुरुदेव को एक बालक का उद्धार करना था, अतः रिंढाणा होते हुए बुटाना पधारे। वहाँ मुझे (जय मुनि को) अपने साथ वैरागी के रूप में ले गए।

रोहतक से आगे का सारा रास्ता प्रायः नया और अपरिचित था। गुरुदेव किसी भाई को सेवादार के रूप में भी अपने साथ नहीं रखते थे। मार्ग की कठिनाइयों की चिन्ता नहीं थी। कलानौर में पहान् तपस्वी श्री रोशन लाल जी म. एवं परम सेवाभावी श्री प्रेमचन्द जी म. के दर्शन हुए। उनका उस वर्ष अलवर चातुर्मास निश्चित हुआ था। पूज्य गुरुदेव इस मुनियुगल से सदा से ही प्रभावति रहे थे। कलानौर में गुरुदेव ने अपने शैक्ष-काल (लघु दीक्षा) की एक घटना सुनाई, “वाचस्पति गुरुदेव के सान्निध्य में अनेक मुनिराज कलानौर में ठहरे हुए थे। विशाल धर्मशाला

थी। वहाँ एक कोने में मटके पड़े थे। एकांत देखकर कुछ मुनि चंचलता पर उतर आए। उन मटकों के ऊपर कपड़ा बांधकर घड़वे (हरियाणवी वाद्य) के रूप में उन्हें बजाने लगे। कुछ समय बाद वाचस्पति जी म. को ज्ञात हुआ। सब मुनियों के समक्ष केवल मुझे ही डाँटने लगे, जबकि मैं उस चंचलता में सम्मिलित नहीं था। वातावरण में गम्भीरता उतर आई। मुनियों को जो संदेश पहुँचाना था, सो पहुँच गया, पर मेरा मन भारी था कि अकारण ही मुझ पर ये डाँट क्यों पड़ी। बाद में गुरुदेव ने मुझे एकान्त में ले जाकर कहा कि 'सुदर्शन! मुझे पता था कि तू उस पार्टी में नहीं था, पर तुझे इसलिए कहा कि तू गंभीर है, सह लेगा। अन्य मुनि दूसरे गण के हैं, मेरी बात का बुरा मान जाते, अपनों को ही कहा जाता है'। इस आश्वासन मात्र से मेरा मन हल्का हो गया।" वहाँ से दादरी, महेन्द्रगढ़ होते हुए नारनौल पधारे। नारनौल का कभी बड़ा नाम था, पर उस समय सिमट कर काफी छोटा रह गया था। वाचस्पति गुरुदेव के 6 में से 5 शिष्यों की दीक्षा-स्थली वह क्षेत्र था। वहाँ का सुराणा परिवार (गन्धी) गुरुदेव के प्रति विशेष श्रद्धाशील था। लेकिन उनके दो परिवारों में काफी अनबन थी। बोलचाल भी बन्द थी। नानकचन्द एवं लक्ष्मी चन्द जी दोनो गुरु-भक्त थे। गुरुदेव की प्रेरणा से दोनों का मनमुटाव दूर हुआ। इस प्रेमधारा से सारा क्षेत्र धन्य हो गया।

नारनौल से आगे राजस्थान की सीमा शुरू हो गई थी। स्वामी श्री फूलचन्द जी म. ठाणे 3 का सिंघाड़ा आगे था। 15-20 घरों की एक छोटी-सी बस्ती को और एक कुए को देखकर याद आया कि ये तो मेरी जन्म-भूमि वाली ढाणी है। करीब 40 वर्ष बाद अपनी जन्म-भूमि की याद आई। कुए पर खड़े लोगों से गाँव के बारे में जानकारी ली। किसी बुजुर्ग से पूछा कि क्या यहाँ कोई "भीखू" भी रहता था? जिसके पिता का नाम बेरिसाल सिंह तथा माँ का नाम अछना देवी था।' उसने कहा 'हाँ, पर वह तो बहुत अर्सा पहले गुम हो गया था।' स्वामी जी म. ने कहा, "मैं वही भीखू हूँ।" असली नाम तो भिक्खा सिंह था। पर ग्राम्य भाषा में भीखू ही बोला जाता था। गाँव वालों ने अन्दर चलने को कहा तो वे संकोच करने

लगे, क्योंकि उन्हें खतरा था कि कहीं परिवार वाले जबरदस्ती न बैठा लें। विशेषतः उन्हें अपने चाचा जी से भय लगता था, क्योंकि उनका स्वभाव बहुत कठोर और क्रोधी था। पर श्री प्रकाश मुनि जी म. ने प्रेरणा की, "महाराज श्री जी, अन्दर एक बार तो चलो। कोई कुछ नहीं कहेगा।" सरलता की प्रतिमूर्ति म. श्री जी मान गए। संतों को अन्दर ले गए। अपने बारे में बताया। पूर्वजों के बारे में पूछा। पूर्वज तो सभी काल-कवलित हो गए थे। जो शेष थे, उन्होंने बताया कि हम तो आपको भी मृत समझकर सब क्रिया-कर्म कर चुके थे। जीवित देखकर उन्हें बड़ी खुशी हुई। गाँव वालों ने ठहरने की विनति की। पर आगे जाना था। मौसम में गर्मी भी उतर रही थी। उन्हें अपना आगामी प्रोग्राम बता दिया कि यहाँ से 'नीम का थाना' होते हुए खंडेला जाएंगे। चार महीने जयपुर में ठहरेंगे। अनुकूलता हो, तो वहाँ लाभ ले लेना। ढाणी (मिलगाणां नाम था) में बड़ी उत्सुकता बनी। कई परिवार जन 'नीम का थाणा' में आए। जयपुर भी कई बार आना हुआ। धार्मिक संस्कार डाले। आहार-शुद्धि कराई। मद्यपान आदि के व्यसनों का नियम करवाया। अगले वर्ष सर्दी में उधर विशेष इरादे से आए और ढाणी में ठहरे। उस यात्रा का एक सुखद पहलू ये हुआ कि वह ढाणी क्रमशः धर्मनगरी बन गई। बाद में पूज्य श्री स्वामी जी म. ने उसे अच्छी तरह संस्कारित किया। आज वहाँ स्थानक भी है, सामायिक-संवर भी होता है और जैन साधुओं से भी वहाँ के आबालवृद्ध परिचित हैं। प्रारम्भ में संतों की जुबान पर उस स्थान का नाम 'स्वामी जी की ढाणी चढ़ गया था और आज श्री सुमति मुनि जी म. तथा श्री सत्य प्रकाश जी म. के प्रयास से उसका सरकारी तौर पर "फूलचन्द नगर" नाम ही स्वीकृत हो गया। श्री स्वामी फूलचन्द जी म. अमर हो गए हैं।

नारनौल से जयपुर के बीच खंडेला के अलावा कहीं भी जैन धर्मी नहीं थे। बिल्कुल खुश्क और गरीबी का शिकार इलाका था। पानी की बड़ी दिक्कत। मुनियों को गर्म या धोवन, किसी तरह का पानी नहीं मिल पाता था। लोग बर्तनों को सूखी राख से मांजकर फिर कपड़े से पोंछकर साफ कर लेते थे। पानी नहीं बरतते थे। गुरुदेव ने अपने गुरुदेव वाचस्पति

जी म. की प्राचीन व्यवस्था को दोहराया। दो तीन किलोमीटर दूर रेलवे स्टेशनों पर जब रेलगाड़ी के आने का समय होता, तब मुनिराज वहाँ पहुँच जाते और इंजन से गर्म पानी ले आते। इंजन में जलते कोयलों का संघट्टा होने के कारण उसका दण्ड-एक व्रत भी लिया जाता था।

खण्डेला में गुरुदेव पधारे। छोटा क्षेत्र था, पर राजस्थानी धर्म संस्कृति का प्रारूप था। सब घर गुरुभक्ति से भरपूर थे। गुरुदेव को पाकर और भी धन्य हो गए। गुरुदेव ने वहाँ प्रातः काल हिन्दी का भक्तामर (श्रद्धेय श्री रामप्रसाद म. जी म. द्वारा रचित) की प्रार्थना प्रारम्भ कराई। तीस साल बाद भी वह आज तक यथावत् चालू है।

यद्यपि राजस्थान में गुरुदेव प्रथम बार ही पधारे थे, पर दिल्ली-वासियों की रिश्तेदारियों के कारण सब स्थानों में कुछ-कुछ परिचय हो गया। परीषह-उपसर्गों की इस चिरस्मरणीय यात्रा को पार करते-करते गुरुदेव अन्ततः जयपुर में पधारे। सर्वप्रथम तो श्री पूनमचन्द जी बढेर की कोठी पर ठहरना हुआ। विशाल-काय श्रावक का डीलडोल तो प्रभावशाली था ही, समाज-सेवा, धर्म-निष्ठा भी बड़ी गहरी थी। आ. श्री हस्तीमल जी म. चरणों में चार-चार महीने रहकर मौन और धर्मध्यान के अभ्यासी थे। उनके सुपुत्र श्री हरिश्चन्द्र जी बढेर भी उन्हीं के पद-चिह्नों पर चलने वाले स्वाध्यायशील युवक थे। बड़े परिवारों में रिश्तेदारियाँ थी। राजस्थानी भाषा के सौन्दर्य का एक प्रसंग गुरुदेव के मुख से अनेक बार सुना है-"श्री हीराचन्द जी हीरावत गुरुदेव के दर्शनार्थ आए। पूनमचन्द जी कहने लगे, 'बाप जी, ये हमारे ब्याई जी हैं'। गुरुदेव जी को कुछ समझ तो आया नहीं, और अर्थ भी पूछा नहीं, चुप रहे। तभी हीरावत जी की धर्म-पत्नी आ गई। पूनम जी ने कहा, 'बाप जी, ये हमारी ब्याण जी हैं।' गुरुदेव फिर चुप। श्रावक भी कुछ भांप गए। कहने लगे-गुरुदेव हमारा पुत्र इनकी पुत्री से ब्याहा गया है, इसलिए ये हमारे ब्याई जी और ब्याण जी हैं।' गुरुदेव को तब ज्ञात हुआ कि समधी और समधिन को राजस्थानी भाषा में ब्याई और ब्याण कहते हैं। पंजाब में कुडम और कुडमणी कहे जाते हैं। खूब हँसी आई। फिर तो यथा-प्रसंग गुरुदेव इन दो शब्दों की

पुनरावृत्ति करके प्रवचनों में ठहाके भी लगवा देते थे। फिर अन्य उपनगरों में विचरण हुआ। वहीं पर गुरुदेव ने अधिकांश जयपुरवासियों को अपने बुद्धि-प्रकोष्ठ में निहित कर लिया। आदर्श नगर में पंजाबी भावड़े रहते थे। उनकी भक्ति अवर्णनीय थी। वहाँ से लाल भवन (जैन स्थानक) पधारे। सन् 1938 में लालबाई नामक एक महिला ने अपनी हवेली का आधा खण्ड समाज के लिए धर्मध्यान-हेतु अर्पित कर दिया था, अतः उसका नाम 'लाल भवन' है। जयपुर के मुख्य मार्ग-चौड़ा रास्ता पर यह स्थित है। बड़ी विशाल बिल्डिंग है। महाराजा जयसिंह के आदेश पर जयपुर शहर का बड़ा योजना-बद्ध निर्माण हुआ था। वे ही अपनी राजधानी को आमेर से उठाकर जयपुर लाए। वे प्रसिद्ध वास्तुविद् और कई वेधशालाओं के निर्माता माने जाते हैं। जयपुर के बड़े-बड़े बाजार चौड़ी-चौड़ी सड़कों पर हैं। 'चौड़ा रास्ता' तो सबसे चौड़ा है। सफाई भी सराहनीय है, पर गलियों में गन्दगी का साम्राज्य है। जयपुर की आभ्यन्तर विशेषताओं में एक ये भी है कि वहाँ पर साम्प्रदायिकता का विशेष असर नहीं है। श्रमण संघ, रत्न-वंश, साधुमार्गी संघ, ज्ञान-गच्छ तथा इतर संघों के संत-सतियों का चातुर्मास लाल भवन में ही होता है। सब व्यवस्थाएँ एक ही समाज के अधीन हैं। आचार्य-प्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. का वहाँ पर विशेष उपकार रहा है। उनकी उदार दृष्टि क्षेत्र में बराबर झलकती है। वहाँ पर श्री गुमानमल जी चौरड़िया इस जमाने के आदर्श श्रावक माने जाते है। वे पूज्यपाद श्री गणेशी लाल जी म. के श्रावक है। 32 वर्ष की आयु से ही शीलवती, एकांतर-तपी, संत-सेवा और समाज-सेवा में तत्पर रहते हैं। गुरुदेव के चातुर्मास में वे संघ के मंत्री थे। वयोवृद्ध अनुभवी श्री गुलाबचन्द जी बोथरा प्रधान थे। सन् 1956 में वाचस्पति गुरुदेव ने वहाँ पर चातुर्मास किया था। वह उनकी स्मृति में धरोहर-रूप में सुरक्षित था। उसी वर्ष उन्होंने श्रमण संघ के प्रधानमंत्री पद से त्याग-पत्र दिया था। गुरुदेव ने जाते ही सारे जयपुर को सम्मोहित कर दिया। दो बातें लोगों को काफी आकर्षित कर रही थी। एक गुरुदेव की अद्‌भुत स्मरण-शक्ति, दूसरी सामायिकों पर अधिकाधिक जोर। गुरुदेव ने वहाँ के करोड़पति, अरबपति धनाढ्य सेठों

की कभी जी-हजूरी नहीं की, न ही सामान्य कोटि के श्रावकों की उपेक्षा की। वहाँ की सामाजिक व्यवस्थाओं से भी अलिप्त रहे। वहाँ के श्रावकों के सामने सेवा-कार्य में एक समस्या आई कि हरियाणा, पंजाब, दिल्ली से आने वाले दर्शनार्थियों को प्रातःकालीन नाश्ता दें या नहीं। उनकी पुरानी व्यवस्था नाश्ता देने की नहीं थी। राजस्थान में प्रवचन के बाद ही नाश्ता और भोजन देने का रिवाज है। उत्तरी भारत में सुबह ही नाश्ता दे देते हैं। श्रावकों ने गुरुदेव के समक्ष अपनी बात रखी और कहने लगे कि यदि आपका संकेत हो, तो हम नाश्ते की व्यवस्था कर देंगे। गुरुदेव ने फरमाया, 'ऐसे कार्यों में हमारा कोई हस्तक्षेप नहीं है। आप वही कार्य करें, जिससे बाद में कोई चर्चा या विवाद न बने'। वहाँ के व्यवस्थापकों ने अपनी पूर्व परम्परा ही कायम रखी। गुरुदेव के चातुर्मासों की सदा से ही विशेषता रही है कि मुनियों के नाम से किसी भी प्रकार का कोई खर्च नहीं होता। पोस्टकार्ड, लिफाफा, पोस्टर, पुस्तक, अखबार, दवाई, पण्डित, मास्टर का कोई खर्चा नहीं किया जाता। दर्शनार्थी बंधुओं के लिए घर में बारी चलती है तथा रात्रि-भोजन व हरी सलाद पर पाबन्दी रखी जाती है।

राजस्थान में धर्म को बूढों के लिए माना जाता है। वहाँ युवक केवल पर्यूषणों में ही शास्त्र सुनने आते हैं। पर उसी राजस्थान की राजधानी का स्वरूप गुरुदेव के चातुर्मास में बदला हुआ था। हजारों युवक सामायिकें करके बैठने लगे। उन्होंने पैण्ट वाली सामायिकें छोड़कर धोती वाली सामायिक शुरू की। उस चातुर्मास में गुरुदेव ने लघु मुनियों के संस्कृत अध्ययन की भी व्यवस्था की। प्रबुद्ध मुनियों के लिए विशेषतः श्री शास्त्री जी म. के लिए दिगम्बर समाज के प्रकाण्ड पंडित वयोवृद्ध श्री चौनसुखदास जी की सेवाएँ ली। लाल भवन में स्थित 'विनयचन्द ज्ञान-भंडार' का भी प्रचुर उपयोग किया। वहीं रत्न-निर्मित यन्त्र-पट्टक देखे, जो लाखों रु. की कीमत के थे।

जयपुर तपस्याओं का घर माना जाता था। वहाँ दो, चार या पाँच मास-खमण प्रतिवर्ष हो जाते थे। गुरुदेव के चौमास से पूर्व वहाँ अधिकतम आठ मासखमण एक चातुर्मास में हुए थे। श्वेताम्बरों की तीनों सम्प्रदायों

में कहीं भी मास-खमण हो, सब मिलकर महोत्सव मनाते हैं। तपस्वी की शोभा यात्रा भी सामूहिक रूप से निकलती है और तीनों के ही धर्म-स्थानों पर जलूस जाता है। गुरुदेव की प्रेरणा से उस वर्ष वहाँ 13 मासखमण हुए। एक मूर्तिपूजक बहन के हाथ पैर जुड़े हुए थे, उसने भी मासखमण किया। वह अपने मुनियों से पचक्खाण लेने की बजाए गुरुदेव से ही लेती थी। श्री सज्जनराज जी कुम्भट ने जोड़े-सहित मासखमण करके सबको चकित कर दिया। गुरुदेव ऐसे हर किसी उपलक्ष्य पर सामायिक और शीलव्रत की सौगंध (नियम) दिलाते थे। पर्यूषणों में लाल भवन छोटा पड़ने से 'सुबोध कालेज' के विशाल प्रांगण में प्रवचन हुए। वहाँ शाम के प्रतिक्रमण के नजारे ने गुरुदेव को विशेष प्रभावित किया। सुश्रावक श्री बंशीलाल जी जरगड़ की बुलन्द आवाज दो-दो हजार की भीड़ में भी स्पष्ट सुनाई देती थी। 'हुआ संवत्सरी रा पारणा, छूटा साधुजी रा बारणा' इस कहावत के विपरीत संवत्सरी के बाद भी गुरुदेव का धर्म-दरबार खचाखच भरा रहा। गुरुदेव के लिए सबसे सुखद प्रसंग ये रहा कि उनके सुशिष्य श्रद्धेय श्री शांति मुनि जी म. ने भी वहाँ मास-खमण किया। पूज्य श्री मयाराम जी म. के संघ में अच्छे-अच्छे कई तपस्वी संत हुए, परन्तु तपस्वी श्री केसरा सिंह जी म. के बाद लम्बी तपस्याओं पर मानो बंदिश-सी लग गई थी। जयपुर की जलवायु ने ये करामात भी कर दिखाई। वहाँ के दिन गर्म और रातें ठण्डी होती हैं। दिन गर्म होने से पानी पिया जाता है और रातें ठण्डी होने से नींद में सुविधा रहती है। तपस्वी की सेवा कैसे की जाती है, इसके आदर्श उदाहरण गुरुदेव थे।

महाराज श्री जी के पारणे पर जयपुर श्री-संघ में भारी उत्साह था। लोगों ने समारोह में सुविधा-हेतु ध्वनि-वर्धक यन्त्र लगाने का विचार बना लिया। स्वयं गुरुदेव की शुरू से ये व्यवस्था रही है कि उनके सन्त माइक में नहीं बोलते हैं, तथा जिस सभा में कोई साधु-सती माइक में बोले, तो उसमें बैठते भी नहीं है। यदि गृहस्थ-वर्ग अपनी सुविधानुसार माइक का प्रयोग करे, तो उसमें आपत्ति नहीं करते। गुरुदेव ने लोगों को अपनी व्यवस्था समझा दी। पारणा-समारोह के दिन प्रातः ही संघ के मान्य श्रावक

श्री स्वरूपचन्द जी नौलखा गुरुदेव के पास आए और निवेदन करने लगे कि 'गुरुदेव! लाल भवन में आज तक कभी भी लाउडस्पीकर का प्रयोग नहीं हुआ है। यदि लगता है, तो आपके सान्निध्य में प्रथम बार ही ऐसा होगा'। गुरुदेव ने उनको अपनी पूर्वोक्त व्यवस्था समझा दी। वे समझ कर चले गए, पर बाद में गुरुदेव ने प्रधान श्री बोथरा जी एवं मंत्री श्री चोरड़िया जी से परामर्श करके उनको निर्देश दिया कि हमारे समक्ष एक उज्ज्वल परम्परा का खण्डन मत कीजिए। गुरुदेव के इस संकेत से माइक का कार्यक्रम रद्द हो गया। उस रोज राजस्थान विधान-सभा के अध्यक्ष श्री निरंजन देव जी भी प्रवचन-सभा में पधारे थे। वे साधारण श्रोताओं की पंक्ति में ही बैठे। गुरुदेव ने मासखमण के पूरे होने पर 500 तेलों की अपील की थी, जिसे श्रावकों ने 800 तक पहुँचा कर पार किया।

तपस्वी भाई बहनों के जलूस जब लाल भवन आते, तो गुरुदेव पहले ही श्रावकों को निर्देश दे देते थे कि कोई फोटोग्राफर लाल भवन के अंदर प्रवेश न करे। जितने भी जलूस वहाँ आए, गुरुदेव ने उठकर एक भी जलूस नहीं देखा। अपने संतों को भी ऐसी ही हिदायत उन्होंने दे रखी थी।

श्री शांति मुनि जी की तपस्या के दौरान तथा पारणे पर दर्शनार्थी बन्धुओं का विशेष आगमन हुआ। सामाजिक व्यवस्था तो पर्याप्त थी, पर श्री उग्रसैन जी बोथरा ने व्यक्तिगत रूप से भी सेवा का दायित्व वहन किया। उनकी धर्मपत्नी सुश्राविका लाड़बाई आदर्श जैन महिला के निदर्शन के रूप में जानी जा सकती हैं। कई मासखमण कर चुकी थी। उन दिनों एकान्तर तप चल रहा था। गुरु-भक्ति और तत्व-ज्ञान दोनों का समन्वय उनमें था। उनकी एक प्रतिज्ञा थी कि जब तक क्षेत्र में विराजित साधु-साध्वियों की गोचरी नहीं होती, तब तक वे पारणा भी नहीं करती थी। वर्षा आदि के कारण यदि मुनिराज आहार को नहीं उठते, तो उसे व्याकुलता-सी बनी रहती। वर्षा रुकने के बाद जब उसे ज्ञात हो जाता कि आहार आ गया है, तब ही वह अपने मुँह में कुछ डालती।

श्री शांति मुनिजी म. के पारणे में वहाँ के मूर्तिपूजक संप्रदाय के श्रावक अमरचन्द जी का विशेष परामर्श लिया गया। वह श्रावक जी बहुत वर्षों से पूर्ण मौन धारण किए हुए थे। अतः स्लेट पर लिखकर पारणे की विधि बताते थे। शरीर में दुग्ध आदि प्रतिक्रिया न करें, इसलिए उन्होंने पारणे में 'अम्बर' दिलवाया था।

जयपुर में दो श्रावक श्री लाभचन्द जी पालावत और उमरावमल जी ढड्ढा। स्थूल देह के धनी थे। एक का रंग कृष्ण और एक का रंग गोरा था। गुरुदेव उन्हें मजाक में 'काला हाथी,' 'गोरा हाथी' कहकर पुकारते, तो सभा में एक मधुर रंग बरसने लगता था। अनेक मधुर प्रसंगों से भरपर जयपुर-प्रवास का एक प्रसंग ऐसा भी रहा, जिसका स्वाद कषैला और कटु रहा। संवत्सरी के कुछ दिनों के बाद किसी सिरफिरे भाई ने समाज में ये कुत्सित चर्चा चला दी कि 'श्री सुदर्शन लाल जी म. के दो संतों ने बालों का लोच नहीं किया, बल्कि उस्तरे से बाल साफ किए हैं। वर्ना इतनी जल्दी बाल दोबारा नहीं आते'। गुरुदेव जी म. ने सकल समाज के समक्ष इसका प्रतिवाद किया। सकल समाज को इस विषय में कोई सन्देह नहीं था। उस सम्बन्धित व्यक्ति ने भी अपनी भूल को स्वीकारा। जब 6 महीने बाद होली चौमासी पर मुनियों के लोचों का विचार बना, तब जयपुर समाज को समाचार भिजवाया गया कि आप प्रत्यक्ष देख सकते हैं। लोच सार्वजनिक रूप से किया गया। यद्यपि वह चर्चा दस-बीस व्यक्तियों तक सीमित थी और दो-चार दिन बाद पूर्णतः बंद भी हो गई, पर गुरुदेव के मानस-पटल पर एक अव्यक्त-सी खरौंच बना गई। उन्हें लगा कि राजस्थानी सम्प्रदायवाद का कुचक्र कभी भी किसी की प्रतिष्ठा के साथ खिलवाड़ कर सकता है। उन्हीं दिनों पं. श्री समर्थमल जी म. एवं श्री नाना लाल जी म. के बीच भी शीत-युद्ध की स्थिति बनी हुई थी। राजस्थान का वातावरण सरगर्म था। अतः राजस्थान के अग्रिम विचरण के प्रति उत्साह मंद पड़ गया।

जयपुर-वासियों ने संयम और प्रभावना, आचार और प्रचार का अद्भुत समन्वय गुरुदेव के जीवन में देखा। वहाँ के बड़े-बड़े श्रावकों ने

ये माना कि इस चौमास में जितने नए आदमी लगे हैं, ऐसे पहले कभी नहीं लगे। वहाँ के धनाढ्य सेठ श्री हजारी लाल जी बोथरा लाल भवन में नहीं आते थे। प्रकृति अच्छी थी, पर धर्मरुचि नहीं थी। गुरुदेव से इतने प्रभावित हुए कि रोज आकर सामायिक करने लगे। उनको देखकर लोगों ने दाँतों तले अंगुलियां दबा ली। 80 वर्षीय श्रावक श्री कन्हैयालाल जी खीसरा ने कहा कि 'मैंने यहाँ बड़े-बड़े आचार्यों की रौनकें देखी हैं। बाहर के दर्शनार्थी भी बहुत देखे हैं, पर स्थानीय रौनकें इतनी बड़ी संख्या में पहले कभी नहीं देखी'।

एक दिन प्रवचन में गुरुदेव ने फरमाया था कि "आगे-आगे ऐसा युग आएगा, जब स्थानकों में फोन फिट हो जाएँगे। साधु आहार को जाने से पहले घरो में पूछेगे-हैलो, आहार तैयार है? फिर गृहस्थ फोन करके आहार तैयार होने का समय बताएँगे।" उस समय, उस वातावरण में यह वाक्य विश्वसनीय नहीं लगता था, पर आज यह कटु सत्य बनता जा रहा है।

जयपुर संघ ने दो बार अभिनंदन-पत्र गुरुदेव को देने चाहे। एक बार श्री शांति चन्द्र जी म. के मासखमण पर, दूसरी बार गुरुदेव के विहार के समय। गुरुदेव ने दोनों ही बार बिना छूए समाज को लौटा दिए।

गुरुदेव के जयपुर-चातुर्मास की सुगन्ध राजस्थान में दूर-दूर तक पहुँच चुकी थी। इसलिए मारवाड़, मेवाड़ की कई विनतियाँ भी आई, पर गुरुदेव ने वापिस लौटने का मन बना लिया। जयपुर से अलवर की ओर विहार हुआ। मार्ग में वैराट में एक परित्यक्त जैन मंदिर का कला-वैभव देखा। प्रायः सभी पड़ावों पर स्कूलों में बालकों को उद्बोधन देने का मौका लगा। उसके पीछे मुख्य प्रेरणा और प्रयत्न श्री चुन्नी लाल जी ललवानी जी का रहा, जो बड़े उत्साही और सक्रिय कार्यकर्ता थे।

अलवर पधारने पर वहाँ चातुर्मास का विचार बना। चातुर्मास से पूर्व राजस्थानी राजनीति (सम्प्रदायवाद) से मुक्त कुछ इलाका देखा। उस समय हिण्डौन, भरतपुर, श्री गंगापुर सिटी, सवाई माधोपुर और टोंक ये पाँच जिले आर्थिक दृष्टि से काफी पिछड़े माने जाते थे। इन्हें ही गुरुदेव ने फरसने

का मन बनाया। इस क्षेत्र में अधिकांशतः पल्लीवाल और पोरवाल ये दो जातियाँ जैनधर्म को मानती हैं। कहीं-कहीं ओसवाल और श्रीमाल भी थे। टौंक के पास एक दो गाँव में अनुसूचित जनजाति 'मीणा' भी जैन धर्म अपनाए देखी। सारा इलाका बेहद गरीबी की लपेट में था। आमदनी के स्रोत नगण्य थे। जमीनें थी, पर पानी के अभाव में उपज नहीं थी। घरों में वस्त्र, भोजन अति साधारण था। समृद्ध माने जाने वाले किसी एकाध परिवार के पास ही गाय-भैंस थी, वर्ना बकरी ही दूध-प्राप्ति का स्त्रोत थी। मकानों के फर्श गाँवों में तो शत-प्रतिशत कच्चे थे। यदि भूल से किसी बच्चे के हाथ से फर्श पर दूध बिखर जाए, तो उसे ही चाट लेते थे। शहरों में मकान ठीक थे। दुकानदारी से कुछ आमदनी भी थी। इस इलाके में कभी श्री माधवमुनि जी म. का विचरण होता था। उनके विषय में जनश्रुति थी—सौ साधो, एक माधो। वे ज्योतिष के महान् पण्डित थे, परन्तु अपने अन्तिम समय के बारे में नहीं जान सके थे। जयपुर से विहार करके किसी गांव से दूदू की ओर जा रहे थे कि गाडौता गांव में स्वर्गवास हो गया। उनके शिष्य उनके अंतिम संस्कार के लिए लोगों को तलाशते रह गए, पर कोई नहीं मिल पाया। उनके बाद यह इलाका पूर्णतः उपेक्षित था। गुरुदेव ने उसकी संभाल ली। लोगों को कोई 'नाथ' मिला। वे विनति कर रहे थे कि आप चार-पाँच साल इस इलाके में लगा दो, सारा इलाका आपकी छत्र-छाया में आ जाएगा। पर गुरुदेव की अपनी मजबूरी थी। पल्लीवालों की धर्म-निष्ठा बड़ी समन्वयवादी थी। प्रायः सभी गाँवों में श्वेताम्बर जैन मंदिर हैं और सब जैन वहाँ जाते हैं। परन्तु मुनियों में वे स्थानकवासी मुनियों को ही मानते हैं, मूर्तिपूजक मुनियों को नहीं। गुरुदेव ने उनको सामायिक का सम्बल दिया। गुरुदेव की प्रवचन-शैली से मन्त्र-मुग्ध होकर कई मुख्याध्यापकों ने अपने स्कूलों में गुरुदेव का प्रवचन कराया। उस पूरे इलाके में कहीं भी दिगम्बर जैनों का कोई घर दिखाई नहीं दिया, पर आश्चर्य ये कि हिण्डौन से आगे 'महावीर जी' अतिशय-क्षेत्र दिगम्बर जैन समाज के अधिकार में है। उसका संचालन जयपुर से होता है। गुरुदेव भी अपनी विहार-यात्रा के क्रम में महावीर जी पधारे। मंदिर में गए, पर

बिना रुके आगे चल दिए। वहाँ दिल्ली का एक श्रावक मुखपत्ती लगाकर सामायिक कर रहा था। उसे देखकर सुखद आश्चर्य हुआ। उस जनपद में कई गाँवों में पहुँचने के लिए उँची-उँची पहाड़ियाँ भी पार करनी पड़ी। कई बार गिरते-गिरते भी बचे।

'महावीर जी' के बाद पोरवालों का इलाका शुरू हुआ। वे पल्लीवालों की अपेक्षा कुछ समृद्ध थे। उन पर स्थानकवासी धर्म का अधिक असर था। उनका एक संगठन है। सवाई माधोपर और टोंक इन दो जिलों के 700-800 परिवार उसमें थे। टोंक शहर में ओसवाल हैं। संगठन का केन्द्र सवाई माधोपुर-चौथ का बरवाड़ा है। गुरुदेव तब सवाई माधोपुर विराजित थे। वहाँ पोरवालों का एक शिष्ट-मण्डल महावीर-जयन्ती पर खातौली गाँव में पधारने की विनति लेकर आया। उस दिन वहाँ पर पोरवालों का अधिवेशन होना था, जिसमें चार-पाँच हजार लोगों के आने की उम्मीद थी। उनकी भाव-प्रवण विनति को सुनकर गुरुदेव प्रवचन-सभा में ही स्वीकृति फरमाने वाले थे कि सामने बैठे एक वृद्ध श्रावक ने अंगुलि हिलाकर विनति न मानने का इशारा किया। गुरुदेव बात को ताड़ गए। प्रवचन में फरमा दिया कि बाद में सोचकर जवाब देंगे। बाद में उस हितैषी श्रावक को बुलाकर सारी स्थिति पूछी। उसने बताया कि "वहाँ पर अधिवेशन के बहाने चुनावों का दंगल छिड़ेगा। इस इलाके में प्रतिवर्ष किसी एक स्थान पर पोरवालों का अधिवेशन होता है, उसमें अध्यक्ष का चुनाव होता है। लोग पानी पीने के लिए लोटे साथ में लाते हैं, पर बाद में वही लोटे लड़ने और सिर फोड़ने के काम आते हैं। आप श्री जी इस इलाके में प्रथम बार आए हो, कहीं आपकी निर्मल छवि धूमिल न हो जाए, इसलिए मैंने मना किया था"। गुरुदेव ने सारी स्थिति को समझ लिया और फिर उस शिष्ट-मण्डल को बुलाकर समझाया कि 'हम पंजाबी साधु हैं। नए-नए यहाँ आए हैं। आपके यहाँ चुनाव हैं और चुनाव में लड़ाई होती है। पर यदि मेरी एक बात मानो, तो ही मैं आपके यहाँ जा सकता हूँ'। श्रावकों के हाँ भरने पर गुरुदेव ने फरमाया कि 'आप एक ग्रुप से सम्बन्ध रखते हो। हम आपकी विनति पर जाएंगे, पर पहले आपको ये विश्वास दिलाना

होगा कि आप सर्वथा शान्त रहेंगे।' सबने शान्ति रखने का प्रण लिया। तब गुरुदेव कुछ मुनियों को सवाई माधोपुर छोड़कर खातौली के लिए रवाना हुए। सवाई माधोपुर में उन दिनों श्री रामनिवास जी म. विराजमान थे। वे अच्छे मिलनसार थे। कोटा सम्प्रदाय के थे, पर अकेले रह गए थे। किसी जमाने में कोटा-सम्प्रदाय की पूरे मारवाड़-मेवाड़ में तूती बोलती थी। उस सम्प्रदाय में 27 मुनिराज महाविद्वान थे। पर धीरे-धीरे सम्प्रदाय की शक्ति क्षीण हुई और अकेले वयोवृद्ध श्री रामनिवास जी म. ही शेष रह गए। वे अपने भविष्य के प्रति काफी चिन्तित थे। बाद में वे आचार्य-प्रवर श्री आनन्द ऋषि जी म. की शरण में गए और समाधि-पूर्वक अपना जीवन-यापन किया।

गुरुदेव खातौली पधारे। स्थानक छोटी थी। गर्मी भी काफी थी। दो दिन का अधिवेशन था। चार पाँच हजार की भीड़ थी। गुरुदेव की प्रभावक वाणी गूंजी, "हम पंजाबी साधु हैं। आपसे एक चीज माँगते हैं। बोलो, दोगे"? सारी जनता ने हाथ खड़े किए। गुरुदेव का जादू काम करने लगा था। फिर बोले, "मैं चाहता हूँ कि इस साल जो चुनाव हो, वह सर्व-सम्मति से हो। समाज एक ही व्यक्ति को पसन्द करके अध्यक्ष बनाए। चुनाव में दो व्यक्ति खड़े न हों।" जनता ने गुरुदेव की बात का समर्थन किया। पार्टीबाज लोग देखते रह गए। इलैक्शन की बजाय एक आदमी का सलैक्शन हुआ। कुश्तला गाँव के वयोवृद्ध श्रावक देवनारायण जी अध्यक्ष चुने गए। उनकी हाथी पर सवारी निकाली गई। सारी जनता सारी समाज ने गुरुदेव का आभार माना कि हमारी स्मृति में प्रथम बार दी शान्तिपूर्ण चुनाव हुए हैं। ऐसे चुनाव, जिनमें कोई लोटे नहीं चले, किसी के सिर से खून नहीं बहा। वे लोग उधर पधारने की विनति लिए गुरुदेव के समक्ष गिड़गिड़ाते रहे, पर समय का अभाव था। वहाँ से टोंक पदार्पण हुआ।

टोंक वह नगर है जहाँ हुकम गच्छ' के प्रतापी आचार्य श्री श्रीलाल जी म. का जन्म हुआ था। पूज्य गुरुदेव जी म. वहाँ भी पधारे। उनका घर भी देखा। तत्रत्य श्रावकों ने बताया कि श्री श्रीलाल जी म. का विवाह

हो चुका था, पर वे दीक्षा के लिए कटिबद्ध थे। पारिवारिक जन अनुमति नहीं दे रहे थे। एक बार कमरे में बैठे थे। पत्नी अन्दर आ गई। परिवार वालों ने बाहर से दरवाजा बन्द कर कुण्डी लगा दी। पत्नी आग्रह करने लगी। जब कोई विकल्प नजर नहीं आया, तब उन्होंने खिड़की से नीचे छलांग लगा दी। पैर में स्थायी रूप से चोट आई, पर सयंम के मार्ग पर अविचल रहे। वह खिड़की सन् 1969 तक भी उस वीर पुरुष की कुर्बानी की गवाह थी, जिसे गुरुदेव जी म. ने देखा। उल्लेखनीय है कि इस महापुरुष ने अपने हाथ से सौ से ऊपर दीक्षाएँ दी, पर किसी को अपना शिष्य नहीं बनाया।

गुरुदेव टोंक से वापिस मुड़ लिए और बहतेड़, श्री गंगापुर होते हुए भरतपुर पधारे। रास्ते में पता चला कि मूनक में पूज्यपाद श्री नेकचन्द जी म. का देवलोक-गमन हो गया है। उन्हें भी अंतिम समय में संथारा-पूर्वक समाधिमरण कराने का श्रेय तपस्वी श्री बदरी प्रसाद जी म. को ही मिला। गुरुदेव जी म. तपस्वी श्री नेकचन्द जी म. के प्रति बड़े श्रद्धालु थे। उनकी शान्ति की प्रशंसा करते थे। उनके संथारे की बात सुनकर गुरुदेव काफी भावुक हो गए। मुनिसंघ पुनः 14 की संख्या पर आ गया।

सन् 1969 का चातुर्मास अलवर हुआ। ये चातुर्मास गुरुदेव एवं क्षेत्र, दोनों के लिए चिरस्मरणीय रहा। गुरुदेव एवं रौनक, ये दोनों पर्यायवाची बन गए थे। श्रावकों के साथ-साथ सन्तों में भी तपस्याओं का ठाठ रहा। प्रबुद्ध श्रावक श्री खुशहाल चन्द जी से मुनियों की कर्मग्रन्थ-विषयक चर्चाओं से क्षेत्र सुवासित रहता था। श्री शास्त्री जी म. की आगम-रुचि को तृप्त करने के लिए गुरुदेव ने उन्हें भगवती सूत्र की वाचना दी। उस समय श्रावक श्री खुशहाल चन्द जी तथा कुछ तत्वज्ञ श्राविकाएँ भी नियमित रूप से लाभ लेती रही। वाचना के साथ-साथ पृच्छना का भी दौर चलता। कोई विषय उलझ जाता, तो रोहतक में विराजमान गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. से प्रश्न लिखकर उत्तर मंगवा लिया जाता। उनका प्रत्येक उत्तर सटीक और सुगम होता था। उनके लिखे गए वे उत्तर संघ की अनमोल थाती के रूप में सुरक्षित हैं। श्री इन्द्रचन्द जी संचेती जैसे

गुरुभक्त श्रावकों को गुरुदेव के रूप में जीवन का आलम्ब मिला। उसी वर्ष गाँधी जी की जन्मशती मनाई जा रही थी। गुरुदेव गाँधी जी की विचार-धारा के समर्थक थे। उनके प्रसंग एवं सक्तियाँ आदि सनाकर समाज को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते थे। गुरु नानक देव का 400 साला उत्सव भी उसी समय चल रहा था। उस उपलक्ष्य में अलवर में कई मील लम्बा जलूस निकला। कई घण्टे तक 'महावीर भवन' के मुख्य द्वार के आगे से गुजरता रहा, पर गुरुदेव अपने आसन से एक बार भी उठ कर जलूस की ओर नहीं गए। उनकी अद्भुत निस्पृहता को देखकर मैं (बालक जय) भी उतनी देर तक उनके ही चरणों में बैठा रहा। अलवर के युवराज भी प्रवचन सुनने आए तथा जैनत्व के संस्कार लेकर गए। उन्हीं दिनों प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने पूर्व राजाओं के प्रिवीपर्स (विशेषाधिकार तथा पेंशन) समाप्त किए थे, इससे वे कुछ निराश थे। गुरुदेव ने उनको संसार का स्वरूप बताकर सान्त्वना दी। एमरजैंसी के दौरान उस युवराज ने निराशा में आत्महत्या की।

अलवर से गुरुदेव पुनः अपनी जन्म-भूमि और कर्म-भूमि हरियाणा की ओर मुड़े। हरियाणा उनकी बाट जोह रहा थ। दादरी, भिवानी। हिसार, हाँसी का रास्ता लिया। केन्द्र बनने का श्रेय मिला गोहाना को। मुनि-मिलन का दृश्य बड़ा सुहावना था। प्रवचनों में समवसरण का वातावरण था। गुरुदेव जी म. के स्वागत में गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने एक गीतिका **"सुदर्शन मुनि जी श्री संघ के शृंगार हैं, शीर्षमणि हैं और उदयों के हार हैं"** सुनाई थी, जो उनके काव्य-जगत् का बेजोड़ नमूना है। उन दिनों स्थानकवासी समाज आंदोलन में से गुजर रहा था। उपाध्याय कवि श्री अमर मुनि जी म. ने अपने लेखो में आगमों को चुनौती दी। लोच जैसी सर्वमान्य परम्परा का खण्डन किया तथा बिजली को अचित्त सिद्ध करने का तर्क दिया। उनकी बातों का उत्तर अनेक मंचों से दिया गया। हमारे संघ के प्रमाण-पुरुष तो पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. रहे हैं। अतः पूज्य गुरुदेव जी म. के निर्देश पर आगम-रत्नाकर श्री रामप्रसाद जी म. ने 'विद्युत् की सचित्तता' पर एक सुविस्तृत वैज्ञानिक लेख लिखा, यद्यपि वह

प्रकाशित नहीं हुआ। उन दिनों गुरुदेव करुणा-प्रधान प्रसंगों को अधिक सुनाते थे, जिनमें अधिकतर श्रोता प्रवचनों में रोने लग जाते थे। उस साल गुरुदेव हरियाणा के छोटे-छोटे गाँवों में भी पधारे। जिस गाँव में एक भी जैन घर था, उस को भी अपनी चरण-रज से धन्य किया।

सन् 1970 के चातुर्मास के लिए बड़ौत मण्डी की जोरदार विनति थी। गुरुदेव का भी स्वीकृति फरमाने का विचार बन रहा था। तभी सूचना मिली कि बड़ौत शहर से पूज्यपाद जैन-धर्म-दिवाकर आचार्य-प्रवर श्री आनन्द ऋषि जी म. सा. की विनति हुई है तथा वहाँ चातुर्मास की संभावना है। यद्यपि उनकी दिल्ली चाँदनी चौंक चातुर्मास की भी विनति थी, पर उन दिनों उपाध्याय कवि अमर मुनि जी एवं साध्वी चन्दना जी की आगम-विरुद्ध, आधुनिकता-परक गतिविधियों के कारण आचार्य श्री जी देहली से बचना चाहते थे। उनकी ओर से बड़ौत शहर को आश्वासन मिल गया था। बड़ौत मण्डी समाज को भी गुरुदेव की ओर से आश्वासन मिल चुका था। अब दोनों समाजों में अहं के संघर्ष की नौबत आ रही थी। मण्डी वाले हर कीमत पर गुरुदेव का चातुर्मास लेने के लिए कृतसंकल्प थे। पानीपत के पास इसराणा गाँव में गुरुदेव ने मण्डी समाज को स्पष्टतः समझा दिया कि “मैं कभी आचार्य श्री जी की प्रतिद्वन्द्विता में चातुर्मास नहीं करूँगा। आचार्य श्री जी बड़ी मुश्किल से प्रथम बार ही इधर पधारे हैं। हम भी उन्हें पूज्य मानते हैं, अतः आप उनका ही चातुर्मास कराएँ। हम तो इधर विचरते ही हैं, फिर कभी देखा जाएगा। आप सब शांत रहें। चातुर्मास को प्रतिष्ठा का प्रश्न न बनाकर शहर की ब्रादरी को सहयोग दें।” मण्डी श्री-संघ उस समय इतना उत्तेजित था कि किसी भी कीमत पर शहर को मात देनी है। इसलिए वे कहने लगे, हम मुकाबले में साध्वी चंदना जी का चौमासा करवाएंगे। इस आग्रह से भी गुरुदेव ने उनको समझा-बुझाकर हटाया। गुरुदेव के इस कथन से मण्डी समाज में मायूसी तो हुई, पर गुरु म. के स्पष्ट निषेध के कारण उनको चुप रहना पड़ा। उससे शहर समाज ने भी गुरुदेव का कोटि-कोटि आभार माना। पूज्य गुरुदेव ने उस चातुर्मास-परिवर्तन को सदा ही सकारात्मक रूप में लिया।

वे अक्सर फरमाया करते कि यदि उसी वर्ष चातुर्मास हो जाता तो हमें कभी भी श्री नरेश मुनि जी एवं श्री राजेन्द्र मुनि जी जैसे महान् सन्तों की प्राप्ति नहीं हो पाती। ये दोनों अगले वर्ष सन् 1971 के बड़ौत चातुर्मास में गुरुदेव के श्री चरणों में आए।

बड़ौत मण्डी के चातुर्मास-निषेध का समाचार फैला, तो अन्य स्थानों की विनतियों का जोर बढ़ा। उनमें दिल्ली चाँदनी चौंक अग्रणी था। पूरी दिल्ली चौमास के लिए पुकार रही थी। उस वर्ष दिल्ली की हवाओं में अश्रद्धा का जहर घुल गया था। लोग नई, पुरानी समाचारी के ताने-बाने में उलझे पड़े थे। गुरुदेव का दृष्टिकोण सदा से ही ये रहा है कि किसी विवाद में पड़े बिना अपनी सहज संयम जीवन-शैली से ही हर समस्या का प्रतिकार करना।

इसराणा में ही चाँदनी चौंक की समाज विनति लेकर उपस्थित हुई। गुरुदेव कुछ सोचना चाहते थे, अतः फरमाया कि मैं शीघ्र निर्णय नहीं लूँगा। थोड़ी प्रतीक्षा करो। समाज फिर कुछ दिन बाद मतलौड़ा में अपनी भावना प्रस्तुत करने आई। गुरुदेव ने महावीर-जयन्ती पर समालखा में घोषणा करने का संकेत दिया। इसी बीच गुरुदेव ने कुछ प्रबुद्ध श्रावकों से भी दिल्ली के माहौल के बारे में विचार-विमर्श किया। फगवाड़ा (पंजाब) के श्री टेकचन्द जी से विशेष सलाह ली और उन्होंने निवेदन किया, 'गुरुदेव दिल्ली में चौमासा करो' अन्ततः सन् 1970 के चातुर्मास का विचार चाँदनी चौंक दिल्ली में बना। उस वर्ष चातुर्मास से पूर्व शेष-काल में गुरुदेव और श्री तपस्वी जी म. का तीन बार गोहाना, सफीदों और सोनीपत में मिलन हुआ। सफीदों में पूज्यपाद श्री रामप्रसाद जी म. के प्रवचनों से गुरुदेव इतने अधिक प्रभावित हुए कि एक दिन फरमाने लगे, 'रामप्रसाद! तेरे प्रवचन तो दिमाग को हिला देते हैं। स्मरण-शक्ति का प्रसंग चला तो दोनों ही एक दूसरे की स्मरण-शक्ति को अधिक बताने लगे। दोनों की तीव्र स्मरण-शक्ति की जब परस्पर मजाक के मूड में प्रतियोगिता हुई, तो पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. ने उदाहरण देकर अपनी बात मनवा ही ली।

सोनीपत-मिलन के समय लुधियाना से 'आत्म-रश्मि' परिवार गुरु-चरणों में आया और पत्रिका में लेख प्रकाशित करने में मदद मांगी। पूज्य गुरुदेव ने प्रकाशन के विषय में अपनी सांघिक स्थिति समझाई तथा लेख आदि भेजने में अपनी असमर्थता प्रकट की।

गुरुदेव के लिए दिल्ली सदा से ही चरणों में झुकी रही है। उस वर्ष तो दिल्ली की फिजा कुछ और ही थी। त्रिनगर (शांति नगर) के पैर जम चुके थे। वीर नगर भी बस गया था। शक्ति नगर शक्ति का केन्द्र बन चुका था। वहाँ पूज्यपाद पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. सेठ प्यारेलाल जैन बीड़ी वालों की कोठी में विराजमान थे। उन्हें सीढ़ियाँ चढ़ने की मनाही थी, अतः स्थानक खाली था। पूज्य गुरुदेव स्थानक में विराजे। पूज्य श्री प्रेमचन्द म. कई वर्षों से माइक में बोलते थे। संयम- सुमेरु श्री मयाराम जी म. के एक ही गण में ये दो धाराएँ थी। गुरुदेव ने उनके चरणों में श्री जम्बू प्रसाद जी की मार्फत सविनय अर्ज भिजवाई कि 'कल रविवार का प्रवचन आप ही फरमाएँ, हम स्थानक में ही रहेंगे, क्योंकि आप श्री जी माइक में बोलेंगे तथा हमें उस सभा में बैठना कल्पता नहीं हैं।' गुरुदेव के इस विनयपूर्ण व्यवहार से पंजाब-केसरी जी म. द्रवित हो गए। फरमाने लगे कि 'नहीं, आपको भी पधारना है। मैं माइक में नहीं बोलूँगा'। कई हजार की जनमेदिनी थी। दोनों का संयुक्त प्रवचन हुआ, जो कई घण्टे चला। लोग हैरान थे कि आचार्य श्री आनन्द ऋषि जी म. की सन्निधि में भी श्री प्रेमचन्द जी म. ने माइक नहीं छोड़ा, तो आज कैसे छोड़ दिया? इस प्रश्न का उत्तर उन्हीं के शब्दों में सुनिए, 'जग्गू के पोते! तेरी विनय ने मुझे मजबूर कर दिया। तेरी मेर और स्नेह के कारण मैं बिना माइक के बोला'।

इस प्रसंग पर सारे दिल्लीवासी इस बात के कायल हो गए कि स्वस्थ और स्नेहपूर्ण वातावरण की रचना कैसे की जाती है। वातावरण को बिगाड़ने वालों से भी उनका पाला पड़ा था और आज माहौल की सुन्दर संरचना करने वाले शिल्पकार को भी वे देख रहे थे।

दिल्ली के उपनगरों को फरसकर चातुर्मास के लिए गुरुदेव महावीर-भवन, चाँदनी चौंक पधार गए। उस भवन की परिधि में दृढ़ अनुशास्ता श्री छोटे लाल जी म. एवं सरलात्मा बाबा श्री जग्गू मल जी म. की आत्माएँ समाई हुई थी। वह विशाल प्रांगण आज गुरुदेव के ओजस्वी प्रवचनों से गुंजित होने लगा था। रविवार के प्रवचनों की व्यवस्था बारादरी की विशाल छत पर की जाने लगी। जब वह भी छोटी पड़ने लगी, तो कई बार ऊपर, नीचे दो स्थानों पर समवेत प्रवचन हुए। इन अधिक भीड़ों की वजह से धर्म-शिक्षा के पुराने कार्यक्रमों पर प्रतिकूल असर पड़ने लगा। मुनियों का अधिक ध्यान श्रावकों को 'दया पालो' कहने में लगने लगा और रचनात्मक कार्य पिछड़ते गए। ऐसे पिछड़े कि बाद तक भी प्रायः उपेक्षित-से ही रहे।

दिल्ली चातुर्मास से श्रावक-समाज को काफी सम्बल मिला। युवकों में धर्म-रुचि और सामायिक-रुचि बढ़ी। कान्धला में पूज्यपाद श्री रामप्रसाद जी म. चातुर्मास-काल में काफी अस्वस्थ हो गए थे। उनसे मिलना जरूरी था। इधर पूज्य आचार्य श्री आनन्द ऋषि जी म. भी बड़ौत चातुर्मास संपन्न करके राजस्थान लौटने के इच्छुक थे। रास्ता दिल्ली से होकर था। गुरुदेव उस भव्य आत्मा के दर्शनों के इच्छुक थे। पर उनका विचार था कि ऐसी जगह मिलन किया जाए, जहाँ श्रावकों का जमघट और उनका राजनीतिक दखल न हो। दिल्ली इसके लिए उपयुक्त नहीं थी। बड़ौत से आचार्य श्री जी का विहार हो चुका था। बागपत के पास खेखड़ा गाँव का चयन हुआ। वहाँ पर दिगम्बरों के सैंकड़ों घर थे। आचार्य श्री के पदार्पण से एक दिन पूर्व ही गुरुदेव वहाँ पधार गए और जैन धर्मशाला में रुके। अगले दिन सकल मुनि-संघ के साथ तीन कि. मी. तक गुरुदेव अगवानी में गए। आचार्य-प्रवर से मधुर मिलन हुआ। चारों आँखें नम हो गई। दो दिन परस्पर इकट्ठे रहे। अनेक विषय चर्चित हुए। दोनो ने एक दूसरे को निकट से देखा और समझा। गुरुदेव के स्पष्ट चिन्तन, विनय-शील व्यवहार और निष्कपट स्नेह से आचार्य श्री का मन गदगद हो गय। कितनी ही बार उनके मुखारविन्द से यह निकला **'सुष्ठु दर्शनं यस्य स सुदर्शनः'**

अर्थात् जिनके दर्शन मंगलकारी हैं, ऐसे श्री सुदर्शन मुनि हैं। वाचस्पति गुरुदेव के साथ अपने स्नेह-सम्बन्धों का अनेक बार उल्लेख किया। दोनों दिन साथ-साथ प्रवचन हुए। जहाँ आचार्य श्री जी ने 'माणुसत्तं' की बड़ी सुन्दर व्याख्या की, वहाँ गुरुदेव ने 'जमाने की हवाओं में न यूँ बहते चले जाओ, सभी कमजोरियाँ अपनी न यूँ सहते चले जाओ,' कविता गाकर संयम-मूलक परम्परा के प्रति अपनी दृढ़ आस्था व्यक्त की। गुरुदेव ने आचार्य-प्रवर को पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. द्वारा लिखित लेख 'विद्युत् अग्नि है' दिखाया तथा कुछ अंश पढ़कर भी सुनाए। वे बड़े प्रसन्न हुए। आचार्य श्री जी ने देखा कि श्री सुदर्शन मुनि जी म. में असीम कर्तृत्व शक्ति है, यदि इनकी सेवाएँ हमें मिल जाएँ, तो बहुत कुछ परिवर्तन किया जा सकता है। एक रात मधुर वार्ता के दौरान उन्होंने कहा, 'सुदर्शन मुनि जी, कुछ करो'। गुरुदेव ने अपनी ओर से हाथ बढ़ाते हुए कहा, 'भगवन्, आप तीन आने काम करो, तेरह आने हमारा सहयोग रहेगा'। आचार्य श्री जी को गुरुदेव का सकारात्मक उत्तर तो आनन्द दे गया, मगर अपनी आंतरिक विवशताओं को भी छिपा नहीं सके। कहने लगे 'मेरी कोई सुनता नहीं, मानता नहीं'। इस कथन के बाद और कुछ कहने को क्या रह जाता था? दो दिन के पश्चात् आचार्य श्री ने विहार किया। गुरुदेव पुनः दो-तीन कि.मी. तक छोड़ने गए। आचार्य श्री जी से मंगलपाठ सुनाने की विनति की, तो आचार्य श्री ने कहा कि आप मेरे संतों को सुनाओ। इस पर गुरुदेव ने कुछ हँसते हुए कह दिया कि 'भगवन! ये तो बनिया-वृत्ति हो गई'। इन शब्दों को सुनकर आचार्यश्री गम्भीर हो गए। गुरुदेव ने भी इसे महसूस किया। अतः उनकी अनुनय करने के लिए वे आचार्य श्री के उदार उदर (पेट) को सहलाने लगे। आचार्य श्री जी फरमाने लगे, 'सुदर्शन जी! मेरा पेट बड़ा है।' गुरुदेव ने अर्ज करी कि 'हुजूर! आपका पेट ही नहीं, दिल भी बड़ा है। इस पर आचार्यश्री जी प्रसन्न हो गए। सजल नेत्रों से मगंल-पाठ सुने गए और दोनों महापुरुष परस्पर के प्रति स्नेह और श्रद्धा का भाव लेकर विदा हुए।

गुरुदेव बड़ौत पधारे। मण्डी और शहर में कोई भेद नहीं रखा। मुनि-मिलन भी हुआ। बड़ौत मण्डी वालों की विनति पुनः जोर मारने लगी। उनका हक भी बनता था। यू.पी. विचरण का भाव बना। सभी मुनिराज मेरठ पधारे। मेरठ में गुरुदेव प्रथम बार ही आए थे। महान् आत्मा श्री शान्ति स्वरूप जी म. के दर्शन हुए। विचार-विमर्श भी हुआ। गुरुदेव के संयमी जीवन व ओजस्वी प्रवचन से मेरठवासी मन्त्र-मुग्ध हो गए। वहाँ से कांधला आए। वहाँ गुरुदेव ने अपना सन् 1971 का चातुर्मास बड़ौत मण्डी के लिए स्वीकृत किया।

जीवन की समरस बहती धारा के बावजूद गुरुदेव का अवचेतन मन किसी अनिष्ट की आशंका से ग्रस्त हुआ जा रहा था। 4-5 महीनों से बीच-बीच में कुछ ऐसे संकेत मिल रहे थे, जो अशुभ की सूचना दे रहे थे। जैसे-चाँदनी चौंक चातुर्मास में ऐसा स्वप्न दिखा था, मानों कोई सुन्दर दाँत टूट गया। मन पर हल्का-सा बोझ बना, पर फिर नार्मल।

बड़ौत से मेरठ-प्रवास के बीच बिनौली गाँव में श्री विनय मुनि जी म. ने गुरुदेव को कहा कि आज मुझे अज्ञात रूप से कोई आवाज सुनाई दी है कि मयाराम-गण के पुण्य में कमी आ गई है। इस कथन से भी मन कुंठित-सा बना।

कांधला के पास गंगेरू में ठहरे हुए थे। वहाँ सोते हुए स्वप्न में दो झलक दिखाई दी– 1. लोकसभा चुनावों में चौ। चरणसिंह की पराजय होगी, 2. एक सन्त का विनाश होगा। पहली अनुभूति से तो मन पर क्या बोझ होना था। पर दूसरी अनुभूति ने मन पर चिन्ता अवश्य बनाई। मगर स्पष्ट रूप से कोई विपरीत वातावरण दिखाई नहीं देता था। प्रकृति अवश्य भीतर ही भीतर कुछ करवट ले रही थी।

कान्धला में ही गुरुदेव के जीवन की प्रथम त्रासदी घटित हुई। गुरुदेव का तत्कालीन प्रथम शिष्य प्रमोद मुनि चारित्रहीनता का दोषी सिद्ध हुआ। घोर तपस्वी श्री बदरी प्रसाद जी म. के कुशल सहयोग से उसका संघ से निष्कासन किया गया। गुरुदेव को असहय मानसिक आघात लगा।

'चाट वो खाई है दिल ने, जो कभी खाई न थी'। उदास मन से गुरुदेव ने हरियाणा का विचरण किया। धीर-धीरे मन में पुनः स्फूर्ति आई। चातुर्मास हेतु बड़ौत पहुँचना था। बीच में यमुना नदी पड़ती थी। खेवड़ा गाँव के पास यमुना पर कच्चा पुल था। वहाँ पहुँच कर पता लगा कि पीछे से पानी आने के कारण पुल टूट गया। तुरन्त दिल्ली का रास्ता पकड़ा। सौ किलोमीटर का फेर पड़ा। समय बहुत कम था। दिल्ली पहुँचे। क्या गजब का प्रवास था कि दो दिन में ही सर्वत्र बसन्ती बहार आ गई। जनता का अन्तहीन सैलाब स्वयं में ही गरिमा, महिमा और श्रद्धा की दास्तान बता रहा था।

बड़ौत पधारे। श्रद्धा, आराधना और वैराग्य-भावना के नए-नए मनोरम रंग भरे जा रहे थे। परम गुरु भक्त ला. इलम चन्द जी जैन की धर्मपत्नी आदर्श सुश्राविका श्रीमती गुणमाला जैन का अप्रमत्त भाव से किया गया मासखमण तप मुनिराजों के लिए चिर-स्मरणीय रहा। चातुर्मास के प्रारम्भ में हिलवाड़ी ग्राम के सुश्रावक ला. त्रिलोक चन्द्र जी के पौत्र एवं श्री वकील चन्द जी (बाद में श्री वकील मुनि जी) के सुपुत्र श्री नरेश कुमार जी कालेज की पढ़ाई छोड़ कर गुरु-चरणों में पढ़ने लगे। कुछ दिन बाद महावटी गाँव के ला. रामगोपाल जी के सुपुत्र श्री राजेन्द्र जी भी वैरागी-रूप में गुरु-चरणों में आए। पूज्य गुरुदेव जी म. जीवन-भर इस उपलब्धि को अपने लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण मानते रहे। इसी के लिए उन्होंने गत वर्ष के अपने बड़ौत चातुर्मास का बलिदान किया था। 'सन्तोषी परमं सुखी' ये उक्ति वहाँ फलितार्थ हुई।

३. लहर-लहर लहराई यशःपताका!

बड़ौत चातुर्मासोपरान्त गन्नौर मण्डी में मुनि-मिलन हुआ। वहाँ से गुरुदेव ने सुदीर्घ विचरण का संकल्प बनाया। गुरुदेव के लम्बे विचरण-क्रम में सन् 1972 का विचरण काफी द्रुत, व्यवस्थित और तूफानी माना गया है। शासन-प्रभावना उस वर्ष सर्वथा नए आयामों को छू गई थी। हरियाणा, पंजाब व चंडीगढ़ का काफी क्षेत्र भ्रमण के अन्तर्गत आ गया। पहले गोहाना पधारे। वहाँ पर पूज्यपाद पं. श्री रणसिंह जी म. ठाणे-2 के दर्शन किए। सन् 1964 से ही पूज्यपाद स्वामी श्री फूलचन्द जी म. गुरुदेव के साथ विचरण कर रहे थे। गुरुदेव उनका गुरुवत् सम्मान करते रहे थे। गोहाना आकर उनका विचार श्री पण्डित जी म. के साथ रहने का बना। उनकी इच्छा को अधिमान देते हुए गुरुदेव ने अपनी सहमति दे दी। आगे चले। रिंढाणा पधारे। वहाँ चौ। माईराम जी के सुपुत्र श्री सुन्दर सिंह वैरागी-मण्डल में सम्मिलित हुए। अब चार वैरागी हो गए थे। दशरथ के चार बाल पुत्रों की तरह चारों वैरागी बन्धु अपना शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक विकास करने लगे। गुरुदेव जहाँ-जहाँ पधारते गए, जन-भावनाओं का ज्वार उमड़ता गया। मनोबल भी उनका बड़े कमाल का था। जीन्द, नरवाणा, मूनक, सुनाम आगमन हुआ। फिर समाणा, पटियाला होते हुए चण्डीगढ़ पधारे। फिर अम्बाला में पधारने पर अम्बाला और गुरुदेव एकमेक-से हो गए। एक दूसरे को देखा। दोनों को दोनों खूब भाए। विनतियों का दबाव बढ़ा। तपस्वी श्री सुदर्शन मुनि जी भी वहीं स्थिरवास थे। उनका निश्छल व्यवहार गुरुदेव को बहुत भाया। तपस्वी जी ने वहाँ एक चौमास करने का काफी आग्रह किया। उस समय चातुर्मास नहीं हो सका। विनतियों की अखण्ड धारा चलती रही, जो 27 वर्ष बाद 1998 में जाकर सफल हुई।

गुरुदेव चण्डीगढ़ पधारे। बड़े नूतन और मनोरम इतिहास की रचना हुई। जब से चण्डीगढ़ बना, तभी से वहाँ के श्रद्धालुओं की गुरुदेव के पदार्पण के लिए विनति थी, पर वहाँ की जीवन-शैली गुरुदेव की संयमीय व्यवस्था के अधिक अनुकूल न होने से नहीं जा पाए थे। घर दूर-दूर थे। प्रवचन भी केवल रविवार को होता था। पर गुरुदेव के पधारने से सब कुछ बदल गया। हर दिन रविवार बन गया। न जाने कहाँ कहाँ से भीड़ उमड़-घुमड़ कर आती थी। गुरुदेव के शिष्यों ने सुदूरवर्ती घरों से भी गोचरी लाकर सारी जनता को भाव-प्रवण बना दिया।

चण्डीगढ़ में घटित एक मधुर प्रसंग का उल्लेख प्रायः गुरुदेव जी म. के मुखारविन्द से सुना जाता था। जैन समाज के एक प्रसिद्ध वकील अपने साथ एक महानुभाव को दर्शन कराने स्थानक में लाए। भव्य व्यक्तित्व के धनी वे महानुभाव वन्दना करके बैठ गए। कहने लगे जरा पहचानो! पूज्य गुरुदेव ने अपने बौद्धिक संगणक (Computer) का बटन ऑन किया। झट बोले—अच्छा! नटखट प्रेमचन्द! आगन्तुक हर्ष के कारण उछल पड़ा। कहने लगा, 'गुरुदेव! एक बार और इस विशेषण को दोहराओ।' गुरुदेव ने फिर दोहराया, तो वातावरण में शहद-सा घुल गया। अपने साथ लाने वाले वकील सा. अवश्य ही कुछ संकोच-सा मान रहे थे। पर गुत्थियां खुलने लगी तो उनका संकोच भी जाता रहा। आगत महानुभाव पंजाब-हरियाणा हाईकोर्ट के जस्टिस प्रेम चन्द जैन थे। रोहतक के जाने माने वकील श्री लाल चन्द जी के सुपुत्र तथा जय चन्द जी के लघु भ्राता थे। श्री लालचन्द जी का श्री चंदगीराम जी से याराना था और गुरुदेव जी म. जय चन्द जी के मित्र थे। उनके घर पर बैठकर पढते, खेलते थे। तब प्रेमचन्द जी छोटे थे। आकर शरारत करते। पढ़ाई और खेल में विघ्न डाल देते। तब उन्हें 'नटखट' कहा जाता था। वही प्रेमचन्द आज न्याय-क्षेत्र में ऊँचे सोपानों पर थे। पर वे यहाँ 35 वर्ष पुरानी बातों की स्मृति में ऐसे खोए कि कोर्ट-कचहरी का सारा रुतबा भूल कर आत्मीयता के सागर में डूब गए।

अक्षय-तृतीया के आस-पास गुरुकुल-पंचकूला का अधिवेशन होना था। वहाँ की प्रबन्धक-समिति-डॉ. मेघ कुमार जी, राधेश्याम जी, वेदप्रकाश जी आदि मान्य व्यक्तियों ने गुरुदेव को उस अवसर पर पधारने की विनति की। गुरुदेव ने अपनी स्वीकृति फरमाई। लगभग 30 वर्ष के अंतराल के बाद गुरुदेव पंचकूला गुरुकुल में पधारे थे। इस संस्था के साथ उनका मानसिक लगाव भी था। पूज्यपाद व्याख्यान-वाचस्पति गुरुदेव ने इस संस्था के बचपन को सुपुष्ट किया था तथा गुरुदेव के दो लाडले गुरु-भ्राता श्री सेठ जी म. एवं श्री राम प्रसाद जी म. इस गुरुकुल के विद्यार्थी रहे थे। गुरुकुल में कई भवन थे। जिस भाग में गुरुदेव ठहरे थे, उसके बाहर प्रबन्धकों ने सजावट के लिए सीरीज के बल्बों की लड़ियां लगा दी। गुरुदेव को ज्ञात नहीं हुआ। जब वे जगमगाने लगी, तब ध्यान आया। तुरन्त मकान को परिवर्तित किया। पर वह स्थान अनकल नहीं था। प्रबंधकों को पता चला तो उन्हें अपनी भूल का अहसास हुआ। उन्होंने तुरंत लड़ियां हटा ली और गुरुदेव पूर्व स्थान पर विराज गए। अधिवेशन पर छात्र-वर्ग, दर्शनार्थी, प्रबन्धक-गण और समाज-नेताओं की भारी भीड़ थी। कार्यक्रम चलते रहे। काफी देर हो गई थी, सभा जम नहीं पा रही थी। अन्ततः गुरुदेव का प्रवचन प्रारंभ हुआ। सर्वप्रथम गुरुदेव ने मंच पर बैठे हुए समाज-नेताओं से कहा कि 'अब सन्तों का प्रवचन शुरू हो रहा है, अतः केवल माननीय अध्यक्ष कोटुमल जी को छोड़कर शेष सभी नीचे आ जाएँ।' सब नीचे उतर गए। सामान्य जनता इससे बड़ी प्रसन्न हुई। प्रवचन शुरू हुआ। गुरुदेव ने सन्देश दिया कि यहाँ पर जितने भी प्रबन्धक हैं वे जब भी गुरुकुल में आएँ तो रात्रि-भोजन न करें। सबने प्रतिज्ञा की। सम्भवतः आज भी वहाँ ये प्रथा चालू है। सब लोगों ने अधिवेशन को गुरुदेव के प्रवचन के कारण ही सफल माना। स्वामी कृष्णचन्द्र जी का गुरुकुल के लिए योगदान प्रशंसनीय लगा।

पंचकूला से विहार करते हुए गुरुदेव सढौरा, यमुनानगर, कुरुक्षेत्र, करनाल, घरौण्डा आदि नगरों में पधारे। एक स्थान पर रात्रि पेड़ के नीचे बिताने का आनन्द लिया। बालपबाणा जैसे छोटे-छोटे गाँवों की सुध लेना

गुरुदेव का स्वभाव था। चिंता असुविधाओं की नहीं, श्रावकों की थी। पबाणा में दो परिवारों में कई वर्षों से काफी मनमुटाव था। गुरुदेव के ओजस्वी प्रवचनों द्वारा शांत हुआ। सिंघाणा-मुआना भी उसी कड़ी में जुड़े। सिंघाना गाँव से गुरुदेव ने श्री शास्त्री जी म. तथा श्री विनय मुनि जी म. को चातुर्मासार्थ विदाई दी। इन दोनों का प्रथम बार ही नरवाना में स्वतंत्र चातुर्मास होने जा रहा था। स्वयं गुरुदेव दूर तक छोड़ने गए। मंगल-पाठ सुनाते-सुनाते गुरुदेव की पलकें भी गीली हो गई और जाने वाले मुनियों की भी। इधर जीन्द की धरा बाट जोह रही थी, गुरुदेव के सन् 1972 के चातुर्मास के लिए।

गुरुदेव जीन्द को 'राजा क्षेत्र' कहते थे। यह उन्हें शुरू से पसन्द था। सेवा का भाव वहाँ के कण-कण में है। जैन स्कूल और कालेज को लेकर कुछ वर्षों से लोगों में रंजिश चली आ रही थी, पर अब वह सिमट गई थी। नवयुवकों में विशेष उत्साह था। बहुत से अजैन भी धर्मानुरागी बने। छोटे-छोटे बच्चों, युवकों, वृद्धों और बहनों में विशेष लहर थी। स्थानक छोटी होने से अक्सर जैन मंदिर में प्रवचन होते थे। मण्डी के बड़े-बड़े सामाजिक और राजनीतिक अजैन भी बहुत लाभ लेते थे। श्री मांगेराम जी गुप्ता, जो बाद में विधायक और हरियाणा सरकार में वित्तमंत्री बने, वे गुरुदेव के प्रवचन सुनकर काफी प्रभावित होते थे। रोज सुनकर जाते और फिर मण्डी में जाकर सुनाते। कई बार मण्डी में भी गुरुदेव के प्रवचन कराए। एक बार अग्रवाल-सभा के अधिवेशन में भी प्रवचन हुआ। व्यसन-त्याग की प्रेरणा में काफी कुछ काम हुआ। उस चातुर्मास में कई लोगों ने इकट्ठी ही 21 या 31 तक सामायिकें करके अपनी दृढ़धर्मिता का परिचय दिया। उस वर्ष से दर्शनार्थियों की संख्या में भी काफी वृद्धि होने लगी। दिल्ली से एक भाई श्री मणिलाल जी डोशी इकट्ठी सात बसें गुरु चरणों में लाए, तो सर्वत्र तहलका मच गया। इस इलाके में ऐसा आगमन अश्रुतपूर्व था। धीरे-धीरे गुरुदेव सामान्य मानव के लिए एक आराध्य और इष्टदेवता की कोटि में आने लगे। लोगों में सहज आशंकाएँ थी कि दर्शनार्थी-संख्या बढ़ने से समाजों पर भी आर्थिक

बोझ बढ़ेगा, पर ऐसा नहीं हुआ। गुरुदेव के हर चौमास में स्थानीय ब्रादरी के खजाने पहले से अधिक भरे हैं।

बढ़ती जन-प्रतिष्ठा के माहौल में भी गुरुदेव ने अपने ऊपर कभी अभिमान-भावना को हावी नहीं होने दिया। अपने मुनियों को भी अनुशासन में कस कर रखा। अपने श्री-चरणों में अध्ययनरत वैरागियों में भी सादगी और संयम की वृत्ति भरी। कई स्थानों पर तो ऐसी टिप्पणियाँ तक सुनने में आ जाती थी कि गुरुदेव के वैरागी भी बहुत सारे साधुओं से आगे हैं। वैरागियों पर पूर्ण अंकुश होता था। उनके वस्त्र सादे थे। कमीज, चोलपट्टा, नंगे पैर, स्थानक में सामायिक की मुद्रा, खाने में, बोलने में विवेक तथा गृहस्थ के घर पर जाकर भोजन करना। वहाँ भी पंखे के नीचे या सोफा-कुर्सी पर बैठकर नहीं, अपितु चटाई पर बैठकर। उनकी पढ़ाई का भी विशेष ध्यान गुरुदेव रखते। कभी-कभी मनोबल बढाने हेतु उनके भजन, भाषण भी कराते। अध्ययन के इसी क्रम में गुरुदेव ने जीन्द में लघु मुनियों और विरक्तों को श्रावक श्री निहालचन्द जी से पाँच कर्मग्रन्थ पढवाए। सन् 1972 का चातुर्मास गुरुदेव के सफलतम चातुर्मासों में गिना जाता है।

जीन्द में ही गुरुदेव ने घोषणा की कि दस दिसम्बर को बुटाना में वैरागी जयकुमार (मेरी) की दीक्षा होगी। इस घोषणा के कुछ दिन बाद ही बुटाना के श्रावक रामेश्वरदास जैन के युवा पुत्र श्री सुल्तान जैन का देहान्त हो गया। पूज्य गुरुदेव हर व्यक्ति के सुख-दुख को समझते थे तथा जन-भावनाओं का सम्मान करते थे। दीक्षा के अवसर पर एक भी परिवार गम में न डूबा रहे, इस भावना से गुरुदेव ने स्वयं ही पूर्वोक्त तारीख बदल कर दो महीने बाद, 15 फरवरी 1973 की दीक्षा घोषित की।

जीन्द चातुर्मास के बाद गुरुदेव नरवाणा पधारे। वहाँ अपने शिष्यद्वय श्री शास्त्री जी म., श्री विनयमुनि जी म. की चातुर्मासिक प्रभावना देखकर बड़े गद्‌गद हुए। फिर मूनक आए। वहाँ पर स्वामी श्री फूलचन्द जी म. की आँख के मोतियाबिन्द का आप्रेशन कराया। वहाँ से कैथल पधारे।

प्रथम बार ही आए थे। बड़े अद्भुत दृश्य थे। जैनों से भी अधिक अजैनों में जोश था। अमृत लाल जी चौधरी अजैन थे, पर इतने गुरुभक्त बने कि कहने लगे, 'आप यहाँ चातुर्मास करो, मैं सारे चातुर्मास का पूरा खर्च उठाऊँगा।' वहाँ से बुटाना पधारे। सकल मुनि-संघ एकत्रित हुआ। गाँव भी नगर बन गया था। हजारों की जनमेदिनी लम्बे-चौड़े मैदान में रोज कथामृत का पान करती थी। उस समय पूज्यपाद श्री राम प्रसाद जी म. ने जो वैराग्य और वीरता से ओत-प्रोत प्रवचन सुनाए, उनको सुनकर सारी जनता अश-अश कर उठी थी। हरियाणा की धरा पर मेवाड़ के रण-बांकुरों की कुर्बानियों का सजीव चित्रण किसी चलचित्र से कम मनोहारी नहीं था। दीक्षा के अवसर पर दीक्षार्थी के अतिरिक्त तीनों वैरागियों ने भी भाषण दिए। ऐसा पहली बार ही हुआ था। यह प्रयोग काफी सफल रहा। जनता ने बड़ा रस लेकर भाषण सुने। चारों के भाषण पूज्यपाद श्री रामप्रसाद जी म. ने लिखे थे, लेकिन गुरुदेव जी म. ने देखा कि उनमें साहित्यिकता अधिक है, भाव-प्रवणता कम। दीक्षार्थी की मनोभावना को देखते हुए उसका भाषण तो नहीं बदला, शेष तीन भाषण गुरुदेव ने स्वयं लिखे। विरक्तों को तैयारी कराई गई। सब बोले, डट कर बोले, पर जो छाप तीन भाषणों की पड़ी, वह दीक्षार्थी के भाषण की नहीं बन पाई। गुरुदेव जी म. समय-समय पर मुनियों की सेवा का अवसर निकाल लेते थे। दीक्षा के बाद एक दिन दोपहर को श्री शास्त्री जी म. को साथ लेकर गोचरी के लिए पधारे। 13 मुनिराजों की गोचरी स्वयं लाए। जिस-जिस घर पधारे, उन्होंने तो अपने सौभाग्य को सराहा ही, माण्डले पर विराजमान मुनियों ने भी उसे अमृत-तुल्य समझ कर ग्रहण किया।

बुटाना दीक्षा का कार्यक्रम सानन्द संपन्न हो गया। इधर दिल्ली चाँदनी चौंक में सुश्रावक श्री केसरी चंद जी की धर्मपत्नी जसवन्ती बाई जी का वर्षी-तप चल रहा था। उनके परिवार की भावना थी कि अक्षय तृतीया पर पारणे के समय गुरुदेव अवश्य पधारें। उनकी बात को गुरुदेव कभी टालते नहीं थे। अतः दिल्ली का प्रोग्राम बना। गोहाना, रोहतक होकर सोनीपत पधारे। वहाँ के सुश्रावक श्री बनवारी लाल जी के सुपुत्र

श्री राकेश जी गुरु-चरणों में वैरागी बने। वाचस्पति गुरुदेव श्री मदन लाल जी म. के सन् 1960 के सोनीपत-चातुर्मास में इनका जन्म हुआ था। जब ये एक दिन के ही थे, तो वाचस्पति गुरुदेव इनके घर में दर्शन देने पधारे। बनवारी लाल जी ने शिशु को गुरु-चरणों में डालते हुए अर्ज करी कि आज से ये आपका ही है। वही अमानत पूज्य गुरुदेव को अब मिली।

दिल्ली पधारने पर वीर-जयंती का सौभाग्य वीर-नगर वालों को मिला। दिल्ली-भ्रमण के दौरान गुरुदेव ने करौल बाग में पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. के दर्शन किए। उनका शरीर अतिकश हो गया था। काफी समय से प्रवचन छोड़ा हुआ था। पूज्य गुरुदेव तीन सन्तों को शक्ति नगर में छोड़कर स्वयं विभिन्न क्षेत्रों की स्पर्शना कर रहे थे। करौल बाग में श्री प्रेमचन्द जी म. ने गुरुदेव को सीने से लगा लिया। बड़ा प्यार बरसाया। फिर मीठा उपालम्भ देते हुए बोले, 'बणिए! अब भी बणियापना कर लिया! सब सन्तों को क्यों नहीं लाया'? गुरुदेव फौरन समझ गए और तुरन्त तीनों सन्तों को शक्ति नगर से बुलाकर उनके चरणों में पेश किया। श्री पंजाब केसरी जी म. अपनी बात पर दृढ़ रहने वाले थे, पर उस दिन वे गुरुदेव से बोले, 'मैं कथा में जाता नही हूँ, न बोलता हूँ। पर तू आया है तो आज जाऊँगा भी और बोलूँगा भी। लेकिन तुझे मेरे साथ, मेरे बराबर में, एक ही पट्टे पर बैठना होगा।' उनके आग्रह ने गुरुदेव को असमंजस की स्थिति में डाल दिया। विनय और समाचारी, दोनों की दिशा भिन्न थी, पर वक्त का तकाजा था। वैसे इस तरह का पंजाब केसरी जी म. का मनोभाव गुरुदेव को, जब वे सराय रोहिल्ला में थे, तब मिल गया था। पर ये सोचा कि दर्शन के समय जो स्थिति बनेगी, तदनुसार निर्णय कर लेंगे। अन्ततः गुरुदेव ने उनकी आज्ञा को ही प्रमाण कहा। श्री प्रेमचन्द जी म. अपने भाषण में यथा-शक्ति खूब जोर लगाकर बोले। उनका एक ही कथन था, 'दिल्ली के नौजवानो! मैं तुम्हे और कहीं जाने को नहीं कहता। तुम और कहीं जाओ या मत जाओ, पर सुदर्शन मुनि के पास जरूर जाओ। तुम्हारा जीवन सफल हो जाएगा।' पूज्य गुरुदेव ने एक पट्टे पर बैठने की घटना अपने दूरस्थ मुनियों को भी पत्र द्वारा दे

दी, ताकि सबको वस्तु-स्थिति का ज्ञान रहे। गुरुदेव ने सदर बाजार में महास्थविर श्री भागमल जी म. के दर्शन किए। उन्होंने श्री मयाराम जी म. का वर्णन करते हुए फरमाया कि वे कभी पैर पर पैर चढ़ाकर नहीं बैठते थे, क्योंकि ऐसा करना अभिमान का आसन माना जाता है। गुरुदेव ने सब सन्तों को ये प्रसंग सुनवाया।

चाँदनी चौंक में पारणा सानन्द हो गया। फिर बड़ौत होकर हरियाणा की ओर मुड़े। मार्ग में खेवड़ा गाँव में रुके। यह ग्राम वाचस्पति गुरुदेव की कर्म-भूमि रहा था। उनका बचपन भी यहीं बीता था तथा सन् 1937 का ऐतिहासिक चातुर्मास भी यहीं किया था। उस चौमास में बाबा जग्गूमल जी म. सा. भी उपस्थित थे। वाचस्पति गुरुदेव के प्रमुख परामर्शदाता श्रावक श्री ताराचन्द जी जैन वैद्य भी वहीं गाँव में थे, अतः गुरुदेव ने कई दिन गाँव में लगाए।

सन् 1973 का चातुर्मास गन्नौर मण्डी में हुआ। बाह्य उपलब्धियों की दृष्टि से चातुर्मास खूब प्रभावपूर्ण था। श्री-संघ ने चार महीने के भीतर ही तीन मंजिला विशाल भवन तैयार कर दिया था। हरियाणा में नई स्थानकों के निर्माण का दौर गन्नौर से ही शुरू हुआ। श्री-संघ में अपूर्व जोश था। जब गुरुदेव पधारे, तो नई स्थानक में कुछ काम शेष था, अतः छोटी स्थानक में ठहरे। प्रवचन नई स्थानक में होता। बिना किसी भेदभाव के दिगम्बर, श्वेताम्बर, सनातनी व पंजाबी भाई आते। दर्शनार्थियों की भरमार थी। उनकी सेवा कॉम्पीटीशन का रूप लेने लगी। लोग भोजन में नई-नई मिठाइयाँ बनाने लगे और देसी घी का प्रयोग करने लगे। नई स्थानक में स्थानातरण करने से पूर्व गुरुदेव की प्रेरणा से वहाँ श्रावकों ने जाप, पौषध आदि किए। पुरुषान्तरकृत होने के बाद गुरुदेव वहाँ पधारे।

एक दिन सोनीपत के डी.सी. अचानक गुरुदेव के दर्शन करने चले आए। अनके परम मित्र डॉ. जे.के. जैन ने उनको प्रेरणा दी थी कि आपके जिले में गुरुदेव चातुर्मास कर रहे हैं, दर्शन-लाभ उठाओ। वे बिना पूर्व-सूचना के आ गए। लोगों में शोर मच गया। बिना बुलाए डी.सी. का

आना बड़ी बात मानी गई। बाद में कुछ लोगों ने उनके आगमन का दुरुपयोग भी किया। गुरुदेव का नाम लेकर लोग डी.सी. आफिस में जाकर उचित-अनुचित काम करवाने लगे। डी.सी. साहब ने डॉ. जैन से आपत्ति की। गुरुदेव तक भी बात आई। उनको बड़ा ख्याल हुआ। डी.सी. साहब को समाचार भेजा कि मैंने आपके पास कोई आदमी नहीं भेजा है। आप हमारे नाम लेने मात्र से किसी की सिफारिश न मानें। इस बात से डी.सी. साहब निश्चिन्त हुए।

दिल्ली वीर नगर से श्री मुनी लाल जी के सुपुत्र श्रीपाल जैन सपरिवार गुरु-दर्शनार्थ आए। उनका परिवार बड़ा धनाढ्य था। विदेशी गाड़ी थी। उनकी धर्मपत्नी की आकृति श्रीमती इन्दिरा गांधी से मिलती जुलती थी। पूरे गन्नौर में चर्चा फैल गई कि इन्दिरा जी दर्शन करने आई हैं। बड़ी भीड़ जुट गई, पर समाधान पाकर सब लौट गए।

गुरुदेव ने गन्नौर में कुछ जिज्ञासु श्रावकों को प्रतिक्रमण सिखाया तथा नवदीक्षित मुनि के (मेरे) प्रथम लोच पर कई जोड़ों को आजीवन शीलव्रत का पच्चक्खाण दिलाया। उस समय गन्नौर Bharat Steel Tube (B.S.T.) के कारण भारत-भर में विख्यात होता जा रहा था। सोनीपत वासी श्री बनवारी लाल जी (वैरागी राकेश जी के पिता श्री) ने B.S.T. की सही व्याख्या अपने भाषण में करते हुए कहा कि इस शब्द का सही अर्थ है– 'Best Saints of Today' अर्थात् आज के सर्वोत्तम मुनिराज यहाँ पर हैं। इस अर्थ ने श्रोताओं के दिलों को काफी गुदगुदाया।

उसी वर्ष गुरुदेव को एक दीर्घकालीन रोग ने घेर लिया। पेशाब में जलन और रुकावट होने लगी। देसी उपचार कराए, पर तकलीफ और बढ़ गई। दिल्ली से गुरुदेव के परमभक्त सेठ श्री नन्दकिशोर जैन अपने मित्र डॉ. जी.बी. जैन एवं डॉ. एस.सी. अलमस्त को लेकर आए। डॉ. अलमस्त प्रसिद्ध सर्जन थे। उन्होंने परीक्षण करके बताया कि गुरुदेव की मूत्रनली जन्म से ही संकुचित है (इसे Stricture कहते हैं) तथा गदूद (Prostate) में कैंसर की संभावना है, यद्यपि अभी उसकी मामूली शुरूआत ही है।

दवा लेने से ठीक हो जाएँगे। ये खबर सबके लिए हृदयदाही थी, पर क्या करते? Stilbestrol गोली शुरू की। पेशाब में पुनः पुनः जलन और पीड़ा होती। किसी भाई को बताने में गुरुदेव संकोच करते। तकलीफ को झेलते रहे। स्ट्रिक्चर का उपचार न कराने से मूत्राशय (Bladder) की शक्ति क्षीण होती चली गई। इस का सही उपचार आप्रेशन था, जो गुरुदेव ने सन् 1995 में लुधियाना जाकर कराया। 22 साल तक उसी तकलीफ को झेलते रहे। इतने विलम्ब करने से और भी कई अवान्तर तकलीफें आई। बाद के कई मूत्र-चिकित्सकों की ये दृढ़ मान्यता रही कि गुरुदेव को गदूद का कैंसर था ही नहीं। उसके लिए जो पूर्वोक्त गोली कई वर्षों तक ली जाती रही, उसने शरीर को काफी नुक्सान पहुँचाया।

गन्नौर चातुर्मास में एक बार श्रद्धेय श्री प्रकाश चन्द जी म. प्रातः काल दिशा-भ्रमण के लिए गए। वे रेलवे लाइन की पटरी के साथ-साथ चल रहे थे। अचानक पीछे से रेल आई। उसका शोर भी वे नहीं सुन पाए। रेल से हल्का-सा टकराकर एक तरफ गिर गए। हल्की चोट आई गुरुकृपा से शीघ्र ठीक हो गए।

चातुर्मास के अंतिम दिनों में गुरुदेव काफी रुग्ण हो गए। विहार भी नहीं हो पाया था। गुरुदेव का विचार बड़ौत जाकर श्री नरेश जी की दीक्षा का था, पर अब वह संभव नहीं था। गुरुदेव ने गन्नौर में ही श्री नरेश जी, श्री सुन्दर जी एवं श्री सुमति कुमार जी, (जो पं. श्री रणसिंह जी म. के श्री-चरणों में वैरागी थे) की दीक्षा का विचार बनाया। श्री नरेश जी के पिता श्री वकील चन्द जी ने गुरुदेव को अर्ज की कि 'यदि इनकी दीक्षा विशेष समारोह के साथ करनी है, तो हम अपने घर पर बड़ौत में ही कराएंगे। यदि साधारण दीक्षा करनी हो, तो आप कहीं भी कर सकते हैं।' गुरुदेव की रुचि सादी दीक्षा करने की थी, पर गन्नौर समाज एवं श्री सुन्दर जी के परिवार की भावनाओं को देखते हुए गुरुदेव ने पहले 26 नवम्बर को श्री नरेश जी की दीक्षा साधारण रूप में स्थानक में और शेष दो की दीक्षा नौ दिन बाद 5 दिसम्बर को करने का विचार बनाया। समाज को दीक्षा-आयोजन की स्वीकृति देने से पूर्व ये शर्त रखी कि आपको

दीक्षा-समारोह में भोजन के समय मिठाई व अन्य मीठा व्यंजन देने पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाना होगा। चातुर्मास में बारी वालों में मीठा देने की काफी होड़ लग गई थी, इससे समाज पर खर्च का भार भी काफी पड़ने लगा था। समाज ने गुरुदेव की आज्ञा पर फूल चढाए। मीठा बन्द करने के फैसले का जनपद की सभी ब्रादरियों ने स्वागत किया। मूनक में विराजित घोर तपस्वी श्री बदरी प्रसाद जी म. ने उस निर्णय को बहुत पसन्द किया तथा सभी क्षेत्रों में स्थायी रूप से उस व्यवस्था को लागू करने की मांग की। यह व्यवस्था तब सर्वत्र लागू हो गई, जो आज तक भी उत्तर भारत में अपने सन्तों के समक्ष चालू है।

दीक्षा के पश्चात् गुरुदेव रोहतक पधारे। उस वर्ष (सन् 1974 जनवरी में) धुन्ध का भीषण प्रकोप हुआ था। सन्तों का आहार-पानी लाना, प्रवचन, पढ़ना-लिखना, अधिक वार्तालाप, ऊपर-नीचे आवागमन सब बन्द था। गुरुओं ने अपने पूर्वजों की परम्परा को उसी रूप में सुरक्षित रखा था।

रोहतक में श्री विनय मुनि जी म. को उदर-पीड़ा का भीषण प्रकोप हुआ। रोहतक मैडीकल में परीक्षण हुए। एक गुर्दा जन्म से ही खराब था। डॉ. मडिया से आप्रेशन कराया गया, पर सभी मर्यादाओं को सुरक्षित रखते हुए, यथा-महिला नर्स का स्पर्श न हो, रात को ग्लूकोस व दवा न दी जाए, आप्रेशन की कोई फीस न ली जाए आदि। स्थानक से हास्पिटल काफी दूर था। पर गुरुदेव रोज वहाँ पधारते। रोहतक से विहार करके गुरुदेव जीन्द पधारे। वहाँ पर गुरुदेव की कृपा से, शान्तमूर्ति श्री शांतिचन्द्र जी म. की प्रबल प्रेरणा से स्थायी स्वाध्याय का क्रम शुरू हुआ। सुश्रावक श्री निहाल चन्द जी प्रथम अध्यापक बने। यह परम्परा आज भी वहाँ पर चालू है।

सन् 1974 का चातुर्मास रोहतक शहर एवं मण्डी दोनों में संयुक्त रूपेण हुआ। जैनों के साथ-साथ सनातन समाज में भी काफी श्रद्धा थी। युवाओं में विशेष शोधन और जागरण बढ़ा। अपने मुनियों को भी गुरुदेव ने उनकी रुचि, योग्यता व स्थिति के अनुसार शिक्षण दिलाया। रोहतक के प्रसिद्ध प्रोफेसर श्री वी.एन. अवस्थी अंग्रेजी भाषा के विख्यात विद्वान्

हैं। उनसे श्री जयमुनि जी म. को काफी अध्ययन कराया। उनकी पढ़ाई में कोई विघ्न न आए, इसलिए गुरुदेव पात्रे धोने, सुखाने का काम भी स्वयं कर लेते थे।

गुरुदेव के परम भक्त श्री जितेन्द्र जैन जी रोहतक दर्शन करने आए। उनकी इच्छा थी कि मैं गुरुदेव के श्रीमुख से मांगलिक श्रवण करूँ और उसे टेप करूँ, ताकि घर पर रोज सुन सकूँ। वे टेप रिकार्डर साथ लाए थे। गुरुदेव ने इंकार कर दिया। इस पर वे काफी देर तक टेप रिकार्डर की निर्दोषता और उपयोगिता पर तर्क-वितर्क करते रहे। पर जब उनकी भक्ति आग्रह का रूप लेने लगी, तो गुरुदेव ने स्पष्ट कह दिया कि 'मैं आपसे बोलूँगा ही नहीं, मगंलपाठ टेप करवाने की तो बात ही छोड़ो'। श्रावक को चुप होना पड़ा। संयम और मर्यादा के विषय में वैयक्तिक प्रेम को गौण कर देना, ये गुरुदेव की कला थी।

उस वर्ष श्रमण भगवान् महावीर स्वामी की 25वीं निर्वाण-शताब्दी का आयोजन प्रारम्भ हो रहा था। गुरुदेव किसी आडम्बर-पूर्ण कार्यक्रम में न स्वयं सम्मिलित होते थे, न उसका अनुमोदन करते थे। अपने वीतराग देवों को जलसे-जलूसों में प्रकट करने की बजाय वे उनके आदर्शों पर चलने को व संवर-मूलक क्रियाओं को अधिक महत्त्व देते थे। फिर भी कहीं पर समाज-जागरण का कोई अनुष्ठान हो, तो उसके प्रति उनके मन में सात्विक प्रसन्नता की अनुभूति होती थी। दिल्ली में चारों सम्प्रदायों का जलूस था, जिसे धार्मिक इतिहास में अभूतपूर्व माना गया। उसे देखने के लिए वैरागी राजेन्द्र जी एवं राकेश जी उत्सुक थे। गुरुदेव ने निषेध नहीं किया। अपनी ओर से गुरुदेव की प्रेरणा होती थी कि जैन भाई एक वर्ष में भगवान् महावीर का जीवन चरित अवश्य पढ़ें। अनेक श्रावकों को उन्होंने नियम भी कराए।

4. साड्डा पंजाब

चातुर्मासोपरान्त पंजाब-विहार का मन बना। मूनक में श्री तपस्वी जी म. से मंगल-मिलन हुआ। उनसे भोजन की बारी में मिठाई पर लगे प्रतिबन्ध के बारे में विचार हुआ। श्री तपस्वी जी म. ने उस कदम को और आगे बढ़ाते हुए परामर्श दिया कि नाश्ते के समय में भी मिठाई-नमकीन-बिस्कुट आदि सब बन्द कर दिए जाएँ। प्रस्ताव काफी कठिन था। गुरुदेव जी म., अन्य मुनिगण एवं श्रावकों को भी नहीं अँचा, पर श्री तपस्वी जी म. की इच्छा और आज्ञा थी। और उनकी आज्ञा अनुल्लंघनीय थी, इसलिए गुरुदेव ने स्वीकार की। आगे सभी क्षेत्रों में इसकी घोषणा करते गए।

लुधियाना के मार्ग में मलेरकोटला रुके, वहाँ स्पष्ट-वक्ता श्री सुमन मुनि जी म. के सद्‌गुरुदेव श्री महेन्द्र मुनि जी म. से स्नेह-मिलन हुआ। लुधियाना-प्रवास विशिष्ट गरिमापूर्ण रहा। नौहरियामल बाग में ही पूज्यपाद प्रवर्तक श्री फूलचन्द जी म. 'श्रमण' के शुभ दर्शन हुए। गुरुदेव उन्हें अपने गुरु म. जितना सम्मान देते थे। श्री 'श्रमण' जी म. की कृपा भी अहैतुकी एवं अवर्णनीय थी—'गुणा गुणज्ञेषु गुणा भवन्ति'। वे गुरुदेव की आत्मा को जानते थे। वे प्रवचनों में अकेले पधारते। अलग पाट पर विराजते। कभी किसी विषय पर विवाद का जन्म नहीं होने दिया। शहर में पधार कर गुरुदेव ने प्रेरणा दी कि प्रभु वीर के 2500 वें निर्वाण-शताब्दी वर्ष पर शनिवार, रविवार दो दिनों में 2500 भाई-बहन सामायिक करें। सारे लुधियाना में धर्मक्रांति आ गई। देवकी देवी हाल में दो दिन में 4000 भाई-बहनों ने सामायिकें की। धोती, दुपट्टे और मुँहपत्तियों की छटा युगों-युगों तक स्मरणीय बन गई। यह दृश्य 'न भूतो न भविष्यति' था। पूज्यपाद श्री 'श्रमण' जी म. ने गुरुदेव का एक चातुर्मास लोधुयाना में

कराने की जोरदार अपील की। गुरुदेव ने फरमाया कि यहाँ की भीड़ को संभाल पाने में मैं असमर्थ हूँ। फिर भी श्री 'श्रमण' जी म. का आग्रह बना ही रहा। जब विहार करने लगे, तो चौड़ा बाजार में लोगों की विशाल भीड़ थी। सारा ट्रैफिक जाम था। एक युवक ने दूर छत पर चढ़कर फोटो खींचना चाहा। गुरुदेव ने पीठ फेर ली। वह फोटो उसी रूप में आ गया।

सन् 1975 का वर्ष कई अर्थों में महत्त्वपूर्ण था। देश में अराजकता की स्थिति थी। प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने अपनी गद्दी बचाने के लिए देश में आंतरिक आपात-काल लागू कर दिया। गुरुदेव ने इस तानाशाही पर अपने प्रवचनों में कड़े प्रहार किए। उन्होंने ऐसी डैमोक्रेसी को 'हत्याक्रेसी' कहा। किसी संवाददाता ने यह शब्द किसी समाचार-पत्र में छपवा दिया। सरकारी तंत्र कुछ चौकन्ना हुआ, तो समाज की स्थिति को देखते हुए गुरुदेव भी भविष्य के लिए सावधान हो गए।

1974 दिसम्बर में मुनि सुशील कुमार जी के नेतृत्व में दिल्ली में विश्व-धर्म-सम्मेलन का आयोजन हुआ था। उन्हें विदेशी धर्म-गुरुओं ने विदेश-यात्रा का निमंत्रण दिया। इस आड़ में जैन समाज का एक धनी-मानी वर्ग जैनत्व को देश की सीमाओं के बाहर विदेशों में निर्यात करने पर तुल गया। मुनि सुशील कुमार ने इंग्लैण्ड और अमरीका जाने की घोषणा कर दी। उनको मुँहपत्ती लगाकर वाहन-यात्रा न करने देने के लिए समाज का एक वर्ग लामबन्द था। कोर्टों का सहारा लेने की सोची। दिल्ली का एक युवक फगवाड़ा में गुरुदेव के पास आया। वह सुशील मुनि के विरोध में खड़े एक उग्रवादी ग्रुप का प्रतिनिधि था। उसने गुरुदेव से कहा कि हम उनके उस वायुयान का अपहरण (Hijack) करने की योजना बना रहे हैं, हमें आपका समर्थन चाहिए। गुरुदेव ने स्पष्ट निषेध कर दिया, 'हम संयम के पक्षधर हैं। असंयम के पोषक नहीं हैं, फिर भी हम ऐसी उग्रवादी प्रवृत्तियों का कभी समर्थन नहीं करते'। इस विदेश-यात्रा के विषय में गुरुदेव का स्पष्ट मन्तव्य था कि यह धर्म-प्रचार के लिए नहीं, अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए हो रही है। क्या अपने ही देश में अभी धर्म-प्रचार का क्षेत्र बाकी नहीं बचा है? क्या विदेश-यात्रा का

मतलब सिर्फ इंग्लैण्ड और अमेरिका ही है? क्या एशिया और अफ्रीका के देशों में उन्होंने जैन धर्म की पताका फहरा दी है? इतना होने पर भी उन्होंने इस विषय को प्रवचन-सभाओं का विषय नहीं बनाया।

गुरुदेव को रोपड़ में पता चला कि पूज्यपाद भण्डारी श्री बलवन्तराय जी म. को विहार-यात्रा में हनिए की दिक्कत हो गई। धूरी के पास के एक गाँव शेरपुर में आप्रेशन करवाना पड़ा। श्री भण्डारी जी म. को किसी वाहन में न ले जाकर, सन्त ही एक खटिया पर अस्पताल में लाए। श्री तपस्वी जी म. का वह निर्णय बड़ा साहसी, फौलादी और संयम-दृढ़ता का प्रतीक था। उस गाँव में जो धर्म प्रभावना हुई, वह बड़ी अद्भुत थी। जालंधर पधार कर गुरुदेव ने वहाँ विराजमान वयोवृद्ध श्री रघुवर दयाल जी म. के दर्शन किए। प्रेम, सौहार्द का वातावरण बना।

सन् 1975 कर चातुर्मास होशियारपुर हुआ। यह क्षेत्र गुरुदेव के प्रति शुरू से ही समर्पित रहा है। पिछले चातुर्मास के उपकारों की स्मृतियाँ सबके मन को गुदगुदा रही थी। रौनक तो स्वतः स्फूर्त थी ही। प्रातः काल युवकों की धार्मिक प्रशिक्षण की क्लास लगी। रात्रिकथा के लिए श्री नरेश मुनि जी म. को तैयार किया गया, जो धीरे-धीरे प्रमुख प्रावचनिक बने। शहर से बाहर स्थित 'साधु-आश्रम' नामक संस्कृत के प्रसिद्ध शिक्षण एवं शोध-संस्थान के आचार्यों की भी सेवाएँ ली गई। भाई जितेन्द्र जी के माध्यम से कई प्रोफैसर आए और लघुमुनियों व विरक्तों को व्याकरण, काव्यमीमांसा, दर्शन-शास्त्र आदि कई विषयों का ज्ञान कराया। इससे वै. राजेन्द्र जी, राकेश जी को संस्कृत की विशारद व शास्त्री परीक्षा पास करने में विशेष सहायता मिली।

भगवान महावीर निर्वाण-वर्ष पूर्ण होने जा रहा था। गुरुदेव ने उस वर्ष एक स्थायी स्तम्भ अपने धर्म-संघ में स्थापित किया। दीपावली के दिन मध्याह्न में समाज की बहनों को और रात्रि में सब भाइयों के लिए जाप, शास्त्र-पाठ और मांगलिक सुनाने की परम्परा डाली। त्याग-पच्चक्खाण भी दिलाए गए। ये प्रथा आज तक प्रतिवर्ष जारी है। दीपावली से अगले दिन

श्रद्धेय श्री विनय मुनि जी म. ने पूरे तीन घण्टे एक आसन से बैठकर उत्तराध्ययन सूत्र की मूल वाचना की। यह स्थानीय लोगों के लिए एक नई और आश्चर्यकारी घटना थी। समाज ने शताब्दी वर्ष की सम्पूर्ति के उपलक्ष्य में एक सभा और विद्वद्-गोष्ठी भी कराई। विद्वानों के भाषण विषय-दृष्ट्या सुन्दर थे, पर लम्बे और उबाऊ थे। उन सबके भाषणों से अधिक प्रभावप्रद और विद्वत्तापूर्ण भाषण था श्री विनय मुनि जी म. का, जो प्रत्येक व्यक्ति की समझ में आया। फिर पूज्य गुरुदेव ने प्रवचन फरमाया, जो सर्वजन-ग्राह्य और प्रेरणा-परक था। उन्होंने प्रभु महावीर के पूर्वभवों को प्रस्तुत करते हुए उनकी साधना व तपस्या का बड़ी मनोहारी शैली में चित्रण किया।

चातुर्मास की सम्पूर्ति पर गुरुदेव जण्डियाला गुरु पधारे। इसी भूमि पर गुरुदेव ने 12 वर्ष पूर्व अपने जीवन-सर्वस्व, व्याख्यान-वाचस्पति गुरुवर्य श्री मदन लाल जी म. को अंतिम विदाई दी थी। उस पुण्य-भूमि किंवा तीर्थ-भूमि में जाने का चाव था, पर वहाँ की सामाजिक स्थिति बड़ी शोचनीय थी। छोटा-सा समाज पार्टीबाजी के कारण पूर्णतः छिन्न-भिन्न हो चुका था। पारस्परिक झगड़ेबाजी और मुकद्दमेबाजी में धर्मध्यान, गुरुभक्ति और चातुर्मासों की विनतियाँ सभी गौण और उपेक्षित हो गई थी। गुरुदेव के पधारते ही हवाओं ने करवट ली। खूब रौनकें हुई। क्षेत्र निर्माण की पुकार उठने लगी। विरोधी शक्तियाँ समीप आने के लिए कुलबुलाने लगी। पर जुड़ें कैसे? उलझनें काफी थी। कहीं ताना-बाना नजर नहीं आ रहा था। पूज्य गुरुदेव ने ललकार लगाई कि 'एक होने के अलावा कोई दूसरा विकल्प नहीं है। हम वाचस्पति गुरुदेव की इस पुण्य भूमि का गौरव क्षीण नहीं होने देंगे। केवल समाधि बनाकर ही हम गुरुदेवों के भक्त नहीं कहला सकते, आदि'। सब ग्रुपों ने गुरुदेव को अपना अधिकार सौंप दिया। एक दिन प्रवचन में गुरुदेव ने करीब 50 व्यक्तियों को आपस में एक-दूसरे के गले मिलवाया। वह दृश्य इतिहास का एक स्वर्णिम पृष्ठ है। वातावरण सुखद बना। फिर समाज के नेतृत्व का प्रश्न आया। कोई नाम सर्वसम्मत नहीं था। तब गुरुदेव ने एक ऐसे व्यक्ति का नाम घोषित किया, जो सब

ओर से तटस्थ था। श्री तरसेम कुमार जैन को प्रधान बनाकर गुरुदेव ने समस्या का स्थायी समाधान दिया। गुरुदेव-कृत इस शान्ति स्थापना का सारे पंजाब में सर्वत्र स्वागत हुआ। सबके होठों पर एक चर्चा थी कि कुछ सन्त तो मिले हुओं को तोड़-फोड़ कर चले जाते हैं और एक ये हैं कि सूई बनकर सबको जोड़ देते हैं। उस शान्त क्रांति को और अधिक पुष्टि प्रदान करने हेतु गुरुदेव ने अगले वर्ष अपने ज्येष्ठ सुशिष्य श्री प्रकाश मुनि जी म. ठाणे 3 का चातुर्मास वहाँ कराया।

जब जण्डियाला से पट्टी पदार्पण हुआ, तब गुरुदेव को फरीदकोट की भी चिन्ता हुई, क्योंकि उन्हीं दिनों फरीदकोट समाज में भी काफी क्लेशमय वातावरण था। ये भी बड़े गुरुदेव का चिर-सिंचित, चिर-पोषित क्षेत्र था। पूज्य गुरुदेव ने अपने परम विचक्षण सुशिष्य श्री शास्त्री जी म. को वहाँ भेजा कि 'जाओ, तुम्हें यश मिलेगा'। फरीदकोट शान्ति-अभियान से पूर्व गुरुदेव ने मुन्नी-मोती परिवार के वरिष्ठ श्रावक श्री शादीलाल जी से परामर्श मांगा कि 'शास्त्री को फरीदकोट भेजूं या नहीं? उन्होंने इस सद्भावनापूर्ण कदम की सराहना की और भेजने के लिए विनति भी की। श्री शास्त्री जी म. का अनुभव रहा है कि गुरुदेव जी म. दूर बैठे भी स्थिति को रहस्यमयी शक्तियों से संभाल रहे थे। एक पत्र उन्हें गुरुदेव का मिला, जिसके बॉर्डर पर 16 स्वास्तिक बने हुए थे। अर्थ निकला कि 16 दिन में कार्य सफल होगा!

इसी तरह श्री शास्त्री जी म. ने गुरुदेव से प्रवचन के लिए एक दृष्टान्त (ीवतज `जवतल) मंगवाया था। गुरुदेव ने लिख भेजा और उसके नीचे वो कुछ भी लिखा, जो एक शिष्य के लिए महान् उपलब्धि मानी जा सकती है कि "त्रिवेणी की सेवा में भेंट एक गुरुदेव की आत्मा का वो आशीर्वाद, जो सदा फलीभूत हो"। वहाँ के विवाद बड़े पेचीदा थे। महाराज श्री जी के प्रयास व गुरुदेव के आशीर्वाद से एकता, शान्ति व सौहार्द का वातावरण तो बना, पर यह अधिक वर्षों तक स्थाई नहीं रह पाया। फरीदकोट को शांति का पाठ पढ़ाकर जब शास्त्री जी म. केवल पांच दिन में ही अमृतसर पहुंचे, तब उनकी अगवानी में सबसे आगे गुरुदेव जी

म. थे। लघु मुनि भी उस समय गुरुदेव से पीछे रह गए थे। एक गुरु ने जो प्यार-दुलार उन्हें दिया, वह उनकी शाश्वत अमानत है। जण्डियाला में रहते हुए गुरुदेव ने जयमुनि के कुछ भाषण अंग्रेजी में करवाए। अमृतसर के अमृत लाल जी जैन ने गुरुदेव को बधाई दी तथा गुरुनानक देव यूनिवर्सिटी में लैक्चर कराने की अनुमति मांगी। डी.ए.वी. कालेज अमृतसर की प्रिंसीपल सुदेश अहलावत ने भी कालेज में भाषण की विनति की। पर गुरुदेव ने अभी अपरिपक्वता देखते हुए निषेध कर दिया।

गुरुदेव अमृतसर पधारे। सिद्धान्त और समाज-सुधार के अलावा राष्ट्रीय चरित्र पर भी बड़े ओजस्वी और मार्मिक प्रवचन दिए। एक पत्रकार ने उनको अखबारों में काफी कवरेज दी। कई बार तो प्रथम पृष्ठ पर कई-कई कालमों में गुरुदेव के प्रवचन आए। गुरुदेव ने जीवन में अखबारों में कभी रुचि नहीं रखी। अन्यथा कई स्थानों पर पत्रकार उन्हें घेरे रखना चाहते थे।

अमृतसर में एक विशिष्ट धनाढ्य व्यक्ति गुरुदेव के दर्शनार्थ आया। चरण पकड़ कर फूट-फूट कर रोने लगा। गुरुदेव दयार्द्र थे। उसे संभाला। निरवद्य भाषा में आश्वासन दिया। एक शेर सुनाकर उसे आशा के सूत्र से जोड़ा—

शकिस्ता-दिल न हो मेरे माली, वो दिन भी दूर नहीं,
जब फूल खिलते हुए मिलेंगे, फिजा महकती हुई मिलेगी ॥

और सचमुच ही उसके जीवन में बड़ी जल्दी फूल खिले, निराशाएँ दूर हुई। इस घटना से मुनियों को भी संसार की दुःखान्तता के बारे में और अधिक निश्चय हुआ।

अमृतसर से गुरुदेव जम्मू जाना चाहते थे, यद्यपि उस क्षेत्र की विनति नहीं आई थी। वहाँ कुछ श्रावकों को जानते भी थे, परन्तु पहले कभी वहाँ न जाने से अधिकारी-वर्ग से परिचय नहीं था। रास्ता लम्बा, बीच में जैन परिवारों का अभाव, जम्मू वालों की नितान्त उपेक्षा होते हुए भी दो-तीन

सिंघाड़े बनाकर चल दिए। बटाला, गुरुदासपुर, पठानकोट का रास्ता बड़ा कठिन था। जम्मू जाने वाले अन्य साधु प्रायः टिफिन का आहार और सेवादार द्वारा तैयार किया हुआ पानी ले लेते थे, पर गुरुदेव के साथ ऐसा होना असम्भव था। उन दिनों कोई सेवादार भी उनके पास नहीं था। एक आश्चर्यजनक घटना कोटली गाँव की है। पूज्य गुरुदेव ठहरे हुए थे। सन्तों की पिछली टोली 20 कि.मी. पीछे थी। शाम को लगभग 4 बजे गुरुदेव ने फरमाया। "शास्त्री आने वाला है"। साथी सन्तों ने अर्ज करी कि 'वे तो काफी पीछे हैं। कल शाम तक ही या परसों तक ही पहुँच पाएँगे।' पर गुरुदेव की सूक्ष्म मानस तरंगें उनके शीघ्र आगमन की सूचना दे रही थी। किसी को विश्वास नहीं हुआ। सहसा गुरुदेव अपने आसन से उठे। बोले—'तुम यहीं बैठे रहो और मैं अभी 5 मिनट में आता हूँ'। सन्त बैठे रहे। गुरुदेव मकान से बाहर गए। सही 5 मिनट में लौटे, पर आश्चर्य कि श्री शास्त्री जी म. की टोली साथ में थी।

जम्मू की ओर जाते समय तीन टोलियों में विहार हुआ। गुरुदेव ने अपने चरणों में केवल श्री नरेश मुनि जी म. को रखा। शेष सन्तों की दो टोलियाँ बनाई। सन्तों ने बहुत अनुनय की कि अपनी सेवा में दो तीन सन्तों को जरूर रखो, पर गुरुदेव का निर्णय अटल था। सारा रास्ता दोनों ने ही तय किया। आहार में केवल रूखी-सूखी रोटी, अचार और लस्सी। घर दिखाने वाला भी कोई नहीं था। पर गुरुदेव तो साहसिक यात्राओं के अभ्यासी थे। श्री नरेश मुनि जी म. ने अकेले ही गुरुसेवा का अमृत चखा।

तेरह मार्च को अग्रिम टोली के संत जम्मू पहुँचे। वे जैन हाल में रुके। गुरुदेव कुछ दिन बाद पधारे। स्थानक में सतियाँ ठहरी थी। श्री बंसीलाल कपूरचन्द जी जैन की नव-निर्मित कोठी में ठहरे। प्रवचन स्थानक में किए। फिर जो धर्म-प्रभावना वहाँ हुई, उसे एक चमत्कार, करिश्मा या करामात कुछ भी कह सकते हैं। जो गुरु-भक्ति एवं संयमी सन्तों के प्रति निष्ठा वहाँ जगी, वह अपने आप में एक शब्दातीत इतिहास है। हर व्यक्ति पश्चात्ताप-ग्रस्त था कि हमें आपके विषय में पता नहीं था। तरह-तरह से बहकाया गया था कि 'वे सन्त काले कपड़े, काले पानी वाले है, इन्हें मुँह न

लगाना, आदि।' सारे समाज ने उस वर्ष वहीं चातुर्मास कराने की जी-तोड़ कोशिश की, पर गुरुदेव का वहाँ एक कल्प से अधिक ठहरने का भाव नहीं था। श्रावकों ने तर्क रखा कि आज तक कोई भी साधु यहाँ से बिना चातुर्मास किए नहीं लौटा। इस पर गुरुदेव ने विनोदपूर्ण लहजे में फरमाया कि 'चलो, आगे से ये भी याद रख लेना कि एक साधु बिना चौमास किए लौट गया था'। समाज के पास पश्चात्ताप के सिवाय कुछ भी शेष नहीं था। जनता का उत्साह अद्‍भुत था। गुरुदेव ने बिना खण्डन-मण्डन में पड़े बच्चे-बच्चे को अपना बना लिया। वहाँ पर सामूहिक आयम्बिल- दिवस मनाने की प्रेरणा दी। श्रावकों ने एक दिन में ही 900 आयम्बिल करके अपनी भक्ति की शक्ति का परिचय दिया। लोगों ने गुरुदेव से वैष्णो देवी और श्रीनगर पधारने की भी विनति की, पर गुरुदेव ने मना कर दिया। वैरागियों की भावना को देखते हुए उनको अनुमति प्रदान कर दी।

जम्मू में ही गुरुदेव ने सन् 1976 के अपने चातुर्मास की जालन्धर के लिए स्वीकृति प्रदान की। वहाँ से वापिसी का रंग कुछ और ही था। लोगों की चातुर्मासार्थ तीव्र भावना को देखते हुए फरमा दिया कि 'कभी योग बना तो करूँगा'। उसके बाद प्रायः हर वर्ष जम्मू वालों की विनति आती रही। गुरुदेव का तो योग नहीं बना, पर अपने गुरु-भ्राताओं और प्रतिनिधि शिष्यों के चातुर्मास करवा कर अपनी ही भावनाओं की पूर्ति मानी।

1975 के प्रारंभ में पूज्य श्री तपस्वी बद्री प्रसाद जी म. के कहने से दर्शनार्थी भाइयों के आतिथ्य में दिए जाने वाले नाश्ते में मीठा-नमकीन सब कुछ बंद होने से स्थान-स्थान पर सामाजिक दिक्कतें आने लगी। किसी को भी उस व्यवस्था से संतोष नहीं था। फिर भी गुर्वाज्ञा मानकर सर्वत्र पालन किया जा रहा था। पर जम्मू में वह भी नहीं चला। गुरुदेव आग्रह-वृत्ति के नहीं थे। और वहाँ तो प्रथम बार गए थे। इसी मुद्दे को प्रमुख नहीं बनाना चाहते थे। समाज ने दर्शनार्थियों की व्यवस्था अपने ढंग से की। जम्मू से मुकेरियां पहुँचकर गुरुदेव ने मन में ही निर्णय कर लिया कि ये व्यवस्था चलने वाली नहीं है। इसे अधिक खींचना ठीक नहीं।

अतः श्री तपस्वी जी म. को समाचार भिजवा दिया कि खाने में मीठा बंद रखने के लिए समाज को कह दिया जाएगा, नाश्ते में नहीं, क्योंकि पंजाब की स्थिति कुछ भिन्न है। श्री तपस्वी जी म. का समाचार भी आ गया कि आप यथोचित करें। हमारे यहां बन्द ही रहेगा। एक दूसरे की स्थिति को समझना दोनों महापुरुषों की खूबी थी।

गुरुदेव ने छोटे से क्षेत्र मुकेरियां में भी धर्म-प्रेम का बगीचा लगा दिया। वहाँ से होशियारपुर पधारे। तब वहाँ की समाज वैमनस्य की शिकार थी। गुरुदेव ठीक कर सकते थे, पर दूर बैठे एक सन्त के द्वारा तार हिलाने के कारण हस्तक्षेप करना उचित नहीं समझा।

गुरुदेव जालन्धर पधारे। ये वाचस्पति गुरुदेव का प्रिय पोषित क्षेत्र था। पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. ने इसे निखारा था और महासाध्वी श्री पार्वती जी म. एवं श्री राजीमती जी म. ने इसके निर्माण में अपनी साधना की आहुति डाली थी। बाँस बाजार वाली स्थानक में ठहरे। प्रवचन मार्किट की स्थानक में होता। मण्डी के हरियाणवी श्रावक तो इस चातुर्मास को पाकर धन्य-धन्य हो गए। श्री संदर मुनि जी ने उस वर्ष 15 दिन की कठोर तपस्या की। गुरुदेव को बड़ी खुशी हुई। समाज के कुछ अग्रणी व्यक्तियों की इच्छा थी कि गुरुदेव के चरणों में जालंधर के अखबारों के सम्पादक-समूह को लाया जाए, पर गुरुदेव प्रचार-तंत्र को अधिक महत्त्व नहीं देते थे, इसलिए मना कर दिया।

जालंधर में पर्युषण पर्वो में अप्रत्याशित रूप से तपस्या की लहर आ गई। यद्यपि गुरुदेव की अधिक प्रेरणा नहीं थी, तो भी 108 अठाइयाँ हुई। पूरे पंजाब में इसकी चर्चा हुई कि गुरुदेव की गरिमा और महिमा का कोई पार नहीं है। जहाँ बैठ जाते हैं, तपस्याओं की बहार आ जाती हैं। गुरुदेव ने तपःपूर्ति पर समाज-स्तर पर कोई आडम्बर नहीं होने दिया। किसी ने अपने घर पर कुछ वितरण आदि किया, तो दखल नहीं दिया। गुरुदेव तपस्या की गिनती-मात्र से ही चातुर्मास की सफलता या असफलता का आकलन नहीं करते थे। पूरा विवरण मिले बिना तपस्या की घोषणा भी

नहीं कराते थे। न ही अन्य क्षेत्रों से लोगों को बुला-बुलाकर अपने क्षेत्र की तपस्या की संख्या-वृद्धि कराते थे। किसी अस्वस्थ भाई-बहन को तपस्या नहीं कराते थे और यदि किसी को जोर लग जाए, तो आगे बढ़ने का जोर नहीं देते थे। तपस्वियों को स्वयं दर्शन देने जाते, उनके पारणे की भी पूरी निगरानी रखते। दर्शन देने जाते, तो हाथ नहीं फरसते थे। अति आग्रह होने पर फरमा देते कि 'मैं लेने नहीं, देने आया हूँ'। तपस्वियों के गुणानुवाद में उन्हें विशेष आनंद आता था। बड़े तपस्वियों से कह देते कि मुझे भी तपस्या का वरदान दो। वर्षी-तप करने वाली बहनों का विशेष सम्मान करते थे।

जालंधर के प्रमुख श्रावक श्री केवल चन्द जी जैन ने भी पर्युषणों में अठाई की। उनकी तपस्या आराम से हो गई, पर पारणे में कुछ असावधानी हो गई। उनको पुरानी मधुमेह थी। डाक्टर ने भी बिना सोचे-समझे मात्र कमजोरी को देखते हुए ग्लूकोज लगा दिया। इससे उनका देहान्त हो गया। पूज्य गुरुदेव का मन काफी खिन्न हुआ। कुछ तत्वों ने समाज में रोष और आक्रोश का माहौल बनाया, पर गुरुदेव की विनम्रता और प्रभावित परिवार की गुरु-भक्ति से वातावरण फिर पूर्ववत् सुखद बन गया।

गुरुदेव का ग्लानों की अग्लान भाव से सेवा का एक प्रसंग इस चातुर्मास-काल का है। श्री शास्त्री जी म. को मलेरिया का तीव्र प्रकोप हुआ। शाम का समय था। तेज बुखार था। दवा और दूध दिया गया। सन्त पास में थे। गुरुदेव ने देखा कि श्री शास्त्री जी म. को उल्टी होने वाली है। सन्तों को टब लाने को कहा। इतने में उल्टी आ गई। गुरुदेव ने अपने दोनों हाथों में ही उल्टी थाम ली। कपड़े खराब होने से बच गए। नहीं तो समय भी थोड़ा था। पानी भी थोड़ा था। काफी दिक्कत होती। गुरुदेव की सेवा-भावना उत्कृष्ट थी। चातुर्मास में एक दिन श्री नगीन चंद जी कसूर वालों ने गुरुदेव से पूछा कि क्या आप आहार में 'बोर्नवीटा' ले लेते हो? गुरुदेव ने कहा "हां, कभी कभार काम पड़ जाता है"। श्रावक ने बताया कि मैंने निर्माता कंपनी से संपर्क करके लिखित समाचार मंगवाया है और उन्होंने उसमें अभक्ष्य पदार्थ का मिश्रण स्वीकार किया है। गुरुदेव

ने तुरन्त स्वयं जीवन-पर्यन्त के लिए प्रत्याख्यान लिया तथा मुनियों को भी करवा दिया।[1]

दीपावली के पास 15 दिन तक गुरुदेव मंडी फैंटनगंज विराजे। वहाँ की निश्छल भक्ति-भावना और धर्म-श्रद्धा दर्शनीय थी। उन्होंने अपना धर्मस्थान बनाने का संकल्प लिया। श्री शास्त्री जी म. ठाणे 2 से शहर में ही रह गए थे। उन्होंने दीपावली से अगले रोज उत्तराध्ययन सूत्र की मूल वाचना की। उसके मध्य में ही गुरुदेव पधार गए। चातुर्मास की पूर्ति पर समाज ने एक विशाल नेत्र-कैम्प लगाया। गुरुदेव प्रवचन करने पधारे। सैंकड़ों रोगियों को मद्यपान व मांसाहार का त्याग कराया। सब आप्रेशन सानंद संपन्न हुए।

चातुर्मास के पश्चात् गुरुदेव कपूरथला, सुल्तानपुर, पट्टी, जीरा होते हुए फरीदकोट पधारे। पिछले वर्ष श्री शास्त्री जी म. की मेहनत को देखकर गुरुदेव बड़े प्रसन्न हुए। क्षेत्र पर विशेष अनुग्रह का विचार बना। यह वाचस्पति गुरुदेव का विशेष कृपापात्र क्षेत्र था। इसी क्षेत्र से भारत-भर में महावीर जयन्ती मनाने की परम्परा सन् 1923 में चालू हुई थी। उसे अपनी कृपा से सराबोर करके भटिण्डा होते हुए सिरसा पधारे। मूनक में श्री तपस्वी जी म. से मिलन हुआ। गत वर्ष जम्मू आदि क्षेत्रों में लोगों द्वारा नाश्ते में अकेली चाय देने से उत्पन्न सामाजिक समस्या पर भी विचार-विमर्श हुआ। निर्णय ये हुआ कि गुरुदेव के चरणों में गृहस्थों की इच्छानुसार व्यवस्था चले। श्री तपस्वी जी म. के चरणों में केवल एक पेय पदार्थ वाली व्यवस्था चलेगी। कुछ वर्ष पश्चात् श्री तपस्वी जी म. ने भी बिस्कुट और नमकीन की अनुमति दे दी।

यह वो समय था जब देश की राजनीति में भी अप्रत्याशित परिवर्तन हुआ था। सन् 1947 से लेकर 1977 तक तीस वर्ष केन्द्र में सत्ता पर काबिज रही कांग्रेस पार्टी का चुनावों में सफाया हो गया था। इस परिवर्तन के सम्बन्ध में भी गुरुदेव ने कुछ संकेत समय-समय पर दिए थे। वे संकेत

1 वर्तमान में उपलब्ध यह खाद्य बहरे निशान से युक्त ही आता है, अतः अभक्ष्य नहीं हैं।

बौद्धिक आकलन का परिणाम था या अन्तरात्मा की आवाज का इजहार, कुछ नहीं कहा जा सकता। उदाहरण के रूप में फरीदकोट में जनवरी माह में ला. शादी लाल जी (मुम्बई वाले) को बिल्कुल साफ कह दिया कि भारत की राजनीति में भारी बदलाव आने वाला है और इन्दिरा जी की स्थिति डांवाडोल है'। तब तक आपातकाल उठने की कोई संभावना नहीं थी। महीने भर बाद जब गुरुदेव भण्टिडा से रामां पधारे, तब एमरजैंसी (आपातकाल) हटा ली गई। कुछ दिनों में चुनावों की घोषणा भी हो गई। उत्तर भारत में कांग्रेस के खिलाफ जबरदस्त आक्रोश था। अगले महीने गुरुदेव ने सिरसा से विहार किया ही था कि पता चला कि देश के राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली अहमद का देहान्त हो गया। तब भी गुरुदेव के मुख से यही निकला, "इन्दिरा जी का छत्र-भंग हो गया है"। मूनक पहुंचते-पहुंचते तक तो चुनावों के परिणाम भी आ गए और कांग्रेस की जगह 'जनता पार्टी' ने ले ली।

मूनक से समाणा आए। समाणा में फरीदकोट का चातुर्मास घोषित किया। यद्यपि इससे पहले भी मानसा में वहां की समाज आई थी। मगर गुरुदेव ने ये देखकर कि समाज का सर्वांगीण प्रतिनिधित्व नहीं है, विनति मानने से इंकार कर दिया था। ये कहा कि पहले अपनी समाज की स्थिति को पटरी पर ले आओ! अधिकारी-वर्ग को अपनी भूल समझ आई। जब सारी समाज एक होकर समाणा पहुंची, तो उन्हें चौमास का तोहफा मिला। फिर गुरुदेव पटियाला पधारे। वहाँ पर श्री शिवमुनि जी म. मिले। गुरुदेव के प्रति वे परम विनीत थे। उन दिनों अपनी पी.एच.डी. पूरी करने में लीन थे। श्री शांति चन्द्र जी म. की अस्वस्थता के कारण गुरुदेव वहाँ चालीस दिन रुके। गुरुदेव ने श्री शिवमुनि जी की अन्तरात्मा को पहचाना। अन्तरंगता बढ़ती गई। इतनी अधिक बढ़ी कि सभी के लिए कल्पनातीत। एक गुरु अपने शिष्य के लिए जितना अधिक स्नेह और दुलार दे सकता है, वह गुरुदेव ने उन्हें दिया। श्री शिवमुनि जी म. का समर्पण-भाव भी बड़ा अनूठा था। उन्होंने बताया कि एक समय ऐसा भी था, जब मैं आपके पास दीक्षा लेने का इच्छुक था। परिवार वाले भी यही

चाहते थे, पर संयोग नहीं बन पाया। गुरुदेव का जीवन देखकर वे फ्लश और पंखे का प्रयोग भी छोड़ने को तैयार हो गए थे। गुरुदेव ने उन्हें प्रवचन करने को प्रोत्साहित किया तथा प्रवचनों में बार-बार फरमाया कि ये मेरी आज्ञा से बोल रहे हैं। उनकी प्रगति को देखकर बड़ा सन्तोष हुआ। उनका शोध-निबंध अपने शिष्य जयमुनि को पढ़वाया। गुरुदेव समझते थे कि एक कुलीन, सुशिक्षित, चरित्र-निष्ठ, विनम्र मुनि संयम-साधना में अग्रसर हो और भविष्य में संघ और समाज का आधार बने। जब गुरुदेव पटियाला से विहार करके बरनाला पधारे, तो श्री शिवमुनि जी विशेष रूप से गुरुदेव के दर्शन करने आए। महास्थविर श्री पन्ना लाल जी म., कवि-चक्र-चूड़ामणि श्री चन्दन मुनि जी म. वहाँ स्थिरवास थे। बाद में श्री क्रांति मुनि जी म. ठाणे 2 भी पधार गए। बड़ा मधुर और सुखद वातावरण था। बरनाला क्षेत्र की लघु काया में महान् श्रद्धामयी आत्मा की पहचान गुरुदेव ने की। श्री नरेश मुनि जी म. के ज्वर-ग्रस्त होने से कुछ लम्बा ठहरना पड़ा। सबके सम्मिलित प्रवचन होते थे। श्री चन्दन मुनि जी म. की आशु कविता के मोहक रंग ने सबको मोहित कर दिया। तत्र विराजित सभी मुनियों के नाम एक दोहे में समेट कर उन्होंने सबको आह्लादित कर दिया–

शान्ति क्रान्ति अरविन्द शिव, सुदर्शन पद्म नरेश।
जयमुनि पन्नालाल गुरु, चन्दनमुनि परमेश ॥

ये 11 ठाणे वहाँ कई दिन एकत्र रहे। श्री शिवमुनि जी को वहाँ आए कई दिन हो गए थे। वे गुरुदेव के प्रवचन-श्रवण के ही पिपासु थे, अतः स्वयं प्रवचन देने से कतरा रहे थे। सन्तों व श्रावकों की भावना को विनोद-रूप देते हुए श्रीचन्दन मुनि जी म. ने दोहा बनाया–

शिव मुनिवर जी एम.ए., कई दिनों से मौन।
मुनि सुदर्शन के बिना, इन्हें मनाए कौन ॥

जब बात गुरुदेव पर आ गई, तो उन्होंने अगले दिन श्री शिवमुनि जी को प्रवचन का आदेश दिया, जिसका उन्होंने पालन किया। बरनाला के विनोदपूर्ण वातावरण से विहार करके भदौड़ पधारे। वहाँ जयमुनि को बुखार हुआ। गुरुदेव ने पहले ही सावधान किया था कि बुखार मत कर लेना, पर उस चेतावनी में ही बुखार छिपा था। ठीक होते ही विहार हुआ। उसी दिन श्री शास्त्री जी म. को बुखार हो गया, पर उन्होंने किसी को बताया नहीं, क्योंकि रास्ता लम्बा था और चातुर्मास का समय थोड़ा था। प्रथम पड़ाव पर पहुँचने से पहले रास्ते में ज्ञात हुआ। बुखार में ही 70 कि.मी. विहार करते रहे। बीमारी बढ़ गई। जैतों पहुँचते-पहुँचते निढाल हो गए। उनका चातुर्मास भटिण्डा होना था, पर उसे निरस्त करके श्री शान्ति मुनि जी म. ठाणे 3 को वहां भेजा गया। गुरुदेव का स्वयं का 1977 का चातुर्मास फरीदकोट हुआ। गत वर्ष वहाँ जो शान्ति स्थापना हुई थी, वह बहुत गहरी नहीं थी, इसलिए कभी-कभी अशान्ति के स्वर भी सुनाई देते रहे। गुरुदेव समाज के कार्यों के प्रति तटस्थ रहे। समाज-सुधार की अधिक गुंजाइश न देखकर केवल धर्मध्यान कराने को ही अपना लक्ष्य बनाया। रात्रि-कथा के रूप में श्री नरेश मुनि जी के साथ-साथ श्री सुंदर मुनि जी को भी दायित्व सौंपा गया।

5. हरा हुआ हरियाणा

चातुर्मास के पश्चात् गुरुदेव ने हरियाणा पधारने का मन बनाया। जगरावाँ, रायकोट होते हुए अम्बाला पधारे। वहाँ के जेहलम परिवार की पारस्परिक कटुता गुरुदेव की कृपा से दूर हुई थी, अतः वहाँ आए। वहां तपस्वी श्री सुदर्शन मुनि जी का भरपूर दुलार मिला। महावीर जयंती कुरुक्षेत्र में करने का भाव था। मार्ग में शाहबाद ठहरे। कोठी नई थी, फर्श चिकने थे। अचानक पैर फिसल गया और घुटना मुड़ गया। काफी तकलीफ हो गई। गृहस्वामी ने निवेदन किया कि 'कुछ दिन ठहर कर उपचार करवा लो, वर्ना सारी जिन्दगी ये तकलीफ झेलनी पड़ेगी।' पर गुरुदेव ने चिन्ता नहीं की, चल दिए। दर्द बढ़ता गया। ये दर्द सारी जिन्दगी ही चला और 'दर्द बढ़ता गया, ज्यूं ज्यूं दवा की'। कुरुक्षेत्र, करनाल होकर पानीपत पधारे। मुनि-मिलन हुआ। तब जो तीन चार हजार की भीड़ का सैलाब आया, उसने आगे के लिए सन्त-मिलन को एक विशिष्ट घटना बना दिया। यहीं से मुनि-मिलन के लिए 'सम्मेलन' शब्द का व्यवहार होने लगा, जो गुरु-चरणों में प्रायः प्रतिवर्ष चातुर्मास के बाद होता था।

उन दिनों पूज्य गुरुदेव अपने दोनों वैरागियों राजेन्द्र जी एवं राकेश जी की भावी शिक्षा की रूपरेखा बना रहे थे। दोनों संस्कृत की 'शास्त्री' एवं हिन्दी की 'साहित्य-रत्न' परीक्षा दे चुके थे। वै। राकेश जी ने पंजाब यूनिवर्सिटी चण्डीगढ़ से संस्कृत की 'विशारद' एवं 'शास्त्री' परीक्षा में प्रथम स्थान एवं स्वर्ण पदक प्राप्त कर गुरुओं के गौरव को चमकाया था। साधु बनने के बाद परीक्षाओं का सिलसिला हमारे संघ में चलता नहीं। विचार बना कि इन्हें संस्कृत से एम.ए. करा के बाद में 'पार्श्वनाथ जैन विद्याश्रम' वाराणसी' से जैन विषय में पी.एच.डी. करा देंगे। दो प्रतिभा

सम्पन्न युवा मुनिराज अपना भी सहारा बनेंगे तथा समाज के लिए भी कुछ कर सकेंगे। इस विषय में गुरुदेव ने अपने गुरु-भ्राता परम विद्वान् श्री राम प्रसाद जी म. से विचार-विमर्श किया। उन्होंने उस समय अपना कोई मन्तव्य नहीं दिया, लेकिन एक दिन प्रवचन में ही फरमा दिया कि णमोकार मंत्र के पाँच पदों में 'णमो लोए सव्व साहूणं' तो है, पर 'णमो लोए सव्व डाक्टराणं' नहीं है। गुरुदेव ने इतने मात्र से ही उनका इशारा समझ लिया। पी.एच.डी. का विचार त्याग दिया। केवल 'बीकानेर जैन साधुमार्गी बोर्ड' द्वारा संचालित एक धार्मिक परीक्षा ही दिलवाई।

पानीपत में श्रद्धेय श्री तपस्वी जी म. आदि पूज्य मुनिराजों की सेवा में श्री शास्त्री जी म. एवं श्री सुन्दर मुनि जी की नियुक्ति हुई।

सन् 1978 का चातुर्मास गुरुदेव का समालखा मण्डी में हुआ। क्षेत्र छोटा था, पर भक्ति-सम्पन्न। जैन-अजैन सभी आते। रात्रि-कथा के लिए जय मुनि जी की ड्यूटी गुरुदेव ने लगाई। समालखा का स्थानक नया था। परन्तु पास ही रेल और सड़क का काफी शोर होता। प्रवचन में बार-बार खलल पड़ती। नींद में भी कई बार विघ्न होता, पर गुरुदेव ने कभी शिकायत नहीं की। सन्त कभी दिन में विश्राम करने की विनति करते तो कह देते—'अच्छा है, रेलों के बहाने रात को स्वाध्याय का समय मिल जाता है। गुरुदेव के शरीर में घुटनों की एवं पेशाब की तकलीफ बढ़ती जा रही थी। कभी-कभी Pus Cells बढ़ने से तापमान भी बढ़ जाता। सायंकाल तक शरीर पूरी तरह निढाल हो जाता था।

पर्यूषणों के समीप समालखा के आस-पास बाढ़ का खतरा हो गया। मण्डी डूबने की आशंकाएँ होनी लगी। मण्डी के गणमान्य व्यक्ति गुरुदेव के चरणों में आए, समाधान मांगा। गुरुदेव ने आश्वासन दिया कि 'चिन्ता मत करो। मिल कर रहो और धर्म का शरणा रखो। मण्डी को कुछ नहीं होगा'। सब आश्वस्त होकर चले गए। समीपवर्ती गाँवों में पानी आया, पर समालखा सुरक्षित बच गया।

समालखा चातुर्मास के अन्त में गुरुदेव ने घोषणा की कि 18 जनवरी 1979 को सोनीपत में वैरागी राजेन्द्र जी एवं राकेश जी की दीक्षा होगी। इस घोषणा से सर्वत्र आह्लाद छा गया, क्योंकि करीब छः वर्षों के अन्तराल के बाद गुरुदेव के मुनि-संघ में वृद्धि होने जा रही थी। दीक्षा से पूर्व गुरुदेव ने दोनों वैरागियों को बड़े-बड़े आचार्यों के दर्शन करने राजस्थान व मध्यप्रदेश भेजा। वे पहले जयपुर गए। फिर वहाँ से लोहावट में आचार्य-प्रवर श्री नाना लाल जी म.सा. एवं उज्जैन में आचार्य-प्रवर श्री हस्ती मल जी म.सा. के दर्शन किए एवं मधुर कृपा ली। अजमेर, रतलाम में भी स्थविर मुनिराजों के दर्शन किए। वहाँ के मधुर संस्मरण जब गुरुदेव ने सुने, तो बड़े आह्लादित हुए। दोनों वैरागियों पर पूज्य आचार्य-प्रवर श्री नाना लाल ली म. के ओज और प्रताप की तथा आचार्य-प्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. की गंभीरता और स्वाध्याय-शीलता की अमिट छाप पड़ी थी। वैरागी बंधु वहीं से मंगल-भावना की परम्परा सीख कर आए, जिसे गुरुदेव ने कुछ परिवर्तन करके इधर चालू किया। 'अहो गुरुदेव जी महाराज! हम आपके.............' वाला पाठ इस इलाके में 1980 से ही शुरू हुआ है।

सोनीपत दीक्षा-समारोह पर एक नवीन प्रथा की शुरुआत भी हुई। इससे पूर्व दीक्षाओं पर समाज के किसी विशिष्ट धनी मानी व्यक्ति को अध्यक्ष बनाया जाता था। यहाँ से संघ में दीक्षित मुनिराजों के बलिदानी परिवारों में वरिष्ठता-क्रम से किसी एक सदस्य को दीक्षा-समारोह का अध्यक्ष बनाया जाने लगा। अतः इस प्रसंग पर गुरुदेव के ज्येष्ठ शिष्य श्री प्रकाश मुनि जी म. के संसार-पक्षीय पिता ला. पन्नालाल जी भंसाली को अध्यक्ष पद का गौरव दिया गया। इस मौके ये भी सावधानी रखी गई कि अध्यक्ष बनने के एवज में कभी भी कोई दान-राशि नहीं ली जाएगी।

सोनीपत दीक्षा की भीड़ पुरानी सब दीक्षाओं से अधिक रही। कई दिनों तक मौसम प्रतिकूल रहा। दीक्षा के दिन काफी धुंध भी थी। कुछ सन्त धुंध में ही दीक्षा की सवारी देखने के लिए छज्जे पर आ खड़े हुए। गुरुदेव जी म., सभी वरिष्ठ एवं कुछ कनिष्ठ संत भीतर ही बैठे थे।

श्री तपस्वी जी म. को बाहर गए संतों की चंचलता बहुत अखरी और गुरुदेव को ही उपालम्भ देने लगे कि 'क्या आपने सन्तों को यही सिखाया है? कोई मर्यादा नहीं। धुंध का भी विवेक नहीं।' गुरुदेव सुनते रहे। फिर उन्होंने सब मुनियों को अन्दर बुलवा लिया। दीक्षा का कार्यक्रम तो सम्पन्न हो गया, पर दो दिन पहले हुई वर्षा के कारण समारोह-स्थल पर प्रायः अव्यवस्था ही रही।

दोनों नवदीक्षित मुनि बौद्धिक, मानसिक एवं शारीरिक दृष्टि से परिपक्व थे। ऊंचे इरादों के साथ संयम पथ पर आरूढ हुए थे। परिवार-जनों ने अरमानों से अर्पित किए थे। समाज को भी बड़ी आशाएं थी। पूज्य गुरुदेव जी म. भी चाहते थे कि ये खानदानी युवक अपने गंतव्य के प्रति सदैव सावधान रहें। इसलिए पूज्य गुरुदेव जी म. ने उनके आध्यात्मिक प्रशिक्षण हेतु 28 बातें शास्त्रों से व आत्म-अनुभव से, निचोड़ कर अपने हाथों से लिखकर उन्हें दी। ये बातें आज भी प्रत्येक साधक के लिए उपयोगी हैं, तद्यथा–

1. प्रातः उठते ही नवकार मंत्र बोलना।
2. 'इच्छामि पडिक्कमिउं पगामसिज्जाए'– का ध्यान करना।
3. चार लोगस्स का ध्यान करना।
4. फिर अपने गुरुदेव को या रत्नाधिक सन्त को पास जाकर वन्दना करनी।
5. प्रतिलेखना के बाद 'आयाण-भण्ड-मत्त' का ध्यान करना।
6. बाहर से आकर 'इच्छाकारेण' का ध्यान करना।
7. आहार, पानी, दूध, औषधि आदि लाने के बाद 'पडिक्कमामि गोयरचरियाए' का ध्यान करना।
8. स्वाध्याय के बाद 'आगमे तिविहे' का ध्यान करना।
9. चार समय स्वाध्याय करना। कम से कम ग्यारह गाथाएँ।
10. प्रतिलेखना के समय मौन रहना या यत्नापूर्वक कम बोलना।

11. आहार के समय मौन रहना या यत्नापूर्वक कम बोलना।
12. चलते हुए मौन रहना या यत्नापूर्वक कम बोलना।
13. प्रतिक्रमण के समय मौन रहना या यत्नापूर्वक कम बोलना।
14. खुले मुंह कभी नहीं बोलना।
15. रात्रि को बड़ों को वन्दना व वैयावृत्य करके सोना प्रतिदिन आवश्यक है।
16. कोई बात गुरु म. से छिपाकर नहीं रखनी।
17. बिना पूछे न कोई काम करना, न आपस में लेना देना।
18. प्रत्येक पक्खी को 15 दिन के लिए कुछ न कुछ त्याग करना।
19. पाँच विगय एवं आहार की वस्तुओं की मर्यादा करनी।
20. पक्खी और अष्टमी को विशेष तपस्या का ध्यान रखना।
21. प्रतिक्रमण के पश्चात् स्वाध्याय का ध्यान रखना।
22. कोई आपको कुछ शब्द कह दे, तो उसे अच्छे ढंग से सोचना, गलत ढंग से नहीं।
23. बच्चे तक को छूना नहीं।
24. वस्त्र अधिक धोने की प्रवृत्ति नहीं बनानी।
25. पानी या परठने की कोई वस्तु खड़े-खड़े नहीं डालनी, झुककर डालनी और डालकर 'वोसिरामि' कहना।
26. पुस्तक, पैन, वस्त्र या अन्य उपधि को 'मेरी' नहीं बोलना, 'निश्राय' की कहना।
27. गृहस्थ को 'तू' शब्द से नहीं बोलना। सावध भाषा नहीं बोलनी। 'दया पालो' शब्द कहना।
28. खाने से पहले 'नमो अरिहंताणं', बाद में 'नमो सिद्धाणं' बोलना या कान को छूकर प्रत्याख्यान शुरू करना और खोलना।

गुरुदेव ने अपने हाथों से ये शिक्षाएं लिखी ही नहीं, दोनों मुनियों को इन शिक्षाओं के सांचे में अपने हाथों से ढाला भी।

दीक्षा सम्पन्न करके गुरुदेव गोहाना पधारे। वहाँ का उत्साह देखने लायक था। लोग चातुर्मास के लिए कटिबद्ध थे। स्थानक के बराबर की जगह लेकर लोग नया हाल बनाने की तैयारी में जुट गए। गोहाना समाज का गुरुदेव तथा तपस्वी जी म. के प्रति समर्पण अद्भुत और अद्वितीय रहा है। उसी समाज के दो अग्रणी परिवारों में पारस्परिक रिश्तेदारी के बावजूद मनमुटाव चल रहा था। ला. रामेश्वर दास जी (खेड़ी वाले) तथा श्री जीतराम जी (जागसी वाले) की नाराजगी कहीं समाज के विकास में बाधक न बन जाए, इस दृष्टि से गुरुदेव ने उनका क्लेश मिटाना चाहा। उनको बुलाकर खिमत खिमावना करवा दी। दोनों परिवार आज तक समाज के आधार-स्तंभ बने हुए हैं। वहाँ से गुरुदेव बुटाना पधारे। दो वैरागी श्री सत्य प्रकाश जी एवं राजकुमार जी गुरुदेव को मिले। वहाँ से पुनः वापिस लौटे। दिल्ली का भाव बना। मार्ग में खानपुर में ठहरे। एक बुजुर्ग ने रात में गुरुदेव का प्रवचन सुनने की भावना व्यक्त की। यद्यपि रात को गुरुदेव प्रवचन नहीं फरमाते थे, पर गुरुदेव बुजुर्गों का सम्मान करते थे, अतः रात को भी भव्य और ओजस्वी प्रवचन किया। श्रोता धन्य-धन्य हो उठे।

गुरुदेव दिल्ली पधारे। इस वर्ष का दिल्ली पदार्पण उनके लिए आध्यामिक गंगा-स्नान था। त्रिनगर में पूज्यपाद, महान् तपस्वी, सागर वर-गंभीर श्री रोशन लाल जी म. के पावन दर्शन किए। एकान्त में उनके श्री चरणों में बैठकर अपनी जीवन-भर की आलोचना की। संयम जीवन का आखिरी पड़ाव संथारा है और संथारे की 'आत्मा' आलोचना है। गुरुदेव ने सन् 1999 में अपने देहोत्सर्ग से 20 वर्ष पूर्व ही सन् 1979 में भाव-संथारा ले लिया था। आलोचना सुनकर श्री तपस्वी जी म. ने फरमाया था कि इतनी स्पष्ट और निर्दोष आलोचना करने का कोई साहस नहीं कर सकता। पूज्य गुरुदेव ने भी सब सन्तों से कहा था, 'अब मैं हल्का हो गया हूँ। मैं अपनी ओर से निश्चिंत हूँ। मुझे अब कोई भय नहीं है

कि मृत्यु कब आती है।' गुरुदेव की आयु उस समय कुल 56 वर्ष की थी और तभी उन्होंने अपनी अंतिम महायात्रा की तैयारी कर ली थी।

दिल्ली-प्रवास समाप्ति पर था। गुरुदेव रोहतक की ओर पधार रहे थे। सन् 1979 का चातुर्मास गोहाना करने की स्वीकृति दी जा चुकी थी। दिल्ली के पश्चिमी छोर पर रावलपिण्डी समाज की पुरजोर विनति पर गुरुदेव ने 20 मई, रविवार का प्रवचन उनकी नई बसने वाली कालोनी 'अरिहन्त नगर' के लिए दिया। अभी जमीन बिल्कुल सपाट थी। उस रोज प्रातः से ही तेज आंधी चल रही थी। प्रवचन-सभा में टैण्ट उड़ने और उखड़ने लगे। भीड़ बहुत अधिक थी। व्यवस्था और वक्ता जम नहीं पा रहे थे। प्रबन्धकों ने और सब कार्यक्रम रोककर गुरुदेव से प्रवचन प्रारंभ करने की विनति की। गुरुदेव ने अपने गुरु-भगवन्तों का नाम स्मरण किया और जैसे ही प्रवचन की पट्टी हाथ में लेकर—'साहू गोयम पण्णा तेकृकृ' बोलकर मंगलाचरण शुरू किया कि आंधी भी गुरुदेव का प्रवचन सुनने के लिए थम गई। फिर गुरुदेव ने करीब पौन घण्टे तक सभा को प्रवचन की अमृत-धारा में आकण्ठ डुबोए रखा।

उसी वर्ष तेरापन्थ संघ में उत्तराधिकार के प्रश्न पर कुछ टकराव बना। नांगलोई में श्री रूपचन्द्र जी म. ने गुरुदेव से मिलने की खबर भिजवाई, पर गुरुदेव को ये मिलन उचित नहीं लगा। वहाँ से रोहतक पधारे। मार्ग कष्ट साध्य था। रोहतक शहर पहुँचते ही गुरुदेव ज्वराक्रान्त हो गए। चातुर्मास का परिवर्तन करना पड़ा। श्रद्धेय श्री प्रकाश चन्द्र जी म. को गोहाना भेजा। स्वयं रोहतक ही रहे। ज्वर लम्बा चला। पेशाब की तकलीफ भी उग्र थी। शरीर में काफी दुर्बलता थी। दिन में विश्राम के लिए समय-निर्धारण की मांग हुई, पर गुरुदेव ने मना कर दिया। इस तरह की व्यवस्था प्रायः सभी बड़े सन्तों के साथ चलती है, पर गुरुदेव ने कभी नहीं अपनाई। गर्मी अधिक थी। गुरुदेव को भूख लगती नहीं थी। डाक्टरों ने फलों का रस लेने को कहा, पर गुरुदेव अपनी संयम-चर्या में अडिग थे।

गुरुदेव का शरीर नाना व्याधियों से घिरता जा रहा था। दवा लेते थे, पर अनुकूल न पड़े, तो दवा और डाक्टर को शीघ्र बदल भी देते थे। अंग्रेजी औषधि कम लेते थे। देशी भी ले लेते थे, पर होम्योपैथिक पर विश्वास अधिक करते थे। दवाओं का और उनकी मूल निष्पत्ति का ज्ञान भी बहुत था। गुरुदेव के दवा-विषयक ज्ञान को देखकर वैद्य, डाक्टर भी चकित हो जाते। यदि शरीर में उठने-बैठने की दिक्कत न होती, तो गुरुदेव जमीन पर बैठकर ही डॉक्टर से बात करते थे। उनको चिकित्सा पर विश्वास था, पर उससे अधिक विश्वास अपनी सहिष्णुता और कर्मों की शक्ति पर था। जब कभी शरीर में असह्य पीड़ा होती, तो उनके मुख से यही निकलता, 'जो करेगा, सो भरेगा'। उनकी सहिष्णुता बड़े कमाल की थी। भयंकर से भयंकर पीड़ा में भी उन्हें कभी कराहते नहीं देखा। चातुर्मास में पेशाब का संक्रमण (Infection) बढने से डॉ. सुरेश जैन तथा डॉ. रतन लाल जी ने स्थानक में ही उनकी शल्य-क्रिया की। प्रभावित स्थल को सुन्न करने के लिए एनेस्थीसिया दिया गया, परंतु आप्रेशन के बीच में ही उसका असर समाप्त हो गया। भीषण पीडा हो रही थी। डाक्टर चाक से खाल काट रहा था, रक्त बह रहा था। पर वे भीष्म पितामह गुरुदेव शान्त भाव से पीड़ा को सहते रहे। डाक्टर को भी नहीं बताया। बाद में जब उसे पता लगा तो दंग रह गया। प्रतिदिन ड्रेसिंग का कार्य श्री शास्त्री जी म. ही करते रहे। अपनी दृढ़ संकल्प-शक्ति से गुरुदेव कुछ दिनों में ही स्वस्थ हो गए। कुछ ठीक होते ही पुनः अपनी दैनिक चर्याओं में जुट गए।

पिछले कुछ समय से परम श्रद्धेय श्री स्वामी फूल चन्द जी म., पंडित श्री रणसिंह जी म., श्री विजय मुनि आदि से पारस्परिक सम्बन्धों में दुराव और अलगाव बढ़ रहा था। अतः उन्होंने गुरुदेव से सन् 1979 के अपने चातुर्मास की आज्ञा नहीं मंगवाई। संवत्सरी का क्षमापना-पत्र आया। गुरुदेव ने भी प्रत्युत्तर भेजा। गुरुदेव अपनी ओर से न तनाव पैदा करते थे, न उसे तूल देते थे।

रोहतक चातुर्मास पूर्ण करके गोहाना पधारे। श्री तपस्वी जी म. से मंगल मिलन हुआ। उन दिनों सरदूलगढ़ में पूज्य श्री स्वामी जी म. की

नेश्राय में मुनि-दीक्षाएँ होने जा रही थी। उन्होंने गुरुदेव से आज्ञा नहीं मंगवाई थी। इस बात की जन-जन में चर्चा थी। श्री तपस्वी जी म. के परामर्श से गुरुदेव ने प्रवचन में उनसे अपने संबंध-विच्छेद की घोषणा कर दी। संघ-शास्ता बनने के लगभग 11 वर्ष बाद सम्बन्धों का यह विच्छेद सभी के लिए भारकारी तो था, पर परिस्थितियों के कारण सब विवश थे। काफी समय से श्री शान्ति चन्द्र जी म. को पीठ-दर्द की शिकायत थी। गुरुदेव ने श्री शास्त्री जी म. की देखरेख में उनको उपचार-हेतु दिल्ली भेजा।

गुरुदेव का विचरण उस वर्ष हरियाणा के अनेक गाँवों में हुआ। गोली गाँव से ला. जयप्रकाश जी के सुपुत्र श्री नरेन्द्र जी वैरागी बनकर गुरु-चरणों में आए। ग्राम, नगर, शहर, मण्डी सब जगहों पर गुरुदेव ने अपनी शान्ति, सादगी, ओजस्विता, प्रभावकता, प्रावचनिकता व अनुभाव प्रभाव की अमिट छाप छोड़ी है। सभी मण्डियाँ चाहती थी कि गुरुदेव हमारे यहाँ पधारें, ठहरें, चातुर्मास करें, दीक्षाएँ करें और सम्मेलन करे। इनकी कृपादृष्टि की एक लघुवृष्टि भी सर्वत्र उत्साह का संचार कर देती थी। सफीदों मण्डी की पुरजोर भावना को देखकर गुरुदेव ने सन् 1980 के लिए अपने चातुर्मास की स्वीकृति प्रदान की। कुछ लोगों को शंका और आशंका थी कि सफीदों क्षेत्र घरों की दृष्टि से छोटा है और गुरुदेव का चौमासा बड़ा है, ये लोग कैसे पार लगा पाएँगे। बाहर के एक भाई ने तो एक दिन गुरुदेव से कह ही दिया, 'गुरु महाराज! कहां चौमासा कर लिया? सफीदों वाले बीच में ही लांगड़ (धोती की लांघ) खोल देंगे।' गुरुदेव हँसे और बोले, 'तू भी चार महीने मेरे साथ वहाँ चौमासा कर। जिस दिन लांगड़ खुलती दिखाई दे, उस दिन तू पकड़ कर कस देना।' वह भाई चुप हो गया। चातुर्मास-समाप्ति पर गुरुदेव ने उसी भाई से पूछा, 'क्यों भाई, लांगड़ तो नहीं खुली?' वह भाई शर्माते हुए कहने लगा, 'गुरुदेव! जहाँ आपकी कृपा हो, वहाँ भला किस बात में कमी रह सकती हैं।'

तुलसीदास जी ने लिखा है—

राम! हमरे बनाए, बनै कोटि कल्प लौ न।
रावरे बनाए, वो ही बनै एक पल मैं ॥

इसी बीच श्री नरेश मुनि जी म. के लघु भ्राता श्री सुधीर जी भी वैरागी के रूप में गुरु-चरणों में रहने लगे थे। गुरुदेव की व्यक्ति-परख बड़ी विलक्षण थी। दीक्षा लेने के इच्छुक वैरागी में किन गुणों की तलाश करनी, इस विषय में वैरागी नरेन्द्र की प्रशंसा करते हुए उन्होंने एक पत्र में लिखा था, "वैरागी का केवल बुद्धि-बल मत देखो। पुस्तकें पढ लेना बड़ी बात नहीं है। ये देखो वह कितना सरल है, सेवा-भावी है, आज्ञाकारी तथा विनीत है। साधु जीवन में पढ़ाई काम नहीं आती, विनय काम आती है।" गुरुदेव को वैरागी और मुनि बनाना ही अभीष्ट नहीं था, उनमें संयम-साधना के भाव और सब तरह का विवेक भरने का ध्यान भी रहता था। दुलार और फटकार दोनों ही उनके निर्माण-विज्ञान के औजार थे। वै। नरेन्द्र जी गुरु-चरणों में 4-5 माह से आ चुके थे। एक दिन सफीदों में एक कमरे में चीटियां हो गई। वै। ने झाडू से बाहर निकाल दी। गुरुदेव ने देखा कि कीड़ियां धूप में हैं। एकदम वैरागी को डांटा और कहा गर्म छत पर कीड़ियां मर सकती हैं। ऐसी गलती कभी नहीं करनी। बालोचित दण्ड भी दिया, ताकि हमेशा के लिए सावधानी रहे। उन कीड़ियों की सुरक्षा भी करवाई।

सफीदों चातुर्मास में गुरुदेव के पास तीनों वरिष्ठ शिष्यों में कोई भी नहीं था। ऐसा प्रथम बार ही हुआ। गुरुदेव ने अपने सबल कन्धों पर ही अधिकांश भार वहन किया। सफीदों में मच्छरों का भी प्रकोप काफी था। तब तक सन्तों में मच्छरदानी का प्रयोग शुरू नहीं हुआ था (सन् 1992 से शुरू हुआ)। फिर भी गुरु-कृपा से साता रही। उस वर्ष गुरुदेव ने रामायण का विश्लेषण बड़ी सूक्ष्मता और रोचकता से किया, इससे मण्डी का अजैन वर्ग गुरुदेव के प्रति बड़ा आकर्षित हुआ।

चातुर्मास में 15 अगस्त का दिन था। हाल में छोटे सन्तों ने प्रवचन शुरू किया। गुरुदेव ने तभी भाइयों को संकेत किया—'आज नीचे फड़ पर

प्रवचन करा लो'। समाज बड़ी विनयवान् थी, एकदम व्यवस्था कर दी। तभी अचानक बाहर की 10-15 बसें वहाँ आ गई। हजारों की उपस्थिति में गुरुदेव ने नीचे ही प्रवचन किया। गुरुदेव के वचन स्वतः प्रमाण थे।

उसी वर्ष श्री विजय मुनि ने संबंध-विच्छेद का स्पष्टीकरण देते हुए एक पुस्तिका छपवाई, जिसमें कई मिथ्या आरोप और निराधार बातें थी। पूज्य गुरुदेव ने मौखिक या लिखित कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की

'गालिब' बुरा न मान, जो दुश्मन बुरा कहे।
ऐसा भी कोई है कि जिसे अच्छा कहें सभी?

खारों के लाख छेड़ने पर भी, गुलों ने सिवा खामोशी के दम न मारा।
शरीफ उलझें अगर किसी से, फिर शराफत कहाँ रहेगी?

चातुर्मास के बाद वैरागी श्री सुधीर जी की दीक्षा का भाव बना। सभी सन्त बड़ौत पधारे। प्रारम्भ में यही ख्याल था कि दीक्षा अत्यन्त सादी एवं भव्य रूप में होगी। परंतु स्थानीय समाज की दिगम्बर समाज के प्रति कुछ प्रतिस्पर्धा की होड़ में आडम्बर के आइटम बढ़ते गए। गुरुदेव ने कदम-कदम पर उन्हें रोका। पर समाज की प्रतिष्ठा के नाम पर तामझाम बढ़ता गया। शोभा यात्रा के करीब तीन कि.मी. लम्बे मार्ग को वन्दनवारों से सजाया गया। जगह-जगह खाद्य पदार्थ वितरित किए गए। सामान्य आदमी ने वहाँ की शानो-शौकत, तड़क-भड़क की काफी प्रशंसा की, पर प्रबुद्ध वर्ग की प्रतिक्रिया में आलोचना का पुट भी था। दीक्षा के पण्डाल में जैन स्कूल की कुछ छात्राओं ने गुरु-स्तुति गाते-गाते अभिनय भी शुरू कर दिया, तो ये भक्त जनों को काफी अखरा। दिल्ली के 'महावीर मिशन' में इस विषय पर आपत्ति भी प्रकट की गई, पर गुरुदेव ने तो अगले ही दिन सारी समाज के समक्ष इस सारे प्रकरण की स्वयं पर जिम्मेवारी लेते हुए क्षमायाचना कर ली थी। गुरुदेव ने किसी भी आलोचना को बुरा नहीं माना। उनका प्रसिद्ध सूत्र था, 'आलोचक बनो, निन्दक नहीं'। दीक्षा-मण्डप पर अध्यक्ष पद को सुशोभित करने वाले व्यक्तित्त्व थे– मा.

श्री शामलाल जी। पूज्य गुरुदेव के संसार-पक्षीय चाचा और श्री शास्त्री जी म. के पिताश्री जी।

बड़ौत दीक्षा से कुछ दिन पूर्व वहाँ के माननीय श्रावक श्री शहजाद राय जी जैन को मस्तिष्काघात (ब्रेन हैमरेज) हो गया। उनकी स्थिति बड़ी नाजुक थी। सबको भय था कि कहीं दीक्षा-उत्सव में विघ्न न पड़े। वे समाज के मुखिया भी थे, साथ ही उस दीक्षा-कमेटी के प्रधान भी थे। गुरुदेव को बड़ी चिंता थी, पर वे तो स्वयं चिंतामणि थे, सबकी चिंता को हरते थे। रात को पाठ करने बैठे। सुबह सारी समाज को आश्वस्त किया कि पूज्य गुरुदेवों के शरणे से सब आनन्द रहेगा, कोई चिंता मत करो। श्रावक जी का आप्रेशन हुआ। पूर्णतः सफल रहा। तत्पश्चात् श्रावक जी 11 साल तक और जीए।

दीक्षा के समय ही उस वर्ष के भावी चातुर्मासों की रूपरेखा भी बनी। सन् 1979 के चातुर्मास से वंचित गोहाना क्षेत्र प्रबलतम दावेदार था। उसी तरह कान्धला और सोनीपत भी। बड़ौत की भी विनति थी, पर गुरुदेव ने विवशता प्रकट कर दी। दीक्षा के बाद गुरुदेव हिलवाड़ी ग्राम पधारे। पीछे से बड़ौत मण्डी वाले श्री तपस्वी जी म. से एक चातुर्मास दिलाने का आग्रह करने लगे। एक दिन तपस्वी जी म. बिना सूचना दिए अकेले ही हिलवाड़ी पधार गए। गुरुदेव हैरान रह गए कि कैसे पधारे? वे रात को वहीं विराजे। वार्तालाप हुआ। कहने लगे कि एक चातुर्मास का प्रबन्ध बड़ौत के लिए करो। गुरुदेव ने फरमाया कि 'इस काम के लिए आपने इतना कष्ट क्यों किया? आप की आज्ञा अनुल्लंघ्य है, हमें वहीं से खबर भिजवा देते'। श्री तपस्वी जी म. बोले—'यहाँ आपके पास बैठकर बात करने में मजा ही कुछ और है। मैं अपने मन की कह लेता हूँ, आप अपने मन की। पास बैठकर स्थिति समझाने में आसानी रहती है और फिर आपके दर्शनों का सौभाग्य मिल गया'। इस प्रकार उस वर्ष बड़ौत को भी एक चातुर्मास मिल गया—श्री प्रकाश मुनि जी म. ठाणे-3 का।

बड़ौत दीक्षा के कारण सारे पश्चिमी यू.पी. में धर्म-लहर आई। गुरुदेव ने सारा इलाका फरसकर उस लहर को और स्थायी बनाया। मुजफ्फरनगर पधारे। यद्यपि मुजफ्फरनगर का विचरण पूर्व-निर्धारित कार्यक्रम में नहीं था, परंतु बामनौली में मुजफ्फर नगर के कुछ प्रमुख श्रावक-श्री रामचन्द्र जी, विद्यासागर जी, शंभु नाथ जी, दर्शन लाल जी आदि ने अपने क्षेत्र में आने की आग्रहभरी विनति की। गुरुदेव ने अपनी विवशता जाहिर की। उनका मन निराश हो गया। फिर वे शास्त्री जी म. के पास बैठ गए। बुजुर्ग श्रावक श्री शंभु नाथ जी ने अपनी भावना कुछ इस तरह प्रकट की, "मैं अपनी जिंदगी में गुरु म. को एक बार मुजफ्फर नगर में देखना चाहता हूँ। आगे मुझे अपनी जिंदगी का भरोसा नहीं है।" जब गुरुदेव को इन शब्दों का पता चला तो एक बुजुर्ग श्रावक की भावना का सम्मान करते हुए मुजफ्फरनगर जाने का तथा महावीर जयन्ती मनाने का आश्वासन उन्हें दे दिया। उन्हें तो एक निधि ही मिल गई। और यह भी एक मधुर संयोग है कि गुरुदेव जी म. को भी मुजफ्फरनगर में शिष्य-निधि मिली। पीलूखेड़ा के श्रावक शाम लाल जी के सुपुत्र अजित जी वैरागी रूप में आए। मुजफ्फर नगर से पहले दोघट पधारे। श्री तपस्वी सुमति मुनि जी, कुशल प्रवचनकार श्री विशाल मुनि जी से मधुर मिलन हुआ। भावना के स्तर पर बहुत निकट आए, पर आंतरिक निकटता का वह दौर अधिक चिरस्थायी न रह सका।

उस वर्ष यू.पी. में शामली एक विशिष्ट क्षेत्र के रूप में उभरा। पहले स्थानकवासी समाज के मानचित्र पर उसका नाम नहीं था। गुरुदेव ने उसके नवोत्थान के लिए पहले श्री शांति मुनि जी म. के नेतृत्व में लघु मुनियों को भेजा, फिर स्वयं पधारे। समाज का निर्माण हुआ। अपनी पहचान के लिए स्थानक-निर्माण की भावना बनी। उसके बाद वहां विशाल स्थानक, कई चातुर्मास, अनेक आयोजन एवं धर्मध्यान की निर्मल धारा सतत बहने लगी। उसी प्रवास के दौरान दिल्ली चाँदनी चौंक के सुश्रावक श्री जीवन सिंह बोथरा की धर्मपत्नी सिताब देवी ने वर्षीतप का पारणा गुरु-चरणों में किया। यह धर्मनिष्ठ परिवार गुरुदेव के प्रति सदैव श्रद्धाशील रहा है।

इसी पुण्यवान् परिवार की पुत्री शशीकला और दामाद श्री प्रकाश चन्द संचेती ने ज्ञान-गच्छ में 1994 में दीक्षा ली। मुनि श्री आजकल शालिभद्र मुनि के नाम से विख्यात हैं।

गुरुदेव के सन् 1981 चातुर्मास का सौभाग्य गोहाना मण्डी को मिला। नया प्रवचन हाल नव्य-भव्य रूप में तैयार हो चुका था। सारी मण्डी, सैंकड़ों अजैन परिवार सेवा में संलग्न थे। दर्शनार्थी संख्या इस बार सविशेष रही। कई बार एक दिन मे दो-दो हजार तक। उसे देखकर सेवा-कर्ताओं का उत्साह भी शत-सहस्र गुणित हो जाता था। ऊपर धर्म का नजारा था, नीचे सेवा का। कई मुनि-संघों में तो ये भी चर्चा हुई कि गोहाना क्षेत्र श्री सुदर्शन मुनि जी का गढ़ बन गया है, इसे तोड़ना होगा। इसके लिए उन्होंने एक संगठित प्रयास भी किया, पर अन्ततः खुद ही मुँह की खाई। चातुर्मास में वैरागी सुनील जी आए। श्री संघ के प्रधान ला. रामेश्वर दास जी अपने प्रिय पौत्र को गुरु-चरणों में सौंपकर कृतार्थ हुए। एक रोज वै। सुनील जी गुरुदेव के पाट के पास सामायिक-मुद्रा में बैठे थे। गुरुदेव ने सिर पर हाथ धरते हुए कहा था कि 'सुनील! तू वैरागी बना, तो हमारा चातुर्मास सफल हो गया'। अभिप्राय ये था कि मैं चातुर्मास की सफलता रौनकों, तपस्याओं तथा दर्शनार्थियों से नही मानता, अपितु कोई जीव सम्यक्त्व, देशविरति और सर्वविरति की ओर बढे, तब सफलता को मानता हूं। और श्री सुनील जी उस सफलता के उपादान थे। चातुर्मास के पश्चात् ही तीन दीक्षाओं की घोषणा से गोहाना में और भी जोश आ गया। सब मुनिराज एकत्र हुए। 7 दिसम्बर को हुए दीक्षा-समारोह में श्री सत्यप्रकाश मुनि जी, श्री राजमुनि जी एवं श्री नरेन्द्र मुनि जी गुरु-चरणों में दीक्षित होकर कृतकृत्य हुए।

दीक्षाओं के उस भव्य अवसर पर एक युवा वैरागी गुरु चरण-शरण ग्रहण करने आया। नाम श्री अरुण जैन। भटिण्डा के सुप्रसिद्ध कपड़ा व्यापारी श्री हंसराज बोथरा जी के लघिष्ठ पुत्र। श्री तपस्वी जी म. तो प्रथम दृष्ट्या ही प्रभावित हो गए, कहने लगे-'इसे भी इन्हीं वैरागियों के साथ दीक्षित कर लो।' पर ऐसा तो संभव नहीं था। कुछ दिन बाद अरुण

जी की बहन के आग्रह पर पिता श्री उन्हें पुनः भटिण्डा ले गए। बहन द्वारा प्रलोभनों का दौर चला। अन्ततः दो मास बाद पिताजी पुनः उनको नरवाणा में गुरु-चरणों में छोड़ गए।

एक दिन गोहाना-समाज के चिरकालीन मंत्री श्री भानी राम जी, जो एक कुशल वक्ता भी हैं, प्रवचनों के संग्रहकार और अच्छी सूझबूझ के धनी हैं, ने गुरुदेव जी म. से निवेदन किया कि मुझे काफी अर्से से मंत्री-पद का दायित्व वहन करना पड़ रहा है। कृपा करके मुझे इस बोझ से मुक्त करवाकर किसी और को यह दायित्व सौंप दो। गुरुदेव जानते थे कि भानीराम होनहार युवक है, सहनशील है। समाज में इसके प्रति सबकी सद्भावना है, अतः यही चलता रहे तो अच्छा है। परंतु श्री भानीराम जी ने अपने समर्थन में श्री तपस्वी जी म. को तैयार कर लिया था। अतः तपस्वी जी म. भी कहने लगे कि इसे अब मुक्ति दिलाओ। गुरुदेव जी म. ने उसे आश्वासन दे दिया। फिर श्री तपस्वी जी म. से ही समाज की भावी रूपरेखा पर विचार-विमर्श किया। अन्ततः समस्त समाज को बुलाकर व्यवस्था बना दी, जिसमें ला. रामेश्वर दास जी को प्रधान तथा श्री जीतराम जी के सुपुत्र श्री जगदीश जी को मंत्री घोषित किया। गोहाना श्रीसंघ की यही तो खासियत रही है कि उन्होंने गुरुओं की आज्ञा को सदा सिर-माथे रखा है। और ये भी रिकार्ड है कि लाला रामेश्वर दास जी 1980 से लेकर 2005 तक अर्थात् अपनी मृत्यु तक प्रधान रहे और श्री जगदीश जी भी तब तक मंत्री पद को अलंकृत करते रहे। जैसे कि हर समाज में होता है, गोहाना समाज को भी बाह्य-आभ्यन्तर तूफानों के दौर से गुजरना पड़ा है। पर क्या मजाल, वहां के ऐक्य और प्रेम में शिगाफ आया हो। कुशल शिल्पी के द्वारा बनाए ताजमहल और लाल किले काल-जयी होते हैं।

दीक्षा के पश्चात् गोहाना से विहार की वेला थी। दो गुरु-भाई दो जीवन-साथी-गुरुदेव जी म. एवं गुरुवर्य श्री राम प्रसाद जी म. हार्दिकतापूर्ण वार्तालाप में निमग्न थे। उस डायलॉग के कुछ पद—गुरुदेव जी— 'रामप्रसाद, तेरा क्या कमाल का प्रवचन है कि दिमाग हिला देता है।' श्री राम प्रसाद जी म., 'मैं तो दिमाग-दिमाग हिलाता हूँ, आप तो

दिलों को भी हिला देते हो। दिमाग हिलाना बड़ी बात नहीं है, कोई भी विद्वान् हिला सकता है, दिल हिलाना बड़ी बात है।'

पूज्यपाद श्री भण्डारी जी म. एवं श्री तपस्वी जी म. की सेवा में इस वर्ष से श्री विनय मुनि जी म. रहे। श्री सुन्दरमुनि जी गुरुदेव की सेवा में आ गए। जींद पधारे, तो सारा समाज चातुर्मास के लिए मचल उठा। दस वर्ष पूर्व गुरुदेव ने इसे सींचा था, अतः उनका हक भी बनता था। यहाँ पर गांगोली गाँव के ला. रामकिशन जैन जी के सुपुत्र श्री बलवान जी (बाद में अचल मुनि जी) वैरागी बनकर गुरुचरणों में आए। गुरुदेव जीन्द से नरवाणा, उकलाना, रतिया, सरदूलगढ़ आदि पधारे। सर्वत्र जन-चेतनाएँ जागृत हुई। चातुर्मास की विनतियों के ढेर लग गए। गुरुदेव का स्वभाव था कि जहाँ चातुर्मास का मन नहीं हो, उसे भ्रम या मिथ्या आश्वासन में नहीं रखते थे। जहाँ करना होता, उन्हें निश्चित कर देते तथा देर-सवेर स्वीकृति फरमा देते। बार-बार विनति के लिए बुलाना या लटकाए रखना या अनेक क्षेत्रों को उलझाए रखना उन्हें कतई पसन्द नहीं था। सिरसा पधारे। वहाँ गुरुदेव का वीर-जयन्ती का प्रवचन बड़ा मार्मिक, गम्भीर। इतिहास-परक। उदबोधक एवं मौलिक था। मानसा बढलाडा। जाखल होकर मूनक पधारे। वहाँ पूज्यपाद श्री रणसिंह जी म. के दर्शन हुए। दोनों महापुरुष एक-दूसरे से मिलकर भीग गए। पुरानी घटनाओं का कोई स्मरण-स्मारण या कोई गिला-शिकवा नहीं किया। गुरुदेव ने उनके श्री चरणों में हर प्रकार की योग्य सेवा का प्रस्ताव रखा। श्री पण्डित जी म. ने विशेष स्नेह-वर्षण किया। जाखल के श्री जिनेन्द्र जी के सुपुत्र श्री आदीश जी वैरागी बने। सारे मूनक-परिवार में प्रसन्नता हुई।

सन् 1982 का चातुर्मास जींद में हुआ। पूरी समता और शान्ति रही। गुरुदेव के मन की प्रेम-शक्ति अधिक सघन और निर्मलतर होती जा रही थी। वीतरागिता और निर्लेपता निरन्तर बढ़ रही थी। दिल्ली में तपस्वी श्री रोशन लाल जी म. के स्वर्गवास से मन को गहन पीड़ा हुई। गुरुदेव को अपने दुःख या कष्ट को कहने का भाव कम, सहने का अधिक बनता जा रहा था। तेरापंथ समाज में भी एक चातुर्मास था। मुनियों में कुछ

कलह की चर्चा थी। गुरुदेव ने कभी रस नहीं लिया। युवा मुनि अधिक उद्दण्ड था। उसने एक दिन रत्नाधिक मुनि को डण्डों से भी पीट दिया। वृद्ध मुनि गुरुदेव के पास आए। अपनी शारीरिक स्थिति दिखाई। गुरुदेव ने उनके कलह को शान्त कराया। ऊपर तक इस सद्भावना की खबर गई। संवत्सरी के बाद अठाइयों के पारणे पर गुरुदेव ने मुनियों को घरों में भेजा। गुरुदेव के चरणों में एक अनपढ पंजाबी जट्ट सिख 'दीपा' रहता था। उसने नवकार मंत्र सीख लिया था। सामायिक करता था। यथासंभव तपस्या भी कर लेता। प्रायः हर चातुर्मास में अठाई करता। चातुर्मास काल में समाज की नौकरी करता, शेष आठ महीने फ्री सेवा। उसकी अठाई के पारणे पर गुरुदेव स्वयं हाथ फरसने गए। कहने लगे। 'सेठों के घर तो सभी जाते हैं, गरीब नौकर का ख्याल कौन रखता है'। इस दुर्लभ दृश्य को देखकर दीपा भी, जिस घर में पारणा था वो भी, सारी समाज भी धन्य हुई।

उस वर्ष गुरुदेव ने जींद शहर के साथ-साथ स्कीम एरिया को भी अपनी कृपा का पात्र बनाया। गुरुदेव ने तत्रत्य समाज की महती संभावनाओं को देखकर और आगे बढ़ने को प्रोत्साहित किया। हरियाणा सरकार के मंत्री श्री मांगे राम गुप्ता को यथाशक्य सहायता का संकेत किया। उसी कृपा का फल है कि हरियाणा में अपने किस्म का सर्वोत्तम स्थानक इस समय जींद स्कीम में खड़ा है। वहाँ पर नित्य-प्रति धर्म ध्यान, सेवा, त्याग व तपस्या के सर्वांगीण नजारे दिखाई देते हैं। जींद के पास ही नरवाणा में श्री शास्त्री पद्मचन्द जी म. का चातुर्मास भी चल रहा था। गुरुदेव बराबर उधर का भी ध्यान रखते थे। वहीं वैरागी अरुण जी भी अध्ययनरत थे। समय-समय पर जींद भी दर्शन करने आते थे। एक दिन ट्रेन से आए तो गुरुदेव जी म. ने उनसे पूछा कि 'क्या आज ट्रेन में भीड़ काफी ज्यादा थी'? 'हां गुरुदेव'। 'जिस सीट पर तू बैठा था, क्या तेरे बराबर में लगभग 50 वर्ष की कोई बहन भी बैठी थी?' वैरागी को आश्चर्य हुआ और कहा– 'हां, बिल्कुल बैठी थी।' गुरु म. फिर बोले 'बहन के बराबर की सीट पर तुझे नहीं बैठना चाहिए था।' 'गुरुदेव,

भीड़ अधिक होने से कोई दूसरी सीट खाली ही नहीं थी।' वैरागी जी के कहने पर गुरुदेव फरमाने लगे—'तुम खड़े-खड़े आ जाते।" एक अद्‌भुत संस्कार-दान का अभियान गुरुदेव के माध्यम से होता था।

एक दिन वैरागी जी ने गुरुदेव जी म. से विनति की कि "आप किन गाथाओं का जाप करते हो? तथा कृपा करके मुझे भी कुछ दे दे।" गुरुदेव ने फरमाया कि 'हम किस गाथा का जाप करते हैं, इस बात का कोई महत्त्व नहीं है, अपितु कितने विश्वास के साथ करते हैं तथा किस लक्ष्य को सामने रखकर जाप करते हैं, महत्त्व इस बात का हैं।'

गुरुदेव ने वैरागी अरुण जी से पूछा, "लघु सिद्धांत कौमुदी कितनी याद कर ली?" 'जी, एक सप्ताह में सात सूत्र याद हुए हैं।' 'इस तरह से तो वर्ष-भर में भी याद नहीं होगी।' वैरागी जी ने अपनी मजबूरी बताते हुए कहा कि 'इतनी बड़ी पुस्तक मुझसे तो याद होनी संभव नहीं है।' गुरुदेव मौन हो गए। थोड़ी देर बाद वैरागी जी को बुलाया और कहा, 'कौमुदी का अंतिम सूत्र याद कर ले और याद करने से पहले सीमंधर स्वामी का ध्यान करके गुरुजनों को विधिवत् वन्दना कर ले।' आज्ञानुसार अंतिम सूत्र याद करके गुरुचरणों में उपस्थित हुए। पहले सुना और बाद में बोले 'पहला और अंतिम सूत्र तो याद हो ही गया, अब बीच में रह ही कितना गया?' इतना उत्साह भरा कि बहुत जल्दी समग्र लघु कौमुदी कण्ठस्थ हो गई।

जीन्द चातुर्मास में ही पता लगा कि रोहतक की जैन स्थानक में श्री तपस्वी जी म. की आँख का आप्रेशन होना है। गुरुदेव ने आप्रेशन के दिन स्वयं भी आयम्बिल किया। मुनियों तथा समाज को भी प्रेरित किया। अपने प्रवचन में श्री तपस्वी जी म. की संयम-दृढ़ता का वर्णन करते हुए फरमाया कि कल उन्होंने आप्रेशन के बाद दलिया भी नहीं लिया, ताकि औद्देशिकता की शंका न रहे।

चातुर्मासोपरान्त गोहाना पधारे। सूर्यास्त के बाद समाचार मिला कि श्री तपस्वी जी म. को रोहतक मैडीकल में भर्ती होना पड़ा है, अतः कुछ

मुनि सेवा में पहुँचें। अगले दिन तीन मुनि सूर्य निकलते ही चले और 32 कि.मी. का सफर तय करके सेवा में पहुँचे। कुछ दिन बाद गुरुदेव भी पधारे। सीधे हस्पताल जाकर साता पूछी। वहां श्री तपस्वी जी। म. की दूसरी आँख के साथ-साथ हर्निया का आप्रेशन भी हुआ था। जब श्री तपस्वी जी म. मैडिकल से छुट्टी लेकर स्थानक में पधारे, तब गुरुदेव को वन्दन करते-करते भावुक हो उठे। उन्हें इस बात का मलाल था कि मैं मैडिकल से बचना चाहता था, पर वहीं जाना पड़ा। गुरुदेव ने उन्हें बहुत संभाला कि 'आप तो वज्र पुरुष हैं, दृढ़ता में सुमेरु हैं'। वहीं से भटिण्डा में वैरागी अरुण जी की दीक्षा का भाव बना। श्री तपस्वी जी म. ने कहा। 'अचल की भी साथ ही कर दो'। गुरुदेव भी सहमत हो गए। जब विहार का समय हुआ, तो श्री तपस्वी जी म. पुनः भावुक हो गए। गुरुदेव ने पूछा-'भगवान् जी! बताओ, क्या बात है? हम यहीं रुक जाते हैं।' श्री तपस्वी जी म. कहने लगे, 'पता नहीं, अब आपके फिर दर्शन होंगे या नहीं?' गुरुदेव ने उनको स्पष्ट शब्दों में आश्वासन दिया कि 'आप कोई बोझ न रखें। आपको अभी बहुत जीना है, हम आपके पुनः दर्शन करेंगे।'

6. चरैवेति चरैवेति

रोहतक से भटिण्डा का सफर काफी लम्बा था। गुरुदेव के घुटनों में भी दर्द बढ़ता जा रहा था। फिर भी गुरुदेव का ये विशेष गुण था किसी कार्य को ठान लेते थे, तो किसी कष्ट या बाधा की चिन्ता नहीं करते थे। 'अंगीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति।' जंगल देश में उस दीक्षा के लिए विशेष चाव था। तैयारियां भी जोरों पर थी, पर एक सप्ताह पूर्व बेमौसमी वर्षा से सारे मैदान में पानी भर गया। अन्य विशाल स्थानों पर घास थी। लोग गुरुदेव के पास आए। उन्होंने फरमाया कि दोनों वैरागी पुण्यवान् हैं, कोई न कोई समाधान जरूर निकल आएगा।' तभी मुनियों ने बताया कि ला. भोजराज जी का विस्तृत प्लाट निर्दोष है। घर में ही काम बन गया। गुरुदेव का वचन तुरन्त फला। दीक्षार्थी परिवार ला. हुक्मचन्द, हंसराज जी के समक्ष एक छोटी-सी समस्या खड़ी हो गई। शोभायात्रा के लिए हाथी नहीं मिल रहा था। असमंजस की स्थिति थी। समय निकट आ रहा था। अन्ततः ये जिक्र उन्होंने गुरुदेव से ही कर दिया। गुरुदेव ने फरमाया— 'जब आप पश्चिम दिशा में जाएंगे, आपका काम बन जाएगा।' लाला हंसराज जी कार्यवश गंगानगर जा रहे थे। बस में बैठे-बैठे उन्होंने सड़क पर हाथी को देखा। बस रुकवाकर हाथी वाले से बात की और चिंता दूर हो गई। प्रबन्ध, भीड़, सेवा हर दृष्टि से भटिण्डा की दीक्षा सफल रही।

कार्य की सफलता के पश्चात् श्रद्धा का विशेष ही उभार आता है और अतिशय श्रद्धालुओं को असंभव भी संभव दिखने लगता है। दीक्षा के बाद प्रबन्धकों ने एक बात को चमत्कार के रूप में पेश किया "स्थानक के सामने पानी का एक टैंक रखा हुआ था। हजारों आदमियों ने उससे पानी पीया, पर फिर भी वह भरा ही रहा। यह गुरु म. की कृपा का फल

है।" इस चर्चा का मण्डन करना तो कठिन है ही, मानने वालों के सामने खण्डन करना भी उतना ही कठिन है।

दीक्षा के पश्चात् समग्र समाज स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रही थी। श्रावक वर्ग गुरु चरणों में बैठा था। कुछ भाई कहने लगे कि बाहर के दर्शनार्थी 25 हजार थे। दूसरे कहने लगे 30 हजार थे। औरों का विचार बना कि इससे भी ज्यादा थे। गुरु म. बोले, 'भीड़ से क्या बनने वाला है। ज्यादा भीड़ होना दीक्षा की सफलता का मानदण्ड नहीं है। दीक्षा लेने वाले ऊंचा संयम पालें, तो ही दीक्षा की सफलता है, अन्यथा नहीं'। श्रावक तो मौन हो गए, पर निकटस्थ दोनों नवदीक्षित मुनिराजों को एक संदेश मिल गया और वही गुरुदेव का लक्ष्य था।

सन् 1983 के चातुर्मास के लिए ऊपरी पंजाब का बहुत दबाव था, पर गुरुदेव ने अचानक ही बरनाला वालों की विनति स्वीकार ली। सब चकित थे कि क्षेत्र छोटा और सन्त बड़े। पर गुरु-कृपा से तो छोटा भी बड़ा बन जाता है। उन्होंने स्वास्थ्य ठीक रहते हुए कभी 29 दिन के कल्प की मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया। भटिण्डा में बड़ी दीक्षा तक रुकने में दो दिन कल्प टूटने की संभावना बनती थी, अतः गुरुदेव कुछ मुनियों के साथ दो दिन बाहर मण्डी में लगाकर आए। उधर जैन परिवार भी नहीं थे, मकान भी असाताकारी था, पर मर्यादा तो मर्यादा है। कल्प की स्वल्प-सी उपेक्षा अनेक अतिचारों को जन्म देती है।

रामां मण्डी के मार्ग में झनीर गाँव में ठहरे। कुल तीन ठाणे थे गुरुदेव जी म., नरेन्द्र मुनि जी और नवदीक्षित श्री अरुण मुनि जी। रात को सैंकड़ों की संख्या में श्रोता आ गए। गर्मी का मौसम था, फिर भी गुरुदेव ने रात को अकेले ही घण्टा भर तक उन्हें धर्मोपदेश सुनाया। सबने मद्य-मांस त्यागने का विश्वास दिलाया। गुरुदेव नवदीक्षित मुनियों के प्रशिक्षण का पूरा ध्यान रखते। उनकी हर आवश्यकता को पहचानते, पूरा करते, प्यार बरसाते और सारणा-वारणा-धारणा का दायित्व निभाते।

रत्नाधिक की विनय करना, अपने गुरुभ्राताओं को गुरु समझना और कभी कपट नहीं करना, ये गुरुदेव की शिक्षाओं का हार्द होता था।

गुरुदेव रामां मण्डी पधारे। बड़े जोशीले प्रवचन किए। सारी मण्डी एक तरह से जैन मण्डी बन गई थी। वहाँ पर श्री सत्य प्रकाश मुनि जी बीमार हो गए। गुरुदेव स्वयं उनकी परिचर्या करते। उनका आसन अपने पास लगवाते। जब वे कुछ ठीक हुए, तो विहार का कार्यक्रम बना। सब संत चलने को तैयार थे। अचानक गुरुदेव ने श्री सत्य प्रकाश मुनि जी के हाथ पर अपना हाथ रखा। देखा, कुछ गर्म था। थर्मामीटर लगाया, तो तापमान था। गुरुदेव ने सब सन्तों का सामान खुलवा दिया। वहीं पर ठहर गए। अन्यत्र विचरण-शील सन्तों को भी वहीं बुलवा लिया। पूरी तरह स्वस्थ होने पर ही विहार किया। गुरुदेव की करुणा असीम थी। माँ की तरह जाग-जागकर अपने शिष्य रूपी सुतों की देखभाल करते थे। परन्तु अब 'मातृभिलाल्यमानानां ते हि नो दिवसा गताः।'

गुरुदेव चातुर्मास के लिए बरनाला पधार गए। स्थानक चारों ओर से प्रायः बन्द था। गर्मी काफी थी। लम्बा समय गुजारना था। पर गुरुदेव ने कभी कोई शिकायत नहीं की। यदि कभी घुटन होने के कारण कोई साधु कह देता कि 'हवा बन्द है,' तो तभी गुरुदेव संशोधन देते, 'ऐसे कहो कि हवा कम है। बिल्कुल बन्द हो जाए, तो हम जी भी नहीं सकते।' कमरे से बाहर लोग गुरुदेव की प्रतीक्षा में खड़े होते और कोई मुनि ये कह देता 'दो मिनट रुको, बाद में दर्शन होंगे'। इसको भी गुरुदेव ठीक करवाते कि 'दो मिनट' शब्द निश्चयकारिणी भाषा है, साधु को ऐसा बोलना नहीं कल्पता है। थोड़ी देर में दर्शन हो जाएँगे' ऐसी भाषा विवेक-सम्मत है। 'आओ, बैठो, जाओ, ये काम कर दो' इत्यादि वाक्यों को परिवर्तित करके गुरुदेव भाषा-शुद्धि करवाते ही रहते थे कि 'दया पालो', 'यतना कर लो' ये वाक्य साधूचित हैं। अधिक सर्दी या अधिक गर्मी में गुरुदेव व्याकुल नहीं होते थे, चुपचाप बैठ जाते। स्वाध्याय करते और परीषह को भुलाने का प्रयत्न करते थे।

नई कोंपलों को सुरक्षित रखने की गुरुदेव की विधि अनूठी थी। जब बहनें वन्दना करने आती तो सन्त उनसे परिचय पूछते। गुरुदेव ने नवदीक्षितों को विशेषतः, अन्य मुनियों को सामान्यतः शिक्षा दी कि बहनों का नाम नहीं पूछना और न उनको नाम लेकर संबोधित करना। केवल इतना ही बोलो– 'दया पालो बहन। चूंकि तुम अभी नए मुनि हो, अतः तुम्हें सुरक्षा-कवच की अधिक जरूरत है।' श्री अरुण मुनि जी फरमाया करते हैं कि बरनाला में मैं एक रात प्रतिक्रमण के बाद जल्दी सो गया। सुबह गुरुदेव ने पूछा, "जल्दी कैसे सो गए?" मैंने कहा, 'गुरुदेव, अचानक नींद आ गई।' गुरुदेव ने फरमाया–"प्रहर रात्रि से पूर्व नहीं सोना चाहिए। तुमने नवकार मंत्र की माला भी नहीं फेरी, जिसके बगैर तो सोना ही नहीं चाहिए। रात की स्वाध्याय साधु की बहुत बड़ी पूंजी है। गृहस्थ हजारों तकलीफें उठाकर भी दुकान या ऑफिस में जाता है चाहे परेशानी भी हो, साधु को एक घण्टा स्वाध्याय तो करना ही है।"

गुरुदेव एक दिन बाहर दिशा के लिए गए। गुरुदेव ने अपने लिए धूप वाला स्थान चुना, जबकि पास ही छाया थी। गुरुदेव वहाँ नहीं बैठे। श्री अरुण मुनि जी म. साथ थे। उन्होंने निवेदन भी किया, पर गुरुदेव टाल गए। बाद में कारण पूछा तो बताया कि 'छाया वाले स्थान पर कीड़ी आदि लघु जीव ज्यादा होते हैं या आ जाते हैं। धूप में बचाव रहता है। इसलिए मैं जानबूझकर छाया में नहीं गया। धूप वाले स्थान पर ही रहा। उनके इस विवेक ने नवदीक्षित मुनि को विवेक का प्रैक्टिकल पाठ पढ़ा दिया।

प्रातः घूमने जा रहे थे। वैरागी सुनील जी तथा आदीश जी साथ थे। कच्चा रास्ता था। एक जगह कीड़ियों का बिल था। उस पर आदीश जी का पैर पड़ने वाला ही था कि सुनील जी ने सावधान कर दिया और विराधना होने से बच गई। गुरुदेव ने देखा और आदीश जी को कहा, "आदीश! सुनील का तेरे ऊपर उपकार है, इसको कभी भूलना नहीं।" गुरुदेव ने एक ही वाक्य में कई शिक्षाएं लघु शिशु को दे दी।

बरनाला को डॉक्टरों की नगरी समझ कर गुरुदेव ने घुटने का उपचार कराने की सोची। डॉक्टर ने टीका लगाने को कहा। गुरुदेव ने पूछ लिया, 'इसका रिएक्शन तो नहीं होगा?' डॉक्टर ने बताया कि 'बहुत सुरक्षित है। सौ में से किसी एक को ही प्रतिकूल पड़ता है।' गुरुदेव ने हंस कर कहा, 'डॉक्टर साहब, फिर तो सौवाँ आदमी मैं ही हूँ।' डॉक्टर ने इंजैक्शन लगाया। किसी को प्रतिकूलता की आशा नहीं थी, परन्तु इतना भंयकर दर्द कई दिनों तक हुआ कि गुरुदेव कराह उठे। कई दिन तक तो गुरुदेव का घुटना मुड़ा ही नहीं। ये मात्र संयोग था या गुरुदेव की आशंका थी या कोई भविष्यवाणी थी, कहना कठिन है। बरनाला में सभी घरों में गुरुदेव ने सामायिक, पौषध तथा ज्ञान-ध्यान की ज्योति प्रज्वलित की। सबको ज्ञात हुआ कि शुद्ध संयम और प्रामाणिक जैन धर्म क्या होता है तथा बिना आडम्बर के भी किस प्रकार धर्म-प्रभावना की जा सकती है। प्रधान श्री रतन चन्द जी जैन को गुरुदेव की हार्दिक करुणा, ममता और दया ने अभिभूत कर दिया।

दिल्ली के गुरुभक्त श्रावक कीमती लाल जैन (कैलाश ज्वैलर्स) ने बरनाला में आँखों के आप्रेशनों के लिए एक मुफ्त कैम्प लगवाया था। आप्रेशनों का समग्र दायित्व चण्डीगढ़ P.G.I. के नेत्र-विभाग अध्यक्ष डॉ. आई.एस. जैन के ऊपर था। जैन होने के नाते जैन संतों के संपर्क में आते रहे थे मगर मन की गहन श्रद्धा कहीं पर टिक नहीं पाई थी। बरनाला में गुरुदेव जी म. के दर्शन किए तो अन्तस्थ श्रद्धा स्वतः उनके प्रति स्थिर हो गई। वार्तालाप हुआ तो मानसिक सन्देहों का निराकरण हुआ। उनकी अंतिम प्रतिक्रिया ये थी कि 'मैं किसी सच्चे जैन संत से प्रथम बार मिला हूँ।'

बरनाला, बुढलाडा, मानसा के तीनों चातुर्मास सुनाम में एकत्रित हुए। फिर लक्ष्य बना रोहतक। कई वर्षों तक रोहतक जाने का भी एक अलग मजा होता था। वह तीर्थ-धाम बन चुका था। पूज्यपाद श्री भण्डारी जी म., श्री तपस्वी जी म. के दर्शन, श्री वाचक जी म. से ज्ञान की प्राप्ति, सबका समवेत प्यार, सभी कुछ वहाँ मिलता था। पीहर में जाकर जैसे एक

कन्या को सुकून मिलता है, कुछ वैसा ही अनुभव रोहतक जाकर होता था। रोहतक को गुरुदेव की जन्मभूमि के रूप में कम याद रखते थे, महापुरुषों की कर्मभूमि के रूप में अधिक। वहाँ जाकर लम्बे समय के लिए ठहरते थे। भावी चातुर्मासों की भूमिकाएँ बनती या घोषणा होती। गुरुदेव का सन् 1984 का चातुर्मास सोनीपत के लिए निश्चित हुआ तथा श्री विनय मुनि जी म. का चातुर्मास मतलौड़ा मण्डी करवाने का फैसला हुआ।

गुरुदेव रोहतक से विहार करके गोहाना होकर बुटाना पधारे। इधर रोहतक में अचानक श्री भण्डारी जी म. अस्वस्थ हो गए। उनका हृदय भर आया। पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. ने पूछा– 'क्या बात है? क्या चाहिए?' श्री भण्डारी जी म. ने गुरु म. को याद किया और कहा कि उनको बुलवा दो। श्री तपस्वी जी म. को पता लगा तो वे उन्हें समझाने लगे कि वे अभी तो यहाँ ठहर कर गए ही हैं। विहार हुए ज्यादा समय नहीं हुआ। काफी दूर भी निकल गए हैं, पैरों में भी दर्द है, वापिस कैसे आएँगे? फिर भी श्री भण्डारी जी म. की इच्छा को देखते हुए पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. ने पत्र लिख दिया। गुरुदेव ने यद्यपि महावीर-जयन्ती सफीदों की मानी हुई थी, पर तत्काल वापिस चलने का निर्णय ले लिया। गुरुदेव के मन में सब योजनाओं और घोषणाओं से ऊपर बड़ों की भावनाएँ और आज्ञाएँ थी। दो तीन दिन में रोहतक पधार गए। गुरुदेव वैसे तो सभी स्थविर सन्तों का सम्मान करते थे, पर श्री भण्डारी जी म. के प्रति उनके मन में अथाह आस्था थी। श्री भण्डारी जी म. स्वयं में बड़े सेवाभावी, निरभिमानी, वात्सल्य-सागर एवं अनुभवी मुनिराज थे। उन्होंने सारा जीवन वाचस्पति गुरुदेव की सेवा में व्यतीत किया था। अतः उनकी सेवा करना अपना फर्ज समझते थे। खुद गुरुदेव ने भी अपने शैशव-काल में उनकी बड़ी कृपा पाई थी, अतः उस ऋण से भी उऋण होना चाहते थे। गुरुदेव के रोहतक पधारते ही वे क्रमशः स्वस्थ होते गए। एक दिन वे गुरुदेव को कहने लगे कि 'श्री विनयमुनि जी को मेरे पास ही छोड़ दो, मैं इसकी सेवा से प्रसन्न हूँ।' पूज्य गुरुदेव ने तुरन्त 'तहत्त' कहकर गुरु-वचन को प्रमाण किया। चातुर्मासों की घोषणा में परिवर्तन किया। श्री शांति मुनि जी म. को कांधला से बदल कर मतलौड़ा

भेजा और जयमुनि को कांधला में। जयमुनि को इससे पहले स्वतन्त्र विचरण का अभ्यास नहीं था, पर गुरुदेव ने सिर पर हाथ रखकर फरमाया कि 'मेरी पूरी कृपा दृष्टि रहेगी। चिंता मत करना, सब आनंद-मंगल होगा।' और गुरुकृपा पाकर क्या कुछ नहीं हो जाता?

जाकी कृपा पंगु गिरि लंघे, अन्धे को सब कुछ दरिसाई।
बहरा सुनै, मूक पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र धराई।

कुछ ऐसे ही तिण्णाणं तारयाणं थे गुरुदेव!

गुरुदेव रोहतक में ही थे कि अमृतसर में 'आप्रेशन ब्लूस्टार' हुआ। वहां स्वर्ण-मंदिर में छिपे उग्रवादियों को सेना ने हमला बोलकर मार डाला। इस घटना के राजनैतिक पहलुओं से हटकर गुरुदेव को पंजाब के जैन भाई-बहनो की फिक्र थी। सारे पंजाब में दहशत की छाया थी। लोग गुरुदेव के चरणों में आते और समाधान पाकर जाते। आज सैंकड़ों परिवार ऐसे हैं, जो ये मानते हैं कि गुरुदेव की कृपा से ही हम अपने जान-माल की सुरक्षा कर सके। वैसे बरनाला में ही गुरुदेव ने पंजाब वासियों को आने वाले काले दिनों के प्रति सचेत कर दिया था।

सोनीपत चातुर्मास से पूर्व गन्नौर मण्डी में समालखा के ला. शिखर चन्द जी के सुपुत्र वैरागी राजेश जी गुरु-चरणों में आए। चातुर्मास में ला. चन्द्रभान जी के सुपुत्र मुकेश जी वैरागी बने। गुरुचरणों में तपस्वी श्री इंद्रसैन जी ने मास-खमण किया। उनके पारणे पर समाज उनको बैण्ड-बाजों सहित घर ले जाना चाहता था। भारी भीड़ मुख्य द्वार पर खड़ी थी। तपस्वी जी गुरु चरणों में वंदना करने आए, तो गुरुदेव ने संकेत किया कि तपस्या को आडम्बर से बचाकर रखें, तो अच्छा है। श्रावक जी समझ गए और चुपचाप स्थानक के पिल्ले जीने से उतर कर अपने घर पहुंच गए। सब श्रावक चकित रह गए। बाद में गुरुदेव ने प्रवचन मे उनके तप और निस्पृह भाव की संस्तुति की। उस चातुर्मास में 113 अठाई तपस्याएँ हुई।

सोनीपत चातुर्मास में एक दुर्घटना भी घटी। वहाँ के एक प्रतिष्ठित जाट चौ. लालचन्द जी गुरुदेव के परम भक्त थे। सन् 1973 से ही धर्मध्यान, सामायिक, संवर, पौषध आदि करते थे। गुरुदेव ने ही उन्हें जैनत्व से संस्कारित किया था। सारा परिवार भी धर्म से जुड़ गया था। कई वर्षों से ट्रक यूनियन के प्रधान थे। यूनियन में कई कुख्यात व्यक्तियों से रंजिश चल रही थी। वे इन्हें मारने की टोह में थे। एक दिन चौधरी सा. गुरुदेव के प्रवचन में सामायिक में बैठे थे। बड़ी भीड़ थी। विरोधियों को पता लगा कि इस समय वह मुकाबले की स्थिति में नहीं है। वे ऊपर हाल तक आए, पर गुरुदेव का पुण्यातिशय काफी प्रबल था। कुछ सोचकर नीचे उतर गए। सड़क पर जाकर छुप गए। प्रवचन-समाप्ति पर लोग नीचे उतरे। चौ। साहब भी आए। विरोधी ताक में बैठे थे। दनादन गोलियाँ बरसाकर उन्हें वहीं ढेर कर दिया। बचाने के प्रयास में उनका एक भानजा भी मारा गया। पर शुक्र इस बात का रहा कि और किसी जैन भाई, बहन को न छर्रा लगा, न चोट आई। बाद की पुलिस कार्रवाई में भी जैन स्थानक या किसी जैन भाई का नाम नहीं आया।

एक सुबह गुरुदेव ने सन्तों को बताया कि 'मुझे ऐसा आभास हुआ है कि किसी विशिष्ट व्यक्ति का निधन होने वाला है। मैंने रात को स्वप्न में सूर्य को अस्त होते हुए देखा है, पर ये स्पष्ट नहीं है कि वह व्यक्ति कौन हो सकता है।' सभी मुनिराज अपने-अपने अनुमान लगाते रहे। उसी दिन प्रातः 10 बजे प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी को उन्हीं के अंगरक्षकों ने मार डाला। उनकी हत्या के बाद सिख-समुदाय पर जो जुल्म हुए, उससे भी गुरुदेव की आत्मा आहत हुई। जिस प्रकार पंजाब के निरपराध हिन्दुओं की हत्या पर उन्हें खेद था, ऐसे ही निर्दोष सिखों की हत्या पर भी हुआ। वे सच्चे अर्थों में मानवतावादी थे।

क्या बताऊं क्या नहीं है, और क्या खतरे में है,
आंधियां ऐसी चली हैं, हर दिया खतरे में है।
गुरुद्वारों, मन्दिरों पर आज पहरे हैं लगे,
वाहे-गुरु खतरे में है, परमात्मा खतरे में है।

उस वर्ष कांधला चातुर्मास की सफलता से गुरुदेव को काफी प्रसन्नता हुई तथा अपने दूसरी पंक्ति के मुनियों पर विश्वास जम गया। आगे से नए मुनियों को आगे लाने का विचार बना। श्री नरेश मुनि जी म. को अगले वर्ष के लिए तैयार करने का मन बनाया।

सन् 1985 में गुरुदेव ने महास्थविर श्री भण्डारी जी म. की सेवा में रोहतक चातुर्मास किया। दिल्ली पर भी उस वर्ष गुरुदेव ने विशेष कृपा की। अपने शिष्यों के तीन चातुर्मास दिल्ली में कराए। एक नूतन चातुर्मास श्री नरेश मुनि जी म. का राजाखेड़ी में करवाया। श्री तपस्वी जी म. का गोहाना मण्डी में चातुर्मास हुआ।

चातुर्मास बैठने से पूर्व जून मास में पूज्य गुरुदेव के सांसारिक चाचा मा. शाम लाल जी का अकस्मात् निधन हो गया। खबर सुनकर गुरुदेव को गहरा आघात लगा। गुरुदेव के जीवन पर मा. जी के अगणित उपकार थे। उस समय मास्टर जी के अंगजात श्री शास्त्री जी म. देहली चाँदनी चौंक में विराजमान थे। एक सन्त के पुत्र, एक सन्त के पिता तथा एक सन्त के चाचा होने के साथ-साथ मा. जी स्वयं भी एक सन्त जैसा ही जीवन जीने वाले थे। उनकी अंतिम यात्रा को दिल्ली निगम बोध घाट पर ले जाने से पूर्व चाँदनी चौंक बारादरी के नीचे लाया गया ताकि उनके तनुज श्री शास्त्री जी म. भी उन्हें अंतिम बार देख लें या दर्शन दे दें। सारा परिवार, परिचित जन एवं सम्बन्धी-वर्ग नीचे खड़ा हो गया। ऊपर संदेश दिया कि एक बार नीचे आ जाओ। चतरसैन, सुरेन्द्र कुमार जी बुलाने आए। पर शास्त्री जी म. उस स्थिति में न भावुक हुए, न भावना में बहे, न अपनी व्यवहारिकता को ध्वस्त होने दिया। कहने लगे 'अब वो मेरे लिए मिट्टी के तुल्य हो गए हैं। मुझे नीचे जाकर क्या करना है।' पारिवारिक आग्रह के बावजूद म. श्री जी अपने चिंतन में स्थिर ही बने रहे। सामान्य जनता की प्रतिक्रिया क्या रही होगी, ये तो वो जाने, पर पूज्य गुरुदेव जी म. को जब ये ज्ञात हुआ तो उनका कथन था, "मुझे शिष्य बनाने का लाभ मिल गया।" गुरुदेव सदा पारिवारिक मोह-भावना से स्वयं ऊपर उठे और मुनिमण्डल को भी ऊपर उठाते रहे हैं।

पूज्यपाद भण्डारी श्री बलवन्त राय जी म. ने वाचस्पति गुरुदेव की तथा उनके प्रत्येक मुनि की अतुलनीय सेवा की थी। 1963 के बाद 1984 तक उनका संपूर्ण काल श्री तपस्वी जी म. के साथ व्यतीत हुआ था। 5-7 साल पूर्व तक वे सेवा-कार्यों में जुटे रहे थे। पर अब कुछ आयु का गणित शरीर पर दबाव बनाने लगा था। रोहतक जब पधारे थे, तब स्थिरवास की कोई कल्पना नहीं थी, पर भिन्न-भिन्न कारणों से ठहरे रहे, तो विहार के योग्य शरीर-शक्ति नहीं रही। प्रारंभ में श्री तपस्वी जी म. भी रोहतक में कई व्याधियों से गुजरे। जब ठीक हो गए, तो उनका मन विहार के लिए उद्यत हुआ। वे श्री भण्डारी जी म. से पृथक् भी नहीं होना चाहते थे और एक स्थान पर रुकने का मन भी नहीं था। अतः निर्णय किया कि श्री विनय मुनि जी म. जैसे समर्थ सेवाभावी संत को उनके सान्निध्य में छोड़ा जाए तथा श्री तपस्वी जी म. छोटे-छोटे विहार करें। पूज्य गुरुदेव जी म. ने सोचा कि पूज्य श्री भण्डारी जी म. की सेवा में मैं स्वयं रहूँ। इसलिए उस वर्ष 1985 का चातुर्मास रोहतक में किया।

रोहतक चातुर्मास में गुरुदेव ने यह निश्चित नियम बना लिया था कि सायं प्रतिक्रमण के बाद श्री भंडारी जी म. की वैयावृत्त्य स्वयं करते। श्री भण्डारी जी म. बहुत मना करते कि छोटे सन्त कर देंगे, पर गुरुदेव तो 'विनय के साक्षात् अवतार थे। कई बार ऐसा भी होता कि खुद अस्वस्थ हो जाते, लेकिन बड़ों की वैयावृत्य से नहीं हटते थे। सन् 1973 से चली आ रही पेशाब की तकलीफ का हल्का-सा उपचार भी कराया। उस वर्ष गुरु-चरणों में सुनाम के नवीन कुमार जी वैरागी रूप में आए। कांधला के पास से एक प्रौढ़ लालचन्द जी भी दीक्षार्थ आए। इस प्रकार गुरुदेव के धर्म-परिवार की वृद्धि हो रही थी। रोहतक में एक बार तो दीक्षार्थियों की संख्या दस तक हो गई थी। सबकी निगरानी गुरुदेव अच्छी तरह करते थे। लेकिन बढती हुई यह संख्या गुणवत्ता पर भी प्रश्न-चिह्न लगाने लगी थी। गुरुदेव के चातुर्मास में ही लालचन्द को दीक्षित किया गया। इस वर्ष गुरुदेव के आज्ञानुवर्ती कई चातुर्मासों में भाई-बहनों ने मासखमण

तप किए। इस प्रकार श्रावकों में दीर्घ तपस्याओं का तथा मुनियों में जल्दी-जल्दी दीक्षाओं का क्रम शुरू हो गया।

गुरुदेव की आज्ञा से होने वाले प्रत्येक चातुर्मास को श्रावक-वर्ग गुरुदेव का ही चातुर्मास मानकर सफल बनाता था। स्वयं गुरुदेव सब स्थानों की, सब मुनियों की पल-पल निगरानी रखते थे। सभी संत अनुभव करते थे कि हमारे ऊपर गुरुदेव अदृश्य रुप से कृपा बरसा रहे हैं। इस वर्ष श्री शास्त्री जी म. तथा श्री राजेन्द्र मुनि जी म. की नेश्राय में त्रिनगर दिल्ली में जो धर्मध्यान तथा तपोयज्ञ का अनुष्ठान हुआ, वह सब कल्पनाओं से बाहर था। मगर पूज्य श्री शास्त्री जी म. का फरमाना है कि पूज्य गुरुदेव जी म. की कल्पना में पहले से ही ये सब आभासित हो गया था। जैसे कि चातुर्मास के प्रारंभिक दिनों में गुरुदेव ने एक पत्र लिखकर भेजा था, "शास्त्री, इस साल चातुर्मास में 251 अठाइयां होंगी।" पर चूंकि ये आंकड़ा काफी बड़ा था, इसलिए लिखते-लिखते गुरु म. चौंक गए थे। उन्होंने 251 को काटकर 151 लिख दिया। फिर उसी दबे-से भाव में लिखा उन्होंने "500 तेले होंगे।" और यथार्थ ये है कि उस वर्ष त्रिनगर में व्रतों की 255 अठाइयां, 900 तेले तथा व्रतों के 5 मासखमण हुए। पूज्य गुरुदेव की मूल कल्पना को पूरा जो होना था।

चातुर्मास के पश्चात् गोहाना में तीन दीक्षाओं की घोषणा हुई। मुनिसंघ एकत्रित हुआ। गोहाना-समाज पूरी तैयारी में जुटा था। तीनों विरक्त सुविशाल परिवारों से सम्बद्ध थे, अतः उत्साह था। श्री सुनील जी गोहाना के प्रधान ला. रामेश्वरदास जी के पोते एवं श्री प्रकाश चन्द जी के सुपुत्र थे। राजेश जी समृद्ध देहरा परिवार के ला. शिखर चन्द जी के सुपुत्र थे एवं श्री अजित जी समाज-नेता श्री किशोरी लाल जी के भतीजे तथा श्री शामलाल जी के सुपुत्र थे। अपनी-अपनी प्रतिष्ठानुसार सभी कार्य करने में व्यस्त थे। अचानक श्री तपस्वी जी म. ने कहा कि इस दीक्षा पर बाहर के श्रीसंघों को निमंत्रण-पत्र नहीं दिया जाए। गुरुदेव ने उनकी इच्छा को अधिमान दिया तथा तीनों परिवारों को मनाया। छपे हुए सब निमंत्रण पत्र रोक दिए गए। गोहाना दीक्षा पर मौसम बहुत बूंदा-बांदी

का था। दीक्षा के दिन भी गोहाना के चारों ओर 2-3 कि.मी. बाहर तक विस्तृत इलाके में व्यापक वर्षा होती रही, परंतु गोहाना बिल्कुल सुरक्षित रहा। सारे समाज ने इस आश्चर्यकारी कृपा के लिए गुरुओं का आभार माना। यह विचित्रता दिल्ली के समाचार-पत्रों तक में प्रकाशित हुई। गुरुदेव किसी विशिष्ट कार्य की सम्पन्नता पर स्वयं को श्रेय देने की बजाय यही कहा करते थे कि 'ये सब गुरु म. की कृपा से, सन्तों के पुण्य से तथा समाज के सहयोग से हुआ है।'

गुरुदेव जी म. की हार्दिक इच्छा यही रहती थी कि जैसे-जैसे मुनि-दीक्षाएँ हो रही हैं, वैसे-वैसे मुनियों में संयम और अनुशासन भी बढ़े। मुनियों में परस्पर प्रेम हो तथा बड़ों के प्रति विनय व छोटों के प्रति वात्सल्य-भाव प्रकट हो। वे कोशिश करते थे कि हरेक मुनि दूसरे हर मुनि के साथ रहना सीख ले। कोई शिष्य यदि उनकी स्तुति, सेवा एवं आज्ञाराधना करता तो इतनी खुशी नहीं होती, जितनी कि कोई अपने बड़े या छोटे गुरु भाई की करता, तब होती। ऐसे मौके वे उसे कोटि-कोटि आशीर्वादों और साधुवादों से लाद देते थे। नवदीक्षित श्री सुनील मुनि जी ने एकदा अपने एक बड़े गुरु-भाई की स्तुति गुरुदेव के समक्ष की, तो उनकी प्रसन्नता अवर्णनीय हो गई।

दीक्षा के पश्चात् गुरुदेव जीन्द पधारे। वहाँ श्री तपस्वी जी म. का समाचार आया कि 'समालखा वासी श्री सुशील जी की दीक्षा 12 मार्च को जीन्द में करनी है, ये मेरी इच्छा है।' सुशील जी कई वर्षों से वैराग्य अभ्यास में थे, पर परिवार वालों की आज्ञा नहीं मिल रही थी। उन्हें कई बार समझाया भी गया, पर उनका मोह प्रबल था। गुरुदेव उनको इतना तो पहले ही स्पष्ट कर चुके थे कि हम आपकी आज्ञा के बिना दीक्षा नहीं देंगे। इस आश्वासन से परिवार वाले निश्चिंत भी हो गए थे और दीक्षा की आज्ञा न देने के लिए हठाग्रही भी। जब दिसम्बर में गोहाना में दीक्षाएँ हो रही थी, तब श्री सुशील जी ने श्री तपस्वी जी म. के चरणों को अश्रुजल से धोना शुरू कर दिया। लौह-पुरुष का हृदय पिघल गया और जीवन में प्रथम बार घोषणा की कि 'तुझे मैं दीक्षा दिलवाऊँगा। 12 मार्च तक तेरे

घर वाले या तो तुझे मना लें, नहीं तो तेरी दीक्षा निश्चित है।' गुरुदेव ने जब श्री तपस्वी जी म. के इस 'वचन' को सुना, तो अपना 'वचन' वापस ले लिया। ये सोचा कि 'अब सुशील वयस्क हो गया है। खुद-मुख्तियारी का हकदार है। घर के बुजुर्ग (दादाजी) आज्ञा-पत्र लिख चुके हैं, कोर्ट से भी आज्ञा ले ली है, अतः इसे दीक्षा दे देनी ही चाहिए। और इन सबसे बड़ी बात ये भी कि श्री तपस्वी जी म. की इच्छा को पूरा करना है'। 'तेरा वैभव अमर रहे माँ, हम दिन चार रहें न रहें' के अनुसार गुरुदेव ने फरमाया कि 'यद्यपि माता-पिता की सहर्ष सहमति के बिना पहले कभी कोई दीक्षा नहीं दी गई तथा इस प्रसंग में भी हम कई बार ये कह चुके हैं, पर तो भी इस संघ में श्री तपस्वी जी म. की इच्छा को ही अधिमान दिया जाता है, अतः हम इसे 12 मार्च को दीक्षा प्रदान कर देंगे।'

दीक्षा में अभी लगभग 65 दिन शेष थे। इतने लम्बे समय तक जीन्द में कैसे रुकें? एतदर्थ जीन्द को तीन भागों में बाँटा गया और कल्प की व्यवस्था बनाई गई। एक कल्प शहर में, एक स्कीम में तथा शेष दिन शाम कालोनी में लगाए। जीन्द का तीन क्षेत्रों में विभाजन सन् 1986 की देन हैं। हाऊसिंग बोर्ड के सुदूरवर्ती घरों से गोचरी लाने की प्रथा भी तभी से शुरू हुई।

12 मार्च के निर्धारित दिन जीन्द स्कीम के हाल में सुशील जी की दीक्षा हुई। आशंका थी, परंतु कलह-क्लेश का कोई वातावरण नहीं बना। श्री सुशील जी के माता-पिता उपस्थित नहीं थे, पर दादा जी ने आज्ञा देकर एक औपचारिकता पूरी कर दी।

जीन्द से हांसी की ओर प्रस्थान किया। पहली रात ही श्री शान्ति मुनि जी म. को खाँसी का भीषण प्रकोप हुआ। गुरुदेव सारी रात जागते रहे और उन्हें संभालते रहे। वृद्ध, ग्लान और तपस्वी का जितना ध्यान वे रखते थे, उतना अन्यत्र दुर्लभ है। कोई मुनि दूरवर्ती कमरे में हो, उसे खाँसी या छींक आ जाए, तो भले ही बगल में बैठे सन्त का ध्यान उधर न जाए, पर गुरुदेव दूर से ही सुन लेते थे। खुद उठकर जाते, पूछते, क्या

बात है? तबीयत तो ठीक है ना'? गुरुदेव ने श्री शान्ति मुनि जी से पूछा कि यदि अधिक परेशानी, हो तो कल ही वापिस जीन्द चलते हैं, परन्तु श्री शांति मुनि जी म. ने हिम्मत की और विहार करके हांसी पहुंच गए।

इस वर्ष गुरुदेव का हांसी पदार्पण अनेक उपलब्धियों से भरपूर था। सन् 1945 में गुरुदेव ने हांसी में ही कथा करनी सीखी थी। तब वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया था कि 'आज तेरी कथा में शुरू में तीन आदमी ही आते हैं, पर वो समय भी आएगा, जब तीन-तीन हजार लोग भी होंगे।' उसी हांसी में आज वाचस्पति गुरुदेव की वाणी मूर्तिमान् हो रही थी। स्थानकवासी, तेरापंथी, दिगम्बर, सनातन सब में एक होड़-सी लग गई कि गुरुदेव का प्रवचन हमारे यहाँ हो। गुरुदेव सबके धर्मस्थलों पर ठहरे भी और प्रवचन भी किए। उस समय का जनोत्साह अपूर्व था। जब गुरुदेव तेरापंथ भवन में विराजित थे, उसी दिन जयपुर श्री संघ के पदाधिकारीगण श्री प्रकाश मुनि जी म. के चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुए। श्री गुमानमल जी चोरडिया ने अपने वक्तव्य में कहा था कि 'हमारे राजस्थान में स्थिति ये है कि स्थानकवासी संघ के ही श्रावक-श्राविका दूसरे टोले के मुनियों के पास नहीं जाते और इधर ये पावन गुरुदेव हैं, जिनकी सन्निधि में भिन्न संप्रदाय के लोग भी अपनी धर्मश्रद्धा की अभिवृद्धि कर रहे हैं। गुरुदेव ने किसी भी स्थान पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में विरोधी मत की आलोचना नहीं की। सभी संघों को अपने उज्ज्वल पक्ष को ही उजागर करने की प्रेरणा दी। सभी आगंतुक व्यक्तियों की प्रतिक्रिया ये थी कि हमारे धर्मगुरु तो कुछ ही धनी-मानी लोगों में सिमट कर रह जाते हैं, आम आदमी के सुख-दुःख से, श्रद्धा, वन्दन से उन्हें कोई सरोकार नहीं, परंतु ये सबकी वदंना लेते हैं, सबसे मधुर आलाप करते हैं और बिना भेद-भाव के सबके घरों में गोचरी जाते हैं। गुरुदेव की सभाओं में हजारों की भीड़ होने पर कुछ लोगों ने 'पंथ खतरे में है' का नारा भी लगाया। अपने-अपने हाई कमाण्ड तक भो शिकायत पहुंचाई, पर गुरुदेव को धर्मान्तरण, सम्प्रदायान्तरण या समाजान्तरण में कोई रुचि नहीं थी, केवल जीवन और हृदय के परिवर्तन पर उनका विश्वास था।

हिसार काफी समय के बाद गुरुदेव पधार रहे थे। पूरे शहर में उत्साह था। स्थानकवासी समाज छोटा है, पर भक्ति-सम्पन्न है। 'हिसार' शब्द उर्दू के शब्दकोश के अनुसार तो किले, चारदीवारी या परकोटे के अर्थ में प्रयुक्त होता है, पर संस्कृत के विद्वान् लेखक श्री वासुदेव शरण अग्रवाल ने उत्तराध्ययन सूत्र में वर्णित 'इषुकार नगर' को ही हिसार कहा है। जैन स्थानक के अलावा गुरुदेव ने माडल टाउन, ग्रीन पार्क तथा यूनिवर्सिटी कैम्पस में भी प्रवचन फरमाए। विश्वविद्यालय में गुरुदेव से अनेक प्रोफेसरों ने साहित्य की मांग की, पर प्रकाशन की व्यवस्था न होने से नहीं दे सके। अनेक प्रोफेसरों ने कहा कि 'आपके प्रवचन तो अवश्य ही प्रकाशित होने चाहिएं, क्योंकि हमें ये आचार्य रजनीश, महाप्रज्ञ जी तथा मुनि रूपचन्द जी से भी अच्छे लगे।' कई पत्रकार साक्षात्कार लेने भी आए, पर गुरुदेव ने निषेध कर दिया। गुरुदेव हर स्थिति में अपनी सीमा में ही रहना चाहते थे।

हिसार में एक रोचक प्रसंग बना कि गुरुदेव को हिचकी शुरू हो गई। कई घण्टे चली। प्राणायाम आदि कई प्रयत्न किए, पर सभी असफल। सूर्यास्त के पश्चात् प्रतिक्रमण शुरू हुआ। किसी ने ऊपर की पौड़ी से लोहे का एक तसला नीचे गिरा दिया। जोर का शोर हुआ। गुरुदेव आशंकित हो गए कि किसी को चोट तो नहीं लगी। उठ कर आए। देखा, तो सब ठीक-ठाक था। पर इसी बीच हिचकी एकदम रुक गई। गुरुदेव मन्द-मन्द मुस्काए और प्रतिक्रमण करने लगे।

हिसार में प्रथम बार वर्षीतप के पारणे हुए। उन्हें देखकर कुछ स्थानीय बहनें भी वर्षीतप में जुट गई। गुरुदेव ने एक दीप से अन्य दीपों को प्रज्वलित किया। वहाँ से फतेहाबाद होते हुए सिरसा पधारे। गुरुदेव ने सन् 1986 का चातुर्मास सिरसा में ही स्वीकृत किया था। एक महीने बाद वहाँ पुनः चातुर्मास-हेतु आना था। अभी वहाँ निर्माण कार्य चल रहा था, पर गुरुदेव कभी भी देखने नहीं गए। एक स्कूल में ठहरे। एक दिन प्रवचन चल रहा था। गुरुदेव बीच में पधारे। देखा कि सभा-स्थल पर कीड़ियाँ बहुत हैं। कहने लगे, 'यहाँ धर्माराधना की बजाय जीव-विराधना

होगी, अतः यहाँ प्रवचन नहीं होगा। सब यतना पूर्वक अन्य स्थान पर बैठोगे, तभी मैं प्रवचन करूँगा।' श्रावकों व मुनियों को एक बार असुविधा तो हुई, पर जीव-हिंसा से बचाव हो गया। गुरु म. ने प्रवचन में आज्ञा मानने पर श्रावक-समाज को साधुवाद दिया। वहाँ से रानियाँ पधारे। एक कल्प विराजे। नई चेतना आई। चातुर्मास-हेतु पुनः सिरसा पधारे।

गुरुदेव ने सिरसा को 'सिर-सा' कहा और सिर-जैसा ही मूर्धन्य स्थान प्राप्त करने की प्रेरणा दी। यहाँ पर शुरू में ही तपस्याएँ शुरू हो गई और निरन्तर चलती रही। बाल, युवा, वृद्ध सभी तप में जुट गए। चातुर्मास के अन्त तक 300 से ऊपर अठाई हो गई, जो एक अभूतपूर्व घटना थी। गुरुदेव एवं मुनिराज तपस्वियों को दर्शन देने जाते। श्रावक साता पूछने जाते। गुरुदेव ने वैरागियों को भी तपस्वियों को मंगल-पाठ एवं शास्त्रीय पाठ सुनाने के लिए प्रशिक्षित किया। गुरुदेव जैन-अजैन, धनी-निर्धन सबके घर में दर्शन देने जाते। प्रो. गुलशन कुमार जी के घर पधारते, तो एक निर्धन घर में भी जाते। उस घर के लोगों ने अश्रुपूरित नयनों से प्रो. साहब को कहा कि 'आपके घर में तो सन्त पहले भी आते थे, पर हम गरीबों पर कृपा करने वाले सन्त पहली बार ही आए है।' प्रो. गणेशीलाल जी पहले भी गुरुदेव के संपर्क में थे, चातुर्मास में उन्होंने और लाभ लिया। चौ। देवी लाल के सुपुत्र चौ। रणजीत सिंह जी भी गुरुदेव की कृपा से सनाथ हुए। एक दिन उनकी कोठी पर भी विराजे। उन्होंने स्वयं दिन-भर आगंतुकों की परिचर्या की। सिरसा समाज में कई जैन युवक राजनीति का शौक रखते हैं, इस कारण भी कई राजनीतिज्ञ आते रहते थे।

चातुर्मास हर दृष्टि से सानन्द बीत रहा था, पर एक भीषण दुर्घटना ने गुरुदेव समेत सारे समाज को विचलित कर दिया। गोहाना से श्री सुनील मुनि जी का संसार-पक्षीय परिवार रिश्तेदारों सहित दर्शन करने चला। जीन्द में श्री तपस्वी जी म. के दर्शन किए। उकलाना में श्री नरेन्द्र मुनि जी के मासखमण पारणे का कार्यक्रम देखा। फिर सिरसा के लिए चले ही थे कि 4-5 कि.मी. की दूरी पर भयंकर एक्सीडैण्ट हो गया। उसमें बुढलाडा के भगत प्यारेलाल जी के वीर सुपुत्र सुदर्शन जैन, सुनील मुनि जी की माता

श्रीमती इलायची देवी तथा सुनील मुनि जी की बुआ श्रीमती बसन्ती देवी का मौके पर ही निधन हो गया। दो दिन बाद छोटे भाई अजित का रोहतक मैडीकल में देहान्त हो गया। उनके पूज्य पिता श्री प्रकाश चन्द जी बुरी तरह घायल हो गए। गुरुदेव इस दुखद समाचार से मर्माहत हुए। कुछ समय के लिए सम्मोहन अवस्था में भी चले गए। उन्होंने दुर्घटना-स्थल, मृतक, घायलों का यथावत् चित्रांकन किया और बचे हुओं में से भी एक और की मृत्यु की आशंका जताई। वे इस प्रकार बोल रहे थे, मानों सब कुछ प्रत्यक्ष देख रहे हों।

गुरुदेव को इस भीषण वेला में श्री सुनील मुनि जी की वीतराग दृष्टि देखकर हार्दिक सन्तोष हुआ। दीक्षा का प्रथम वर्ष था। माँ प्रथम लोच देखने की इच्छा लिए आ रही थी और ऐसा भयंकर वज्रपात हुआ कि तिनका-तिनका बिखर गया। परंतु श्री सुनील मुनि जी ने भावुकता किं वा मोह का अंश भी आँखों में, चेहरे पर या भाषा में कहीं नहीं आने दिया। साधु बनने और बनाने की यह बहुत बड़ी सफलता है, जब पूर्व संस्तव हृदय-भूमिका से पूरी तरह धुल जाएँ। यदि स्मरण हो, तो भी स्मृतियों में राग-भाव का रंग न हो। गुरुदेव के पास साधना करने वाले अधिकांश मुनि उसी धरातल पर जीने के अभ्यासी हो गए हैं, जिन्हें अपने पर्व परिवारों से कोई विशिष्ट लगाव नहीं है। मुनियों को गुरुदेव से ही इतना मातृत्व और पितृत्व मिलता रहा है कि उन सम्बन्धों की आवश्यकता रहती ही नहीं। गुरुदेव तो ये भी चाहते थे कि सन्तों का मेरे से भी मोह न रहे। वे गुरु को भी निर्मोहता की मंजिल का एक पड़ाव ही मानें। कुछ मुनिराज इसमें सफल भी हुए हैं, कुछ में गुरु-मोह अभी शेष है। परन्तु श्री सुनील मुनि जी ने वास्तव में साधुता का सार लघु पर्याय में पाया है, इससे गुरुदेव पूर्णतः प्रमुदित थे।

सिरसा चातुर्मास में त्याग-तपस्या के नए कीर्तिमान स्थापित हुए। सेवा-समुल्लास का अनुपम विकास हुआ। हर ओर से बधाई और प्रशंसाओं के उपहार मिले। मगर आभ्यन्तर रूप से असमाधि की स्थितियां निर्मित हो रही थी। एक दो चालाक किस्म के मुनियों ने प्रच्छन्न रूप से अपनी

निकृष्ट प्रवृत्तियों का पोषण करना शुरू किया। जो व्यक्ति उनके कार्यों में सहयोगी (सहाभियुक्त) बने, उनको प्रथम पंक्ति में लाने का प्रयत्न किया तथा जो कुछ यथार्थ से वाकिफ थे, उन्हें किसी न किसी तरीके से विवादास्पद प्रमाणित कर हाशिए पर पहुंचा दिया और उनकी बोलती बंद करवा दी। इससे सामाजिक असंतोष तो बना, पर उसका सही स्वरूप समझने में बहुत देर लगी। जब समझ आया, तब तक पानी सिर से ऊपर जा चुका था।

चातुर्मास के बाद गुरुदेव सरदूलगढ़ पधारे। वहाँ से मानसा जाना था। सड़क काफी रोड़ीदार थी। चलने में दिक्कत की संभावना थी। घुटनों में भी काफी दर्द था। उन दिनों कोई व्यक्ति घुटनों के दर्द के विषय में पूछता, तो गुरुदेव हँसकर जवाब देते थे कि 'दर्द बहुत अच्छा है, पक्का दोस्त है। हमने इसके साथ समझौता भी और दोस्ती भी कर ली है।' रोड़ियों से बचने के लिए पैरों पर बांधने के टाट ले लिए, पर काम नहीं आए। सरदूलगढ़ के कुछ भाई साथ चलना चाहते थे, गुरुदेव ने मना कर दिया। उनका आग्रह बढा, तो गुरुदेव ने थोड़ी सख्ती से मना किया। श्रावक लौट तो गए, पर थोड़ी नाराजगी लेकर ही। गुरुदेव ने भी, न जाने इतनी सख्ती क्यों की? साधारणतः करते नहीं थे। कुछ वर्ष बाद गुरुदेव ने वहाँ के प्रमुख श्रावक श्री नेमचन्द जैन से उस विषय में क्षमायाचना की। गुरुदेव को कभी भी ऐसा अहसास हो जाता कि मेरे कारण किसी को खेद पहुँचा है, तो वे क्षमापना करने में संकोच नहीं करते थे। उन्होंने कभी अहं को मुद्दा नहीं बनाया।

नमन्ति फलिनो वृक्षाः, नमन्ति गुणिनो जनाः।
शुष्क-वृक्षाश्च दुष्टाश्च न नमन्ति कदाचन।

अर्थात् फलदार वृक्ष और गुणवान् पुरुष ही नम्र होते हैं। सूखे ढूंठ तथा दुष्ट पुरुष कभी झुकते नहीं हैं।

विहार करते-करते गुरुदेव नरवाणा पधारे ही थे कि समाचार मिला कि 'श्री तपस्वी जी म. रोहतक में वैश्य कालेज में घूमने गए थे। अचानक

चलते-चलते गिर पड़े और सिर में काफी चोटें आई हैं। एकाशने के कारण दवाई भी नहीं ली और खून काफी निकला है।' गुरुदेव के तो पैरों तले की जमीन ही खिसक गई। फिर भी अपरिमित धैर्य-शक्ति को प्रकट करके नन्दी-सूत्र की स्वाध्याय में लीन हो गए। बाद में सभी व्यग्र सन्तों को फरमाया कि चिन्ता की घड़ी टल गई है। गुरुदेव ने सब सन्तों को नन्दी-सूत्र, सुख-विपाक सूत्र व उवसग्गहर-स्तोत्र का पाठ करने का आदेश दिया। साथ ही वक्त की नजाकत को समझते हुए गृहस्थों से अधिक वार्तालाप व हँसी-मजाक करने को भी मना किया। सबने गुर्वाज्ञा का पालन किया।

उसी रात को एक और समस्या आई। रात्रि 9 बजे श्री राकेश मुनि जी ने शरीर में तेज खुजली की शिकायत की। पता लगा कि शाम को एक कैप्सूल लिया था, उसका रिएक्शन मालूम होता था। शरीर पर छोटी-छोटी फुसी उभरने लगी। सारे शरीर में भारी बैचेनी थी। सन्तों ने गुरुदेव से निवेदन किया कि जान को खतरा हो सकता है अतः किसी डॉक्टर को बुलाकर राय लेने में कोई हर्ज नहीं है। गुरुदेव सबकी सुनते रहे। बाद में निर्णय के स्वर में बोले कि 'किसी श्रावक या डॉक्टर को नहीं बुलाना। उनको बुलाने का अर्थ है—दवाई लेना। हम किसी भी कीमत पर दवाई नहीं देंगे। जो होगा, देखा जाएगा। सब पाठ करो। जिस को आराम करना है, आराम करे। मैं राकेश के पास बैठा हूँ।' ये कहकर उनके सिरहाने आकर बैठ गए। सिर सहलाने लगे। सारे शरीर पर हाथ फेरा। पाठ सनाने लगे। बराबर में जयमुनि की ड्यूटी लगा दी। घंटे भर बाद राकेश मुनि जी को उल्टी, दस्त हुए। गुरुदेव ने फरमाया कि खतरा टल गया है, अब धीरे-धीरे ठीक हो जाएँगे। ऐसा ही हुआ। धीरे-धीरे सब लक्षण शांत हो गए। गुरुदेव के धैर्य ने यह चमत्कार कर दिखाया। वहां से जीन्द होते हुए रोहतक पदार्पण हुआ।

जब गुरुदेव रोहतक पहुँचे, तब तक श्री तपस्वी जी म. का घाव काफी भर चुका था। पण्डित-प्रवर श्री रामप्रसाद जी म. ने जब सारी स्थिति का विवरण सुनाया, तो सब की आँखें भीग गई। उन दिनों तपस्वी जी

म. एक विशेष जाप में लीन थे। रात को बहुत कम नींद लेते थे। दिन में जाप ज्यादा करते, बात कम। सिर की चोट के बाद वे अपने भावी को देखने में व्यस्त रहते थे। वहाँ जाते ही तपस्वी जी म. के परामर्श पर तीन दीक्षाओं की घोषणा हुई। निमत्रंण-पत्र नहीं छपवाए गए। श्री नवीन जी, सुभाष जी, संजय जी की तीन दीक्षाएँ हुई। बाद की दो तो असफल ही रही। इस समय मुनि-संघ में 29 संत हो गए थे।

उन्हीं दिनों श्री प्रकाश मुनि जी म. ठाणे-4 जयपुर का भव्य चातुर्मास करके रोहतक पधारे। मुनियों ने कठोर परिश्रम और परीषहों का सामना करके आगरा, ग्वालियर, शिवपुरी और झाँसी का दुःसाध्य इलाका साधा था। जयपुर में धर्मध्यान का पावन इतिहास रचा था। लघुमुनियो के वस्त्र, भाषा और अध्ययन की रुचि, सब उनकी कठिन चर्या की सूचना दे रहे थे। जब श्री सत्यप्रकाश मुनि जी एवं अचलमुनि जी बड़े-बड़े थोकड़ों के विषय में प्रश्न-चर्चा करते, तो सभी वरिष्ठ सन्तों को अपार हर्ष होता था। गुरुदेव उनकी प्रकृति एवं प्रगति के विषय में बड़ी रुचि लेते थे तथा अपने पठित विषय को टिकाए रखने की सतत प्रेरणा करते उसी प्रवास के मध्य एक रात को दस बजे के करीब श्री सुन्दर मुनि जी को अचानक भोजन-विषाक्तता की तकलीफ हो गई। सभी सन्त पास खड़े थे। कोई कर भी क्या सकता था? श्री तपस्वी जी म. ने यही उचित समझा कि 'युवा सन्त है, खतरा मोल नहीं लेना चाहिए। गृहस्थों को बुलाकर उन्हें सौंप दो।' श्री तपस्वी जी म. की दृढ़ता हिलती देखी, तो गुरुदेव दृढ़ हो गए। कहने लगे—इतनी जल्दी मत करो। कुछ निर्दोष विधियाँ बताई। सन्त तदनुसार करते रहे। फिर गुरुदेव ने कुछ उपयोग लगाया और कहने लगे, 'जीवन को कोई खतरा नहीं है। दो घण्टे का कष्ट है, ठीक हो जाएगा। चिन्ता मत करो।' धीरे-धीरे तबीयत टिक गई। श्रावकों को कष्ट की सूचना अगले दिन ही दी।

7. मेरु-दण्ड हिला

अप्रैल 1987 से लेकर मार्च 1988 तक के एक वर्ष का समय गुरुदेव एवं सारे मुनिसंघ के लिए विशेष चिंता, आशंका और असमाधि का रहा। मुनिसंघ पर न जाने किसकी कुदृष्टि पड़ गई थी कि सर्वथा अप्रत्याशित और अभूतपूर्व क्षति उठानी पड़ी। मुनिसंघ की संख्या एक वर्ष में ही 29 से घटकर 23 रह गई। कुछ चिंताएँ अकस्मात् आई और कुछ के विषैले बीज जो कई वर्षों से भीतर-भीतर पनप रहे थे, वे विषवृक्ष बनकर उभर आए। चतुर्थ महाव्रत के भंग के अपराध में राममुनि को संघ से निष्कासित कर दिया गया। राजमुनि को भी मुनिवेष लेकर घर भेज दिया गया। गुरुदेव पर बड़े चिंता और संकट के दिन थे। गुरुदेव गम को खाए जा रहे थे और गम गुरुदेव को। श्री तपस्वी जी म. के वज्रसकंल्प, साथी मुनियों के पुण्य-प्रताप एवं गुरुदेव की सागर-वर-गम्भीरता से वातावरण शान्त बना रहा। उन दिनों गुरुदेव ने प्रवचन भी छोड़ दिया था। श्रद्धेय श्री रामप्रसाद जी म. करते थे। पूर्व सहयोगी के रूप में जयमुनि थे।

26 अप्रैल को रोहतक शहर में विराजमान महासती श्री तिलका सुन्दरी जी का देवलोक हो गया। गुरुदेव 27 ता. को प्रातः साध्वी-मण्डल को सहानुभूति एवं धैर्य देने शहर पधारे। प्रवचन बन्द था। महासती जी की अंतिम यात्रा मण्डी-स्थानक के नीचे से गुजरी। पूज्यपाद श्री भण्डारी जी म. ने ऊपर से देखी और अचानक मुंह से निकला 'आज इसकी यात्रा निकली, कल मेरी निकलेगी।' सब कुछ ठीक था। बस अचानक दोपहर बाद उनकी तबीयत बिगड़ने लगी। सायं चार बजे गुरुदेव के हाथों में ही प्राण-पखेरू उड़ गए। उनकी ये इच्छा थी कि मेरे अंतिम समय में गुरुदेव मेरे पास ही रहें। उनकी यह भावना पूर्ण हुई। श्री तपस्वी जी

म. भी उन दिनों वहीं विराजमान थे। स्वर्गवास से आधा घंटा पूर्व उन्होंने उनकी नब्ज देखी। कहने लगे, इतनी चिन्तनीय स्थिति नहीं है। तीनों मुनिराज वैश्य कालेज की ओर निवृत्यर्थ चले गए और इधर श्री भण्डारी जी म. देवलोकों की ओर प्रस्थित हो गए। गुरुदेव ने मुनियों को वैश्य कालेज की ओर भेजकर श्री तपस्वी जी म. प्रभृति तीनों महामुनियों को बुलवाया तथा साधूचित व्यवस्थाएं सम्पन्न कर मृतक शरीर को समाज के हवाले कर दिया।

कुछ दिन पूर्व 29 सन्त श्री भण्डारी जी म. की सन्निधि में एक मांडले पर एकत्रित हुए थे। उन जैसा सौभाग्य इस मुनिसंघ में पहले किसी को नहीं मिल पाया था। उनके जाने से एक इतिहास का विलोप हुआ। उन्होंने 68 वर्ष का संयम पाला। उन जैसी सुदीर्घ मुनि-पर्याय के सन्त उत्तर भारत में तो क्या, दूर-दूर तक नहीं थे। वे सब अर्थों में पूर्णकाम होकर देवलोक पधारे थे। गुरुदेव से कहा गया कि उनकी स्मृति में दिल्ली-महासंघ 'महावीर-मिशन' विशेषांक निकालना चाहता है। गुरुदेव का उत्तर था, 'जैसी इच्छा'। गुरुदेव का स्वभाव था कि वे कठोर निर्णय तो पहले भी नहीं लेते थे, और अब तो कोमल निर्णय भी नहीं ले पा रहे थे। जैसा सबका मन हो, कर लो। मुझे कोई आपत्ति नहीं है', ऐसा उनका स्वभाव बन गया था। चातुर्मासों का पुनर्निधारण करके रोहतक से विहार किया। गुरुदेव का सन् 1987 का चातुर्मास गोहाना होना था और श्री तपस्वी जी म. का सोनीपत। गोहाना में ही दोनों महापुरुषों का मिलन हुआ और समय ने ये बताया कि ये उनका अंतिम मिलन था।

पूज्य गुरुदेव बहुधा फरमाया करते कि श्री तपस्वी जी म. के हाथ में एक रेखा ऐसी थी, जिससे उनको विश्व-प्रसिद्धि मिलेगी। मगर ये ज्ञात नहीं था कि वह कार्य क्या होगा। अपने इस अंतिम मिलन में भी गुरुदेव ने वह बात दोहराई। श्री तपस्वी जी म. अपलक देखते रहे, मौन भाव से सुनते रहे। कुछ ही दिन में वह घटना घटित हो गई।

चातुर्मास प्रारम्भ हो गया। चर्चाओं से पृथक् रहकर आत्म-साधना और शासन की सेवा करते हुए गुरुदेव समाधिभाव में लौट आए। 19 जुलाई, रविवार को प्रातः काल प्रतिक्रमण से पूर्व गुरुदेव ने सब सन्तों से कहा कि 'आज मुझे एक खराब स्वप्न आया है। मुझे लगता है कि श्री तपस्वी जी म. पर भीषण खतरा है। सभी पूजा-पाठ करो और उनके लिए शुभ-कामना करो।' उसी शाम को सोनीपत में श्री तपस्वी जी म. अस्वस्थ हो गए। डॉक्टरों ने दिल की तकलीफ बताई। उपचार शुरू हुआ, पर कोई लाभ नहीं हुआ। अचानक श्री तपस्वी जी म. ने 5 अगस्त को संथारे का पच्चक्खाण ले लिया। गुरुदेव से खबर इसलिए नहीं मंगवाई कि वे स्नेह और मोह-भावना-वश आज्ञा नहीं देंगे।

जब संथारा शुरू हो गया तो गुरुदेव ने उनकी प्रशस्ति में जो कहा, जो लिखा, वह उनके हृदय-सागर की एक सहज लहर थी। गुरुदेव का समग्र ध्यान सोनीपत की ओर ही था। उनके प्रवचन का विषय था संथारा और चिन्तन का भी विषय था—संथारा। श्री तपस्वी जी म. अपने ध्यान में थे और गुरुदेव तपस्वी जी म. के ध्यान में। भजन बनाते, बनवाते, पत्र लिखते, लिखाते, केवल वही एक विषय था। गुरुदेव ने संथारा प्रारम्भ होने के कुछ दिन बाद ही श्री राकेश मुनि जी से श्री तपस्वी जी म. की स्तुति में कुछ दोहे बनवाए थे। उनको अपने प्रवचन की पट्टी में रख लिया। रोज सोचते कि आज सुनाऊगाँ, फिर कल पर टाल देते। प्रतिदिन ये क्रम चलता रहा। राकेश मुनि जी ने कई बार उनको सुनाने का आग्रह किया। गुरुदेव ने फरमाया कि मेरा मन ऐसा कर रहा है कि जिस दिन ये दोहे सुना दूंगा, उसी दिन श्री तपस्वी जी म. ....। (ऐसी ही मनः स्थिति 1963 में वाचस्पति गुरुदेव के समय भी हुई थी) और आखिरकार 16 अक्टूबर को गुरुदेव ने बड़े भारी मन से वे दोहे प्रातः प्रवचन में सुना ही दिए। ये सबको विदित ही है कि 16 अक्टूबर को शाम पौने पाँच बजे श्री तपस्वी जी म. का संथारा सीझ गया और वे पूर्ण-काम होकर देव-लोकों में पधारे। दुनिया के साथ जो बीता वो जाने, पर गुरुदेव का अर्धांग टूट गया। गुरुदेव उसी दिन से आधे रह गए। 'तत्वार्थ-सूत्र' में स्कन्ध-रचना

का फार्मूला दिया है– 'स्नेहरूक्षत्वाद् बन्धः।' यही फार्मूला संघ-रचना का भी है। अब केवल स्नेह-पक्ष शेष रह गया, रूक्ष-पक्ष नदारद हो गया। संघ की शक्ति गई, भक्ति रह गई। अकेली भक्ति अशक्ति का भी कारण बन जाती है, क्योंकि भक्ति को कोई भी दबा सकता है, शक्ति को नहीं।

सोनीपत श्रद्धांजलि सभा के पश्चात् गोहाना में श्रद्धांजलि सभा रखी गई। गुरुदेव का वक्तव्य धैर्य, स्थैर्य, संकल्प, स्नेह, समर्पण, निर्माण एवं भावुकता की शताधिक भावनाओं से ओत-प्रोत था। जो कुछ कहा, दिल से कहा। विपत्ति के हर अवसर पर गुरुदेव की विशेषता थी कि स्वयं धैर्य धारण करते तथा औरों को धैर्य प्रदान करते थे। उनका जीवन सकारात्मकता का जीता-जागता नमूना था। कोई भी संकट या मुसीबत उन्हें निराश नहीं करती थी। ध्वस्त और पस्त माहौल में भी वे निर्माण की भाषा बोलना जानते थे।

श्री तपस्वी जी म. के प्रति जनता में जो श्रद्धा थी, वह नारों में झलक रही थी। एक नारा गुरुदेव के कानों में गूंजा– 'जब तक सूरज चांद रहेगा, बदरी तेरा नाम रहेगा।' गुरुदेव को इस प्रकार सीधा नाम बोलना नागवार गुजरा। तुरन्त संशोधन दिया कि ऐसे बोलो, 'तपोधनी तेरा नाम रहेगा।' भाषा-विवेक गुरुदेव का प्रियतम विषय रहा है।

गन्नौर-मिलन के बाद सोनीपत में श्री मुकेश मुनि जी की दीक्षा घोषित की गई। मुनिसंघ एकत्र हुआ। पूज्यवर श्री रामप्रसाद जी म. ने फरमाया कि 'अब तक हम श्री तपस्वी जी म. के अनुसार चले। आगे से श्री सुदर्शन लाल जी म. के अनुसार चलेंगे। श्री तपस्वी जी म. क्या करते थे, क्या कहकर गए हैं, उससे भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण होगा कि श्री सुदर्शन लाल जी म. क्या कहते हैं।' श्रावकों को दिए जा रहे नाश्ते के विषय में उन्होंने फरमाया कि 'हम तपस्वी जी म. की रवायत को निभाते रहेंगे, आप पूर्ववत् चलाते रहें।' लेकिन गुरुदेव जी म. ने उनको मनाने की बजाय, एकरूपता की स्थापनार्थ स्वयं ही ये मान लिया कि हम भी नाश्ते में मीठे पर पाबंदी लगा देंगे। यह स्वीकृति किसी एक पक्ष की जय-पराजय नहीं

थी, केवल प्रेम का विस्तार था और श्री तपस्वी जी म. की स्मृति में एक विनम्र श्रद्धांजलि थी।

इस अवसर पर श्री नरेश मुनि जी म. ने एक अति शानदार, भव्य परिणाम-शील परामर्श दिया कि 'अब आगे से तीनों महापुरुष (गुरुदेव जी, सेठ जी म., श्री राम प्रसाद जी म.) इकट्ठे ही रहें, इकट्ठे ही विचरें तथा सभी संतों को बारी-बारी से सेवा का अवसर दें। इस से सभी को ज्ञान, ध्यान एव अनुशासन की शिक्षा मिलेगी। श्रावकों की श्रद्धा को भी बल मिलेगा तथा मुनिसंघ का गौरव भी सुरक्षित रहेगा।' इस परामर्श पर किसी ने तो अस्वीकृति जाहिर की और किसी ने ध्यान ही नहीं दिया। और इस प्रकार एक विशुद्ध विचार असमय में ही काल-कवलित हो गया।

श्री तपस्वी जी म. की स्मृति में विशेषांक का विचार स्वीकृत हुआ। उनके फोटो-वितरण के विषय में गुरुदेव ने मनाही तो की, पर लागू नहीं कर सके। दो दिसम्बर 1987 को श्री मुकेश मुनि जी के दीक्षा-उत्सव पर श्री तपस्वी जी म. के सांसारिक भतीजे श्री रतन लाल जी जैन को समारोह-अध्यक्ष बनाकर प्रकारान्तर से श्री तपस्वी जी म. को ही भाव-प्रवण श्रद्धांजलि दी गई। उस अवसर पर एक युवक ने गुरुदेव से कहा, 'नए साधु बनाने के बजाए पुरानों की संभाल करो, तो अच्छा है।' गुरुदेव ने उस की बात को अन्यथा नहीं लिया। लेकिन उसी से पूछा कि 'यदि नई दीक्षाएँ बिल्कुल बन्द कर दी जाएँ, तो समाज को साधु कहाँ से मिलेंगे। समाज साधुओं के आश्रय पर ही चलता है। ऊँचे घरों के बच्चे निकल कर ही शासन की रक्षा कर सकेंगे'। गुरुदेव के उत्तर से वह युवक संतुष्ट हुआ।

सोनीपत में आचार्य-प्रवर श्री नानालाल जी म. के सुशिष्य कठोर परिश्रमी, मूर्धन्य विद्वान् श्री शांति मुनि जी म. गुरुदेव के दर्शनार्थ आए। गुरुदेव उन्हें दूर तक आगे लेने गए। भारत में अन्य संघों में ऐसी परम्परा नहीं है कि संघपति मुनिराज लघु मुनियों को लेने आगे जाएं। गुरुदेव को इतनी दूर देखकर सभी सन्त चकित रह गए। उनके मुनि-संघ से

गुरुदेव के मुनि-संघ के सभी सम्बन्ध (आहार-पानी ऐच्छिक) खुले हैं, अतः अन्तरंगता और आत्मीयता में और अधिक निखार आया। वे गुरुदेव को अपने आचार्य-तुल्य और गुरुदेव उनको अपने प्रिय शिष्य-तुल्य मानते और अपनाते रहे।

अब गुरुदेव जी म. यू.पी. पधारे। छपरौली, बड़ौत में अद्‌भुत श्रद्धा देखी। बड़ौत में धर्मानुराग अपने यौवन पर था। रौनकों का सैलाब था। चातुर्मास की विनति हुई। गुरुदेव ने अपनी नीति और प्रकृति का अनुसरण करते हुए स्पष्ट इंकार कर दिया। उन्हीं दिनों लालचन्द मुनि का मन संयम के प्रति उखड़ा हुआ था। कारण समझ नहीं आया। सन्तों के व्यवहार के प्रति कुछ अर्थहीन शिकायतें मन में थी। गुरुदेव ने टिकाने की बहुत कोशिश की, पर सफल नहीं हुए। दिल्ली से सुदीर्घ विहार करके श्री सुन्दर मुनि जी एवं श्री सुधीर मुनि जी आए। लालचन्द मुनि की मानसिक समस्या का स्थायी समाधान करने का वायदा करके दिल्ली ले गए। कुछ दिनों बाद सुभाष मुनि का मन भी विचलित हुआ। जय मुनि एवं सुनील मुनि उसे भी दिल्ली में पूज्य श्री सेठ जी म. के चरणों में छोड़ आए। इस प्रकार दो समस्याओं का स्थानांतरण तो हो गया, पर समाधान नहीं।

गुरुदेव यू.पी. के छोटे-छोटे गाँवों में धर्म-श्रद्धाओं के पोषण और नव जागरण का भगीरथ कार्य करते रहे। अमीं नगर सराय पधारे। ये पूज्यपाद योगिराज श्री रामजी लाल जी म. की पुण्य भूमि तथा महास्थविर पूज्यपाद भण्डारी श्री बलवंतराय जी म. की जन्मभूमि थी। बड़ौत से श्री वकील चन्द जी वहाँ गुरु-चरणों में आए और कहने लगे कि “आप श्री की कृपा से तथा श्री शास्त्री जी म. के प्रयत्न से मुझे घर वालों की ओर से दीक्षा की अनुमति मिल गई है। श्री नरेश मुनि जी एवं श्री सुधीर मुनि जी की कल्प-ज्येष्ठता के कारण आप मुझे दीक्षा देने में संकोच कर रहे हो, अतः मैं तपस्वीराज श्री चम्पा लाल जी म. के चरणों में दीक्षा लेने जा रहा हूँ। कृपा-दृष्टि रखना। मुझे तो धर्म का पहला अक्षर भी आप से ही मिला है। धर्म-संस्कार जितने भी बने हैं, आपके प्रवचनों के कारण बने हैं। मैं आपको सदा ही अपना गुरु मानता रहूँगा।” उनके ये भाव सुनकर गुरुदेव

ने जो स्नेह उनके ऊपर अपने मन और भाषा से उंडेला, वह वर्णनीय नहीं, अपितु अनुभव-गम्य ही है। श्री वकील चन्द जी के नयनों से जल-धारा बहने लगी और मंगल-पाठ सुनकर भावुक मन से प्रस्थान किया।

मेरठ में गुरुदेव का पदार्पण अद्भुत श्रद्धा का सन्देश लाया। विशाल हाल की खचाखच उपस्थिति बता रही थी कि कोई जादूई शक्ति-सम्पन्न धर्मगुरु आया है। वहाँ से दिगम्बर-बहुल क्षेत्रों को सींचते हुए मुजफ्फरनगर पधारे। उन्हीं दिनों मार्च के अन्त में दिल्ली में पूरी समाज की उपस्थिति में मुनि लालचन्द और सुभाष मुनि का मुनि-वेश ले लिया गया। गुरुदेव ने भी इस निर्णय को पूर्णरूपेण स्वीकार किया।

मुजफ्फरनगर में उस वर्ष जालंधर के गुरुभक्त श्रावक श्री चमन लाल जी जैन की धर्मपत्नी विमला देवी जी एवं दो स्थानीय बहनों के वर्षीतप के पारणे हुए। क्या पता था कि आने वाले समय में यह नगर वर्षी-तप के लिए पूरे उत्तर भारत में विख्यात हो जाएगा।

इस प्रवास में सेठ मनमोहन जैन एवं उनकी धर्मपत्नी चंचल बहन गुरुदेव के श्री चरणों में अनन्य श्रद्धा-सहित जुड़ गए।

सन् 1988 में दिल्ली, यू.पी. एवं पंजाब में गुरुदेव के धर्मसंघ ने विशेष उपकार किया। तीन सिंघाड़े दिल्ली में थे। गुरुदेव यू.पी. को पावन कर रहे थे। श्री शास्त्री जी म. पंजाब में, विशेषतः लुधियाना में महती धर्म-प्रभावना कर रहे थे। गुरुदेव शामली पधारे। वहाँ स्थानकवासी समाज जडें पकड रहा था। एक धर्मशाला में ठहरे। दो दिगम्बर मुनियों का भी मिलन हुआ। साथ प्रवचन हुआ। मुनियों ने कुछ साम्प्रदायिक बातें कही, पर गुरुदेव ने ऐसे किसी पहलू को नहीं छुआ। वे शान्ति अमन के अग्रदूत थे।

सन् 1988 का चातुर्मास गन्नौर में हुआ। पन्द्रह वर्ष बाद फिर इस धरती को गुरुदेव का कृपा-प्रसाद मिला था। गुरुदेव प्रत्येक समाज की सुन्दरताओं को उजागर करते थे, इसलिए उन्होंने 'गन्नौर' शब्द का निर्वचन करते हुए फरमाया कि ये 'गुण और-गन्नौर' अर्थात् अधिकाधिक गुणों

को प्राप्त करने वाले क्षेत्र है। यहाँ पर गुरुदेव ने अपनी व अपने मुनियों की शक्ति बालकों के निर्माण में लगाई। स्कूल-कॉलेज के विद्यार्थियों को सामायिक, प्रतिक्रमण एवं बोल थोकड़े सिखाए। तपस्या का दायरा भी बढ़ा। घुटनों के दर्द के लिए डाक्टर ने वर्जिश बताई। गुरुदेव करने की कोशिश करते, तो दूसरी कोई तकलीफ हो जाती और वर्जिश छूट जाती थी। चातुर्मास में वैरागी आदीश जैन ने 9 दिन की तपस्या की। सबको आश्चर्य-मिश्रित हर्ष था। गुरुदेव ने उनमें सेवा-भावना और गुरुभक्ति भरने का गुरुतर कार्य किया।

चातुर्मास के बाद सोनीपत में मुनि-मिलन हुआ। वैरागी आदीश जैन की जाखल में दीक्षा का भाव लेकर चले। परम श्रद्धेय श्री सेठ जी म. दूर का विहार करने में असमर्थ थे, अतः अपना मंगल आशीर्वाद दिया।

गुरुदेव जब जाखल के निकट थे, तो मूनक-जाखल-परिवार पूज्यपाद श्री सेठ जी म. के चरणों में पहुँचा। उनकी भावनाओं का सम्मान करते हुए पूज्यपाद श्री रामप्रसाद जी म. एक मुनि के साथ दीक्षा पर आने को तैयार हो गए। पूज्य गुरुदेव को पता लगा तो परम हर्ष हुआ। गाँवों में विचरते हुए सन्तों को वापिस जीन्द भेजा, ताकि श्रद्धेय श्री रामप्रसाद जी म. को साथ लेकर आएँ। लेकिन अचानक ही महाराज श्री जी का विचार बदल गया। खेद-पूर्वक पत्र लिखा।

जाखल दीक्षा पर गुरुदेव ने अपनी सारी ऊर्जा वैरागी को संस्कारवान् बनाने में लगाई। शेष सब कार्य मुनियों पर और समाज पर डाल दिया। दीक्षार्थी के अलावा भी गुरुदेव हर नए-पुराने मुनिराज को उत्तम संयम-धर्म में सावधान करते रहे। श्री अरुण मुनि जी म. का निजी अनुभव है कि एक दिन वे अन्य वरिष्ठ मुनियों के साथ प्रवचन-सभा में जा रहे थे। गुरुदेव ने इशारे से बुलाया। मन में हल्की-सी भय की रेखा कौंध गई। न जाने क्या बात हो गई? पास आने पर कहने लगे, 'तुमने ऊपर और नीचे के दोनों कपड़े नए पहन रखे हैं। इससे सजावट-सी लगती है। साधु को तो सादगी ही जंचती है'। अरुण मुनि जी म. ने कहा कि मेरी पुरानी चादर

पूरी तरह फट गई, इसलिए आज नई लगानी पड़ रही है। गुरुदेव ने दूसरे मुनिराज की पास ही रखी हुई चादर दी। उसे ओढ़कर वे प्रवचन-सभा में गए। एक दृष्टि मिल गई।

जाखल दीक्षा पर सारे पंजाब में, विशेषतः लुधियाना में बड़ा उत्साह था। वे चाहते थे कि दीक्षा पर लुधियाना से एक स्पेशल ट्रेन लेकर आएँ। गुरुदेव को पता लगा तो स्पष्ट इंकार कर दिया, क्योंकि इन सब कार्यों से आडम्बर को बढ़ावा मिलता है और प्रतिस्पर्धाओं का जन्म होता है। पंजाब में श्रद्धेय श्री शास्त्री जी म. ने जो उपकार किया था, उसका स्पष्ट दर्शन जाखल में देखने का मिला। दीक्षा के दिन हैदराबाद से श्री हस्तीमल जी मुणोत विशेष रूप से जाखल आए। गुरुदेव की दीक्षाओं पर जुड़ने वाली भारी भीड़ की चर्चा सुनकर उसे देखने के लिए वे हवाई जहाज से आए थे। उन्होंने सभा में भाषण भी दिया। वे दीक्षा की भीड़ से बहुत प्रभावित थे। उसी समय छपरौली (यू.पी.) से श्री मनोज कुमार जी भी आए थे। उनकी भावना शीघ्र दीक्षा लेने की थी। दीक्षा-स्थल पर उन्होंने गुरुदेव से विनति भी की। गुरुदेव ने द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अनुकूलता देखते हुए स्वल्प-सी स्वीकृति प्रदान की।

जाखल-दीक्षा पर ही गुरुदेव ने श्रद्धेय श्री प्रकाश मुनि जी म., श्री राजेन्द्र मुनि जी म. एवं श्री अरुण मुनि जी म. ठाणे तीन को राजस्थान गुजरात, महाराष्ट्र बम्बई, मध्यप्रदेश की सुदीर्घ यात्रा पर जाने की अनमति दी। जाते समय गुरुदेव ने उनको विशेष आदेश दिया, "जिस भी इलाके में विचरो, उधर के प्रमुख मुनिराजों के दर्शन अवश्य करना। विशेष रूप से आचार्य श्री हस्तीमल जी म. सा., आ. श्री नाना लाल जी म., तपस्वीराज श्री चम्पा लाल जी म. और आ. श्री आनन्द ऋषि जी म. के मंगलमय आर्शीवाद जरूर लेना। सब के साथ मधुरता का व्यवहार करना। अपनी समाचारी से इधर-उधर नहीं होना। कोई साधु तुम्हें बंदना करे या न करे, इसे चर्चा या विवाद का विषय नहीं बनाना। सभी निर्णय परस्पर सहमति से लेना, आदि"। गुरुदेव ने तीनों को अपनी कृपादृष्टि से इतना निहाल

कर दिया कि लगता था कि अब इनके मार्ग में केवल फूल ही फूल बिछे मिलेंगे। शूलों को तो गुरुदेव ने चुन-चुन कर अलग कर दिया था।

छपरौली दीक्षा का लक्ष्य बना, तो गुरुदेव ने चातुर्मास का भाव भी उधर ही बना लिया। कांधला कभी चातुर्मास नहीं किया था। समाज की पुरजोर विनति थी, अतः 1989 के चातुर्मास की स्वीकृति कान्धला के लिए प्रदान की। गुरुदेव ने उस वर्ष कई लम्बे-लम्बे विहार किए। कई बार एक दिन में दो-दो बार भी चले। नए-नए गाँवों में पड़ाव किए। एक छोटे से गाँव बुच्चाखेड़ी में ठहरे थे। वहीं पर अजमेर संघ, अपने महामंत्री श्रीमान् जीतमल जी सा. चोपड़ा के साथ श्रद्धेय श्री प्रकाश मुनि जी म. के चातुर्मास की विनति लेकर आया। आ. श्री हस्तीमल जी म. एवं आ. श्री नानालाल जी म. सा. के पत्र-व्यवहार के आधार पर उनको स्वीकृति प्रदान की।

अजमेर-समाज ने मुनिराजों के विचरण की शोभा सुनाई, तो गुरुदेव जी म. बाग-बाग हो गए। उनके पदार्पण से वहाँ का साम्प्रदायिक वर्ग भी एक बार के लिए हिल गया था। ब्यावर, पाली, जोधपुर जैसे कट्टरता के गढ़ों में उन्होंने समन्वय एवं प्रेम का ध्वज फहराया था। किसी को यकीन भी न आए, ऐसी उत्तम घटनाएं सुनाई गई। ज्ञानगच्छ के श्री धींगड़मल जी जैसे मूर्धन्य श्रावक मुनियों के चरणों में विनति लेकर पहुँचे। अपने संघ से इतर स्थानकों में प्रवचन सुनने गए, इत्यादि बातें उस इलाके की फिजाओं की तब्दीली को बता रही थी। वस्तुतः गुरुदेव जी म. ने ही यहाँ बैठे उस वातावरण की संरचना कर दी थी। यहाँ उत्तर भारत में, किसी भी संघ के मुनिराज आएँ, उन्हें गुरुदेव ने सिरमाथे उठाया। उन्हें स्नेह, सम्मान से लाद लिया। समाचारी की भिन्नताओं को कभी आड़े नहीं आने दिया। उन्हें किसी प्रकार से परायापन अनुभव नहीं होने दिया। हर साध-साध्वी ये प्रभाव लेकर गया था कि संत हों तो ऐसे। उनके शीर्ष स्थानीय मुनिराजों में भी यही धारणा बनी। इसी के परिणाम स्वरूप हर मुख्य संघाधिपति ने तीनों मुनियों को सीमा से बाहर जाकर भी सम्मान दिया। भले ही वह सम्मान औपचारिक ही रहा हो, पर कट्टरता के दायरों

में औपचारिक प्रेम भी बहुमूल्य प्रतीत होता है। गुरुदेव जी म. ने अजमेर श्रीसंघ की झोली भरकर उन्हें निहाल किया।

गुरुदेव छपरौली पधारे। श्री मनोज जी काफी समय से निवृत्ति-प्रधान जीवन जी रहे थे और कठोर चर्या के पक्षपाती थे। गुरुदेव ने फरमाया कि "जितना उत्कृष्ट संयम पालना चाहोगे, हमें खुशी होगी। हम सहायता करेंगे, बाधा नहीं डालेंगे'। उनके पिता ला. मोतीराम जी चाहते थे कि दीक्षा पर आरंभ-समारंभ कम हो। गुरुदेव तो उनसे भी ज्यादा सादगी के इच्छुक थे। उन्होंने फरमा दिया कि 'मै तो स्थानक में भी दीक्षा करने के लिए तैयार हूँ।' परन्तु घर वालों की स्वीकृति नहीं हुई और क्रमशः बढ़ते-बढ़ते निमन्त्रण-पत्र भी छपे जलस भी निकला और परातन दीक्षाओं के समान स्तर आ गया। छपरौली के कई दिगम्बर परिवारों को भी गुरुदेव के जीवन से काफी धर्म-प्रेरणा मिली। गुरुदेव का सारा जीवन समाजों को जोड़ने में लगा था, तोड़ने में नही।

कांधला में सारा चातुर्मास भीड़-भरा रहा। श्रद्धेय श्री शास्त्री जी म. का साथ होना भी भीड़ का एक कारण था। कांधला का जैनेतर समाज तो दर्शनार्थियों की कारें, मैटाडोर, बस आदि गिनते-गिनते थक गया था। यू.पी. में दीर्घ तपस्याओं का रिवाज कम था, पर यहाँ तो घर-घर में तपस्या के दीप जगमगाने लगे थे। ऋद्धिधर आचार्यों के समान गुरुदेव का अतिशय बन चुका था। सभी घरों में सेवा की तीव्र लगन थी, फिर भी परम गुरु-भक्त सुश्रावक श्री नानकचन्द सुभाषचन्द जैन ने नाश्ते आदि का अधिकांश भार स्वयं वहन किया।

कांधला में जो तपस्याएँ हुए, उसका एक कारण मुनियों की तपस्या भी थी। तपस्वी श्री नरेन्द्र मुनि जी ने अपने जीवन का दूसरा मासखमण किया। उनका यह मासखमण भी पूज्य गुरुदेव की ही देन थी। तपस्या के ग्याहरवें दिन श्री नरेन्द्र मुनि जी ने गुरुदेव जी म. को कहा कि कल पारणे का भाव है। गुरुदेव ने पूछा, 'कोई कष्ट तो नहीं? वे बोले, 'नहीं। कष्ट तो कुछ नहीं, बस यों ही'। गुरुदेव ने कुछ सोचकर कहा, 'यदि

दिक्कत नहीं हो, तो कल और कर ले'। उन्होंने अगले दिन का प्रत्याख्यान ले लिया। उसके बाद 31 वें दिन तक मन वज्रवत् दृढ़ रहा। जब उन्होंने सन् 1986 में उकलाना में पहला मासखमण किया था, तब गुरुदेव के पत्र आते थे कि 'जब नरेन्द्रमुनि मेरे पास मासखमण करेगा, तब मैं खूब सेवा करूँगा'। गुरुदेव की वही भावना कांधला में साकार हुई। उनका आसन गुरुदेव खुद बिछाते, कपड़ों की प्रतिलेखना करते, वैयावृत्य करते, प्रातः प्रतिक्रमण से पूर्व काफी समय तक कमर सहलाते, पानी ठण्डा करते और खुद पिलाते। उनकी ममता तो अमाप्य थी ही, तप व तपस्वियों के प्रति श्रद्धा भी अपरिमेय थी। कोई संत उन्हें इन कार्यों से रोक नहीं सकता था। कोई रोकता, तो गुरुदेव कह देते कि यदि मुझे तपस्वी की सेवा नहीं करने दोगे, तो मेरे आज आहार का त्याग। फिर किसकी हिम्मत थी कि जिद करता। श्री आदीश मुनि जी एवं श्री मनोज मुनि जी की तपस्या पर भी गुरुदेव ऐसे ही करते रहे। इस चातुर्मास में श्री मनोज मुनि जी ने अपना प्रथम लोच व्रत-तपस्या में कराया। यहीं पर श्रद्धेय शास्त्री जी म. की आँख के मोतियाबिन्द का आप्रेशन हुआ। दिल्ली के डॉ. पी. के. जैन ने स्थानक भवन में ही कर दिया। गुरुदेव ने श्री शास्त्री जी म. की परिचर्या का स्वयं ध्यान रखा। कमरे का विशुद्धिकरण करने हेतु गुरुदेव ने स्वयं सारे कक्ष में पोचा लगाया। वस्तुतः शिष्य बनाने से पूर्व उन्होंने अपने बड़ों की जो अविराम सेवा की थी, वही सेवा का रस उनको बार-बार सेवा के लिए प्रेरित करता था। आहार आदि के पात्र सूखे कराने के लिए भी गुरुदेव बहुधा बैठ जाते थे। सन्त यदि मना करते, तो आहार-प्रत्याख्यान का हथियार उठा लेते। इससे और मुनि भी प्रेरणा पाते थे। यदि किसी अतिरुग्ण या तपस्वी का मल भी परठना होता, तो भी गुरुदेव संकोच नहीं करते थे। वे गुरु होकर भी एक उत्कृष्ट नर्स थे।

एक दिन कांधला में लगभग पूरे पंजाब की ब्रादरियाँ पंजाब पधारने की विनति लेकर आई। सबको लगता था कि गुरुदेव स्वीकृति फरमा देंगे, पर गुरुदेव ने निषेध कर दिया। उन्होंने श्री शास्त्री जी म. को पंजाब पधारने के लिए स्वीकृति फरमा दी।

कांधला के पास चार-पाँच कि.मी दूर 'गढ़-गोसाई' गाँव से कुछ भाई प्रतिदिन गुरुदेव के दर्शन करने आया करते। तपस्या भी करते थे। गुरुदेव ने एक दिन एक भाई को रोक लिया और कहा कि एक सन्त तुम्हारे घर फरसने जाएगा, घर दिखा देना। वह भाई बड़ा प्रसन्न हुआ, कहने लगा कि मैं अपने घर वालों को कह देता हूँ। गुरुदेव ने नियम करवा दिया कि इस विषय में कुछ नहीं कहना। जो सहज रूप से आहार मिलेगा, वही ले आएँगे। उस भाई के साथ सन्त गए। कई और भी घरों को लाभ दिया। सारे गाँव में लहर आ गई। सन्त कुछ बासी, बचा-खुचा आहार लाए। उनमें सबसे पहला ग्रास गुरुदेव ने अपने मुँह में डाला और कहने लगे कि यह बिल्कुल निर्दोष और भावना से भरा है।

उन्हीं दिनों गुरुदेव का प्रिय वैरागी अजय घर चला गया। परिवार वाले दुखी हुए, पर गुरुदेव ने उन्हें पूर्णतः समाहित किया। कांधला चातुर्मास के अन्त में काफी अस्वस्थ होने के कारण गुरुदेव विहार नहीं कर सके। वहीं पर ज्ञानगच्छीय श्री बसन्ती मुनि जी, लक्ष्मी मुनि जी एवं धन्ना मुनि जी भी पधारे। उनके साथ गुरुदेव का बहुत ही भावना-पूर्ण मधुर सम्बन्ध रहा। श्री लक्ष्मीमुनि जी की भव्य छवि गुरुदेव के मानस पटल पर सदैव अंकित रही। गुरुदेव उनकी तारीफ करते अघाते नहीं थे।

कांधला में उस वर्ष धुन्ध तथा ठण्ड का काफी प्रकोप रहा। एक दिन मौसम में बड़ी ठण्ड थी। गुरुदेव को ऐसा लगा कि अब मैं विहार कर सकता हूँ, तो उसी दिन विहार का भाव बना लिया। ये भी चिन्ता नहीं की कि कथा में अगले दिन घोषणा करके विहार कर दें। हालांकि चार महीने से ऊपर का भव्य समय वहाँ बीता था।

बड़ौत शहर में ठहरे हुए थे। धुन्ध शुरू हो गई। वहाँ एक कमरे की छत में फाइबर ग्लास की ईंट लगी थी। इससे सीधे आसमानी रोशनी कमरे में आती थी। गुरुदेव उसी कमरे में धुन्ध के कारण मुँह ढके बैठे थे। एक युवक आया और दर्शन करके चला गया। घर जाकर उसने कहा कि श्री सुदर्शन मुनि जी म. भी अब बिजली का प्रयोग करने लगे हैं। मैं

खुद देखकर आया हूँ। घर वाले उसके साथ पुनः स्थानक में आए। कमरे में रोशनी देखी। कारण पूछा तो सन्तों ने बताया कि यह रोशनी बिजली की नहीं, छत से आसमान की आ रही है। तब उसकी शंका निर्मूल हुई। उस प्रसंग में गुरुदेव ने फरमाया कि 'शंका सम्यक्त्व का नाश कर देती है। इन्होंने अपनी शंका का निवारण कर लिया तो ठीक हो गया, वर्ना न जाने किस भ्रान्ति और अशान्ति का शिकार हो जाते'।

बड़ौत से गुरुदेव सोनीपत पधारे। 19 मुनि एकत्र हुए। मुनियों का वहाँ प्रथम प्रवेश भी 19 जनवरी को ही हुआ था। ऐसा संयोग बना कि वहाँ जाते ही गुरुदेव को छोड़कर प्रायः सभी सन्तों को खाँसी और बुखार ने घेर लिया। एक-एक समय में दस-दस मुनियों के आसन बिछे रहते। गुरुदेव जी म. ने स्वयं अपनी देखरेख में मुनियों की सेवा, दवा और परिचर्या की व्यवस्था संभाली।

अब गुरुदेव का स्वास्थ्य बड़े क्षेत्रों को संभाल पाने में असमर्थ होता जा रहा था। अतः सन् 1990 के चातुर्मास-हेतु नरवाणा का चयन किया। सोनीपत से गुरुदेव गोहाना होकर रोहतक पधारे। मार्ग में गुमाणा गाँव के चौधरी महावीर सिंह जी के सुपुत्र रोहतास जी वैरागी रूप में आए। रोहतक में संजय मुनि का मानसिक संतुलन बिगड़ने लगा। वह घर जाने का आग्रह करने लगा। प्रेम-प्यार-मनुहार से भी नहीं माना, तो परिवार और समाज की अनुमति से घर भेज दिया। जीन्द-वासियों को भरपूर करते हुए गुरुदेव नरवाणा पधारे।

नरवाणा छोटा क्षेत्र था, पर सैंकड़ो-हजारों दर्शनार्थियों के निरन्तर आगमन से छोटा न रहकर जैन समाज के लिए राजधानी बन गया था। उन दिनों में 'मण्डल कमीशन' के कारण देश भर में जाति-आधारित आरक्षण की आग भड़की हुई थी। हरियाणा उनमें अग्रणी था। नरवाणा में कुछ उपद्रवी तत्व सक्रिय थे, पर गुरुदेव की शीतल छाया तले स्थानीय जैन समाज, श्रद्धालु-गण व किसी दर्शनार्थी का बाल तक बाँका नहीं हुआ। समाज के हर भाई बहन को गुरुदेव से सच्चा व निश्छल स्नेह

मिला। श्री कृष्णगोपाल जी जैसे विख्यात आर्य-समाज नेता को स्थानक में सेवा करते, थाली मांजते, जूते एक ओर रखते हुए लोगों ने देखा, तो दंग रह गए। श्री कृष्ण गोपाल जी बड़े दिलेर और भावुक गुरु-भक्त हैं।

इसी चातुर्मास की बात है। एक दिन श्री राकेश मुनि जी ने गुरुदेव को निवेदन किया कि मुझे स्वप्न में बन्दर दिखते हैं। घुरकी डालते हैं। मैं डरकर उठ जाता हूँ। गुरुदेव ने उनके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा कि हर मंगलवार को आहार करते समय, पहले अपने आहार में से मुझे कुछ लेने की विनति कर लिया कर। 3-4 बार विनति की होगी, फिर कभी बन्दर नहीं दिखे।

नरवाणा चातुर्मास की सानन्द सम्पूर्ति के बाद गुरुदेव जाखल पधारे। पूज्यपाद श्री सेठ जी म., श्रद्धेय श्री रामप्रसाद जी म. से मधुर-मिलन हुआ। अन्य मुनिराज भी दूर-दूर से विहार करके पधारे। प्रेम-पूर्ण वातावरण में सबने सम्मेलन का आनन्द लिया। कोई एकाध भ्रान्ति थी, वह भी दूर हो गई।

गुरुदेव सुनाम पधारे। वहाँ पर जलगाँव (महाराष्ट्र) के प्रमुख श्री रतनलाल जी बाफणा के नेतृत्व में एक शिष्टमण्डल आया। उन्होंने श्रद्धेय श्री प्रकाश मुनि जी म. ठाणे 3 के चातुर्मास का जो आँखों देखा हाल सुनाया, उसे सुनकर गुरुदेव गद्‌गद हो गए। गुरुदेव के भी महान् जीवन को देखकर महाराष्ट्रीय श्रावकों की श्रद्धा शत-सहस्र गुणित हो गई। गुरुदेव का प्रवचन सुनकर सबने कहा कि 'इतनी अवस्था में भी हमने किसी आचार्य या संघ-प्रमुख को इतनी महती धर्मप्रभावना करते हुए नहीं देखा'। गुरुदेव की असाम्प्रदायिक दृष्टि का भी सब पर गहन प्रभाव पड़ा।

मानसा पहुँचते-पहुँचते गुरुदेव की गर्दन में सर्वाइकल का भयंकर दर्द शुरू हो गया। इसके लिए सेक आदि की कई निर्दोष विधियाँ अपनाई गई, पर फर्क नहीं पड़ा। वहाँ से बुढ़लाड़ा, रतिया होते हुए उकलाना पधारे। वहीं से गुरुदेव की सेवा का अधिकांश भार श्री आदीश मुनि जी के सबल कन्धों पर आ गया। तब से संघ को एक आदर्श, समर्पित,

सेवाभावी सन्त की सेवाओं का लाभ मिलना शुरू हुआ। अनेक रोगों की एवं विविध चिकित्सा पद्धतियों की प्रामाणिक जानकारी इस सेवाव्रती मुनिराज को होने लगी।

वहाँ से सुराणा खेड़ी पधारे। छोटा-सा गाँव था। जैनों का खानदान भी एक ही था, पर लोगों में आपस में काफी मनमुटाव था। एक घर तो स्थानक भी नहीं आता था। कई तरह की पीड़ाओं से ग्रस्त होने पर भी गुरुदेव संघ को मनाने हेतु स्थानक से नीचे पधारे। खिन्न परिवार स्थानक में आने को तैयार नहीं हुआ, तो गुरुदेव मुनियों सहित स्थानक छोड़कर एक लुहार के घर पर जाकर ठहर गए। इससे सारा गाँव सन्न रह गया। सबने गिले-शिकवे दूर कर दिए। आपसी प्यार बना। जिस परिवार से कुछ घरों की रंजिश थी, उन्हीं के घर पर ठहरने की विनति की, ताकि सभी वहाँ आकर अपनी मनःशुद्धि का परिचय दे सकें। गुरुदेव के पधारने की खुशी में एक परिवार ने बहुत बड़ी जमीन स्थानक को दान में दे दी। होली चातुर्मासी पर वहाँ का रंग अपूर्व और निराला था। सामायिकों की झड़ी लगी हुई थी। सबके दिल प्रेम की पिचकारियों से नहाए हुए थे।

जीन्द आने के बाद गुरुदेव ने गर्दन के दर्द को देखते हुए प्रवचन से विराम ले लिया। सर्वाइकल दर्द के लिए वर्जिश, कालर, तेल, मरहम, खिंचाव तथ एक्यूप्रेशर आदि कई उपचार लिए, पर असाता-वेदनीय का उदय तीव्र था। कथा न करने पर भी जीन्द गुरुदेव की उपस्थिति-मात्र से ही जागृत रहता है। महावीर-जयन्ती के उपलक्ष्य में 108 तेले लिखे गए, पर 250 से अधिक हो गए। मुनियों ने भी किए। जयमुनि ने दूसरा तेला किया, तो तबीयत बिगड़ गई। गुरुदेव ने काफी पश्चात्ताप माना। संबल भी बहुत दिया तथा तेला पूरा करवाया। अगले रोज नवकारसी के तुरन्त बाद डॉ. सुरेश जैन ने ग्लूकोज लगाया तथा दवाएँ दी। तबीयत संभल जाने पर ही गुरुदेव को चौन पड़ा। वहाँ रहते हुए ज्ञात हुआ कि श्री शास्त्री जी म. को चलते-चलते एक पैर में सुन्नपन आ जाता है तथा गिर जाते हैं। गुरुदेव सहित सभी मुनियों का मन दुखी हुआ। उन्हें असंध से जींद

आना था, पर सफर न बढ़े, इसलिए उन्हें सफीदों होकर गोहाना जाने का समाचार भिजवाया और स्वयं भी गोहाना पहुँचने का निश्चय किया।

सन् 1991 का चातुर्मास सोनीपत के लिए स्वीकृत हुआ। जीन्द से विहार करके एक गाँव में रुके। पटियाला से नसों के विशेषज्ञ डॉ. रमेश जैन आए। उन्होंने गुरुदेव का कुछ उपचार किया। गुरुदेव ने पहली बार कुछ राहत महसूस की। वहाँ से बुटाना आना था। मार्ग में खेड़ा-खेड़ी गाँव में ठहरे। विहार के समय एक घर से थोड़ा दूध और परांठा मिल गया। गुरुदेव दूध के साथ अन्य पदार्थ नहीं लेते थे। उस दिन ले लिया, तो दस्त हो गए। कुछ बुखार भी बन गया। यद्यपि दस्त का कारण गाँव का अशुद्ध पानी था, पर गुरुदेव ने सोचा कि परांठा खाने से ऐसा हुआ। आगे से परांठा लेने से बहुत संकोच करने लगे। भोजन के विषय में गुरुदेव बहुत ही स्वाद-विजयी थे। उन्हें मिठाई, नमकीन, तली हुई चीजें, अधिकतर ठण्डी वस्तुएँ, मलाई, दही, मेवा आदि का त्याग था। अधिकांश वस्तुएँ तो जीवन-पर्यन्त के लिए छोड़ी थी। जो शेष थी, उनका भी पक्खी से पक्खी का त्याग कर लेते थे। पाँच विगयों में से दिन में एक ही विगय लगाते थे। तीन बार से ज्यादा आहार नहीं करते थे। प्रातः केवल स्वल्प दूध, मध्याह्न में दो-तीन फुलके, शाम को केवल दो फुल्के लेते थे। पिछले कुछ सालों से यदि उपलब्ध हो, तो शाम को थोड़ा-सा दूध ही लेते थे। द्रव्यों की संख्या बहुत कम होती थी। एक दिन में 7-8-9-10 से ज्यादा नहीं। दोपहर बाद कभी दूध, चाय या शिकंजी आदि नहीं लेते थे। वृद्ध या रुग्ण सन्त लेते, तो टोकते नहीं थे। नए सन्तों को बचने की प्रेरणा देते थे।

बुटाना में कई वर्ष बाद पधारे। वहीं पता लगा कि निमाज में आचार्य-प्रवर श्री हस्तीमल जी म. ने संथारा ग्रहण कर लिया है। गुरुदेव ने तभी भाव-भक्ति-पूर्ण पत्र लिखाया। उनके प्रति गुरुदेव विशेष श्रद्धा, लगाव और आत्मीयता का भाव रखते थे। उनसे मिलना तो केवल एक ही बार हुआ था, लेकिन 'छोड़ जाता है कोई चेहरा दिल पे कुछ ऐसे नक्श, देर लगती है जिन्हें दिल से मिटाने में'। गुरुदेव उनको अपने गुरु के तुल्य मानते थे। प्रवचनों में उनसे सम्बन्धित प्रसंग सुनाते और संथारे

की बात तो गुरुदेव का सबसे प्रिय विषय था। श्री तपस्वी जी म. के देवलोक के पश्चात् गुरुदेव की समग्र चेतना अन्तर्मुखी बन गई थी। हमेशा यही ध्यान रहता था कि उनकी तरह मैं भी सर्वथा निःशल्य होकर संसार से विदा होऊँ। गोहाना पहुँच कर आचार्य श्री के संथारे की पूर्ति का समाचार मिला। कायोत्सर्ग किया। गुण-स्तुति करके उनकी स्मृति में पत्र लिखवाया। 10 मई को श्री जग्गूमल जी म. का देवलोक-गमन-दिवस था। प्रथम बार ही उनके लिए गुरुदेव ने स्मृति-दिवस रखा। गुरुदेव की कथाओं में पूर्व-पुरुषों के गुण-कीर्तन का मुख्य अंश होता था। पंजाब का भ्रमण कर श्री शास्त्री जी म. गोहाना पधारे। श्री सुनील मुनि जी म. भी उनके साथ थे। एक दिन गुरुदेव जी म. ने श्री सुनील मुनि जी म. को कहा– 'तुमने पटियाला में कुमारी रुचि जैन एवं चिरं. पुनीत जैन के लिए जो कविताएँ लिखी थी, वो मैंने भी सुनी हैं। उनको सुनकर मेरा मन कहता है-तू चाहे तो भगवान् महावीर के जीवन को भी काव्य-रूप में लिख सकता है।' गुरुदेव ने तो कृपा कर दी, पर उस समय श्री सुनील मुनि जी म. का आत्मविश्वास नहीं बना। अन्ततः 1999 में श्री नरेन्द्र मुनि जी म. की प्रेरणा हुई और श्री सुनील मुनि जी म. ने भगवान् महावीर के जीवन को काव्यबद्ध किया और एक स्तरीय रचना के रूप में उसे प्रतिष्ठा मिली। गुरुदेव जी म. ने तो 8 साल पहले ही भूमिका तैयार कर दी थी। इसी तरह सन् 1988 में गुरुदेव जी म. गन्नौर में विराजमान थे। शाम को चर्चा चल रही थी कि अमुक स्थान पर अमुक मुनि ने काफी प्रतिक्रमण याद करवाएं हैं। गुरुदेव जी म. ने फरमाया कि ये काम तो सुनील मुनि भी कर सकता है। बीज-वपन हो गया और परिणति हुई सन् 2000 में। समालखा में श्री राकेश मुनि जी म. की नेश्राय में उन्होंने कई बच्चों को प्रतिक्रमण याद करवाए। प्रतिक्रमण में प्रचलित कुछ पाठों की त्रुटियाँ शुद्ध की और करवाई। अगले वर्ष भी इसी तरह अनेकों बालकों, युवकों को सुनाम में महास्थविर श्री प्रकाश मुनि जी म. के सान्निध्य में प्रतिक्रमण याद करवाए। उनके याद करवाने की दो विशेषताएँ:– 1. कोई ईनाम

या पारितोषिक का प्रलोभन नहीं होता।, 2. याद करने वाले बाद में भी प्रतिक्रमण को चालू रखते हैं। मूल शक्ति तो गुरुदेव जी म. की ही है।

तभी की एक लघु घटनाः– श्री सुनील मुनि जी म. गुरुदेव के पैरों पर दवा की मालिश कर रहे थे। तभी उनके कई बचपन के मित्र आ गए। स्वाभाविक था कि वे श्री सुनील मुनि जी म. से बातें करते, पर गुरुदेव की सन्निधि में वे सुनील मुनि जी से क्या बोलते? पर उन युवकों को गुरुदेव जी म. ने बोर नहीं होने दिया। बिल्कुल उनके मित्र की भांति उनसे वार्तालाप करते रहे। उन्हें लगा कि श्री सुनील मुनि जी म. से ज्यादा दोस्ती हमारी गुरु म. से है।

20 मई' 91 को गुरुदेव एक गाँव दमकन खेड़ी में ठहरे। एक जाट भाई का घर था। लोकसभा चुनावों का समय था। एक पोस्टर पर श्रीमती इंदिरा गांधी एवं राजीव गांधी का फोटो था। गुरुदेव के मन में अज्ञात लोकों से कोई सन्देश कौंधा। अचानक ही मुझे सम्बोधित करते हुए बोले, 'देख जय, ऐसा लगता है, मानो इंदिरा गांधी राजीव गांधी को बुला रही है'। सन्तों ने ये सुना, पर कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। उसी रात को श्री पेरम्बुदुर में राजीव गांधी की मानव-बम की सहायता से हत्या कर दी गई। गुरुदेव को अगली प्रातः विहार में किसी ने समाचार सुनाया। पर गुरुदेव तो उस समाचार को 20 घंटे पहले ही सन्तों में प्रसारित कर चुके थे।

वहाँ से सोनीपत पधारे। पहले एक कल्प सैक्टर 15-16 में लगाया। जिस कोठी में गुरुदेव विराजे, उसमें हवा आदि का कोई बढ़िया साधन नहीं था। पर गुरुदेव सर्दी, गर्मी सहने के अभ्यासी थे। उस समय सैक्टर में बहुत कम जैन परिवार थे। शारीरिक रोगों की परवाह न करते हुए गुरुदेव अपने स्वाध्याय में लीन रहते। पुस्तकें पढ़ते रहना उनको बहुत भाता था। छोटे मुनियों से शास्त्र सुनते। उन्होंने जो याद किया है, उसका पारायण कराते तथा वैरागियों की पढ़ाई की पूरी पड़ताल करते। दूर-दूर विहरणशील मुनियों को स्वयं पत्र लिखते।

उस वर्ष राजाखेड़ी गाँव में श्री नरेश मुनि जी एवं श्री मनोज मुनि जी को पीलिया हो गया था, अतः गुरुदेव ने उनकी सेवा में श्री सत्यप्रकाश जी म. तथा श्री अचल मुनि जी म. को भेज दिया। वे ठीक हुए, तो दिल्ली से श्री शास्त्री जी म. के स्वास्थ्य के विषय में चिन्ताजनक समाचार आए। उनको कई महीनों से पैरों में सुन्नता और कई बार चलते-चलते गिर जाने की तकलीफ हो गई थी। कुछ डाक्टरों ने आप्रेशन का विचार बनाया। गुरुदेव ने सुनते ही बिना विलम्ब किए श्री जयमुनि एवं मुकेश मुनि जी को दिल्ली रवाना कर दिया। गुरुदेव ने उस समय अपनी खुद की चातुर्मासिक आवश्यकताओं को दर-किनार कर दिया। सेवा की जरूरत हो, तो गुरुदेव अन्य जरूरतों को एकदम गौण कर देते थे। श्री सत्य प्रकाश मुनि जी को राजाखेड़ी से वापस बुलाया। इधर दिल्ली में दूसरे बड़े डाक्टरों ने आप्रेशन की मनाही कर दी। बीमारी दवाओं से ही साध्य थी। दोनों सन्त दिल्ली के बीच रास्ते से वापिस लौट आए। गुरुदेव की बलिदानी वृत्ति का ऋण कोई उतार नहीं सकता।

दिल्ली महासंघ की नवनिर्वाचित कार्यकारिणी गुरु-चरणों में उपस्थित हुई। उन्होंने शारीरिक उपचार के लिए गुरुदेव से दिल्ली पधारने की प्रार्थना की। गुरुदेव ने फरमाया कि उपचार के लिए जाने की भावना नहीं है, प्रचार की अभी मेरी पोजीशन नहीं है। वैसे तो दिल्ली पास है, पर मन तैयार नहीं है, अतः दूर है।

गुरुदेव के सर्वाइकल दर्द के उपशमनार्थ दिल्ली से सुश्रावक श्री एम. एल. जैन और श्री राधेश्यामजी एक डॉ. साहनी सा. को भी लाए। कई बार उनका आगमन हुआ। यों तो एम.एल. जैन (मनोहर लाल जी) पहले भी गुरुदेव के दर्शनों का लाभ लेते रहे हैं, पर 1991 से तो उनका हृदय, आत्मा और समग्र जीवन ही गुरुदेव के प्रति समर्पित हो गया था। उनकी धर्मसहाया श्राविका संतोष जैन की सुप्त काव्य-प्रतिभा का जागरण हुआ। स्तरीय कविताओं का प्रणयन एवं गायन करके उन्होंने अपनी श्रद्धा को गुरु-चरणों में भेंट किया। दिल्ली, हरियाणा, पंजाब के कितने ही नव-निर्मित जैन स्थानक श्री एम.एल. जैन के बताए आर्किटेक्चर की देन है। डॉ.

साहनी, डॉ. कौशिक और अन्य होम्यों. चिकित्सकों की निःशुल्क सेवाएं पेश करके इन्होंने जिन-शासन की वैयावृत्य-धारणा को मूर्त रूप दिया है।

सोनीपत चातुर्मास के प्रारम्भ में ही गुरुदेव ने फरमा दिया कि मेरी तबीयत ठीक नहीं है, अतः कथा नहीं कर सकूँगा। मुनियों को भी फरमाया कि मेरी सेवा आदीश मुनि संभाल लेगा, तुम श्रावकों को ज्ञान-ध्यान सिखाओ। दोपहर बाद बच्चों की क्लास लगती थी। उसमें 100 के लगभग बालक आते थे। उन्हें काफी कुछ याद कराया गया। 40-50 बच्चों को जबानी आनुपूर्वी याद हो गई थी। प्रवचन के तत्काल बाद 10-15 प्रबुद्ध श्रावक कर्मग्रन्थ तथा अन्य गंभीर शास्त्र सारे चातुर्मास पढ़ते रहे। 30-40 भाई बहनों ने सुविस्तृत रूप से समझकर 12 व्रतों के पच्चक्खाण लिए। मात्र संख्या-वृद्धि के लिए ही किसी को व्रत नहीं दिलाए गए। गुरुदेव प्रामाणिक श्रावकों के निर्माण में विश्वास रखते थे, संख्याओं के रिकार्ड बनाने में नहीं।

वैसे तो सोनीपत शुरू से ही तपस्वी क्षेत्र रहा है, पर इस वर्ष और भी अधिक तपस्याएँ हुई। श्री शांति चन्द्र जी म. की प्रबल प्रेरणा भी उसमें एक निमित्त थी। पर्यूषणों से पूर्व मैंने (जयमुनि) गुरुदेव से निवेदन किया कि 'मैंने सन् 1975 के बाद कभी अठाई नहीं की। यदि आपकी आज्ञा हो तो इस साल कर लूँ'। ये शब्द सुनकर गुरुदेव ने मुझे पर्युषण पर्वों में व्याख्यान की जिम्मेवारी से मुक्त कर दिया, पर साथ ही कहा, 'तू कोशिश कर ले, मैं मना नहीं करता, पर तुझसे होगी नहीं'। मैंने तपस्या शुरू कर दी। श्री शांति मुनि जी म. ने कथा संभाली। तपस्या ठीक चल रही थी, पर तेले की शाम को ही पेट में पित्त बन गई। वमन शुरू हो गया और अगले दिन पारणा करना पड़ा। गुरुदेव से मैंने कहा कि आपने तो पहले ही फरमा दिया था। बोले– 'मुझे तेरे शरीर का पता है'। उसी दिन कथा में श्रद्धेय श्री शांति चन्द्र जी म. का गला जवाब दे गया और कथा फिर मैंने संभाली। गुरुदेव की बातों का रहस्य समझना बड़ा कठिन था।

श्री नवीन मुनि जी का शरीर अत्यन्त दुर्बल है। तपस्या के लिए नितान्त अयोग्य। उनकी इच्छा हुई कि मैं अठाई करूँ। गुरुदेव से आज्ञा मांगी। बोले—'कर ले, हो जाएगी। पर जरा हिम्मत रखना।' और कमाल हो गया। कोई कल्पना भी नही कर सकता। उनकी अठाई हो गई। कष्ट तो आया, पर गुरुदेव ने हिम्मत दी और लक्ष्य पूर्ण हुआ। साथ ही शरीर के कुछ रोग भी शांत हो गए।

चातुर्मास के अंत में गुरुदेव ने अपनी पुरानी शैली में, ऊँची आवाज में, स्वाभाविक लहर में, जोशीला प्रवचन फरमाया। कहने लगे, 'सोनीपत वालो! ये न समझ लेना कि मैंने कथा बिल्कुल बन्द कर दी है। शेर अभी बूढ़ा ही हुआ है, पर अभी इसका दहाड़ना बन्द नहीं हुआ।' ये सुनकर श्रोता बहुत हँसे। बाग-बाग हो गए। श्री आदीश मुनि जी की सेवा रंग लाई और सर्वाइकल में आराम मिला।

8. मिला मसीहा दिल्ली को

गुरुदेव सोनीपत से गोहाना होकर रोहतक पधारे। वहाँ एक अद्भुत निर्णय लिया कि इस वर्ष दिल्ली फरसनी है। हमने सुना तो विश्वास ही नहीं हुआ, क्योंकि गुरुदेव दिल्ली जाने के नाम से कभी सहमत ही नहीं होते थे। वहाँ के लिए तैयार होना, मानों गुरुदेव के ठीक होते हुए स्वास्थ्य का सूचक था। श्रद्धेय श्री शास्त्री जी म. की बीमारी भी गुरुदेव को दिल्ली बुलाने का एक कारण बनी। प्रशांत विहार में उनके दिल पर कुछ असर हो गया था। विख्यात हृदय-रोग-चिकित्सक डॉ. बिमित जैन ने उनकी पूरी सार-संभाल की।

गुरुदेव के दिल्ली-आगमन की घोषणा सुनकर सारी दिल्ली में जोश आ गया। इसे जोश ही क्या, एक तरह का उन्माद या जुनून भी कह सकते हैं। इसका प्रथम दर्शन हरियाणा के सीमावर्ती नगर बहादुरगढ़ में ही हो गया, जहाँ पर बिना किसी विज्ञापन, पोस्टर या हैण्डबिल को प्रसारित किए दो हजार के करीब भीड़ हो गई। लोग स्वागत की योजनाएँ बनाने लगे, पर गुरुदेव ने स्पष्ट कर दिया कि कहीं पर झण्डे और झण्डियाँ न लगें। कहीं चूना न डाला जाए और कहीं माईक न लगाए जाएँ। स्वागत-द्वार, पोस्टर और अखबारी विज्ञापनों के लिए भी निषेध कर दिया। दिल्लीवासी सब मानने के लिए तैयार थे, उन्हें तो बस गुरुदेव ही चाहिए थे। एक हाथ श्री आदीश मुनि जी के कंधे पर रखे और एक हाथ से बैंत का सहारा लिए, दुखते घुटनों के साथ, जैसे ही गुरुदेव ने दिल्ली में कदम रखा, सर्वत्र ही धर्म का ज्वार उमड़ने लगा। गुरुदेव का शरीर थका-थका जरूर था, पर उनके अदम्य मनोबल, प्रखर स्मरण-शक्ति, सर्वग्राही वात्सल्य, अटल संयम-निष्ठा एवं शान्तिमय सन्देश ने सारी दिल्ली पर जादू का

असर करना शुरू कर दिया। कुछ उत्साही युवक प्रतिदिन विहार में साथ चलने लगे। सर्वश्री सुलेख जी, सुरेश जी, शान्ति जी, सतपाल जी, फतेह चन्द जी आदि नव-युवकों ने विहार-यात्रा को जिस तरह सरल और सफल बनाया, उसे एक मिसाल के रूप में पेश कर सकते हैं। सूर्योदय के पूर्व ही शालीमार के श्रावक श्री श्रीचन्द जी के नेतृत्व में गुरु-दर्शन-मण्डल ने प्रतिदिन दर्शन किए। प्रमुख गुरुभक्त श्री कश्मीरीलाल जी 'झण्डा' हर रोज प्रवचन से पूर्व गुरु-चरणों में पहुँचते थे, चाहे गुरुदेव कितनी भी दुर, किसी भी गली मुहल्ले में हों तथा मौसम कैसा भी हो। सतीश जी खेड़ी वाले एवं विजय जी जालंधर वाले आदि का प्रतिदिन किसी भी समय आने का नित्यक्रम था। सैंकड़ों भाई-बहन प्रतिदिन अन्य क्षेत्रों से रुटीन में आकर दर्शन-लाभ और प्रवचन-लाभ लेते थे। 14 जनवरी 1992 को नांगलोई में पावन-प्रवेश हुआ। उन दो दिनों की भीड़ ने ही संकेत दे दिया कि अपने प्रभु राम की प्रतीक्षा में किस तरह भक्त शबरियाँ हर क्षेत्र में आँखें बिछाए बैठी हैं। युग-पुरुष का धर्म-चक्र, संघशास्ता का सुदर्शन चक्र धर्म की जय और पापों का क्षय करता हुआ अविराम गति से आगे बढ़ने लगा।

न्यू मुल्तान नगर में 18 जनवरी को गुरुदेव का 50 वाँ दीक्षा-दिवस था, या यों कहिए कि दीक्षा की स्वर्ण-जयन्ती थी। गुरुदेव जैसे लब्ध-प्रतिष्ठ, आचार्य-कल्प महामुनिराज के लिए ये प्रसंग राष्ट्रीय महत्त्व का होना चाहिए था, पर गुरुदेव ने उस दिन सब सन्तों को विशेष निर्देश दिया कि कथा में या एकान्त में इस विषय का कोई उल्लेख नहीं करना। प्रातः प्रतिक्रमण से पूर्व सभी मुनिवरों ने भिन्न-भिन्न प्रत्याख्यान लिए। सभी प्रत्याख्यान इतनी गम्भीरता से लिए गए कि लगता था आगामी वर्ष हर मुनिराज के लिए परम सुखकारी और कर्म-निर्जरा-वर्धक बनेगा।

26 जनवरी को अरिहन्त नगर में मध्याह्न-कालीन समवसरण चौथे आरे में तीर्थंकर भगवन्तों के समवसरण की याद दिला रहा था। भक्तगण जब भक्तिवशात् गुरुदेवों की धर्मप्रभावना की तुलना तीर्थंकरों के युग से करने लगते, तो गुरुदेव बीच में ही रोक देते ये कहते कि 'मैं तो एक साधारण-सा सन्त हूँ। मुझे सन्त ही रहने दो। असाधारण व्यक्तित्व के

धनी गुरुदेव साधारण रहकर ही असाधारण बने थे। एक दिन गुजरात अपार्टमैन्ट से गुरुदेव अचानक ही मुनि सत्यप्रकाश जी के साथ रोहिणी सैक्टर तीन पधार गये और वहां श्री शास्त्री जी म. को दर्शन देकर सब को तृप्त, सन्तृप्त और आश्चर्यचकित कर दिया। गुजरात-अपार्टमैन्ट में गुरुदेव ने गुजराती बंधुओं को गुजराती भाषा का प्राचीन भजन सुनाकर भाव-विभोर कर दिया। गुजराती संस्कार और संस्कृति से गुरुदेव सन् 1950 के दशक से ही परिचित थे।

गुरुदेव का 16 फरवरी का रविवार पीतमपुरा लगाना स्वीकृत हुआ। वहाँ पर वयोवृद्ध महास्थविर श्री रामकिशन जी म. से मधुर-मिलन हुआ। काफी वर्षों के बाद ये सुखद संयोग बना था। उसी दिन यमुना-पार में विवेक विहार में प्रवर्तक श्री जी के सान्निध्य में कई दीक्षाओं का आयोजन था। वहाँ के सन्तों व सतियों का ये आग्रह था कि इस दिन सारी दिल्ली में कहीं भी प्रवचन न हो, यद्यपि इसके लिए पहले कोई कानून या परम्परा नहीं थी। 15 ता. शनिवार रात्रि के समय उधर से श्रावक श्री आर.डी. जैन एवं श्री जे.डी. जैन आदि कुछ भाई गुरुदेव के चरणों में उपस्थित हुए एवं प्रवचन के विषय में विचार-विमर्श किया। गुरुदेव ने सारा मसला श्रद्धेय श्री रामकिशन जी म. के ऊपर छोड़ दिया। उन्होंने उनको कहा कि "हम सभी सन्त श्रमण-संघ में नहीं हैं, अतः हम उनके आदेशानुसार प्रवचन बन्द करने को बाध्य नहीं हैं। जिसे दीक्षा में जाना हो जाए, उसे प्रत्यक्ष-परोक्ष किसी भी रूप में हम रोकेंगे नहीं। प्रवचन होगा, परन्तु लोगों की सुविधार्थ हम उसे 9.45 बजे खत्म कर देंगे"। और तदनुसार खत्म भी कर दिया गया। गुरुदेव की इस व्यवस्था से रुष्ट होकर विवेक विहार में कुछ साध्वियों ने भविष्य में गुरुदेव के दर्शन न करने के लिए एक हस्ताक्षर अभियान भी चलाया। कइयों ने हस्ताक्षरों वाला एक पत्र गुरुदेव के पास भेजा भी, पर गुरुदेव ने उसे अधिक महत्त्व या तूल नहीं दिया। धीरे-धीरे मामला स्वतः शान्त हो गया।

उसी बैठक में पूज्य गुरुदेव ने उन श्रावकों से पूछा कि 'अपने क्षेत्र से 20-25 कि.मी. दूर एक प्रवचन बन्द कराने के लिए तो आपने इतनी

दौड़-धूप कर दी, पर कई महीनों से यहाँ हमारे शिष्य श्री शास्त्री जी म. बीमार चल रहे हैं, क्या कभी उनकी साता भी पूछने आए? क्या आप सब लोगों को गुरुभक्ति का भी कुछ ख्याल है या केवल राजनीतिक खेल खेलना ही जानते हो?' उस प्रश्न का किसी के पास कोई उत्तर नहीं था। सबने अपनी गल्ती मानी तथा आगे से ध्यान रखने की बात कहकर सप्रेम विदा हुए।

शालीमार में आगमन किसी उत्सव या मेले से कम नहीं था। इससे पहले हर क्षेत्र में प्रवचन के पश्चात् स्थानीय लोग नीचे का द्वार बन्द कर देते थे और स्थानीय या बाहर के श्रोताओं को भोजन करने के उपरान्त ही जाने देते थे। इससे समाज पर भी अतिरिक्त बोझ पड़ता था, रोज के दर्शनार्थियों को भी संकोच होता था और उनका समय भी बर्बाद होता था। गुरुदेव ने शालीमार बाग मे प्रवचन में आगे के लिए सभी श्रीसंघों को आदेश दिया कि कोई भी संघ प्रवचन के पश्चात् किसी को खाना खाने के लिए जबरदस्ती न करे, न ही गेट बन्द करे। उस दिन गुरुभक्त श्री अनिल जैन सुनाम वालों की बारी थी। उन्होंने इस आदेश को सविनय स्वीकार किया। वजीरपुर औद्योगिक क्षेत्र में गुरुदेव ने मद्यपान के विरोध में खड़े होने की प्रेरणा दी। अशोक विहार में गुरुदेव पधारे। वहाँ का विशाल प्रवचन-हाल ऊपर-नीचे खचाखच भरा था। प्रो. रतन जैन ने अपने भाषण में श्रोताओं से प्रश्न करते हुए पूछा कि जिन स्थानकों में कभी श्रावक ही नहीं दिखाई देते थे, आज वे ही छोटी क्यों पड़ रही है? फिर स्वयं ही इसका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि 'यह सब संयम का चमत्कार है। गुरुदेव की कथनी और करनी की एकरूपता ने उत्तर-भारत की आस्थाओं को आलम्बन दिया है।'

त्रिनगर में होली-चौमासी की गई। वहाँ पर रौनकों एवं तपस्याओं का अंबार था। गुरुदेव ने अपना सन् 1992 का चातुर्मास शालीमार बाग दिल्ली के लिए स्वीकृत किया।

जब गुरुदेव उत्तम-नगर पधारे, तो एक हृदय-विदारक समाचार मिला कि श्रमण-संघ के द्वितीय पट्टधर, आचार्य सम्राट श्री आनन्द ऋषि जी म. का समाधि-मरण हो गया है। आचार्य श्री के सम्मान में रविवार का प्रवचन बन्द रखा गया। विशाल जन-समुदाय को णमोकार मंत्र के जाप की प्रेरणा दी और उनके देह-संस्कार के पश्चात् श्रद्धांजलि सभा रखी। आत्म-अनुभूतियों के आधार पर आचार्य श्री के मुनि-परिवार को संवेदना-पत्र लिखाया। अगले रविवार को पुनः इन्द्रपुरी में आचार्य श्री के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला। श्रोताओं ने अनुमान किया कि भले ही ये उनके श्रमण-संघ में नहीं हैं। पर उनके गणों के सच्चे पारखी और प्रशंसक हैं।

विहार-यात्रा में गुरुदेव कई घरों/मोहल्लों में दर्शन देने पधारते। उनको सामायिक, शीलवत आदि के नियम कराते। प्रातःकाल यदि किसी घर/दुकान पर दर्शन देने का प्रसंग आता, तो उसके स्वामी को पहले ही कह देते कि कोई बिजली, पंखा आदि नहीं चलाना। जैन धर्म में बड़े प्राचीन समय से ही हर बड़े, ख्याति प्राप्त एवं अतिशय-सम्पन्न मुनिराज की दर्शन देने की परम्परा रही है। आजकल तो कई नामधारी साधु इसके एवज में विशाल धनराशि भी वसूलने लगे हैं, पर गुरुदेव के यहाँ ऐसी किसी चीज का कोई काम नहीं था।

एक प्रमुख जैन भाई ने गुरुदेव से विनति की कि 'यदि आप अनुमति दें तो मैं राष्ट्रपति श्री शंकर दयाल शर्मा को आपके पास लाना चाहता हूँ। उनसे मेरे अच्छे सम्बन्ध हैं तथा वे जैन धर्म के बड़े प्रशंसक और विद्वान भी हैं। इससे आपके पास अच्छी भीड हो जाएगी। गुरुदेव ने स्पष्ट इंकार कर दिया कि 'हम इतने बड़े लोगों के लिए नहीं हैं। हम तो छोटे-छोटे श्रावकों में ही काम करना चाहते हैं। राजनीतिक लोगों से हमें कुछ लेना नहीं है। न उनके साथ फोटो खिंचवाने हैं, न उनसे कोई स्कूल की, हस्पताल की, सिलाई-सैन्टर की या अपने बड़ों के नाम के धाम या समाधि के लिए जगह की मांग करनी है। आप लोगों के अपने काम निकल जाते हैं, साधुओं का तो मात्र बहाना होता है।' गुरुदेव की बात सुनकर श्रावक शान्त और समाहित हो गया।

मुनीरका में रविवार का प्रवचन होना था। तभी ज्ञात हुआ कि मूनक में परम पूज्य पण्डित-रत्न श्री रणसिंह जी म. का स्वर्गवास हो गया। प्रवचन बन्द रखा गया। गुरुदेव का चित्त काफी उद्विग्न रहा क्योंकि श्री पंडित जी म. ने पूज्य वाचस्पति गुरुदेव की बड़ी सेवा की थी। उनसे सन् 1979 तक बड़ा गहन, आत्मीय, सांघिक सम्बन्ध रहा था। आज्ञा-सम्बन्ध न रहने पर भी भावनात्मक स्तर पर काफी घनिष्ठता थी। ऐसे पूज्य पुरुष के वियोग होने पर मन की व्याकुलता सहज थी।

मुनीरका में ही स्थानकवासी कांफ्रेंस के तत्कालीन अध्यक्ष श्री पुखराज जी लुंकड़ गुरुदेव के दर्शनार्थ आए। गुरुदेव को उनका मनोहारी व्यक्तित्व बड़ा अच्छा लगा। कई विषयों पर बातचीत हुई। जिस तरह गुरुदेव समाजोन्नति में अपना तन-मन होम रहे थे, उससे उन्हें काफी आश्चर्य हुआ। उन्होंने गुरुदेव से निवेदन किया कि 'अभी तो आपकी आवाज बुलन्द है, सारी सभा को सुनाई देती है। लेकिन बढ़ती उम्र के कारण यदि आवाज धीमी हो गई, तो फिर आप क्या करेंगे?' गुरुदेव मुस्कराए। वे समझ गए कि ये मुझसे ध्वनि-वर्धक यंत्र की अनिवार्यता को स्वीकार कराना चाहते हैं। पर गुरुदेव का चिन्तन तो हर विषय में स्पष्ट था। तुरन्त फरमाया, 'जब तक आप लोगों को सुनाई देगा, सुनाते रहेंगे। जिस दिन जनता को सुनाई देने में दिक्कत आएगी। उस दिन से अपने को सुनाएँगे। औरों को सुनाना हमारा लक्ष्य नहीं है। अंतिम लक्ष्य तो अपने को ही सुनाना है। यदि इसी निमित्त से कुछ धर्म की प्रभावना भी हो जाए तो सोने में सुहागा। आचार हमारा Compulsory Subject है, प्रचार तो Optional मात्र है'। श्री लुंकड़ जी बड़े तृप्त और संतुष्ट हुए।

गुरुदेव ने नई दिल्ली और दक्षिणी दिल्ली के कई ऐसे इलाके भी फरसे, जो धन-धान्य की दृष्टि से सम्पन्न थे, पर धार्मिक दृष्टि से उपेक्षित थे। वहाँ पर प्रतिदिन ही रविवार जैसा माहौल होता था और रविवारों को पूर्यषणों जैसा। कालिन्दी कालोनी, फ्रेण्ड्स और न्यूफ्रेण्ड्स कालोनी आदि में चमत्कारिक रौनकें हुई। स्थान-स्थान पर गुरुदेव ने मुंहपत्ती की आवश्यकता पर बल दिया कि 'ये स्थानकवासी समाज की मूल

धरोहर है, इसे लगाकर ही माला, सामायिक करनी चाहिए। सामायिक में वस्त्र-परिवर्तन भी आवश्यक है, वर्ना ये सामायिक नहीं, संवर है'। यमुना-पार के क्षेत्रों में भी असीम उपकार रहा। गुरुदेव के मुनिराजों ने उन क्षेत्रों के स्थानकवासी परिवारों की सुरक्षा की है। आज वहाँ गुरुदेव की कृपा से सैंकड़ों हजारों युवक सामायिक करते हैं, स्वाध्याय-रुचि-सम्पन्न हैं, प्रवचन का लाभ लेते हैं और प्रतिक्रमण आदि के अभ्यासी हैं। हर छोटा-बड़ा स्थान अपने मसीहा को पाकर अपने भाग्य पर इतराने लगा। कबूल नगर में वर्षीतप के पारणे भी हुए। प्रतिवर्ष तपस्वियों की संख्या बढ़ने से लोक-मानस में गुरुदेव हस्तिनापुर तीर्थ के जंगम संस्करण बन चुके थे।

29 अप्रैल को गुरुदेव प्रीत विहार में पधारे। लाला सुखबीर सिंह जैन की निर्माणाधीन कोठी में ठहरे। प्रवचन साथ ही 'झंकार बैंक्वेट हाल' में हुआ। उसके मालिक श्री महेश कपूर जी थे। कभी जैन सन्तों के दर्शन नहीं किए थे। स्वयं भी मांसाहारी थे तथा बैंक्वेट हाल भी मांसाहारी पार्टियों के लिए मशहूर था। गुरुदेव के वहाँ ऐसे चरण पड़े कि न केवल कपूर सा. स्वयं शुद्ध शाकाहारी बने, अपितु अपने बैंक्वेट हाल को भी विशुद्ध शाकाहारी बना दिया। पुराने बर्तन तक बेच डाले। धीर-धीरे उनका यश भी बढ़ा, आय भी बढ़ी और प्रभाव भी बढ़ा। हजारों पशुओं का जीवन-दान देने का सुफल ये निकला कि तीन कन्याओं के बाद घर में एक पुत्र-रत्न ने जन्म लिया। शाकाहार में उल्लेखनीय योगदान के लिए उन्हें सन् 1997 में राष्ट्रपति से National Citizen Award भी मिला। ऐसी-ऐसी मंगल-सुमंगल रचनाएँ गुरुदेव के विचरण से हुई।

चाँदनी चौंक में गुरुदेव का पधारना एक तरह से 'पीहर' आने के तुल्य होता था। सुप्त-प्रायः क्षेत्र में नवीन जागृति आई। बम्बई से चातुर्मास-सूची के सम्पादक श्री बाबू लाल जी 'उज्ज्वल' ने भी चाँदनी चौंक में गुरुदेव के दर्शन किए। प्रवचन सुनकर मन्त्र-मुग्ध हो गए। कई दिन तक आते रहे। उन्होंने अनुभव के आधार पर कहा कि 'मैं बड़े-बड़े प्रतापी, प्रभावी आचार्यों के पास जाता हूँ, लेकिन शेष काल में इतनी बड़ी

धर्म-परिषद् मैंने गुरुदेव के अतिरिक्त कहीं नहीं देखी। सामायिक करने वालों की भी इतनी विशाल संख्या समूचे भारत में मुझे देखने को नहीं मिली'। भक्ति-भाव से भरपूर होकर उस वर्ष की चातुर्मास-सूची का समर्पण उन्होंने गुरुदेव के नाम किया। गुरुदेव को ऐसे कार्यों में स्वल्पमात्र भी रुचि नहीं थी, पर 'उज्ज्वल' जी की श्रद्धा ही ऐसी थी।

गुरुदेव ने दिल्ली के जैन परिवारों में आहार-शुद्धि और आचार-शुद्धि का अभियान भी खूब चलाया। विवाह, शादी या अन्य समारोहों में सचित्त फूलों की सजावट, मांसाहारी होटलों में पार्टियों का आयोजन, पशु-पक्षी की आकृति वाली सब्जियों को परोसना, भंगड़ा, शराब आदि इन सब बातों का इतने जोर, शोर और जोश से विरोध किया कि दिल्ली की हवाओं में परिवर्तन की स्वर लहरियाँ गूंजने लगी। कई गुरुभक्तों ने नियम भी लिए और निभाए भी।

गुरुदेव का भाव रहता था कि हमारे कारण किसी साधु/सती को खेद न हो। किसी की कथा/आयोजन, रौनक में बाधा न आए। इसी भाव से गुरुदेव ने अशोक विहार में फरमाया कि सब भाई-बहन अपने-अपने क्षेत्रों में धर्मलाभ लें तथा अपने चातुर्मासों को छोड़कर हमारे पास शालीमार आने की योजना न बनाएँ। गुरुदेव का निर्देश त्रिनगर वालों के लिए था। वहाँ उस वर्ष प्रवर्तक जी का चातुर्मास था। वहाँ के अनेक श्रावक शालीमार आने का भाव रखते थे।

गुरुदेव की करुणा के किस्से शत-सहस्र-लक्षाधिक होठों पर हैं। उन्होंने न जाने कितने बुझते दीप जलाए हैं, उजड़े उपवन खिलाए हैं और डूबते बेड़े पार लगाए हैं। मजलिस पार्क में स्कूल में प्रवचन करने पधार रहे थे। मार्ग में पता चला कि पीतमपुरा के महामंत्री श्री नेम चंद जैन का सुपुत्र काफी गंभीर स्थिति में हस्पताल में भर्ती है। गुरुदेव दयार्द्र हो उठे। प्रवचन शुरू करते ही सारी सभा से कहा कि सब मिल कर प्रार्थना करो कि बच्चा स्वस्थ हो जाए। गुरुदेव की हृदय-तरंगों का ऐसा असर

हुआ कि वह स्वस्थ होने लगा। छुट्टी मिलने पर घर बाद में गया, गुरुदेव के चरणों में पहले आया।

नांगलोई से शालीमार-प्रवेश तक की करीब 6 महीने की विहार-यात्रा का एक मनोहर भजन श्री राकेश मुनि जी ने हरियाणवी भाषा में संकलित किया था। वह इस प्रकार हैः

(तर्ज-बात सुणो श्री मायाराम जी)

बड़े भाग तैं दिल्ली पधारे, जय हो गुरु सुदर्शन की।
गिणती करूँ इब जन-मन-रंजन भव-भय-भंजन विचरण की ॥टेक॥

1. चौदह जनवरी सन् 92 मैं नांगलोई मैं कर्‌या प्रवेश,
सण्डे न्यू मुल्तान नगर, फेर पश्चिम पुरी मैं था उपदेश।
गणतंत्र-दिवस अरिहंत नगर मैं, गूंज्या वीर-प्रभु-सन्देश,
राणा बाग, गुजरात अपार्टमैंट क्षेत्र भी रह्या न शेष।
भीषण सर्दी मैं भी कृपाकरी, सरस्वती विहार के फरसन की ॥

2. सैक्टर तीन रोहिणी में श्री शास्त्री जी से हुआ संगम,
बुध विहार, अहिंसा विहार और सैक्टर आठ के खुले करम।
पुण्डरीक विहार, महावीर होस्पिटल मैं दिपाया जैन धरम,
भागीरथी, प्रशान्त विहार गए और रोहिणी हुई खतम।
पीतमपुर मैं खुशियाँ थी मुनि रामकिशन के दर्शन की ॥

3. कपिल विहार मैं कर प्रचार शालीमार की लोट्री खोली,
वजीरपुरा, अशोक विहार, लारेंस रोड़ में जय बोली।
शास्त्री नगर, गुलाबी बाग, विवेकानन्द पुरी होली,
करोल बाग में गए सराए-रोहिल्ला ने भर ली झोली।
ईस्ट और वैस्ट पटेल नगर फिर प्रेमनगर में पदार्पण की ॥

4. त्री नगर के के कहणे, रुक्का-रौला-रौनक भारी,
पजाबी बाग कर्मपुरा, राजौरी गार्डन भक्ति न्यारी।
चन्द्रनगर फेर आया खेतर उत्तम नगर धर्म-धारी,

पालम, नांगल, जनकपुरी फेर हरिनगर की हुई त्यारी।
मायापुरी, नारायणा, इन्द्रपुरीय सत्य-शान्ति-निकेतन की ॥

5. ग्राम मुनीरका, कृष्णानगर और ग्रीनपार्क में लाया जोर,
ईस्ट कैलाश, कालिन्दी फरसी, मुड़े निजामुद्दीन की ओर।
कर्जन रोड़, गोल मार्किट फेर दरियागंज में माच्या शोर,
इक्कीस अप्रैल यमुना पार में, कृष्णानगर होया भाव-विभोर।
गोविन्दपुर, स्वास्थ्य-विहार, निर्माण-विहार मधुबन की ॥

6. लक्ष्मी-नगर, मयूर-विहार, और प्रीत-विहार, विवेक-विहार,
ऋषभ-विहार, शाहदरा, फिर विश्वास-नगर, रघुवर-पुर तार।
धर्मपुर, गाँधी नगर, कैलाश नगर, शास्त्री पार्क दिल धार,
गौतमपुरी, मौजपुर, यमुना-विहार भजनपुर फिर होए पार।
बी ड़ी स्टेट, श्री राम रोड़ खुशी चाँदनी चौंक आगमन की ॥

7. सदर गए फिर कोल्हापुर मैं रूप-नगर राणा प्रताप,
वीरनगर, श्री शक्ति नगर और एक्सटेंशन में ला दी छाप।
एस. एफ. एस., सतवती, बैंक कालोनी, डेरावल पधारे आप,
माडल-टाऊन, पंचवटी, मजलिस पार्क के धोए पाप।
शालीमार मैं नौ थी जुलाई, हुई पूरी भावना जन-जन की ॥

8. दो टोली मैं बारा ठाणे विचरे, हो गया बड़ा कमाल,
लगभग 90 जगहां गए, रौनक की कायम करी मिसाल।
थानक छोटे पड़गे, सहधर्मी सेवा के लागे स्टाल,
ना देखा ना सुण्या इसा दौरा, यू सब पब्लिक का ख्याल।
राकेश मुनि कै (सब सन्तां कै) भूल पड़ै ना इस,
ऐतिहासिक भ्रमण की ॥

चातुर्मास हेतु शालीमार पधारे। वह सारी दिल्ली का केन्द्र बन गया था। अठाई और मास-खमणों की झड़ी लग गई। गुरुदेव ने विश्राम का नाम नहीं लिया। ओसवाल, अग्रवाल, हरियाणवी, पंजाबी सबको एक यही धुन थी कि अपने गुरु-भगवन्तों की सेवा से झोली भर लें। शालीमार

गुरुदेव का प्यारा, दुलारा क्षेत्र रहा है। संवत्सरी के दिन खूब तपस्या थी। साधु एवं श्रावक सब गर्मी से आहत थे। यदि पूर्णतः शान्त और निराकुल थे तो बस गुरुदेव ही थे। तपस्वियों को आराम देने के लिए गुरुदेव पट्टे को छोड़कर ऊपर पौड़ियों में बैठकर स्वाध्याय करने लग गए। गुरुदेव ने एक बार भी गर्मी की अधिकता का जिक्र नहीं किया। अगले दिन पारणे में भी वे पूर्णतया समता में रहे। चातुर्मास में तपस्या की लड़ी और तप-अभिनन्दनों का कार्यक्रम अन्त तक चलता रहा। गुरुकृपा से श्री सत्यप्रकाश जी म. एवं राजेश मुनि जी ने आयम्बिल के मासखमण किए। बहन रेणु जैन सुनाम वाली ने छोटी आयु में ही 72 दिन की रिकार्ड तपस्या की। सन् 1983 का एक वह भी समय था जब इन्होंने सवंत्सरी पर भी व्रत नहीं किया था। बाद में गुरुकृपा हुई और मासखमण, 51 व्रत आदि तप किए। फिर वर्षी-तप भी किए।

चातुर्मास के चतुर्थ चरण में गुरुदेव के पैर में अचानक ही साइटिका दर्द उभर आया। भीषण वेदना थी। सब उपचार व्यर्थ गए। अन्ततः पटियाला के डॉ. रमेश जी के उपचार से कुछ राहत मिली। जमीन पर पैर टिकने लगा। शालीमार संघ चाहता था कि गुरुदेव पूर्ण स्वस्थ होकर ही विहार करें। समाज की हंगामी मीटिंग हुई। गुरुदेव के आगे धरना देने तक की बात आई, पर गुरुदेव के समझाने से सब मान गए।

गुरुदेव के चरणों में बड़ौत समाज, पूज्य श्री महात्मा जयन्ती मुनि जी की ओर से विनति-पत्र लेकर उपस्थित हुआ कि श्री नरेश मुनि जी एवं श्री सुधीर मुनि जी की बहन अनीता जी की दीक्षा बड़ौत में हो रही है, अतः आप पधारें तथा मुनिमण्डल को भेजें। गुरुदेव ने अपना तो असामर्थ्य व्यक्त किया, पर श्री नरेश मुनि जी म. को निर्देश दिया कि आप पधार कर समारोह को सफल बनाएँ, समाज की भावनाओं को सम्मानित करें तथा दो मुनिसंघों में परस्पर प्रेम में और श्रीवृद्धि करें।

शालीमार के बाद विभिन्न क्षेत्रों में होते हुए गुरुदेव निजामुद्दीन पधारे। श्री शांति मुनि जी म. को पेट की तकलीफ शुरू हो गई। उनके

उपचार के लिए गुरुदेव ने पुनः दिल्ली का मन बनाया। मार्ग में हाई कोर्ट के जज श्री सागर चन्द्र जैन एवं राज्य-सभा सदस्य श्री जे.के. जैन की कोठियों पर भी प्रवचन किए।

गुरुदेव दरियागंज पधारे। तभी देश में बाबरी मस्जिद के ध्वंस के कारण विप्लव मच गए। दिल्ली के पुराने इलाके में दंगे हुए, कयूं लगा। बड़ौत दीक्षा से श्री नरेश मुनि जी म. भी दिल्ली पधार गए। विशाल क्षेत्र को देखते हुए गुरुदेव चाँदनी चौंक पधारे। बारादरी के इलाके में कप! था, अतः चीराखाना में मुन्ना लाल की धर्मशाला में ठहरे। कपल की परवाह न करते हुए लोग उसी तरह आते थे। धर्मशाला में ही गुरुदेव ने पार्श्वनाथ जयन्ती मनाई। दो दिन तक जो शानदार रूप में प्रभु पार्श्व का जीवन-वाचन गुरुदेव ने किया, वह पहले न किसी श्रावक ने सुना था, न वहाँ उपस्थित किसी मुनिराज ने।

वहाँ से कोल्हापुर रोड़, रूपनगर होते हुए शक्तिनगर पधारे। वहाँ पर अग्रवाल मण्डी, पानीपत का समाज गुरुदेव के सन् 1993 के वर्षावास की विनति लेकर आया। उन्हें वहाँ की गाँधी मण्डी समाज का भी कुछ आश्वासन मिल गया था कि यदि तुम्हें गुरुदेव का चातुर्मास मिलता हो तो हम अपने क्षेत्र को खाली रखेंगे। इस बात से गुरुदेव का मन बन गया और उन्हें कुछ संकेत कर दिया। लेकिन कुछ समय बाद ही पता लगा कि श्री प्रवर्तक जी गाँधी मण्डी चातुर्मास करेंगे। तब गुरुदेव ने मण्डी समाज को बुलाकर स्पष्ट किया कि ऐसी स्थिति में मेरा वहाँ चातुर्मास का कोई भाव नहीं है। ये सुनकर अग्रवाल-मण्डी समाज सन्न और सन्न रह गया। इसका तो सीधा-सा अर्थ यही निकला कि हम कभी भी चातुर्मास नहीं करवा सकेंगे। सभी वहीं बैठ गए। कुछ समाधान नहीं निकल रहा था। गुरुदेव ने उनको पुनर्विचार करने का आश्वसान दिया। बाद में ये तय हुआ कि इनको श्री नरेश मुनि जी म. का चातुर्मास दे दिया जाए। वे क्षेत्र को संभाल भी लेंगे और किसी प्रकार के विवाद में भी नहीं उलझेंगे। वे काफी गम्भीर, दूरदर्शी, ओजस्वी और कुशल प्रवचनकार हैं। इस प्रकार एक जटिल समस्या का मध्यम-मार्गी समाधान गुरुदेव ने निकाला।

गुरुदेव वीर नगर पधारे। वहीं पर ज्ञानगच्छीय श्री महात्मा जयन्तीदास जी म. भी पधारे। वो मिलन भी क्या मिलन था! जन्म-जन्म की बिछुड़ी दो आत्माएँ एक हो गई थी। दो विनय-मूर्तियाँ, दो गुण-ग्राहकताएँ, दो संयम-परायणताएँ और दो सरलताएँ समानान्तर दो दर्पणों की भाँति एक दूसरे में झांक रही थी। दोनों ही भरपूर मस्ती में थे। क्या प्रवचन में, क्या दिन में, क्या रात में, बस दो सरिताएँ एक ही आनन्द रस-संगम में संगमित हो रही थी। क्या अहोभाव था! उन्हें देखकर गुरुदेव सराबौर थे और गुरुदेव को देखकर महात्मा जी। सब सांघिक औपचारिकाताएँ कच्ची दीवार की तरह ढह गई। वो विहार करने चले, गुरुदेव छोड़ने गए। वे मना करते रहे, पर गुरुदेव माने नहीं। एक स्थान पर महात्मा जी म. बैठ गए कि 'मैं तो आगे जाता नहीं'। गुरुदेव को लौटना पड़ा। वे शक्ति नगर पहुँचे ही थे कि पुनः दुखते घुटने और उल्लसित हृदय लेकर गुरुदेव भी शक्तिनगर स्थानक में पहुंच गए। ऐसा मेल-मिलाप शायद ही किन्हीं दो सच्चे शुद्ध प्रेमियों में होता होगा।

वीर नगर में ही आचार्य-प्रवर, समता-विभूति श्री नानालाल जी म. सा. के विद्वान् सुशिष्य श्री ज्ञानमुनि जी पधारे। गुरुदेव उनकी अगवानी करने गए। गुरुदेव ने उनके हौसले की, उग्र विहारों की काफी प्रशंसा की तथा आचार्य प्रवर श्री गणेशी लाल जी म. एवं आचार्य श्री नानालाल जी म. के साथ बिताए गए काल-क्षणों की मनोरम तस्वीर प्रस्तुत की।

गुरुदेव अरिहन्त नगर विराजित थे। सन् 1993 का चातुर्मास त्रीनगर का स्वीकृत हो गया था। एक शाम श्री अजित मुनि जी की अंगुलि में कांच की शीशी चुभ गई। डाक्टर के यहाँ से पट्टी कराई। क्लिनिक दूर होने से लौटते समय सूर्यास्त हो गया। गुरुदेव उनकी प्रतीक्षा में उतनी देर छज्जे में ही खड़े रहे। आने पर सातादि पूछकर प्रतिक्रमण में जुटे। बाद में विवशता-वश देरी का दण्ड भी लिया। लेकिन गुरुदेव की ममता को देखते हुए अंगुलि के दर्द से गुरुदेव के मन का दर्द अधिक महसूस हुआ। ऐसा प्यार का सागर जगती-तल पर और कहीं ढूंढना ही बेकार है।

चार वर्ष की राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश की यात्रा पूर्ण करके गुरुदेव के सुशिष्य श्री प्रकाश मुनिजी म. ठाणे 3 दिल्ली पधारे। उनकी अगवानी में श्री शास्त्री जी म. आदि कई मुनिराजों को गुरुदेव ने गुड़गाँव तक भेजा। शालीमार बाग में उनका गुरुदेव के साथ मंगल-मिलन हुआ। चार वर्षों तक अनुभवों का जो विशाल खजाना वे बटोर कर लाए थे, उसे गुरुदेव उनसे बार-बार खुलवाते रहे। घटनाएँ लिखते-लिखवाते। उत्तम पुरुषों की सेवा-शुश्रूषा करके जो आशीष-रत्न वे लेकर आए, उसके लिए उन तीनों मुनियों को बार-बार शाबासी देते। गुरुदेव ने तीनों मुनियों के पारस्परिक सामंजस्य को बहुत सराहा।

शालीमार में ही ये दुखद सूचना मिली कि उदयपुर में उपाध्याय-प्रवर श्री पुष्कर मुनि जी म. का देवलोक-गमन हो गया है। गुरुदेव ने दो दिन प्रवचन बन्द करके नवकार मंत्र का जाप करवाया। श्री पुष्कर मुनि जी म. श्रमणसंघ के वरिष्ठ मुनिराज थे। उनके शिष्य श्री देवेन्द्र मुनि जी म. श्रमण-संघ के आचार्य थे तथा वे स्वयं उपाध्याय पद पर प्रतिष्ठित थे। उनके गुरुदेव श्री ताराचन्द जी म. की निश्राय में उनका तथा उनके शिष्य-वर्ग का 1954 में गुरुदेव जी म. के साथ दिल्ली चाँदनी चौंक में चातुर्मास हो चुका था तथा 1956 में वाचस्पति गुरुदेव के साथ जयपुर में हुआ। उस चातुर्मास में वाचस्पति गुरुदेव ने महास्थविर श्री ताराचन्द जी म. को संथारा करवाया था तथा अंतिम समय तक समाधि में सहायक बने थे। श्रमणसंघ के पेचीदा मसलों में भी, प्रांरभिक काल में, वे वाचस्पति गुरुदेव की नीतियों के समर्थक रहे थे।

27 जून को गुरुदेव ने वाचस्पति गुरुदेव की जीवनी के बजाय उनकी शिक्षाओं का विशाल संग्रह सुनाया। इसके लिए अपने प्राचीन लिखित पन्नों का कई दिनों तक पारायण किया। वह संग्रह मुनि-वृन्द एवं श्रावक-समाज के लिए काफी प्रेरणाप्रद बना। उन्हीं दिनों गुरुदेव ने कई दिनों तक अपने प्रवचनों में कथा-कहानी की बजाय जैन धर्म के मौलिक सिद्धान्तों का सार सुनाया। ऐसे प्रवचनों को सुनने के लिए कई जैन युवक विशेष रूप से आते थे।

चातुर्मास के लिए त्रीनगर प्रवेश करना था। श्रावकों ने समय पूछा। गुरुदेव ने अनुमानतः प्रातः 6 बजे का समय दिया, पर केवल एक दिन पूर्व ही साढ़े सात बजे का कर दिया। इससे प्रबन्धक-गण थोड़े चिंतित हुए कि सब को सूचना कैसे दें? पर 'गुरु-आज्ञा अविचारणीया' समझकर सबने स्वीकार की। अगले दिन सूर्योदय से ही वर्षा शुरू हो गई जो सात बजे तक चली। फिर पानी सूखा और साढ़े सात बजे गुरुदेव ने प्रस्थान किया। सब लोग गुरुदेव की आध्यात्मिक शक्ति के प्रति विनत थे। प्रवेश पर कई प्रमुख लोगों ने स्वागत करते हुए भावना व्यक्त की कि इस चातुर्मास में हम तपस्या, रौनक और सेवा के पुराने सब रिकार्ड तोड़ देंगे। गुरुदेव ने प्रत्युत्तर में फरमाया कि "मैं रिकार्ड बनाने और तोड़ने में विश्वास नहीं करता। यह अभिमान की भाषा है। जो कुछ करना है, सब सहज भाव से करना है। दो चार साल की तपस्या और रौनकों के आंकड़े देखकर ही हमें रिकार्डों की बात नहीं करनी चाहिए। तीर्थंकर भगवन्तों ने आगमों में जो रिकार्ड बनाए हैं, क्या हम इनका मुकाबला कर सकते हैं?" उस वर्ष गुरुदेव के पुण्य-प्रताप से त्रीनगर के इतिहास में अभूतपूर्व तपस्या हुई। श्री अरुणमुनि जी म. ने पूरी कुशलता से प्रातः कालीन धार्मिक प्रशिक्षण की क्लास संभाली। युवकों को धर्म-रंजित करने की उनकी कला को गुरुदेव बहुत सराहते थे। गुरुदेव के साथ उनकी आवाज की समानता की भी हर श्रोता दाद देता है।

गुरुदेव के रविवारीय प्रवचन कम्यूनिटी हाल में होते थे। एक रविवार को अचानक ही 7 बसें त्रीनगर से बाहर दर्शनार्थ चली गई। अनुमान ये था कि शायद आज यहाँ व्याख्यान ही न हो पाए, परन्तु उस रविवार को करीब डेढ़-दो हजार दर्शनार्थी आ गए। गुरुदेव का ऐसा अलौकिक पुण्य प्रताप था। गुरुदेव के श्रोता केवल तमाशबीन या मात्र कानों के ही रसिया नहीं होते थे, अपितु आत्मकल्याण के सूत्र ढूंढने के इच्छुक, सामायिक-संवर के अभिलाषी श्रावक उनके प्रवचनों में अधिक आते थे। इसीलिए भीषण गर्मी में भी बिना पंखे, बिना माइक, बिना रंगारंग प्रोग्रामों के गुरुदेव का समोसरण भरपूर रहता था। इस चातुर्मास में गुरुदेव के श्री चरणों में

तीन दीर्घ तपस्वी लम्बी-लम्बी आयम्बिल तपस्याएँ करके अपने जीवन को सुशोभित कर रहे थे। ये तीनों तपस्वी धन-लक्ष्मी और धर्म-लक्ष्मी से सुसम्पन्न थे। इनके परिवार वालों ने भी इनकी तपस्या में पूरा साज देकर स्वयं भी महान् निर्जरा-लाभ कमाया। बामनौली ग्राम के सुश्रावक तपस्वी प्रह्लाद राय जैन ने 181 दिन की अमल-तपस्या की। इससे पूर्व भी ये 72 तथा 108 अमल (अन्त में व्रत-तेला सहित) कर चुके थे। 1995 के चातुर्मास में इन्होंने आयम्बिल के तीन मासखमण किए। दूसरे सुश्रावक दनौदा ग्राम (नरवाणा मण्डी) के परम गुरुभक्त श्री ज्ञानीराम जी जैन थे। इन्होंने इस चातुर्मास में 151 अमल किए। इससे पूर्व एवं पश्चात् भी इन्होंने 41 तथा 121 अमल किए। तीसरे श्री चन्द्र प्रकाश जैन, हलालपुर वाले। इन्होंने 139 आयम्बिल किए। इससे पूर्व एवं पश्चात् इन्होंने 51, 76, 87, 111, 211, 55, 165 तथा 180 से ऊपर अमल-तप किए। गोहाना के युवा तपस्वी श्री सुनील जैन की तपस्या भी उत्तर भारत में एक रिकार्ड है। गुरुदेव के सन् 1987 के गोहाना-चातुर्मास में इन्होंने व्रतों का प्रथम मासखमण किया। उसके बाद प्रतिवर्ष मासखमण करना इनके जीवन का आवश्यक क्रम बन गया। (उस श्रृखंला में 2007 में ये अपना 21वां मासखमण सम्पन्न कर चुके थे।)

इसी प्रसंग में एक और तपस्विनी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। ये थी श्रीमती गुणमाला जैन धर्मपत्नी श्री सुरेन्द्र जैन एवं पुत्रवधू ला. त्रिलोक चन्द जैन पट्टी वाले। ये सन् 1988 में रायकोट निवासी आदर्श सुश्राविका श्रीमती शीला जैन के माध्यम से गुरुदेव के सम्पर्क में आई। किसी आप्रेशन के सिलसिले में नाड़ी कट जाने से ये अपाहिज हो गई, अतः सदा आर्तध्यान से ग्रस्त रहती थी। पूज्य गुरुदेव जी म. एवं शास्त्री श्री पद्म चन्द्र जी म. के शरणे से उनकी जीवन-धारा पूर्णतः अध्यात्म-अभिमुखी हो गई। ये एक सप्ताह में तीन आयम्बिल करती। प्रतिदिन 80 माला 'लोगस्स-' की फेर लेती। लगभग 16-17 वर्ष तक गुरु-चरणों के सम्पर्क में रहते हुए इन्होंने 2.15 करोड़ जाप 'चइत्ता भारहं वासं-' गाथा का और 2.50 करोड़ जाप 'लोगस्स-' का किया। एक वर्ष पूर्व ही इन्होंने अपने

अन्तिम समय का चित्रण कुछ इस प्रकार कर दिया था कि उस दिन खूब वर्षा होगी। घर का कोई सदस्य मेरे पास नहीं होगा। मेरी अमल तपस्या होगी। सूरज की रोशनी घर के अन्दर भी और बाहर भी होगी। ये सारी बातें सत्य घटित हुई। इनके परिवार की सेवाएँ बहुत ही समर्पित रही।

सवंत्सरी के बाद महाराष्ट्र में भीषण भूकम्प आया था। गुरुदेव वहाँ के विवरणों को पढ़कर बड़े संवेदनापूर्ण हो जाते थे। प्रकृति के उस तांडव नृत्य का मानवीय प्रतिकार जो भी लोग कर रहे थे, गुरुदेव उसके प्रति बड़ी सहानुभूति रखते थे। यद्यपि गुरुदेव कभी अपने प्रवचनों में पैसा देने की प्रेरणा नहीं देते थे, पर इस घटना से इतने अधिक द्रवित हुए कि कई बार सहायता की प्रेरणा दी। उस सारी सहायता को ग्रहण करने के लिए जब पना के श्री शांति लाल जी मथा दिल्ली आए। तब प्रोग्राम का आयोजन गुरुदेव ने अपने सान्निध्य में नहीं करवाया। गुरुदेव तो काम में विश्वास रखते थे, नाम में नहीं। श्री मूथा जी ने गुरुदेव के चरणों में काफी देर बैठकर विचारों का आदान-प्रदान किया। त्रीनगर से जब विहार हुआ, तब भी वहाँ कई मासखमण गतिमान् थे। विहार के समय त्रीनगर वालों की जो भीड़ हुई, वह बड़े-बड़े इतिहासों को भुला देने वाली थी। बिना इच्छा के ही त्रीनगर की हर घटना रिकार्ड बन गई।

त्रीनगर के बाद दिल्ली से प्रस्थान की इच्छा थी। वहाँ से शालीमार होते हुए यादव नगर पधारे। श्री शांति मुनि जी म. का स्वास्थ्य काफी शिथिल था। वहीं पर ज्ञानगच्छ की प्रमुख साध्वियों-संयम-निष्ठ श्री भँवर कुंवर जी एवं श्री छगनकुंवर जी ने गुरुदेव के दर्शन किए। श्री शांतिचन्द्र जी म. के कारण पुनः दिल्ली लौटना पड़ा। प्रशांत विहार पधारे। अरिहन्त नगर के सेठ रामकिशन जैन के सुपुत्र पवन जैन का बोकारो (बिहार) में उग्रवादियों ने अपहरण कर लिया था। सारे घर में हाहाकार मचा था। कई दिन हो चुके थे, पर कोई सुराग नहीं लग पाया था। एक दिन प्रवचन में गुरुदेव ने सारी सभा से पवन जी के सकुशल लौटने के लिए मंगल-भावना भाने को कहा। सबने प्रार्थना की। उसी शाम को पवन जैन घर लौट आया। वहाँ से शालीमार बाग पधारे। गुरुदेव के श्री चरणों

में अध्ययनरत दो वैरागियों—श्री श्रीपाल जी एवं रोहित जी की दीक्षा का भाव बना। शालीमार बाग संघ ने पुरजोर विनति की, पर गुरुदेव ने फरमाया कि इनकी दीक्षा श्री तपस्वी जी म. की संथारा-भूमि सोनीपत में ही करने का भाव है, अन्यत्र नहीं, जिससे उस महान् आत्मा के कुछ गुण इन मुमुक्षुओं में भी आएँ।

9. आत्म-रमण-शील योगी की यात्राएं

करीब दो वर्ष बाद दिल्ली से विहार हुआ। सोनीपत के रास्ते में मूर्तिपूजक समाज का अतिप्रसिद्ध भव्य 'वल्लभ स्मारक' मन्दिर है। प्राचीन जैन स्थापत्य कला का बेजोड़ नमूना। समाज के प्रमुख श्री राजकुमार जी जैन आदि की विनति पर गुरुदेव ने 30 जनवरी 1994 का रविवार वहाँ लगाया। उस दिन प्रातः 10 बजे वहाँ पधारे। मध्याह्न एक बजे प्रवचन रखा। बिना चिट्ठी, बिना निमन्त्रण एक हजार से ऊपर की भीड़ हो गई। वहाँ का विशाल प्रवचन हाल खचाखच भर गया। गुरुदेव ने इस साम्प्रदायिक सौहार्द की काफी प्रशंसा की। जब गुरुदेव प्रवचन करने पधार रहे थे, तब रास्ते में देखा कि कितने ही लोगों ने हरी घास पर जूते चप्पल निकाले हुए थे। गुरुदेव ने प्रवचन में लोगों से वनस्पति-हिंसा से बचने की तथा वापिसी में घास पर पैर न रखने की प्रेरणा दी। इसका सुफल ये हुआ कि कितने ही गुरु-भक्त भाई बहन गुरु-आज्ञा-भंग-भय से अपने जूते घास पर ही छोड़ गए, उन्हें उठाने के लिए घास पर नहीं चढ़े।

सोनीपत में श्री श्रीपाल जी एवं रोहित जी की दीक्षा बड़ी भव्यता और शालीनता के साथ सम्पन्न हुई। दीक्षा-पण्डाल में फोटोग्राफी तो श्री मुकेश मुनि जी की। दीक्षा के समय से ही प्रतिबंधित हो चुकी थी। अन्य

आडम्बरों में भी कमी लाने का प्रयास किया गया।

सोनीपत में ज्ञानगच्छीय श्री बसन्ती मुनि जी म. एवं श्री कनक मुनि जी म. गुरुदेव के चरणों में श्री वकील मुनि जी को समर्पित करने आए। सन् 1988 में श्री वकील चन्द जी गुरुदेव जी म. की पूर्ण सहमति से तपस्वीराज श्री चंपालाल जी म. के चरणों में दीक्षित हुए थे। अपनी

संयम-दृढ़ता, सेवा-परायणता, प्रवचन-पटुता तथा व्यावहारिक सूझ-बूझ से शीघ्र ही अपने संघ के समादरणीय स्थान के अधिकारी बने। जिस प्रकार श्री महात्मा जी म. को इतर संघ के मुनियों की विनय-प्रतिपत्ति के लिए विशेष छूट मिली हुई थी, उसी तरह इन्हें भी पूज्य गुरुदेव के संघीय मुनियों की विनयभक्ति, वन्दना, सेवा आदि की विशेष छूट थी। इसी कारण 1989-90 में जब श्रद्धेय श्री प्रकाश चन्द जी म. ठाणे 3 राजस्थान-विचरण के दौरान जोधपुर पधारे थे, तब इन्होंने पूर्ण श्रद्धा और आत्मीयता के साथ सम्बन्ध-स्थापना की थी। इन्हीं की प्रेरणा-स्वरूप उस संघ के मुनिराजों तथा श्रावकों ने भी अतिरिक्त ध्यान रखा था। इनकी प्रबल भावना थी कि ज्ञानगच्छ की उज्ज्वल छवि के प्रस्तोता श्री महात्मा जयंती मुनि जी म. उत्तर भारत में विचरें। इस उद्देश्य से उनका श्री महात्मा जी म. के साथ इधर पदार्पण हुआ। परन्तु इधर पधारते ही हिसार में उनको (श्री वकील मुनि जी म. को) Heart Attack हो गया। संयोग वश, श्री नरेश मुनि जी म. उस समय हिसार में ही साथ ठहरे हुए थे। उन्होंने मौके पर उनका पूरा उपचार करवाया और महान् संकट से उबार लिया। यद्यपि श्री नरेश मुनि जी म. का मासकल्प पूर्ण होने जा रहा था, तदपि पूज्य गुरुदेव जी म. ने उन्हें संदेश भिजवा दिया था कि रूग्ण-ग्लान की वैयावृत्य तथा सेवा के लिए कल्प से अधिक भी ठहरना पडे तो संकोच मत करना। जब हम अपने संघ के मुनि की सेवा के लिए मजबूरी में ठहरते हैं, तो अन्य संघ के, दूर देश से आए संयमी मुनि के लिए ठहरने में कोई बाधा नहीं हैं। **"अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्। उदार-चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्"** ॥

श्री वकील मुनि जी म. को पूर्ण स्वास्थ्य लाभ होने पर श्री नरेश मुनि जी म. ने विहार किया।

जब श्री नरेश मुनि जी म. की सांसारिक भगिनी अनीता जी की दीक्षा का प्रसंग बड़ौत में आया, तब भी पूज्य गुरुदेव जी म. ने सहर्ष श्री नरेश मुनि जी म. को बड़ौत दीक्षा पर भेजा, ताकि दोनों संघों में माधुर्य का संचार हो।

उस संघ में श्री वकील मुनि जी म. को अपने गिरते स्वास्थ्य के कारण कुछ असमाधि सी रहने लगी थी। मुनि मण्डल को राजस्थान से बुलावा आ गया, पर श्री वकील मुनि म. की मानसिक तथा शारीरिक स्थिति विहार हेतु तैयार नहीं थी। श्रावकों की काफी दौड़धूप के बाद श्री वकील मुनि जी म. को गुरुदेव जी म. के चरणों में रखने का निर्णय हुआ। पूज्य-पाद गुरुदेव श्री रामप्रसाद जी म. से विचार-विमर्श पत्राचार के द्वारा किया गया। अन्ततः सोनीपत में यह कार्य पूर्ण करने का निर्णय हुआ। दोनों संघों के वरिष्ठ मुनिराजों के परामर्श से एवं श्री नरेश मुनि जी म. के मुख्य दायित्व में श्री वकील मुनि जी का सप्रेम संघ-परिवर्तन हुआ। श्रीसंघ सोनीपत, महासंघ दिल्ली एवं श्रीसंघ बड़ौत की उपस्थिति में यह कार्य सम्पन्न हुआ। गुरुदेव का यही प्रयास रहा कि इस घटना से दोनों संघों में किसी भी पक्ष को न हीनाधिक्य से तोला जाए, न कोई मनोमालिन्य आए। और ऐसा ही हुआ। श्री बसन्ती मुनि जी का व्यवहार भी बड़ा शालीन एवं विनयपूर्ण रहा।

पूज्य गुरुदेव यू.पी. की स्पर्शना के लिए चले। श्री शांति मुनि जी म. की ढीली सेहत को देखते हुए अपने 'नन्दीषेण' श्री आदीश मुनि जी को उनकी सेवा में छोड़ दिया। श्री आदीश मुनि जी गुरुदेव के लिए अब एकदम अपरिहार्य हो गए थे, पर गुरुदेव ने ग्लान-सेवा को सदा से ही प्रमुखता दी थी और उससे भी बड़ी बात ये हुई कि श्री आदीश मुनि की अनुपस्थिति में गुरुदेव ने किसी भी मुनि को ये आभास नहीं होने दिया कि तुम उससे कम सेवा करते हो। हर स्थिति में ढलना, हरेक से काम लेना, हरेक को पूरा प्यार देना, ये गुरुदेव की जीवन कला थी।

गुरुदेव के पदार्पण से पश्चिमी उत्तर प्रदेश का स्थानकवासी समाज आन्दोलित हो उठा। कई संघ बागपत में एकत्रित हुए। वहाँ का दिगम्बर समाज भी सेवा-प्रभावना में जुट गया। कुछ समाचारपत्रों के प्रतिनिधि भी कैमरे लेकर आए। वे गुरुदेव के सारे यात्रा-क्रम को कैमरे में कैद करना चाहते थे, पर गुरुदेव ने प्रथम पड़ाव पर ही रोक लगा दी। गुरुदेव के मेरठ पदार्पण पर गुरुदेव के एक परमभक्त, स्वतंत्र पत्रकार श्री शिव कुमार

जी गोयल ने 'दैनिक अमर उजाला' के 'आज के हमारे अतिथि' स्तम्भ में गुरुदेव का कोई प्राचीन फोटो और जीवन-परिचय छाप दिया। गुरुदेव ने उसी समय उनको उपालम्भ-भरा पत्र लिखवाया। गुरुदेव के उपालम्भ को गोयल सा. ने भी हितरूप माना तथा फिर ऐसी पुनरावृत्ति न करने का आश्वासन दिया।

मेरठ श्रीसंघ के प्रधान श्री कीमती लाल जैन के गुरुदेव के मेरठ-प्रवास को भक्ति-रंग से रंगीन बनाया। विद्या-प्रकाशन' के श्री प्रवीण जैन ने मेरठ के युवकों में तप-संयम की प्रतिमा-रूप गुरुदेव के प्रति रुचि बढ़ाई। बड़ौत के सुश्रावक श्री वीरसैन जैन हिलवाडी वालों के सुपुत्र श्री अजय जैन गुरु-चरणों में वैरागी रूप में आए।

होली से अगले रोज फाग था। घरों में रंगों की मस्ती थी। मुनियों ने सोचा कि रंग लम्बा चलेगा, अतः सम्पूर्ण गोचरी तो संभव नहीं। गुरुदेव के लिए ही स्वल्प-सा आहार ले आएँ। श्री अजित मुनि जी ले आए। लेकिन दयामूर्ति श्री गुरुदेव ने फरमाया कि 'जब तक सब मुनियों का आहार नहीं आएगा, मैं अकेला नहीं खाऊँगा'। मुनियों ने आग्रह किया तो फरमाने लगे, 'तुम इतने सालों से मेरे पास हो, कभी मुझे अकेले खाते देखा है? अकेला तो मैं खा ही नहीं सकता। तुमने अभी तक मेरी प्रकृति को समझा ही नहीं है। सन्त गुरुदेव की ढीली तबीयत को देखकर विनति करते रहे, तो गुरुदेव ने वही किया जिसकी सबको आशंका थी- 'अप्पाणं वोसिरामि, जब तक सब सन्तों के मुँह में ग्रास नहीं डलेगा, मैं नहीं डालूँगा'। इस घटना को देखकर यदि हम उन्हें 'माँ' न कहें तो और क्या कहें? माँ सब को खिलाकर ही खाती है।

गुरुदेव ने अपना 1994 का चातुर्मास बड़ौत के दोनों क्षेत्रों शहर और मण्डी में करने की स्वीकृति प्रदान की।

यू.पी. पधारने का मुख्य लक्ष्य था—मुजफ्फर नगर में वर्षीतप के पारणे तथा नई धारणाएँ। सुबह-शाम करके 4-4 कि.मी. का सफर करते-करते मुजफ्फरनगर शहर में पहुँचे। ठहरे स्थानक में, पर प्रवचन हुए

हनुमान मंदिर में। गुरुदेव के प्रवचन इतने जोशीले और प्रेरणा-प्रद होते थे कि सनातन, दिगम्बर, श्वेताम्बर, अन्य जातियाँ, यहाँ तक कि कुछ मुसलमान भी सुनने आते थे। वहीं पर गुरुदेव के गले में कुछ एलर्जी हो गई, जो मण्डी में जाते ही तीव्र हो गई। बुखार हो गया, जो बहुत लम्बा चला। मेरा (जयमुनि) गला भी खराब हो गया। अधिकांश भार श्री सुनील मुनि जी ने वहन किया। वर्षीतप की आद्या शक्ति सुश्राविका बहन चंचल जैन ने जो दीपक जलाया था, वह अब बढ़ते-बढ़ते 'दीपावली' बन गया था। प्रधान श्री मनमोहन जी का मन गुरुदेव की रुग्णता से दखी तो था। परन्तु अपने निर्धारित कार्यों में कोई कमी नहीं आने दी। बहन चंचल का आदर्श तपोमय जीवन देखकर गुरुदेव प्रभावित तो हुए ही, चंचल बहन भी गुरुदेव के उत्तम, महान जीवन के प्रति इतनी भक्तिमती बनी-मानों कृष्ण की मीरा हो या श्रीराम की शबरी हो।

मुजफ्फर नगर से हल्के-हल्के बुखार में ही गुरुदेव ने विहार किया। ऐसे-ऐसे स्थानों पर पड़ाव डाला, जो पहले अस्पृष्ट थे। एक डोलू बाबा का मन्दिर था, जिसके इर्द-गिर्द न कोई घर था, न कोई अन्य सुविधा, फिर भी घुटनों के दर्द और बुखार की दुर्बलतावश वहाँ ठहरे। आहार-पानी की व्यवस्था में कोई ढिलाई नहीं आने दी। गृहस्थों की निर्भरता छोड़, मुनियों की कर्मठता पर गुरुदेव ने विश्वास किया। इसी कारण ये मुनिसंघ अपने गुरुदेव की कठोर चर्या का निर्वाह करता रहा है। शामली के रास्ते में एकदिन तापमान बढ़ गया। बड़ी कठिनाई से शामली पहुँचे। श्री शांति मुनि जी म. पहले पधार गए थे। गुरुदेव ने बुखार में होम्योपैथिक दवाओं का ही बदल-बदल कर प्रयोग किया था। मुनियों के आग्रह से परम गुरुभक्त डॉ. राकेश जैन ने 5 दिन के लिए अंग्रेजी दवा दी। उससे भी आराम नहीं हुआ। बड़ौत चातुर्मास में वैद्यराज श्री प्रभास जैन के प्रयास और उपचार से ही गुरुदेव पूरी तरह स्वस्थ हो सके।

शामली श्री संघ अपने स्थानक में गुरुदेव को पाकर भावाभिभूत था। रौनक भी खूब थी, पर गुरुदेव के स्वास्थ्याभाव के काण अपेक्षित उल्लास नहीं बन पाया। वहाँ से कांधला, गंगेरू होते होते हुए छपरौली पधारे।

वहाँ पर गुरुदेव को एकदम शिरोभ्रम (दिमागी चक्कर, टमतजपहव की भयंकर पीड़ा हो गई। साथ ही समय-पूर्व वर्षा से भी आसपास के सारे मार्ग अवरुद्ध हो गए। श्री आदीश मुनि जी की सेवा और डाक्टरों के भरसक प्रयत्न के बाद काफी दिनों में शिरोभ्रम पर नियंत्रण पाया गया।

छपरौली में महासाध्वी श्री संयम प्रभा 'कमल' जी ने गुरुदेव के दर्शन किए। छोटी साध्वियों को कई आगम तथा कर्मग्रंथ आदि विषय कण्ठस्थ थे, वह गुरुदेव को काफी अच्छा लगा। प्रोत्साहन दिया तथा उनकी संयम-निष्ठ प्रवृत्तियों के लिए अपना समर्थन भी दिया।

बड़ौत में गुरुदेव को मण्डी व शहर में आधा-आधा चातुर्मास व्यतीत करना था। गुरुदेव ने फरमाया कि दोनों क्षेत्र मेरे लिए दो नेत्रों के समान हैं। मैं दोनों का समान सम्मान करता हूँ। चाहे दोनों के स्थानक-भवन अलग-अलग हैं, पर धर्मध्यान की दृष्टि से दोनों परस्पर सापेक्ष हैं।' गुरुदेव की अन्तरात्मा सब पर करुणा, दया की वृष्टि करती रही और सभी बड़ौतवासी पंथ-संप्रदाय की भूलभुलैया भूलकर आनंद-सागर में गोते लगाते रहे।

चातुर्मास के शुरू में बड़ौत मण्डी समाज को अपने नव-निर्मित प्रवचन हाल का तथा उसमें मुख्य दान-दाताओं का सम्मान करना था। यू.पी. के श्रीसंघों को निमंत्रित करने का विचार था। उन्होंने पत्र का प्रारूप गुरुदेव को दिखाया, जिसमें लिखा था, 'पूज्य गुरुदेवश्री श्री 1008 श्री सुदर्शन लाल जी म. सा. के सान्निध्य में प्रवचन-हाल का उद्घाटन'। गुरुदेव ने फरमाया कि 'हम किसी भी भवन के शिलान्यास, निर्माण या उद्घाटन समारोह में शामिल नहीं होते। यदि वहाँ की व्यवस्था आडम्बर विहीन रहे, तो मात्र प्रवचन ही कर सकते हैं। भवनों के सब कार्यक्रम समाज के तत्वावधान में ही हो, हमारे नहीं'। गुरुदेव की स्वीकृति से निमंत्रण-पत्र में केवल इतना ही छपा कि 'इस अवसर पर गुरुदेव के प्रवचन का लाभ भी होगा'। गुरुदेव नहीं चाहते थे कि किसी भी गलत शब्दावली का जनता के मन में कोई अनुचित अर्थ जागृत हो और व्यर्थ के संशय जन्म लें।

श्री शांति मुनि जी म. के छत पर फिसल जाने से पैर में हल्का फ्रैक्चर हो गया। कुछ दिन में आराम हुआ।

वैरागी अजय जैन के पिता श्री वीरसैन जैन की भावना थी कि हमारे सुपुत्र की दीक्षा हमारे शहर में ही हो। वे शहर, मण्डी दोनों समाजों को विनति-हेतु लेकर आए। गुरुदेव ने स्वीकृति फरमा दी। साथ ही ये भी निर्देश दिया कि 13 साल पहले श्री सुधीर मुनि जी की दीक्षा की तरह शहर को बन्दनवारों से न सजाया जाए। स्टेज पर लड़कियों का कोई कार्यक्रम न हो, तथा झाँकी, तमाशे और सभी आडम्बरों पर पूर्ण प्रतिबंध हो। दीक्षा के कुछ दिन पूर्व वैरागी जी को बुखार हुआ। उपचार हुआ। गुरुदेव उस उपचार के साथ-साथ आत्म-शक्ति के द्वारा भी सुरक्षा कवच का निर्माण कर रहे थे। जलूस और जलसे के 5-6 घंटे तक वैरागी को बिल्कुल बुखार नहीं रहा। दीक्षार्थी का भाषण इतना जोरदार रहा कि सभी श्रोता कहने लगे कि 'गुरुदेव को एक कथाकार साधु और मिल गया है'। उस दीक्षा की एक विशेषता ये भी रही कि जब गुरुदेव ने अपने मुखारविन्द से दीक्षा का पाठ पढ़ाया, उस समय 18-20 हजार की जन-मेदिनी बिल्कुल मौन हो गई। इतना व्यापक मौन कभी किसी ने पहले नहीं देखा था। दीक्षा-पाठ का एक-एक अक्षर सारी भीड़ में गूंज दे रहा था।

शहर स्थानक में गुरुदेव को एक बार फिर शिरोभ्रम की तकलीफ हुई, पर इस बार श्री आदीश मुनि जी ने उस पर शीघ्र काबू पा लिया। गुरुदेव जी म. श्री आदीश मुनि की समझ-बझ पर विश्वास करने लगे। वैद्य श्री प्रभास जैन ने भी सेवा में विशेष योगदान दिया। बड़ौत चातुर्मास में जम्मू से खबर आई कि श्री सुन्दर मुनि जी के हाथ का आप्रेशन होना है। उनकी सेवा के लिए गुरुदेव ने सुनाम-विराजित अपने दो शिष्यों श्री सत्य प्रकाश मुनि जी एवं नरेन्द्र मुनि जी को वहाँ जाने की आज्ञा दी। दोनों मुनिराज घोर पराक्रम करके 413 कि.मी. का सफर केवल 13 दिन में तय करके जम्मू पहुँच गए और गुरुओं और गुरुभ्राता की सेवा से धन्य-धन्य और कृतकृत्य हो गए। गुरुदेव के बड़ौत में विराजते हुए श्री संघ बड़ौत शहर एवं जैन कालेज के चुनावों का प्रसंग आया। लोग

गुरुदेव के मुखारविन्द से किसी व्यक्ति को मनोनीत कराना चाहते थे, पर गुरुदेव तटस्थ रहे। इससे आम जनता में विशेष प्रभाव पड़ा। अन्यथा कितने ही साधु-सन्त समाज की राजनीति में उलझकर सामान्य जन की उपेक्षा करने लगते है। बड़ौत से विहार से पूर्व गुरुदेव ने क्षेत्र में दो अभिनव कार्यक्रम शुरू किएः—

1. प्रतिदिन स्थानक में प्रातः काल प्रार्थना चले, 2. प्रतिदिन तिथिवार घरों में 12 घंटे का महामंत्र का जाप चले। 12 घण्टे के जाप का यह जगमग दीप बड़ौत से शुरू होकर कालांतर में अन्य 40-50 क्षेत्रों में भी फैल गया। सब स्थानों पर गुरुदेव ने ये ताकीदी की कि जाप वाले घर में किसी प्रकार के प्रसाद का वितरण न हो धप। अगरबत्ती बिजली या पंखे का प्रयोग न हो। बड़ौत से एक वैरागी सचिन जैन गुरु-चरणों में आया।

गुरुदेव ने बड़ौत से विहार किया। पैरों में काफी दर्द था। हर 10-12 मिनट बाद बैठना पड़ता। बड़ौत-वासी गुरुदेव की इस पीड़ा को झेल नहीं सके। सारी समाज एकत्र होकर गुरुदेव पर दबाव डालने आई कि वापिस बड़ौत पधारो। कई घंटे लग गए। लोग धरने पर बैठ गए। पर गुरुदेव तो आगे बढ़ने के लिए कृतसंकल्प थे। वहाँ से छपरौली पधारे। शरीर में अन्दर-अन्दर असहजता-सी थी। दिन भर ठीक रहे। रात को 20-25 दस्त लगे। जलाभाव (Dehydration) का संकट प्रतीत होने लगा। मुनियों के लिए वह रात भयावह आशंकाओं-कुशंकाओं की रात थी, किन्तु उस रात गुरुदेव का धैर्य और साहस बड़े गजब का रहा। सर्दी का मौसम, अंधेरी रात, घुटनों में असह्य दर्द, घोर कमजोरी, नींद का अभाव, रात भर की पेट की परेशानी, पर एक सैंकड के लिए भी गुरुदेव ने घबराहट या चिड़चिड़ापन नहीं आने दिया। दिन निकलने पर ही समाज को पता चला तथा उपचार शुरू हुआ। दिन भर संभले रहे, पर रात को फिर वही सिलसिला। कई दिन ये परेशानी चली। एक दिन गुरुदेव ने मुनियों को ये फरमाया कि मुझे ऐसा लगता है कि कल समालखा से श्री राजेन्द्र मुनि जी ठाणे-दो से यहाँ दर्शन करने आएँगे। मुनियों ने इस बात को गंभीरता से नहीं लिया, लेकिन अगली मध्याह्न को दो संत श्री राजेन्द्र मुनि, राकेश

मुनि जी, बिना किसी को बताए, बिना किसी को साथ लिए स्थानक में पहुंच गए। उनकी 'निस्सही-निस्सही' की आवाज सुनकर ही मुनियों ने गुरुदेव की बात की सत्यता को प्रत्यक्ष देखा। बाद में श्रद्धेय श्री प्रकाश मुनिजी म. आदि भी पधारे।

गुरुदेव का स्वास्थ्य कुछ संभला तो हरियाणा की धरती की ओर उन्मुख हुए। जब यमुना को पार किया, तो गुरुदेव ने पीछे मुड़कर यू.पी. की धरती को निहारा। किसे क्या पता था कि लाखों भव्यों का ये मसीहा फिर कभी इस प्रान्त में कदम नहीं धरेगा। हरियाणा के यमुना-किनारे बसे गाँवों में हलचल हुई। हथवाला, देहरा, महावटी आदि गाँवों में लोगों की भारी भीड़ दर्शनों के लिए उमड़ पड़ी। एक जनवरी सन् 1995 के प्रथम दिन देहरा गाँव में प्रवचन में करीब दो हजार की भीड़ थी। ऐसा समां बंधा कि सब जनपदवासी चकित रह गए।

महावटी गाँव में रात को गुरुदेव को पुनः दस्तों का प्रकोप शुरू हुआ। गाँव में पर्याप्त चिकित्सा-सुविधा न होने से गुरुदेव को एक लकड़ी की कुर्सी पर बैठाकर सन्त अपने हाथों पर ही सीधे गन्नौर ले आए। इससे पहले कभी गुरुदेव इस तरह कहीं नहीं गए थे। गन्नौर विराजित संत भी सेवा के इस दुर्लभ अवसर को जानकर कई कि.मी. आगे आ गए। स्थानक पहुँचने पर गुरुदेव की आँखें आँसुओं से भरी हुई थी। उनकी आत्मा अपनी पीड़ा भूल कर मुनिराजों को दिए गए कष्ट से द्रवित हो रही थी।

गन्नौर में 8 जनवरी के रविवार को विशाल भीड़ थी। मण्डी में प्रवचन का कार्यक्रम था। 5 हजार की भीड़ की संभावना थी, पर सुबह से ही निरंतर वर्षा होने लगी। सब कार्यक्रम अस्त-व्यस्त हो गए। फिर भी भीड़ इतनी थी कि वर्षा के मौसम में भी स्थानक के ऊपर-नीचे के दोनों हालों में एक साथ कथा करनी पड़ी। अगले रविवार को फिर भारी भीड़ उमड़ी। गाँधी मण्डी पानीपत का समाज विशेष उत्साह से गुरु-चरणों में विनति-हेतु आया। कई वर्षों के बाद उनका आना हुआ था। गुरुदेव ने भी बिना किसी पूर्व चर्चा के प्रवचन में ही उनकी विनति स्वीकार कर ली।

बहुत ही सौहार्द-पूर्व वातावरण का प्रसंग बना। गुरुदेव तो सद्भावनाओं के बीज सर्वत्र डालते जा रहे थे। आगे की पीढ़ियाँ उनके मधुर फल चखती रहेंगी।

गुरुदेव राजाखेड़ी पधारे। वहाँ पर पंजाब का 'महावीर युवक मण्डल' श्री राकेश जैन के नेतृत्व में विशाल संख्या में उपस्थित हुआ और पंजाब पधारने की पुरजोर विनति करने लगा। वहाँ से पंजाब जाने का कुछ मन बना। पानीपत में आए। यह क्षेत्र तो शुरू से ही रौनकों का केन्द्र रहा है। इस बार और अधिक रंग था। गुरुदेव को अधिक खुशी मतलौड़ा जाकर हुई। वहाँ श्री राजेन्द्र मुनि जी म. ने अपना प्रथम स्वतन्त्र चातुर्मास किया था। क्षेत्र में जो तपस्या और धर्म-जागरण हुआ, वह अपने आप में बेमिसाल था। उसे देखकर गुरुदेव ने ये फरमाया कि 'मेरा मन भी चाहता है कि यहाँ चातुर्मास करूँ'। वहाँ से चलते समय ज्ञात हुआ कि सफीदों मण्डी स्थानक में उत्तर भारतीय प्रवर्तक भंडारी श्री पद्म चन्द्र जी म. विराजमान हैं। काफी अरसे से उनसे मिलने का प्रसंग नहीं बना था, प्रत्युत बीच-बीच में कुछ विषमताओं ने अवश्य जन्म ले लिया था। दो चातुर्मास तो गुरुदेव के मुनियों के एवं उनके आमने-सामने हो चुके थे। ऐसे में मिलने से कहीं और कटुता न बढ़ जाए, ऐसा ख्याल गुरुदेव के मन में आया। रास्ता सफीदों से होकर ही था। अतः एक तटस्थ मार्ग सोचा कि हम सफीदों शहर में दो दिन ठहरेंगे। किसी तरह का सामाजिक व सांघिक टकराव नहीं होने देंगे। शहर में जनता काफी उमड़ी। गुरुदेव ने किसी भी समाज या व्यक्ति को वहाँ पर आने का संकेत नहीं दिया, परन्तु वहाँ श्रद्धा का सैलाब देखते ही बनता था।

सफीदों से बिटानी पधारे। वहाँ पर सेठ श्री किशोरी लाल जी ने अपनी गुरु-भक्ति तथा सामाजिक वर्चस्व का सुन्दर दर्शन कराया। पंजाब का लक्ष्य होने के कारण क्षेत्रों में रुकना कम ही हो रहा था। पीलूखेड़ा पधारे। जालंधर श्री संघ ने आकर पंजाब-पदार्पण की विनति की। जीन्द में लुधियाना का उच्च वर्ग सुन्दर नगर लुधियाना चातुर्मास की सिफारिश

करने आया। गुरुदेव ने मात्र इतना ही फरमाया कि 'अभी चल रहे हैं, जहाँ तक पहुँचा जाएगा, पहुँचने पर ही कुछ स्पष्ट फरमा पाएँगे।'

उस वर्ष बड़ौदा में गुरुदेव ने जो प्रवचन दिया, वह विशेष भाव-धारा में बहकर दिया था। ऐसा लगता था मानो वे अपने पूर्वजों का साक्षात्कार कर रहे हों या उनकी कृपा से आविष्ट हो गए हों। वहाँ से उचाना पधारे। श्री राकेश मुनि जी म. तब जीन्द में थे। 4 अप्रैल शाम की बात है। जीन्द का युवक मुकेश जैन (रिंढाणा वाला) जीन्द स्थानक में आया। सन्तों से पूछा, 'उचाना में गुरुदेव के लिए कोई समाचार है क्या?' श्री राकेश मुनि जी ने सहजता से कहा कि उचाना तो जा ही रहे हो, संयोग से आज गुरुदेव का जन्मदिन भी है। मैं आपके बेटे के लिए गुरु-स्तुति में एक भजन बना देता हूँ, वहाँ सुना देना।' तब उनके बेटे 'अर्हम्' के लिए 'पूज सुदर्शन गुरुवर म्हारा, चरण-कमल मैं नमन करूँ' ये राजस्थानी-टच वाला भजन बनाकर दिया। अर्हम् ने गुरु-चरण में सुनाया। बाद में मुकेश जी ने गुरुदेव से उनके जन्मदिन पर प्रतिक्रिया पूछी। गुरुदेव ने बड़े दार्शनिक लहजे में फरमाया कि मैं तो इस जन्म-दिन पर यही कामना करता हूँ कि आगे से ये जन्म भी, मरण भी, सारे ही झंझट खत्म हो जाएं।

उचाना से डूमरखां पधारे। जिस कोठी में गुरुदेव ठहरे थे, उन्हीं की पुरानी हवेली में करीब 120 वर्ष पूर्व तपस्वी श्री सेवकराम जी म. का घोर अभिग्रह पूरा हुआ था। जाट जाति के उन समृद्ध परिवारों में आज भी ये मान्यता है कि एक जैन सन्त हमारे घर आकर आशीर्वाद देकर गए थे, उसके बाद ही उन घरों में इतनी समृद्धि आई है।' गुरुदेव के पदार्पण से एक जाट महिला तो इतनी धर्म-भावना से ओत-प्रोत हो गई कि कहने लगी, 'मैं भी जैनियों की तरह वर्षीतप करूँगी'। वह भावना पूरी तो नहीं हो पाई, पर भावना बनना भी बड़ी बात है। नरवाणा में महावीर जयन्ती का कार्यक्रम था। हरियाणा के वित्तमंत्री श्री मांगेराम गुप्ता जी भी गुरु-भक्ति के कारण आए। 16 अप्रैल को रायकोट में पूज्यपाद सरलात्मा श्री सेठ जी म. सा. के सान्निध्य में गुरुदेव के शिष्य-रूप में वैरागी श्रेयांस की दीक्षा हुई।

सुन्दर नगर लुधियाना का समाज समय-समय पर आकर गुरुदेव का चातुर्मास लेने के लिए भाव प्रदर्शित कर रहा था। जाखल आने पर उनका भाव 108 कारों का काफिला लेकर आने का बना। गुरुदेव को इतना अधिक श्रद्धा-प्रदर्शन कभी ऊँचा नहीं। जाखल की प्रवचन-सभा में गुरुदेव ने उन आयोजकों की प्रशंसा में एक शब्द भी नहीं कहा केवल इसीलिए, ताकि उन्हें आगे से इस तरह का प्रोत्साहन न मिले। श्रद्धेय श्री शास्त्री जी म. ने भी वहीं गुरुदेव के दर्शन किए। गुरुदेव ने सुनाम पधारकर सन् 1995 का अपना चातुर्मास सुन्दर नगर, लुधियाना का स्वीकृत किया। सुनाम में नाभा से दीर्घ विहार करके श्री सुन्दर मुनि जी एवं श्री सत्य प्रकाश मुनि जी गुरु-चरणों में पधारे। उस समय श्री सुन्दर मुनि जी के हाथ पर पलस्तर बंधा था। दो दिन ठहर कर श्री एस.पी. मुनि जी को वहीं छोड़कर बड़ी मधुरता के साथ पुनः नाभा पधारे। उनके साथ श्री राकेश मुनि जी ठाणे 4 भी नाभा-विराजित पूज्यपाद श्री सेठ जी म. सा. आदि के दर्शन-हेतु गए। साध्वी श्री मीना जी म. आदि ने भी सुनाम में गुरुदेव के दर्शन किए।

पंजाब के हर क्षेत्र में गुरुदेव के पदार्पण से विशेष धर्मोद्योत हुआ। संगरूर से ही लुधियाना का युवक-मण्डल विहारों में आने लगा। अहमदगढ़ मण्डी में श्री राकेश मुनि जी म. का प्रथम चातुर्मास होना था, अतः गुरुदेव ने उस क्षेत्र को विशेष पोषणा दी। स्वयं गुरुदेव ने भी सन् 1946 में बाबा जी म. की नेश्राय में अहमदगढ़ में चातुर्मास किया था। वे स्मृतियाँ गुरुदेव को पुनः-पुनः अतीत में ले जाती थी।

अहमदगढ़ चातुर्मास का तो गुरुदेव जी म. ने बाद में भी बराबर ध्यान रखा। हर मुनि की हर आवश्यकता को दूर बैठे भी पूरा करना चाहते थे। उस साल एक दिन गुरुदेव जी म. ने श्री राकेश मुनि जी म. को पत्र में लिखा कि आपके सहयोगी श्री सुनील मुनि जी को संवत्सरी पर प्रतिवर्ष उपवास के कारण उल्टियाँ आती हैं। इस वर्ष एक प्रयोग करना— उपवास से पहली शाम को आधा कच्चा पापड़ खा लें, वमन नहीं होगा। श्री सुनील

मुनि जी ने प्रयोग किया और सफल रहा। उस वर्ष उल्टी नहीं हुई। उसके बाद कभी उल्टी नहीं हुई और सन् 95 से पूर्व कभी रुकी नहीं।

गुरुदेव लुधियाना पधारे। अनेक उपनगरों की विनतियों को पूर्ण किया और अपनी मंगलमय वाणी का प्रसाद बाँटा। आत्मनगर एवं होम्योपैथिक कालेज में प्रमुख समाज-नेता श्री हीरा लाल जैन ने गुरुदेव का भावभीना स्वागत किया। पूज्य गुरुदेव द्वारा आचार्य-प्रवर श्री आत्माराम जी म. एवं श्रमण-प्रवर श्री फूलचन्द जी म. के प्रति की गई श्रद्धाभिव्यक्ति से सर्वत्र ही तत्रत्य जनता को विशेष संतुष्टि मिलती थी। दो जुलाई का प्रवचन सिविल लाइन्स में था। विशाल हाल में कहीं भी जगह खाली नहीं थी। गर्मी, उमस भी काफी थी। पंखे, कूलर, ए.सी. के अभ्यासी श्रद्धालु श्रद्धाभाव से गुरुदेव के प्रवचन-श्रवण के लिए लालायित बैठे थे। उस दिन लुधियाना के मेयर माननीय श्री सत्यप्रकाश जी चौधरी भी विशेष रूप से आमंत्रित थे। वे जैन धर्म एवं जैन सन्तों के विषय में बड़े रोचक, तथ्यपूर्ण और श्रद्धापरक शब्दों में बोले, पर उनकी आवाज धीमी थी और वक्तव्य भी कुछ लम्बा हो गया। तभी एक युवक खड़ा होकर उनसे कहने लगा कि 'हम अपने गुरुदेव का प्रवचन सुनने आए हैं, आप का नहीं'। उसके इन वचनों से सारी सभा में सन्नाटा छा गया। आयोजकों को काफी शर्म महसूस हुई। जैसे तैसे करके मेयर साहब ने अपना भाषण पूरा किया। उनके बाद गुरुदेव ने प्रवचन प्रारम्भ किया। शुरू में ही गुरुदेव ने उस युवक के अभद्र आचरण के प्रति, सारी सभा की ओर से मेयर सा. से क्षमा याचना की। इससे सभा की फिजा ही बदल गई और मेयर साहब भी गुरुदेव की महानता के आगे नतमस्तक हो गए। गुरुदेव किसी भी व्यक्ति का, चाहे छोटा या बड़ा हो, अपनी सभा में न स्वयं अपमान करते थे, न होने देते थे। इसके बाद भी मेयर सा. ने कई बार गुरुदेव के दर्शनों का लाभ लिया।

सुन्दर नगर प्रवेश से पूर्व गुरुदेव ने शहर स्थानक में विराजमान श्री रतन मुनि जी म. से मिलकर जाना ही समुचित समझा। गुरुदेव अपनी ओर से कभी व्यवहार में कमी नहीं आने देते थे। सुन्दर नगर में

तो बस मेला ही था। प्रधान श्री दीपचन्द जैन के नेतृत्व में सारा समाज तथा श्री नीटू जैन एवं राकेश जैन के नेतृत्व में युवकों ने चातुर्मास में चार चाँद लगा दिए। गुरुदेव ने एक-एक घर को अपनी चरण-रज से पावन किया। हर वर्ग को, हर व्यक्ति को अपने प्रेमरस से सिंचित किया। मूर्ति-पूजक समाज के लोग भी गुरुदेव की कृपा से सनाथ हुए। गुरुदेव ने नई-पुरानी कार्य-कारिणी व नए-पुराने सभी चातुर्मासों की प्रशंसा की। घर-घर में तपस्या की ज्योति जगमगाने लगी। पूरे पंजाब में चातुर्मास की गूंज हुई। युवकों के मुख पर पहली बार 'जय सुदर्शन-गुरु सुदर्शन' का अमृत-घोष सुनने को मिला। पौषध, अठाई, मासखमणों की पूरी बहार आई। सुश्राविका रत्नी बाई जी ने 92 वर्ष की आयु में 2 अठाई व 21 दिन के व्रत किए।

लुधियाना के कांग्रेसी नेता श्री सुरेन्द्र डाबर ने कई बार गुरुदेव से मुख्यमंत्री सरदार बेअन्त सिंह जी को दर्शन कराने की अनुमति चाहो।गुरुदेव ने उनकी प्रबल भावना को देखकर 'जो इच्छा' कहकर स्वीकृति दे दी। उनके आने से पूर्व सुरक्षा कारणों से पुलिस काफी सक्रिय रही। गुरुदेव को इतना तामझाम पसंद नहीं था पर दखल नहीं दिया। सर्यास्त के समय मुख्यमंत्री आए। उनको उम्मीद थी कि गुरुदेव नीचे ही मिलेंगे, पर गर्मी होने से गुरुदेव ऊपर छत पर बरसाती में विराज गए थे। उन्होंने गुरुदेव से काफी बातें की। बहुत प्रभावित होकर उठे और कहने लगे कि आज तो भीड़ बहुत है, फिर कभी आपसे एकान्त में मिलने आऊँगा। अगले महीने अमृतसर के उद्योगपति सेठ नरेन्द्र जैन मुख्यमंत्री से मिलने चण्डीगढ़ गए। उन्होंने नरेन्द्र जी से कहा कि 'मैं आपके गुरुदेव के दर्शन करने तथा व्यक्तिगत चर्चा करने के लिए जाना चाहता हूँ, आप उनसे मेरे लिए समय ले लें।' श्री नरेन्द्र जी चण्डीगढ़ से सीधे ही गुरुदेव के चरणों में आए और मुख्यमंत्री की भावना बताई। गुरुदेव ने साफ मना कर दिया कि 'सरदार जी की सुरक्षा को हर समय खतरा रहता है, अतः यहाँ लाने की कोई जरूरत नहीं है। जरा-सी कोई वारदात हो गई तो,

सारे जैन समाज पर आँच आएगी।' नरेन्द्र जी चले गए। उसी शाम को चण्डीगढ़ में उग्रवादियों ने मुख्यमंत्री की हत्या कर दी।

गुरुदेव ने मुनियों को प्रेरणा दी कि भिन्न-भिन्न स्कूलों में जाकर बालकों को नैतिकता और धर्म-शिक्षा का उपदेश दो, विशेषतः शराब व मांसाहार के विरोध में बालकों में संस्कार डालो। गुरुदेव की भावना पूरी हुई। बहुत से स्कूलों में लहर आई। कई स्कूलों के अध्यापकों ने बताया कि हमारे सैंकड़ों बालकों ने अण्डा खाना छोड़ दिया है। उन सभी स्कूलों के विद्यार्थियों की एक भाषण-प्रतियोगिता स्थानक में आयोजित की गई। बालकों के भाषण काफी शोधपूर्ण एवं प्रशंसनीय थे। निर्णायक मण्डल दुविधा-ग्रस्त था कि किसको, कौन-सी श्रेणी दी जाए। गुरुदेव ने अपने प्रवचन में फरमाया कि किसी भी बालक को दूसरा या तीसरा स्थान न दिया जाए। न ही किसी को ईनाम से वंचित रखा जाए। सभी बालक अच्छे हैं। अच्छा बोले है, अतः सभी प्रथम हैं। गुरुदेव के निर्णय से निर्णायक दल की परेशानी भी दूर हुई तथा सभी स्कूल और छात्र भी प्रसन्न हुए।

श्री राकेश जैन ने पंजाब के सभी युवक-मण्डलों का एक अधिवेशन आयोजित कराया। पूज्य गुरुदेव ने दिन में तथा दिल्ली के प्रो. रतन जैन आदि वक्ताओं ने उसे रात्रि में संबोधित किया। जैन युवकों का उत्साह देखकर लगता था कि ये समाज में नई क्रांति ला सकते हैं, लेकिन उचित मार्गदर्शन के अभाव में उनकी शक्ति बिखर जाती है।

श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ के आचार्य श्री नित्यानन्द जी म. भी लुधियाना में चातुर्मास कर रहे थे। गुरुदेव का एवं उनका कभी-कभी पारस्परिक प्रेमालाप एवं आवागमन होता रहता था। उस वर्ष गणेश जी की मूर्ति द्वारा दुग्ध-पान की चर्चा भी सारे देश-विदेश में फैली। गुरुदेव ने इस घटना की सत्यता पर विश्वास नहीं किया, पर ये सोच कर विरोध भी नहीं किया कि विरोध करने से ऐसी आधार-हीन बातों को और अधिक प्रचार मिलता है।

गुरुदेव को पेशाब की तकलीफ काफी बढ़ चली थी। कई डाक्टर आप्रेशन की राय दे चुके थे, पर अभी गुरुदेव की मनः-स्थिति तैयार नहीं थी। अन्ततः सी.एम.सी. हस्पताल के प्रमुख डॉ. प्रकाश जोन्सन ने गुरुदेव को विश्वास दिलाया कि आपका आप्रेशन बिल्कुल निर्दोष पद्धति से होगा, कोई फीस नहीं लगेगी, रात को ग्लूकोज नहीं लगेगा तथा आपकी सभी संयम-मर्यादाओं का भी पूर्णतः पालन होगा। इस बात से गुरुदेव सहमत हो गए। सब व्यवस्थाएँ सुचारु रही। उस समय का एक रोचक संवाद प्रस्तुत है—

आपेशन टेबल पर लेटे हुए गुरुदेव से डॉक्टर बोला 'आपको कोई चिन्ता तो नहीं'?

गुरुदेव— चिन्ता मुझे नहीं, आपको है। डॉक्टर— 'आपको कोई याद आता है क्या'? गुरुदेव— 'हाँ, बस अपने गुरुदेव, भगवान् तथा पाँच महाव्रत'। डॉक्टर— 'क्या कोई शिष्य याद नहीं आता'?

गुरुदेव— 'नहीं, शिष्य कोई याद नहीं आता। शिष्यों की रक्षा करता हूँ और अपना फर्ज निभाता हूँ'। तभी एनेस्थीसिया के डॉक्टर ने कहा, मैं आपका आधा हिस्सा सुन्न करूँगा। गुरुदेव ने 'सुन्न' शब्द को शून्य की ओर घुमाते हुए कहा— 'यदि सारा ही शून्य कर दो, तो मजा आ जाए, क्योंकि सर्वशून्य में ही आत्म-दर्शन होता है'। अन्त में डाक्टर हँस कर कहने लगा, 'आप जैसा मजेदार मरीज पहले कभी नहीं देखा'। हस्पताल से गुरुदेव को लकड़ी की कुर्सी पर बैठाकर सन्त उठाकर लाए। कमाल ये कि उसी दिन से गुरुदेव ने प्रवचन प्रारम्भ कर दिया। डाक्टरों ने मूत्राशय की दुर्बलता को देखते हुए प्रतिदिन एक बार कैथेटर लगाने का निर्देश दिया। इस विषय में श्री आदीश मुनि जी म. पूर्णतया विशेषज्ञ बन गए। बड़े-बड़े डाक्टर इनकी विचक्षणता की दाद देते और इनको 'पास' करके जाते। कैथेटर लगाने की प्रक्रिया कुछ महीने चालू रही। बाद में बन्द कर दी गई, जिससे एक-डेढ़ साल के बाद रोग पुनः अपने पुराने स्तर पर उभर आया।

चातुर्मास-समाप्ति से पूर्व लुधियाना शहर, गली रूपा मिस्त्री की समाज विनति लेकर आई। चातुर्मास से पूर्व उन्होंने विनति नहीं की थी। गुरुदेव ने सप्रेम उनसे एक प्रतिप्रश्न किया 'हम तो पहले भी वही थे, आज भी वही हैं। क्या कारण है कि तब विनति न करके अब विनति की जा रही है'? समाज-प्रमुखों ने निवेदन किया कि 'गुरुदेव! उन बातों को रहने दो'। गुरुदेव ने तत्क्षण विषयान्तर कर दिया। विनति स्वीकार की। शहर पधारे। श्रद्धेय श्री रतनमुनि जी म. से मधुर-मिलाप हुआ। उन्होंने आचार्य-प्रवर श्री आत्माराम जी म. का विशाल शास्त्र-भण्डार दिखाया। मुनियों ने 'महानिशीथ सूत्र' पढ़ने एवं लिखने की इच्छा व्यक्त की। वहाँ के भण्डार से बाहर किसी प्राचीन ग्रन्थ को ले जाने की अनुमति नहीं थी, अतः महाराज श्री ने उसकी फोटो कापी एक दो दिन में तैयार करके भिजवाने की पेशकश की, परन्तु सन्तों ने मूल पन्नों से ही पढ़ने की प्रार्थना की। अपनी उदारता का परिचय देते हुए श्रद्धेय श्री रतन मुनि जी म. ने सारा विशालकाय ग्रन्थ उनको दे दिया। श्री राकेश मुनि एवं श्री सुनील मुनि जी ने उसकी शीघ्र प्रतिलिपि करके साभार वापिस कर दिया।

गुरुदेव अग्रनगर में विराजमान थे। श्री राकेश मुनि जी के पास 3-4 वर्ष पुरानी एक गर्म लोई थी। वजन में भारी थी। उससे पिण्ड छुड़ाकर नई लेने के इच्छुक थे। एक भाई ने विनति की। उसे तथा नई लोई को लेकर वे गुरुदेव के पास आए। गुरुदेव ने पुरानी लोई मंगाई। उसे देखकर फरमाया– अरे भोले, इसे अभी और चला ले'। इन शब्दों का करण्ट-सा असर हुआ। राकेश मुनि जी ने कहा– 'अच्छा। मैं इसे 5 साल और ।31 दिसम्बर 2000 तक चला लूँगा।' सन् 2000 में वे नई लोई लेने के लिए काफी प्रयासरत थे। कहीं बात नहीं बनी। तभी गोहाना में 1 जनवरी 2001 को मन्त्री जगदीश जैन ने एक लोई की विनति की, उसे एकदम फरस लिया।

लुधियाना से जगरावां पधारे। ऐसे रूट से गए जहाँ से जैन सन्तों का विचरण नहीं होता था। गुरुदेव ने सैंकड़ो सिक्ख भाइयों को 'वाहे गुरु'

की कसम दिलाकर मांस, अण्डे और शराब का नियम कराया। सिक्खों में जैन सन्तों के प्रति विशेष श्रद्धा हुई।

जगरावां पूज्य श्री रूपचन्द जी म. की समाधि के कारण विख्यात है, पर अब गुरुदेव के पदार्पण से जन-जन का तीर्थ बन गया था। वह प्रवास कई अर्थों मे ऐतिहासिक रहा। वहाँ के कई विज्ञ श्रावकों ने गुरुदेव के महान जीवन को बहुत करीब से देखा। गुरुदेव तेरापंथ भवन में भी ठहरे। वहाँ के कुछ श्रावक स्थानकवासी होते हुए भी दया-दान के विषय में भ्रम में थे। वस्तुतः आजकल स्वाध्याय की प्रेरणा और रुचि भी कहीं-कहीं भटकाव का कारण बन रही हैं। कुछ श्रावक केवल शब्दों को ही पकड़ कर रह जाते हैं और मिथ्या धारणाओं व प्ररूपणाओं के शिकार हो जाते हैं। जैसे कि कुछ लोगों ने ये धारणा बना ली थी कि 'हम रोगी को यदि औषधि देकर ठीक कर दें, तो उसके ठीक होने पर वह जो भी पाप-पूर्ण क्रियाएँ करेगा, उसका सारा पाप हमको लगेगा'। तर्कों के इस घुमाव को गुरुदेव ने इस प्रकार समझाया कि 'कोई मुनिराज यदि किसी पापी-अधर्मी को पाप छुड़ाकर सत्पथ पर प्रेरित करके धार्मिक बना दे। वह धर्म के बल से देवलोक में जन्म लेकर देवता बने, तो जब वह देवता भोगादि सांसारिक क्रिया करेगा, तो क्या उसका पाप उस मुनि को लगेगा?' गुरुदेव के इस स्पष्ट कथन स प्रश्न समाहित हुए।

जगरावाँ में गुरुदेव के प्रवचन भावुकतापूर्ण होते थे। एक रविवार को उन्होंने अपने जीवन का ध्येय स्पष्ट करते हुए फरमाया, "हमारे गुरु म. ने हमें सब कुछ दिया। अब तो यही भावना है कि वो दिन परम कल्याणकारी होगा, जिस दिन अपने गुरुभाई तपस्वी-राज की तरह निःशल्य होकर, संथारा ग्रहण करके आत्म-कल्याण करूँगा। इन मुनियों से भी, जो मेरा हर जगह साथ देते हैं, यही प्रार्थना करता हूँ कि मुझ गीदड़ को भी शेर बना देना। मेरी भी उनकी तरह आराधना करवा देना। मुझे 72 दिन न सही, 72 घंटे का ही संथारा आ जाए"।

निर्भीक-वक्ता महामंत्री श्री मापेन्द्र जैन गुरुदेव की जीवन-शैली से काफी गहराई तक परिचित और प्रभावित हुए तथा गुरुदेव के एवं उनके सन्तों के प्रति विशेष श्रद्धाशील बने।

जगरावां से रायकोट पधारे। वहीं पर पूज्यपाद श्री सेठ जी म., श्रद्धेय श्री रामप्रसाद जी म. का चिर-प्रतीक्षित मंगल-मिलन हुआ। पंजाब-हरियाणा का श्रद्धालु-वर्ग हजारों की संख्या में उस झलक के लिए वहाँ उमड़ा हुआ था। बहुत ही भावुकता-भरा माहौल रहा। स्वल्प काल ठहरना हुआ, पर स्नेह का निर्झर बहता ही रहा।

चतुर्थ प्रहर

1. *पैर विवश, पर हृदय सरस*

गुरुदेव का भाव बना कि जालन्धर, होशियारपुर आदि पंजाब के अग्रिम क्षेत्र भी फरस लें। रायकोट से विहार किया। पहला पड़ाव मुश्किल से चार कि.मी. था, पर चलना अशक्य हो गया। सन्तों ने एवं रायकोट समाज ने वापिस लौटने के लिए आग्रह किया। स्वयं गुरुदेव ने भी महसूस किया कि आगे चलना संभव नहीं है। बिना मन के वापिस लौटे। गुरुदेव का शरीर हार गया, घुटनों का दर्द जीत गया। जिस दर्द को 18-19 साल से दबाए हुए थे, आज उसी ने उनको तोड़कर रख दिया। फिर गुरुदेव लगभग साढ़े तीन महीने रायकोट में रुके। वहाँ की गुरु भक्ति, सेवा-भावना एवं धर्म-श्रद्धा में काफी वृद्धि हुई। कुछ लोगों ने निवेदन किया कि ब्रादरी के भाइयों का पारस्परिक समझौता करा दो, पर शारीरिक कष्टों में घिरे रहने से गुरुदेव उस ओर अधिक ध्यान नहीं दे सके। फिर भी गुरुदेव की उपस्थिति-मात्र से समाज में एकता का वातावरण बना। उन दिनों एक जैन परिवार पारिवारिक कलह के कारण पुलिस की हिरासत में आ गया तथा एक और मामले में कुछ बाह्य लोगों ने जैनों के विरुद्ध बाजार में नारेबाजी कर दी। इन घटनाओं से सब जैन युवक आत्म-सम्मान की सुरक्षा के लिए एकत्र हो गए। जैन स्थानक में पूरा जैन समाज सब मनमुटाव और भेद-भाव भुलाकर एक झण्डे के नीचे इकट्ठा हो गया। प्रधान श्री ललित जैन की उदार एवं दूरदर्शितापूर्ण भूमिका को सबने सराहा। इस प्रकार जैन समाज रायकोट एकसूत्रता के निकट आया।

वहीं पर गुरुदेव की सेवा में तपस्वी श्री ओममुनि जी म. पधारे। वे पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. के शिष्य हैं। एकाकी विचरते थे। वार्धक्य की ओर बढ़ रहे थे। वे अपना शेष जीवन गुरुदेव की निश्राय में व्यतीत करना चाहते थे। गुरुदेव भी ऐसे महान् तपस्वी को आश्रय देने के लिए उत्सुक थे, पर सभी मुनियों की सहमति के बिना अंतिम निर्णय नहीं लेना चाहते थे। गुरुदेव ने फरमाया कि 'मैं खुद तो सेवा कर नहीं सकता। सेवा सन्तों को करनी है, यदि सभी तैयार हों, तो मैं भी तैयार हूँ'। परन्तु सबकी सहमति नहीं बन पाई, अतः गुरुदेव ने उनसे क्षमायाचना की। श्री ओममुनि जी म. फिर भी गुरुदेव के प्रति बहुत सद्भावना एवं भक्ति लेकर विदा हुए।

आचार्य-प्रवर श्री नाना लाल जी म. के सुशिष्य श्री पारस मुनि जी भी गुरुदेव के दर्शनार्थ रायकोट पधारे। गुरुदेव का निश्छल स्नेह और आत्मीयता पाकर कृतकृत्य हुए।

रायकोट में होली चातुर्मासी, महावीर जयन्ती तथा अक्षय-तृतीया महोत्सव सम्पन्न हुए। कई स्थानीय बहनें भी वर्षीतप में जुट गई। कई भाई-बहनों ने प्रतिक्रमण याद किए।

गुरुदेव के पैर जवाब दे चुके थे। रायकोट में स्थिर-वास की इच्छा नहीं बन पाई। हरियाणा में कहीं भी, विशेषतः जीन्द में रुकने का भाव था, लेकिन पहुँचा कैसे जाए, बड़ी भारी समस्या थी। सन्तों ने डोली का विचार रखा, पर गुरुदेव के सामने फिर वही समस्या। मेरे कारण सन्तों को कष्ट होगा। मना करते रहे, पर कोई विकल्प शेष नहीं था। महावीर-जयन्ती के पास गुरुदेव ने डोली प्रयोग की हाँ भर ली। सन् 1996 का चातुर्मास सुनाम के लिए स्वीकृत किया।

रायकोट से विहार हुआ। सैंकड़ों नर-नारियों की आँखों में आँसू थे। राम-वन-गमन पर अयोध्यावासियों की पीड़ा पुनः रायकोटवासियों के नयनों में छलक और झलक रही थी। पहले कभी डोली का प्रयोग न होने से उसकी रचना अस्पष्ट रही। डोली काफी भारी बनी। उस दिन 24

अप्रैल, 96 थी। पहली बार डोली का प्रयोग हुआ। ये पूरे तीन साल तक चला। जब भी डोली में चले, मजबूरी में चले। डोली को सवारी के रूप में, देश-दर्शन के रूप में या धर्म-प्रचार के साधन के रूप में कभी नहीं अपनाया। डोली में बैठने से पूर्व गुरुदेव हर जगह हाथ जोड़ कर सिर झुकाते तथा बाद में सबसे क्षमा मांगते। सदा अपनी गर्दा करते। मार्ग में जहाँ कहीं मुनिराज पानी आदि निपटाते, वहाँ कुछ दूर पैदल चले जाते। रायकोट से जिस दिन चले, उस दिन शहर की सीमा में नहीं बैठ सके। एक कि.मी. दूर जाकर ही बैठे। उस दिन गर्मी अधिक थी, रास्ता भी लम्बा था, पड़ाव पर पहुँचना मुश्किल हो गया। गुरुदेव की मनोव्यथा बेअंत थी।

धूरी में आकर डोली का स्वरूप-परिवर्तन किया गया। उसका सुफल ये रहा कि एक दिन में ही सीधे संगरूर आराम से आ गए। गुरुदेव अपनी दीक्षा-भूमि में अनेक बार आए थे, पर अधिक ठहरने का मौका नहीं लगा था। चातुर्मास प्रारम्भ होने में ढाई महीने शेष थे, अतः गुरुदेव ने दो महीने वहाँ लगाने का मन बनाया। सभी प्रबंधक-गण इतने कुशल, विनीत और विचारशील थे कि हर कार्य आशातीत रूप से सफल होता था। भाई सुरेन्द्र जी की बहन विजयलक्ष्मी जैन (प्रिंसिपल, राजकीय स्कूल) पैरों की विकलांगता के कारण स्थानक में ऊपर चढ़ने में असमर्थ थी। उनकी प्रबल भावना थी कि गुरुदेव के प्रवचन सुनें। उनकी भावना तथा स्थानक की लघुता को देखते हुए गुरुदेव ने समीपवर्ती 'राजकीय कन्या विद्यालय' में ठहरने का विचार बनाया। गर्मियों की छुट्टी के कारण स्कूल बन्द था। गुरुदेव के विराजने से धर्म-ध्यान के लिए खुल गया। स्कूल में कुछ सुविधाएँ, कुछ असुविधाएँ थी। विशालता की सुविधा थी पर मिट्टी और वृक्षों के कारण जीवराशि की बहुलता थी। शास्त्रों में वर्णित उपवन, चौत्यों के समवसरण की याद ताजा हो जाती थी। बहन विजय लक्ष्मी गुरुदेव की अनुकम्पा से अभिभूत हुई, पर कुछ दिनों बाद ही गुरुदेव को ज्वर हो जाने से प्रवचन बंद करना पड़ा।

गुरुदेव दृढ़ मनोबली थे। शरीर दुर्बल होने पर भी वाचस्पति गुरुदेव के पुण्य-स्मृति-दिवस पर 27 जून को उपवास रखा। गर्मी बहुत थी, स्वास्थ्य

नरम था। उपवास तो साता-पूर्वक हो गया, पर पारणे में असाता रही। गुरुदेव की भावना तपस्या की निरन्तर रहती थी, पर पारणे में दिक्कत हो जाने से कम कर पाते थे। वैसे उनकी आहार-व्यवस्था तपस्या से कम भी नहीं थी।।

एक रात पेड़ के नीचे गुरुदेव का पट्टा लगाया हुआ था। आधी रात को आंधी चलनी शुरू हुई। गुरुदेव उठे। सन्तों को आदेश फरमाया कि सभी अन्दर चलो। सब चले गए। अन्दर प्रवेश करते ही जोरदार कड़ाक की आवाज हुई। बाहर झांककर देखा। पता लगा कि जिस पेड़ के नीचे गुरुदेव, जयमुनि व एक दो अन्य सन्त सोए थे, वही टूट कर गिरा था। प्रातः सूर्योदय पर जब पूरा नजारा देखा, तो एक भीषण उत्पात से बचने की राहत सबने महसूस की।

संगरूर में प्रसिद्ध अंग्रेजी-भाषाविद् श्री आर.डी. अग्रवाल से श्री आदीश मुनि जी अंग्रेजी पढ़ने के इच्छुक थे, लेकिन अग्रवाल साहब किसी प्राचीन कटु अनुभव के कारण जैन सन्तों से परे रहते थे। उनके परम मित्र श्री प्रकाश चन्द जी एक बार उन्हें गुरुदेव के दर्शनार्थ लाए। पहली ही मुलाकात में वे गुरुदेव के परम अनुरागी बन गए। आदीश मुनि जी को खूब अध्यापन कराया तथा बाद में भी कई बार गुरु-दर्शन-हेतु आए।

सुनाम प्रवेश से पूर्व लखमीरवाला गाँव में गुरुदेव विराजित थे। मकान में गर्मी थी। दरवाजे में तख्त लगा रखा था। जैनरेटर का शोर था। पूरी रात गुरुदेव को नींद नहीं आई। मन पर तन की दुर्बलता का भार था। चिंता घर करने लगी, पर तुरन्त गुरुदेव संभले। चिन्ता चिन्तन में बदल गई। हृदय-विराजित अपने भगवान् वाचस्पति गुरुदेव की स्मृति में डूब गए। पुकार प्रार्थना बन गई। मानों गुरुदेव को साक्षात् करके कहने लगे, 'हे गुरुदेव! मैं सुनाम में सन् 1948 के चातुर्मास में रोज दो-दो बार कथा करता था। इस बार एक बार भी करने की हिम्मत नहीं है। मुझे बल दो कहीं लोग ये न कहें कि चार महीने बीमार ही रहे, एक भी कथा नहीं की'। प्रार्थना के ये मंजु स्वर रात-भर हृदय से निकलते रहे और होठों

पर मडराते रहे। तभी अन्तरात्मा से आवाज आई, 'चिन्ता मत कर, सब ठीक होगा'। और यह आवाज शतप्रतिशत सही निकली। गुरुदेव संगरूर में मुझसे बार-बार यही कहते थे कि इस बार चातुर्मास में मैं तो आराम करूँगा, कथा तुझे ही करनी पड़ेगी। लेकिन हुआ ये कि मैं तो समय समय पर आराम भी करता रहा, पर गुरुदेव पूरे चातुर्मास कथा फरमाते रहे।

गुरुदेव के सुनाम-प्रवेश पर श्री नरेश मुनि जी म. वहाँ विराजित थे। बाद में बुढलाडा के लिए विहार किया। श्री वकील मुनि जी गुरु चरणों में रहे। श्री वकील मुनि जी ने काफी तपस्याएँ की। एक मास में 14-15 दिन का तप हो जाता था। यद्यपि हृदय-रोग के कारण उनकी तपस्याएँ कई वर्ष से बन्द थी, पर गुरुदेव का सान्निध्य उनके लिए वरदान-रूप सिद्ध हुआ। उनकी तपस्या में गुरुदेव अपने हाथों से उनकी वैयावृत्य करते। गुरुदेव के पदार्पण-मात्र से क्षेत्र में तपस्याओं की बहार आ गई। प्रधान जी की पुत्रवधू बहन रीना जैन ने 81 दिन की रिकार्ड तपस्या की। तपस्वी श्रावक राजकुमार जी का प्रण था कि जब तक गुरुदेव सुनाम विराजेंगे, हमारे घर में तपस्या का क्रम निरंतर चलेगा और अपने प्रण पर वह परिवार अटल रहा। 8-10 वर्ष के बालक-बालिकाओं ने अठाई तप किए। गुरुदेव अपने कष्ट के बावजद दीर्घ तपस्वियों को दर्शन देने जाते थे।

मंत्री ऋषिपाल जी के सुपुत्र श्री संदीप जी ने चार महीने अपने आई.ए.एस. की पढ़ाई केवल इसीलिए स्थगित कर दी, ताकि गुरुदेव के प्रवचनों का लाभ ले सकूँ। बारह व्रतों का सूक्ष्म विश्लेषण सुनकर कई भव्यात्माओं ने व्रत लिए। सन्दीप जी भी उनमें से एक थे। प्रधान जी के सुपुत्र लक्षवीर जी ने चार महीने दिल्ली में व्यवसाय का त्याग रखा। वहाँ के युवकों के सेवा का आदर्श सर्वत्र चर्चित रहा। गुरुदेव ने कई अजैन एवं सिक्ख परिवारों में दर्शन देकर व्यसन-त्याग कराए।

श्री उज्ज्वल जैन एक दिन गुरुदेव को अपने एक मित्र के घर ले गए। वे उस समय बराड़ सरकार में मंत्री थे। उन्होंने गुरुदेव की आवभगत की। अपना अहोभाग्य माना। गुरुदेव ने कहा 'मंत्री सा., हम आपसे एक

चीज चाहते हैं? मंत्री जी सोचने लगे, 'इनके पैर में दर्द है, शायद कार चाहते होंगे'। बोले—फरमाओ। गुरुदेव ने कहा— 'आज से मांसाहार नहीं करना'। सरदार जी हैरान रह गए। चरणों को हाथ लगाया, जीवन-पर्यन्त के लिए नियम ले लिया। घर में बना हुआ सारा दूषित भोजन तत्काल फिकवा दिया।

सुनाम चातुर्मास के प्रारम्भ में दिल्ली से प्रो. रतन जैन दर्शन करने आए। वे रोग से पीड़ित थे। एक नेत्र की रोशनी जा चुकी थी, दूसरी को खतरा था। साथ ही असह्य दर्द भी रहता था। गुरुदेव उनकी पीड़ा से दयार्द्र हो उठे। प्रवचन में भावुक होकर कहने लगे 'रतन जी समाज का हीरा है। इसकी पीड़ा हमारे लिए भी पीड़ाकारी है। सब मिलकर शासन-देव से प्रार्थना करें कि इसकी पीड़ा शांत हो'। गुरुदेव की मंगल-कामना के साथ सहस्रों हाथ उठे और रतन जी भी भावुक हो गए। दो महीने बाद सुनाम आकर उन्होंने कथा में कहा था कि "मैंने सभी हास्पिटलों और बड़े-बड़े नेत्र-विशेषज्ञों का दिखा लिया था। रोज ही दर्दनाशक दवा खाता था, पर मेरी पीड़ा में कोई कमी नहीं आ रही थी। गुरुदेव के कृपा-पूर्ण आशीर्वाद के बाद सारी पीड़ा शांत हो गई। एक दिन भी दवा नहीं खानी पड़ी और रोग जहाँ पर था, वहीं पर रोक लग गई"।

पर्यूषणों से पूर्व गुरुदेव ने आज्ञा फरमाई कि आठ दिनों तक स्थानीय एवं बाहर का कोई भी भाई-बहन स्थानक में बिना मुँहपत्ती न रहे। उत्तर भारत में व्यापक स्तर पर ये प्रथम प्रयास था, जो काफी सफल रहा। आज भी वहाँ के कई लोग ऐसे हैं, जो इस नियम के अभ्यासी हो गए हैं।

जीन्द जाने का लक्ष्य बना। जाखल में श्री नरेश मुनि जी म. ने, नरवाणा में श्री प्रकाश मुनि जी म. ने गुरुदर्शन किए। जीन्द पहुँचते ही नए साल की पहली तारीख पर छाई हुई गहरी धुंध ने आगे के धुंधले दिनों के संकेत बखूबी दे दिए।

पूज्यपाद श्री सेठ जी म., श्रद्धेय श्री रामप्रसाद जी म. से जीन्द में पावन मिलन हुआ, पर अन्ततः वियोग में बदल गया। आज्ञा-संबन्ध

भंग हुए, शेष संबंध कायम रहे। भ्रातृ-वियोग से गुरुदेव टूट गए। मुँह से एक भी शब्द नहीं कहा, पर उच्च रक्तचाप और डिप्रैशन की बीमारी ने जिन्दगी-भर के लिए स्थायी रूप से जकड़ लिया। भारत-पाक-विभाजन से पूर्व और पश्चात् जो स्थिति गाँधी जी की रही, वही गुरुदेव की हो गई।

जीन्द में स्थिरवास का मन लेकर आए थे, लेकिन मन अस्थिर हो गया। शरीर के आंतरिक रोग पुनः उभरने लगे। पेशाब की तकलीफ फिर उग्र हो गई। डॉ. सुरेश जैन की हर पल, हर क्षण की गहन देखभाल से गुरुदेव जीन्द में रुके रहे। 16 अप्रैल को उन्हीं के 'नाथ नर्सिंग होम' में दिल्ली के प्रसिद्ध सर्जन सी.एम. गोयल के हाथों आप्रेशन हुआ। आप्रेशन के बाद पैरों में भयंकर सियाटिका दर्द चालू हो गया। असह्य वेदना कई दिन रही। काफी दिनों में उसका निराकरण हो पाया। गोहाना से श्री सुन्दरमुनि गुरुदेव की साता पूछने आए, सप्रेम चले गए।

आचार्य श्री शुभचन्द्र जी की सम्प्रदाय की साध्वी संयमप्रभा जी ने गुरुदेव के दर्शन किए और जीवन-भर के लिए अखण्ड, अटूट श्रद्धा-भक्ति से सम्पन्न हुई।

जीन्द में ही वर्षीतप के पारणे हुए। अब तक आते-आते ये पारणे वार्षिक महोत्सव का रूप लेने लगे थे। कई स्थानीय बहनों ने भी शुरू किए, जिनमें स्कीम के प्रधान जी एवं शहर के मंत्री जी की धर्मपत्नियाँ भी थीं।

गुरुदेव का सन् 1997 का चातुर्मास जीन्द में ही हुआ। एक जनवरी से 15 नवम्बर तक साढ़े दस महीने वहीं पर विराजे। 1959 के बाद किसी एक स्थान पर ये गुरुदेव का सबसे लम्बा प्रवास था। प्रारम्भ के 5-6 महीने शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य में भारी गिरावट के थे। मुझे एवं विशालमुनि जी को पीलिया हो गया, इसका भार भी गुरुदेव के मन पर पड़ा। गुरुदेव ने भगवती सूत्र की सामूहिक वाचना शुरू की। जब उनकी स्थिति और बिगड़ने लगी, तो दिल्ली के प्रख्यात डॉ. एस.पी. गुप्ता का संयोग मिला। उनके उपचार से एकदम सुखद परिवर्तन आया। गुरुदेव ने कथा प्रारम्भ की और पूरे जीन्द नगर में, रौनक में भी और तपस्या में भी

एक करण्ट-सा आ गया। 17-18 वर्ष के युवकों ने मासखमण कर दिए। खजानचन्द जैन रिंढाणा वालों ने 77 वर्ष की वृद्ध-अवस्था में 53 दिन की व्रत-तपस्या करके उत्तर भारत में एक कीर्तिमान बनाया।

चातुर्मास के पश्चात् पानीपत की ओर विहार हुआ। सफीदों में श्री सत्यप्रकाश मुनि जी ठाणे 3 का चातुर्मास अपनी सुहावनी छटा के साथ सम्पन्न हुआ था। गुरुदेव ने वहाँ की रचना देखी कि किस तरह से उन्होंने अपने संयम, प्रवचन व मधुर व्यवहार से क्षेत्र की आत्मा को जगाया। जब सफीदों वाले को चातास दिया था। तो सब मायस थे कि गुरुदेव ने हमे छोटे सन्त देकर टरका दिया है। पर गुरुदेव ने फरमाया था कि 'अभी मत कहो, चातुर्मास के बाद बताना कि क्या कमी रह गई। लेकिन कमी का क्या काम था? गुरुदेव का पुण्यातिशय इतन प्रबल था कि जिस भी शिष्य पर हाथ रख देते, वही प्रस्तर से प्रतिमा बन जाता था।

'एक बुत मैंने तराशा, हो गई सबको खबर,
शहर के पत्थर सभी अपना पता देने लगे।'

पानीपत पधारे। मुनि-सम्मेलन हुआ। जन-भावनाओं का उफनता सैलाब पुरानी सभी दृष्ट और कल्पित धारणाओं के किनारे तोड़ रहा था। जन-भाषाएँ उस भीड़ को 5 हजार से ऊपर आँक रही थी। पानीपत वालों ने गुरुदेव को रोकते-रोकते एक कल्प ले ही लिया। अंबाला श्रीसंघ गुरुदेव के चातुर्मास के लिए प्रयत्नशील था। गुरुदेव के जी.टी. रोड़ पर पधारते ही वे और सक्रिय हो गए।

घरौण्डा पधारे। यहाँ पर गुरुदेव ने एक नया ही कार्यक्रम प्रारम्भ किया-चमड़ा मुक्ति का। यह कार्यक्रम धीरे-धीरे महा-अभियान का रूप ले गया। स्कूल के प्रांगण में विद्यार्थी, अध्यापक एवं प्रबंधक-गण, तीनों स्तरों पर कोई भी चमड़े के जूते, चप्पल, बैल्ट, बैग और पर्स आदि पहन कर न आए, ऐसा प्रथम प्रयास घरौण्डा के जैन स्कूल में हुआ। फिर तो करनाल, कुरुक्षेत्र, अंबाला, सढौरा, नरवाणा, जगरावां आदि अनेक स्थानों पर स्कूलों की प्रबंधक समितियों ने लिखित रूप में चमड़ा-मुक्ति नियम

लागू करने के प्रण गुरुदेव के चरणों में समर्पित किए। करनाल, कुरुक्षेत्र एवं अम्बाला छावनी के संघ कुछ विभाजन के शिकार थे, पर गुरुदेव के समक्ष सब एकाकार रहे। मनों की दूरियाँ कुछ कम हुईं।

करनाल में विराजते हुए गुरुदेव ने उस इलाके के तीन-चार उपेक्षित ग्रामों की भी सुध ली। श्री राकेश मुनि जी एवं श्री नरेन्द्र मुनि जी को धर्म-देशना के लिए भेजा। शाहपुर, काछवा, मंजूरा, नीसिंग, दादूपुर आदि गाँवों का एक संघ बन गया। उस स्वल्पकालीन प्रवास का सुखद परिणाम ये रहा कि वहाँ दो बहनों ने सन् 1998 में तथा दो ने सन् 1999 में वर्षीतप किया। मास-खमण एवं वर्षीतपों की ये उज्जवल परम्परा वहाँ आज तक चालू है। चमड़ा-मुक्ति एवं ग्राम-जागरण के प्रति जो अमित उत्साह श्री राकेश मुनि जी में है, उसे अधिक वेगवान् एवं संयमानुकूल बनाने में गुरुदेव ने विशेष रुचि ली। कुरुक्षेत्र श्री आनन्दऋषि जी म. के सुशिष्य प्रवर्तक श्री कुन्दन ऋषि जी म. से सौहार्द-पूर्ण मिलन हुआ। गुरुदेव ने उनके प्रति उदारता रखी। यद्यपि अम्बाला जाने के बाद उनकी ओर से सकारात्मक रूख में काफी परिवर्तन आया, पर गुरुदेव ने कोई रंज या मलाल नहीं किया। आचार्य-प्रवर के प्रति अपनी आस्था की झलक के रूप में छावनी में गुरुदेव ने उनके पुण्यदिवस पर उनके विषय में ही प्रवचन सुनाया। अगले दिन अम्बाला शहर में महासाध्वी श्री स्वर्णा जी म. के चरणों में दीक्षा को ध्यान में रखते हुए प्रातः काल का प्रवचन भी स्थगित किया।

गुरुदेव ने सन् 1998 का अपना चातुर्मास अम्बाला शहर के लिए स्वीकार किया। प्रवेश पर अम्बाला श्री-संघ का उत्साह पूरे अरूज पर था। केसरिया पटका गले में डाले हुए सैंकड़ों प्रमुख लोगों, युवकों एवं भाई-बहनों ने गुरुदेव का स्वागत किया। स्थानक-प्रवेश से पूर्व बड़ी साध्वी श्री स्वर्णा जी म. को दर्शन दिए। उस दिन प्रवचन में भी गुरुदेव ने फरमाया कि 'मै सारे रास्ते में किसी शुभ शकुन की तलाश में था, कोई नहीं मिला। अंत में साध्वी जी से मिलन पर मैंने माना कि शुभ शकुन हो गया है'।

गुरुदेव ने अम्बाला में समाज की राजनीति में उलझे बिना हर छोटे बड़े कार्यकर्ता का सम्मान बढ़ाया। अक्षय तृतीया के पारणे पी. के. आर. स्कूल में पहली बार जितनी शानदार व्यवस्था के साथ हुए, उसकी गुरुदेव ने जी-भरकर प्रशंसा की। वहाँ पर मुनिराजों का प्रवचन भी हुआ, फिर आत्मानन्द जैन स्कूल में भी प्रवचन किया।

अम्बाला में गुरुदेव की प्रेरणा से श्री राजेन्द्र मुनि जी म. सूर्योदय के समय धर्म की कक्षा लगाते थे। एक दिन गुरुदेव गैलरी में टहल रहे थे। दूसरी तरफ युवक पढ़ रहे थे। गुरुदेव को कमरे में जाना था। रास्ता युवकों के पास से होकर था। गुरुदेव ने सोचा कि यदि मैं इधर से निकला, तो सबको उठना पड़ेगा, इससे पढ़ाई में बाधा पड़ेगी। अतः कमरे में आने के लिए गुरुदेव पहले पीछे जीने से ऊपर चढ़े, फिर सारे हाल की विशाल छत पार की, फिर बड़े जीने से उतर कर कमरे में पहुँचे। घुटनों के दर्द के कारण काफी हाँफ तो गए, पर अध्ययन में अंतराय नहीं होने दी। उनकी करुणा और विवेक-दृष्टि अपार थी।

एक दिन गुरुदेव जी म. दोपहर आहार के पश्चात् विश्राम कर रहे थे। श्री सुनील मुनि जी म. को बुला लिया। कहने लगे– 'तुम्हारा श्री अरुण मुनि जी के साथ नवांशहर चातुर्मास था। तुम्हें इनका व्यक्तित्व, स्वभाव कैसा लगा' श्री सुनील मुनि जी म. उनसे अत्यन्त प्रभावित थे। अतः एक-एक विशेषता गिनाने लगे और गुरुदेव भी परम प्रमोद भावना में डूबे सुनते रहे, सुनते रहे। समीपवर्ती एक मुनिराज ने बीच में ही गुरुदेव से कहा "आपको विश्राम की सख्त जरूरत है, आराम कर लो"। गुरुदेव बोले "मुझे गुणश्रवण से वो आनन्द और विश्राम मिलता है, जो सोने से भी नहीं मिलता"। और वह गुणगान-सत्र चलता रहा। गुणी, गुणानुरागी, गुणग्राही, गुणदाता थे गुरुदेव!

10 जून को बरसात शुरू हुई। मध्याह्न और सायं का आहार नहीं आ सका। 11 की प्रातः कुछ देर के लिए बरसात रुकी, तो थोड़ा-सा जल आ गया, पर फिर बरसात शुरू। शाम तक चलती रही। 10-11 बजे

संतों ने विनति की कि अपने घुटनों पर दर्द-नाशक दवा लगवा लो। दर्द तो असह्य था। प्रतिदिन दवा लगती थी, पर उस रोज लगवाने से मना कर दिया। कारण पूछा तो कहने लगे कि 'दवाई लगवाने में हाथ खराब होंगे। उन्हें धोने के लिए पानी बरतना पड़ेगा। पानी अल्प है, किसी मुनि के पीने के काम आ जाएगा। मेरे दर्द से ज्यादा सन्तों की प्यास बड़ी है'। कई बार विनति करने पर भी गुरुदेव ने उस रोज दवा नहीं लगवाई।

गुरुदेव को ज्योतिष-विद्या पर विश्वास था। किसी ज्योतिषी ने उनको कह दिया था कि अक्टूबर 1998 में आपका प्राणान्त हो सकता है। गुरुदेव उसके लिए मानसिक रूप से पूरी तरह तैयार हो गए थे।

23 जून को पानीपत में श्री विनयमुनि जी म. के ऊपर अचानक उष्ण परीषह का मारणान्तिक कष्ट आया। संघ, समाज एवं मुनियों के परामर्श से गुरुदेव ने उनको पानीपत व राजाखेड़ी श्री संघ के अधीन कर दिया। इससे उनको जीवन-दान मिला। डाक्टरों, साथी मुनियों एवं प्रत्यक्ष-दर्शियों के अनुसार उनका बचना भी अपने आप में एक करिश्मा ही था। गुरुदेव ने श्री राजेन्द्र मुनि जी म. को उनकी सेवा में भेजा। पहले उनका चातुर्मास पटियाला के लिए स्वीकृत किया था। उनके स्थान पर श्री अरुण मुनि जी ने वहाँ का कार्य-भार संभाला। श्री विनय मुनि जी म. की अस्वस्थता में वाहन-प्रयोग आदि के दोष लगने के कारण गुरुदेव ने उनको छः मास का दीक्षा छेद का प्रायश्चित्त दिया। पानीपत श्रीसंघ ने काफी गिड़गिड़ाकर इस दण्ड में कुछ कमी करानी चाही, पर गुरुदेव प्रायश्चित-व्यवस्था में कोई ढिलाई नहीं लाना चाहते थे।

चातुर्मास से पूर्व ज्ञानगच्छीय श्री जुगराज जी म., श्री अमृत मुनि जी म. ठाणे 3 भी पधारे। गुरुदेव सदा से ही इस विचार के रहे हैं कि सभी साधु-साध्वियों को अपने संघ की समाचारी के अनुरूप ही चलना चाहिए। परस्पर वन्दना, एक पाटे पर बैठना, सम्मिलित आहार आदि ये सब अपने-अपने संघ की व्यवस्थाएँ हैं, इनकों कभी विवाद का विषय नहीं बनाना चाहिए। समाचारी के नाम पर समाज को दिग्भ्रान्त करना,

विषम वातावरण बनाना या उत्कृष्टता-निकृष्टता का प्रदर्शन करना भी गुरुदेव को पसन्द नहीं था। 'प्रवचन-सभा में साध्वियाँ पट्टे पर बैठेंगी, तो हम प्रवचन-सभा में नहीं जाएँगे', ऐसा जब श्री अमृतमुनि जी ने कहा, तो गुरुदेव ने ये विषय उन्हीं के ऊपर छोड़ दिया। वहाँ पर विराजमान श्रमणसंघीय साध्वियों को नीचे जमीन पर बैठकर प्रवचन सुनने-हेतु बाध्य करने के लिए गुरुदेव ने स्पष्ट इंकार कर दिया। बाद में कुछ आपसी विचार-विमर्श के बाद अमृतमुनि जी उनका पट्टा न छुड़वाने के लिए स्वतः तैयार हो गए। गुरुदेव ने उन्हें सहज स्नेह से भरपूर किया।

आषाढ़ी चातुर्मासी पर अंबाला में इतने पौषध हुए, जितने कभी संवत्सरी पर भी नहीं होते थे। उस दिन सचमुच ही संवत्सरी जैसी शोभा थी और अगले दिन इतनी तेज वारिश हुई कि प्रवचन भी नहीं हो सका, जैसे कि संवत्सरी से अगले दिन सर्वत्र प्रवचन बन्द रहता ही है। अंबाला में 8-10 वर्षीतप प्रारम्भ हुए तथा अठाइयाँ व मासखमण भी प्रभूत मात्रा में हुए। प्रधान श्री रतन चन्द जैन अपने सहयोगियों के साथ दिन भर सेवा में लगे रहते थे। उनकी प्रधानगी में 1983 में भी गुरुदेव का बरनाला चातुर्मास हुआ था। उन्होंने गुरुदेव की हर आज्ञा का श्रद्धा-सहित पालन किया।

गुरुदेव ने अपने जीवन के अंतिम वर्ष में सर्वाधिक रुचि ली चमड़ा-मुक्ति के कार्य में। प्रवचनों में तो वे उसका उद्घोष करते ही थे, दिन-भर भी दर्शनार्थियों को इसका त्याग कराते थे। इस ओर उनका इतना जोर था कि अकेले अगस्त के महीने में ही एक हजार से ऊपर भाई-बहनों को जीवन-भर के लिए चमड़े से बनी वस्तुओं के सेवन का त्याग करवाया। इस अभियान के पीछे की शक्ति रहे—श्री राकेश मुनि जी म. और उनके पीछे रही गुरुदेव के समर्थन की शक्ति। लगता था कि स्वामी रामकृष्ण परमहंस अपने शिष्य स्वामी विवेकानन्द के काम को अपने जीते-जी गगन-तल की ऊँचाइयों तक पहुँचाने में संलग्न हो गए हों। चातुर्मास में ही इन्दौर से शाकाहार के प्रबल प्रचारक डॉ. नेमीचन्द जी जैन गुरुदर्शन के लिए आए। इस अवसर पर उन्होंने कई स्थानों पर स्कूल/कालेजों में

शाकाहार पर भाषण दिए तथा प्रेस कान्फ्रेंस भी सम्बोधित की। गुरुचरणों में शाकाहार-प्रचार का प्रयोगात्मक रूप देखकर बहुत प्रभावित होकर लौटे।

अम्बाला शहर की स्थानक के एक कक्ष में तपस्वी श्री सुदर्शन मुनि जी म. के देवलोक-गमन के बाद, एक तख्त पर उनका एक फोटो रख दिया गया। लोग उसे आकर सिर झुकाते थे। एक ही जगह पर स्थानक और मंदिर का सम्मिश्रण कर रखा था। गुरुदेव ने इस धर्म-विरुद्ध प्रवृत्ति पर एक बार अपना दुःख उंडेला, पर कुछ लोगों की भावनाओं के आहत होने के भय से मामले को अधिक तूल नहीं दिया। जैन कांफ्रेंस के अध्यक्ष श्रीमान् हस्तीमल जी मुणोत भी वहाँ आए थे। वे भी उस तस्वीर को वहाँ उस रूप में देखकर बड़े चकित और खिन्न हुए थे।

इसी चातुर्मास में गोहाना से एक युवक दर्शनार्थ आया। दिल्ली में हुए किसी झगड़े के कारण मानसिक अवसाद-ग्रस्त होकर आत्महत्या के लिए प्रेरित हो रहा था। तीन बहनों का इकलौता भाई। शादी-शुदा, दो छोटे-छोटे बच्चे, अपनी व्यथा-कथा श्री राकेश मुनि जी को कही। उन्होंने गुरुदेव को अर्ज की। गुरुदेव ने युवक को अपने पास बुलाया। सिर पर हाथ रखा। आज्ञा दी-सारी चिन्ता यहीं छोड़ जा। इन शब्दों ने जादू-सा असर किया। आज तक युवक प्रसन्न है।

ज्योतिषी द्वारा घोषित तिथि सानन्द बीत जाने पर गुरुदेव ने उस ओर अधिक सोचना बन्द कर दिया था। वैसे करीब सवा साल तक वे प्रतिदिन बड़ी संलेखना का पाठ अवश्य सुनते रहे। ज्यादा से ज्यादा समय स्वाध्याय सुनने में बिताते। उनकी इच्छा होती थी कि मैं स्वयं स्वाध्याय पढ़ूँ, पर पढ़ते-पढ़ते सिर में दर्द होने लगता था, अतः मुनियों से सुना करते। इसके लिए उन्होंने कई मुनियों को नियुक्त कर रखा था। श्री राकेश मुनि जी, आदीश मुनि जी एवं मनोज मुनि जी म. अलग अलग समय पर आगमों की स्वाध्याय सुनाया करते थे। बड़ी संलेखना के पाठ पर गुरुदेव अधिक एकाग्र हो जाते थे।

श्री सुनील मुनि जी एवं आदीश मुनि जी ने आचारांग से प्रारंभ करके 28-30 आगम गुरुदेव को सुनाए। दिन के चार प्रहरों में लगभग दो प्रहर का समय स्वाध्याय-श्रवण में ही बीतता था।

पर्युषणों में जितनी अठाइयाँ अम्बाला में हुई, उतनी उत्तर भारत में कहीं नहीं हुई, ये एक नया ही चमत्कार रहा।

पी.के.आर. स्कूल के चुनावों को लेकर गुरुदेव तटस्थ रहे, लेकिन कुछ तत्वों ने उन्हें भी लपेट-सा लिया। चुनावों का मसला उलझता गया और एक सामाजिक विवाद बन गया। समाज के एक वर्ग ने स्थानक में आना भी बंद कर दिया। कई लोगों ने गुरुदेव से मध्यस्थता करने के विनति की, पर गुरुदेव ने इस विषय में कुछ नहीं कहा। उनका तो एक मात्र लक्ष्य शान्ति था। चातुर्मास के विहार से एक दिन पूर्व गुरुदेव स्वयं महासाध्वी श्री स्वर्णकान्ता जी म. के उपाश्रय में पधारे तथा अपनी ओर से खिमत-खिमावना करके आए।

2. चौथे पहर की आखिरी घड़ी
(अन्तिम छः महीने)

सूर्य अस्त होता है, लेकिन एकदम नहीं होता। उसकी भूमिका बनती है। लक्षण दिखाई देने लगते हैं। पश्चिम दिशा लाल हो जाती है, पक्षी घोंसलों में लौटने लगते हैं, फूल मुरझाने लगते हैं, चमगादड़ मंडराने लगते हैं, सारी प्रकृति में उदासी की काली चादर उतरने लगती है, लेकिन काम करने वाले कारीगर उन सब परिस्थितियों से निरपेक्ष होकर केवल सूर्य की किरणों को ही देखते रहते हैं। और जब सूर्य अस्त हो जाता है, तब कहते है कि ये सब कुछ एकदम अचानक ही हो गया। ऐसे ही पूज्य गुरुदेव के जीवन के साथ भी घटित हुआ। आगामी 6 महीनों में जो-जो घटनाएँ घटी, यदि उनको उस महान् दुर्घटना से जोडकर देखें, तो पता लगेगा कि ऐसा होने के कई लक्षण प्रकट हो चके थे। पर किसी ने उनको समझा ही नहीं। दीवार पर इबारतें लिखी जा चुकी थी, पर उनको पढ़ने वाला, समझने वाला कोई नहीं था। छः महीने में 8-10 ऐसे संकट आए, जो उस महासंकट को झेलने के लिए हमारे मन को तैयार करवा रहे थे। पहले वे घटनाएं, फिर विस्तृत जानकारीः–

1. अम्बाला से विहार के प्रथम दिन ही एक मोटर साईकिल ने गुरुदेव की चलती डोली में टक्कर मार दी। आदीश मुनि जी को हल्की चोट आई। गुरुदेव को भी धक्का लगा, गिरते-गिरते बचे।
2. पटियाला में मनोज मुनि जी की छाती पर पौड़ियों में लोहे की ग्रिल लगी। उस पर 21 दिन का पलस्तर लगा।

3. समाणा के रास्ते में श्री विशाल मुनि के पैर में चोट लगी। 21 दिन का पलस्तर चढ़ा।
4. चीका मण्डी में गुरुदेव को डिप्रेशन का भारी अटैक हुआ। शरीर में घोर व्याकुलता थी।
5. कैथल में श्री शांति मुनि जी म. को तीव्र हार्ट अटैक हुआ।
6. पानीपत में मेरे पैर में तेज मोच आई। 12-13 दिन रुकना पड़ा।
7. समालखा में गुरुदेव रात को सोते-सोते पट्टे से नीचे गिर पड़े। छाती में चोट आई। मेरे पैर में भी दोबारा मोच आई।
8. नरेला से विहार करते हुए मार्ग में गुरुदेव-समेत कई मुनिराज दो ट्रकों की भीषण भिड़न्त के बीच में आते-आते बचे।
9. दिल्ली शालीमार में गुरुदेव के मूत्राशय में पेशाब का जमाव पिछले सब समयों से अधिक होने लगा।
10. गुरुदेव को रोज बार-बार पसीना आने लगा, भूख बिल्कुल खत्म-सी हो गई।
11. गंगाराम हास्पिटल की चौथी मंजिल पर जाना था, तीसरी तक तो गुरुदेव चढ़ गए, परन्तु बुरी तरह हांफ गए। आगे उनको हाथों पर उठा कर ले जाना पड़ा।
12. 23 अप्रैल से पेशाब का आना बिल्कुल बंद-सा हो गया।
13. 24 ता. को तीन बार चक्कर आए। साँस की दिक्कत आई तथा उल्टी भी आई।

आइए, अब इन घटनाओं पर कुछ विस्तार से विचार करें।

आपने देखा होगा-पहाड़ों पर बर्फ जमी होती है, नीचे नीचे पानी बहता रहता है। इसी तरह ऊपर से तो सामान्य जीवन का क्रम गतिमान् था, पर भीतर ही भीतर प्रकृति अपना खेल खेल रही थी।

अम्बाला से पटियाला जाने का कोई भाव नहीं था। सोचते थे कि अम्बाला से सीधे कैथल होते हुए जीन्द पहुँच जाएँ तथा डोली से छुटकारा पाकर स्थिरवास कर लें। लेकिन पेशाब की कुछ चिकित्सा अपरिहार्य दिखाई देने लगी। वह सुविधा या चंडीगढ़ थी या पटियाला। पटियाले का विचार बना। वहाँ पर श्री अरुण मुनि जी म. के देदीप्यमान चातुर्मास के कारण बड़ी लहर थी। श्री संघ पटियाला गुरुदेव का आगमन पाकर खुशी से झूमने लगा। समाज ने गुरुदेव से प्रार्थना की कि आप हमें प्रवेश की निश्चित तिथि बता दें, हम स्वागत में 1008 व्यक्ति सीमा पर खड़े करेंगे। गुरुदेव अब इन सब चीजों से उदासीन हो चले थे। फरमाया कि हमें ऐसे स्वागत नहीं करवाने। इसकी जगह सहज भाव से सामायिकें करो। हमारा जिस दिन मौका होगा, पहुँच जाएंगे।

अम्बाला का विहार ऐतिहासिक था। एक छोटी सड़क से जा रहे थे। तभी एक मोटर साइकिल सवार भीड़ की अधिकता के कारण खुद को संभाल नहीं सका और दिग्भ्रमित होने के कारण डोली से टकरा गया। श्री आदीश मुनि के कूल्हे में ठोकर लगी। डोली का संतुलन बिगड़ गया, गुरुदेव को भी धक्का लगा। गुरुदेव के बार-बार मना करने पर भी आदीश मुनि जी डोली में लगे रहे। घन्नौर पहुँचते ही श्री नरेन्द्र मुनि जी, नवीन मुनि जी, विकास मुनि जी डोली की सेवार्थ पहुँच गए। नरेन्द्र मुनि जी ने नाभा में अपना प्रथम स्वतंत्र चातुर्मास किया था। गुरुदेव की अपार कृपा से बड़ा प्रभावपूर्ण तथा शान्ति क्रान्ति वाला चौमास रहा। पटियाला का धर्मरंग देखकर गुरुदेव ने श्री अरुण मुनि जी की प्रेरणा-शक्ति को बहुत सराहा। डाक्टरों ने गुरुदेव का परीक्षण करके पाया कि अभी आप्रेशन की कोई जरूरत नहीं है, यद्यपि इसीलिए पटियाला पधारे थे।

एक कल्प पूरा होने पर गुरुदेव ने स्थानक से विहार किया तथा महावीर भवन में एक प्रवचन करके लाल बाग में श्री पद्म जैन की कोठी पर तीन दिन विराजे। महावीर भवन में तेरापन्थ के मुनिराज श्री धर्मचन्द जी प्रवचन के समय नीचे की मंजिल पर आकर बैठ गए थे। गुरुदेव को पता लगा तो साधु भेजकर उनको ऊपर बुलाया। अपना पट्टा खाली कराके

उनको पास बिठाया तथा अपने बाद समय देकर उनका प्रवचन कराया। लाल बाग में पटियाला के राजा की महारानी श्रीमती परनीत कौर गुरुदेव के दर्शनार्थ आई। गुरुदेव ने उनको मांसाहार के पूर्ण त्याग की प्रेरणा दी। उनकी भावभीनी प्रार्थना पर गुरुदेव उनके महल में भी दर्शन देने पधारे। रानी ने गुरुदेव का अपना महल दिखाया। गुरुदेव ने उनको संयम-सुमेरु श्री मयाराम जी म. की पटियाला में दीक्षा तथा उनके द्वारा कौन्सिल के सेना अध्यक्ष सरदार गुरुमुखसिंह को जैन धर्मानुरागी बनाने का प्रसंग सुनाया। सुनकर रानी साहिबा बड़ी प्रभावित हुई। वहाँ से डॉ. रमेश जैन की कोठी पर एक दिन विराजे। उनके कला-कौशल से गुरुदेव को अनेक बार आराम मिला था तथा अन्य मुनिराज भी उनके उपचार से लाभान्वित हुए थे। अगली सुबह वहाँ से समाणा के लिए विहार की तैयारी कर रहे थे कि गुरुदेव का मन एकदम बदल गया। फरमाने लगे कि मैं शेष जीवन पटियाला में ही व्यतीत करूँगा। मुझसे आगे डोली में सफर नहीं किया जाएगा। समाज को सूचना दी। वे हर्षित होकर गुरुदेव को पुनः स्थानक में स्वागत-सहित ले आए। पटियाला में एकान्त स्थान था, चिकित्सा की भी सुविधा थी तथा अधिक भीड़ से भी बचाव था। गुरुदेव का मन भी था। श्री आदीश मुनि जी भी यही चाहते थे। पर कुछ दिन के बाद श्री राकेश मुनि जी आदि ने गुरुदेव से हरियाणा की ओर विहार करने की अर्ज करी कि वो हमारे सन्तों का चिर-परिचित, चिर-सिंचित इलाका है। गुरुदेव का मन भी कुछ बन गया। फिर कई दिन तक धुंध का लम्बा प्रकोप चला। दोबारा स्थानक आने पर गुरुदेव की प्रेरणा से 10-12 बहनों ने प्रतिक्रमण याद किया। धुंध के उन दिनों में ज्ञान-गच्छीय साध्वियों का पदार्पण भी हुआ। उनकी विनय-भक्ति प्रशंसनीय रही।

पटियाला से विहार हुआ। मौसम खराब था, पर चल दिए। पसियाणा गाँव में ठहरे। ऊपर कमरे में पट्टा चढ़ाते समय श्री विशालमुनि के पैर में चोट लगी, ध्यान नहीं दिया। अगले दिन विहार किया। रास्ता लम्बा था। आकाश भी बादलों से घिरा था। अब बरसा कि अब बरसा। 21 कि.मी. समाणा मण्डी पहुँच कर ही दम लिया। रास्ते में एक जगह डोली

में भी Fracture हुआ, उसे ठीक करवाया गया। मकान भी काफी ठंडा मिला। सब संतों के पैर भी थकावट के कारण टेढ़े-मेढ़े हो गए थे। वयोवृद्ध श्री वकील मुनि जी का तो उस दिन आयम्बिल भी था। गुरुदेव अपनी थकावट को अपने मन ही मन समेटे हुए थे। अगले दिन शहर में पधारे। वहाँ एकाकी सन्त श्री सरपंच मुनि जी गुरुदेव के दर्शन करके बड़े प्रफुल्लित हुए। संक्रांति का दिन आया। प्रातः काफी धुंध थी। पटियाला वाले काफी उमंग में दर्शन करने आ रहे थे कि एक कार का भीषण एक्सीडैन्ट हो गया। उसमें श्री मनीश जी की धर्मपत्नी एवं उनकी सपत्री तथा श्री तरसेम जी के सपत्र राजन जैन का देहान्त हो गया। रंग में भंग पड़ गया। गुरुदेव के मन को गहरा सदमा लगा। चित्त घबरा गया। डिप्रैशन बन गया। समाणा में गोहाना श्रीसंघ श्रद्धेय श्री रामप्रसाद जी म. का पत्र लेकर आया कि आप या अन्य मुनिराज गोहाना दीक्षा पर पधारें, पर गुरुदेव ने अपनी विवशता प्रकट कर दी।

समाणा से विहार का भाव था, पर श्री विशाल मुनि जी के पैर में पलस्तर के कारण विहार की संभावना नहीं बन रही थी। इधर अन्य मुनियों से मिलने में और चातुर्मास निर्णीत करने में भी देरी हो रही थी। कई टोलियों के विहार इसीलिए अस्त-व्यस्त भी हो चुके थे। इस वर्ष विहारों में जितनी अनिश्चितता रही, उतनी पहले कभी नहीं रही। कारण पर कारण बनते चले गए। अन्ततः श्री मनोज मुनि जी को श्री विशाल मुनि जी की सेवा में छोड़कर विहार किया। जीन्द से श्री राजेन्द्र मुनि जी म. एवं श्री रोहित मुनि जी को डोली-वहन करने के लिए चीका मण्डी बुला लिया गया। चीका में गुरुदेव प्रथम बार ही पधारे थे। बड़ा उल्लासमय वातावरण बना। कई दिन रुके। वहाँ गुरुदेव के दिमाग पर डिप्रैशन का काफी असर था। कैथल पधारे। श्री पवन जैन की साबुन फैक्ट्री में चारों दिशाओं से दर्शनार्थियों का भारी समूह उमड़ा। कैथल में रोहतक के परम गुरुभक्त श्री ईश्वर जैन के सहयोग से डॉ. ए.के. बोहरा आए, उनके उपचार से गुरुदेव काफी ठीक हो गए। 11 फरवरी को अकस्मात् ही श्री शान्ति चन्द्र जी म. को जोरदार हृदयाघात हो गया। उसी समय डाक्टरी सहायता

मिल गई। पहले दिन स्थानक में ही उपचार मिला, किन्तु देहली के विख्यात डॉ. विमित जैन के आने के पश्चात् उनके परामर्श से महाराज श्री को डॉ. अशोक जी के हास्पिटल में स्थानान्तरित कर दिया गया। हार्ट अटैक की खबर सारे उत्तरी भारत में प्रसारित हो गई। दूर-नजदीक के प्रायः सभी श्री-संघों ने आकर साता-पृच्छा की। इसी समय श्री आदीश मुनि जी को भी शिरोभ्रम का आक्रमण हुआ। पहले भी कई बार हो चुका था। इससे सारे मुनि-मण्डल में चिन्ता व्याप्त हो गई। गुरुदेव ने अपने सभी मुनिराजों को वहीं पर बुला लिया। स्थानक-भवन छोटा होने से अग्रवाल धर्मशाला में सभी स्थानान्तरित हो गए। छोटा-सा कैथल क्षेत्र देखते-देखते सुविशाल बन गया। गुरुदेव के आज्ञानुवर्ती सभी 27 मुनिराज वहाँ पर एकत्रित हुए। 28 फरवरी को मुनि-सम्मेलन में करीब तीन हजार की भारी जनसंख्या गुरुदर्शन हेतु उमड़ी। गुरुदेव ने अपने मुनिराजों के 6 चातुर्मास फरमाए। इस वर्ष का मुनि-सम्मेलन कई अर्थों में अनूठा था। गुरुदेव के जीवन-काल का यह अंतिम मुनि-सम्मेलन था, जिसमें उनके अधीनस्थ सभी मुनिराज एकत्रित हुए। गुरुदेव ने प्रत्येक सन्त को अलग-अलग बहुत प्यार दिया। अब कई मुनिराज उस समय गुरुदेव द्वारा प्रदर्शित अनन्त कृपा की, करुणा की कहानियाँ भावविभोर मन से सुनाते हैं। कई सन्तों को बातचीत में ये भी संकेत दिया कि 'मेरे जीवन-दीप में तेल खत्म होने को है, पंछी उड़ने वाला है'। गुरुदेव ने सबको हित-शिक्षाएँ दी, अनेक आज्ञाएँ फरमाई। एक दिन प्रातः प्रतिक्रमण से पूर्व सब मुनिराजों का एकत्रित करके फरमाने लगे—

1. हर रत्नाधिक मुनिराज अपने साथी मुनिराज के मान-सम्मान का पूरा ध्यान रखे।
2. सभी लघु मुनिराज अपने रत्नाधिकों की पूरी विनय-भक्ति करें। उनकी आज्ञा बिना कोई कार्य न करें।
3. सब मुनिराज अष्टमी, पक्खी को व्रत, अमल, एकाशना आदि तपस्या यथाशक्य करने की कोशिश करें।

एक दिन सभी मुनिराजों को आज्ञा प्रदान करी, 'मेरे दोनों गुरुभाइयों की कोई भी अविनय, आशातना न करे। ये मुझे कतई बर्दाश्त नहीं होगा।

25 फरवरी को प्रातःकाल आदेश फरमाया कि "तुम सभी आज दिन में मुझे अपने विचार लिखकर दो कि मेरे बाद किस तरह की व्यवस्था में रहना चाहते हो। मैं सबके पत्र पढ़कर फाड़ दूंगा। किसी की बात किसी को बताऊँगा नहीं। फिर मैं उनके आधार पर या स्वतंत्र रूप से निर्णय करूँगा। जो निर्णय होगा, उसे बंद करके आदीश मुनि के पास रख दूंगा।" गुरुदेव के इस आदेश से सब सन्त सकते में आ गए कि ये विषय अचानक कैसे चला दियाय न जाने गुरुदेव क्या सोच रहे हैं, आदि। सन्तों ने ये भी कहा कि 'जो आप उचित समझें, कर देना, लिख देना, हमे मंजूर है। और यदि राय ही लेनी है तो कुछ गीतार्थ मुनियों की ले लो। सब छोटे-2 मुनियों को लिखने की क्यों कह रहे हो'। परन्तु गुरुदेव ने कह दिया कि सब संत समझदार हैं, सब लिखें। अधिकांश मुनियों ने उस दिन अपने विचार लिख कर गुरुदेव को सौंप दिए। ऐसा लोकतांत्रिक कदम पहली बार देखने में आया था।

श्री शांति मुनि जी म. का उपचार चल रहा था। कुछ टैस्ट बाकी थे, जो दिल्ली में ही हो सकते थे। श्री आदीश मुनि जी के भी कुछ टैस्ट दिल्ली में होने थे। इन सब बातों के आधार पर गुरुदेव ने सन् 1999 का अपना चातुर्मास दिल्ली रोहिणी, सैक्टर 3 करने का संकेत दिया, यद्यपि परिपूर्ण स्वीकृति नहीं फरमाई थी। यदि कोई सन्त किसी भाई-बहन से गुरुदेव का चातुर्मास रोहिणी का कहता, तो गुरुदेव उसे फौरन टोक देते थे कि ऐसा मत कहो। न जाने उनके मन में क्या था?

सम्मेलन के पश्चात् सन्तों के विहार हुए। श्री शांति मुनि जी म. की सेवा में श्री राजेन्द्र मुनि जी म. आदि सन्तों को छोड़ा। उन्होंने घोर परिश्रम करके क्षेत्र में जैन-अजैन लोगों की श्रद्धा को काफी मजबूती प्रदान की। गुरुदेव ने दिल्ली के लिए नया ही रास्ता चुना। पुण्डरी, नीसिंग, मंजूरा से घरौण्डा, फिर जी.टी. रोड के रास्ते दिल्ली। सारे रास्ते गुरुदेव सुप्रसन्न रहे,

लेकिन विहार, पड़ाव व समय की न्यूनाधिकता के विषय में स्वयं कोई निर्णय नहीं लिया। यही फरमाते रहे कि 'डोली सन्त उठाते हैं, अतः उनसे ही पूछो'। गाँवों में कहीं कोई असुविधा भी हुई, तो उन्होंने कोई शिकायत नहीं की। नाराजगी उनसे कोसों दूर हो गई थी। निषेध तो मानो उनके शब्द-कोष से ही नहीं, विचार-कोष से भी निकल गया था।

मंजूरा गाँव में रविवार लगाया। दो बहनें वर्षीतप कर रही थी। गुरुभक्त बिजेन्द्र जैन आदि ने सेवा में कमाल किया। बड़ा मंगल रहा। घरौण्डा पधारे। वहाँ परम श्रद्धेय संयम-निष्ठ, धीर-गंभीर-हृदय श्री प्रेमचन्द जी म., जो तपस्वी श्री रोशनलाल जी म. के लघुभ्राता एवं शिष्य हैं उनसे मिले। गुरुदेव उनके कमरे में नीचे गए। जमीन पर बैठ गए। कहने लगे कि "मैंने आपके गुरुदेव के चरणों में सन् 1979 में अपने जीवन की आलोचना की थी। अब 20 वर्ष हो चुके हैं। उन 20 वर्षों की आलोचना आपके सामने करना चाहता हूँ। जिन्दगी का कुछ भरोसा नहीं है, न जाने कब जबाब दे जाए। मैं इस संसार से खाली नहीं जाना चाहता। आलोचना करके शुद्ध होकर जाऊँगा। मेरा आप पर सहज विश्वास है। ज्ञान-गच्छ के श्री महात्मा जी म. के सामने आलोचना करने की मेरी भावना थी, तब संयोग नहीं बना। अब वे स्वर्गस्थ हो गए"। गुरुदेव ने तब श्री प्रेमचन्द जी म. के सामने आलोचना की। तदनुसार जो प्रायश्चित्त बना, वह स्वीकार किया। बाद में सन्तों से कहा 'अब मैं पूरी तरह निश्चिन्त हो गया हूँ। अब जीवन-लीला कभी भी समाप्त हो जाए'।

घरौण्डा से राजाखेड़ी पधारे। गुरुदेव ने बड़ा भावुक प्रवचन किया। करते-करते फरमाया कि 'राजाखेड़ी में मैं अंतिम बार आया हूँ, फिर सम्भवतः मेरा दोबारा आना न हो। इस घोषणा से लोग चकित हो गए। कइयों की आँखों में आँसू आ गए। लोग सोच बैठे थे कि रोहिणी चातुर्मास के बाद गुरुदेव को पानीपत स्थिरवास कराएँगे, तब राजाखेड़ी तो पधारेंगे ही।

गुरुदेव पानीपत पधारे। उसी दिन मेरे पैर में मोच आ गई। दर्द का असर मुझे कम, गुरुदेव को ज्यादा था। बहुत ध्यान रखा। अग्रवाल मण्डी, गाँधी मण्डी दोनों जगह भरपूर रौनक रही। गुरुदेव के पावन पदार्पण की खुशी में लाला जियालाल जैन, राजाखेड़ी वालों के परिवार के सभी 24 सदस्यों ने मरणोपरान्त नेत्रदान के फार्म भरे तथा और भी सैंकड़ों लोगों से भरवाए। युवकों के मन में समाज-सेवा और आत्म-बलिदान की इस शुभ भावना को देखकर गुरुदेव को बड़ी प्रसन्नता हुई और अपने प्रवचन में उन सबको प्रोत्साहित किया। बाद में भी गुरुदेव ने इस कार्यक्रम को अपना आशीर्वाद किंवा नैतिक समर्थन दिया। उसी परिवार की फैक्ट्री में दर्शन देकर गुरुदेव समालखा पधारे। उस वर्ष महावीर जयन्ती 29 ता. की थी, उसी दिन मुसलमानों की 'बकरा ईद' भी थी। ईद के उपलक्ष्य में महती हिंसा की संभावना थी, इसलिए गुरुदेव ने एक दिन पूर्व 28 मार्च को ही महावीर जयन्ती मनाई। हरियाणा जैन महासभा के प्रधान श्री राधेश्याम जैन ने भी इस निर्णय को पसन्द किया था और इसे पूरे हरियाणा की जैन सभाओं में प्रसारित कराया था।

समालखा में 27 मार्च की रात्रि को गुरुदेव सोए हुए थे कि अचानक पट्टे से नीचे गिर गए। पार्श्ववर्ती दो मुनियों ने उठाने की कोशिश की, पर काफी परेशानी रही। फिर अन्ततः गुरुदेव के निजी प्रयास से एवं दोनों मुनियों के सहयोग से गुरुदेव पट्टे पर पुनः लेट गए। छाती में चोट आई। मच्छरदानी भी फट गई। मच्छरदानी का प्रयोग गुरुदेव ने 1992 से प्रारम्भ किया था। जीव-रक्षा मुख्य ध्येय था। मच्छरों की अधिकता से नींद नहीं आती तो सिर-दर्द काफी हो जाता था, ये एक कारण था। गुरुदेव ने छाती पर कुछ मरहम वगैरह भी लगाई, पर आराम नहीं मिला। बाद में सोनीपत आने के बाद पलस्तर लगवाया।

वीर जयंती पर छाती में दर्द होने से, गुरुदेव का प्रवचन फरमाने का विचार नहीं था। पाँच संदेश लिखकर, अपने ही नाम से प्रसारित करने की आज्ञा फरमा कर मुझे दिए। 1. सब भाई बहनें चमड़े से बनी वस्तुओं का त्याग करें। 2. सभी रेशमी वस्तुओं का त्याग करें। 3. जीते-जी रक्तदान

और मरणोपरान्त नेत्रदान का भाव बनाएँ। 4. एक वर्ष में भ. महावीर का जीवन अवश्य पढ़ें। 5. आगामी अक्षय-तृतीया से वर्षीतप के भाव बनाएँ। जब नीचे प्रवचन चल रहा था, तो प्रभु वीर की जयन्ती का ख्याल करके गुरुदेव का मन भी प्रवचन करने को हुआ। नीचे पधार कर पावन प्रवचन फरमाया। वहाँ से विहार कर ला. महावीर प्रसाद जैन के 'सन्मति राइस मिल' में एक दिन विराज कर गन्नौर पधारे। वाचस्पति गुरुदेव की जन्मभूमि राजपुर में एक दिन लगाया। ला. जय नारायण जी ने सपरिवार गुरुभक्ति का लाभ लिया।

गुरुदेव 3 अप्रैल को सोनीपत मण्डी में पधारे। श्री सुन्दर मुनि जी दो नवदीक्षित मुनियों के साथ गुरुदर्शन-हेतु जीन्द से सोनीपत आए। 4 अप्रैल को जैन मंदिर में प्रवचन था। प्रवचन में जाने से पूर्व गुरुदेव ने दोनों प्रवचनकार मुनियों को आदेश फरमाया कि 'आज मेरा जन्म-दिन है, प्रवचन में इस विषय में कुछ न बोला जाए तथा धर्मोपदेश के अलावा और कोई चर्चा न की जाए'। 5 ता. को वहाँ से विहार हुआ। 6-7 अप्रैल नरेला में लगी। 8 ता. को नरेला से कोई 4 कि.मी. चले थे। नवकारसी के बाद सड़क के एक किनारे बैठकर सन्त पानी ग्रहण कर रहे थे। गुरुदेव के इर्द गिर्द सब सन्त बैठे थे, तभी एक ट्रक दिल्ली की ओर से तथा एक ट्रक नरेला की तरफ से आया। दोनों पूरी तेजी पर थे। दिल्ली वाले ट्रक ने नरेला से आने वाले ट्रक को साइड नहीं दी। नरेला वाले ट्रक के रास्ते में सन्त बैठे थे। उसने सन्तों को बचाने के पुरजोर कोशिश की। इस प्रयास में उसका सामने वाले ट्रक से हल्का-सा स्पर्श भी हुआ। एक शीशा भी टूटा। इस समय स्वयं गुरुदेव तथा तीन सन्त बहुत थोड़े अन्तर से ट्रक की चपेट में आते-आते बचे। मौत आते-आते टल गई। सबने गुरुदेव के चरण छूए। गुरुदेव ने कहा– 'सन्तों के पुण्य से बचाव हो गया'। उस दिन अलीपुर रुके। वहाँ से यादव नगर पधारकर क्षेत्र को अपनी से कृपा सनाथ किया।

11 अप्रैल रविवार को गुरुदेव ने यादव नगर से शालीमार बाग प्रवेश किया। पूरी दिल्ली में असीम उल्लास और उमंग थी। वैसे तो सोनीपत

से ही 40-50 भाईयों का मण्डल साथ आता था, पर आज तो हजारों भाई बहन स्वागत में थे। स्थान-स्थान पर स्वागत के बैनर लगाए हुए थे। दिल्ली वाले न जाने क्या से क्या कह रहे थे, पर गुरुदेव किसी और ही दुनिया में थे। दिल्ली आते ही चेहरे पर से उल्लास या मुस्कुराहट अपने आप गायब हो गई। उस दिन प्रवचन में सारा हाल खचाखच भरा था। गुरुदेव ने अपने जीवन का अंतिम प्रवचन प्रारम्भ किया। शुरू में भजन के ये बोल थे–

गाओ मंगल-गान जय तीर्थंकर।
सबका हो कल्याण, जय तीर्थंकर ॥टेक॥
जीवन की अंतिम वेला है,
तन रोगों से घिरा हुआ है।
है तपोधनी का ध्यान, जय तीर्थंकर ॥

श्रोता इन शब्दों को सुनकर बेचौन हुए। वे सोच रहे थे कि अभी तो दिल्ली आए हैं। चौमास होगा, सम्भवतः स्थिरवास भी हो जाए, पर गुरुदेव तो कुछ और ही कहे जा रहे थे। प्रवचन पूरा हुआ। गुरुदेव अन्दर से परम शान्त, कृतकृत्य हो गए थे। भीड़ आई और चली गई।

साध्वी संयमप्रभा 'कमल' जी लघु साध्वियों की पढ़ाई के लिए समय चाहती थी। गुरुदेव ने तत्काल मुझे आदेश दिया कि इन्हें भाइयों की उपस्थिति में पूरा समय दो। गुरुदेव सबको देने में लगे हुए थे, कोई कृपा से खाली न रह जाए। शालीमार आते ही भूख खत्म हो गई। प्रवचन में नीचे आना भीय सीढ़ी चढ़ने उतरने के कारण कठिन हो गया। 14 अप्रैल संक्रांति के दिन नीचे पधारे। स्थानक में ऊपर-नीचे कहीं तिल धरने की भी जगह नहीं थी। उसके बाद ऊपर से ही मंगल-पाठ का दान देने लगे। जीन्द के डॉ. सुरेश जैन आए। गुरुदेव की तबीयत देखकर घबरा गए। उनके अनुसार गुरुदेव का दिल्ली-आगमन ठीक नहीं था। फिर भी कुछ उपचार-परिवर्तन की चर्चा श्री आदीश मुनि जी से करके चले गए।

18 ता. को अक्षयतृतीया के पारणे हुए। श्री शांति मुनि जी म. की अनुपस्थिति काफी खल रही थी। श्री राकेश मुनि जी सब व्यवस्था संभाल रहे थे। भीड़ की अधिकता एवं पाण्डाल की विशालता को देखकर ये निर्णय हुआ कि कोई सन्त नहीं बोलेगा। गृहस्थ ही स्वयं स्टेज संभालेंगे। श्री किशोरी लाल जी ने बड़े भावुक स्वर में भावना भाई कि 'गुरुदेव शालीमार में डोली में बैठकर पधारे हैं, किन्तु हम यहाँ पर गुरुदेव की इतनी सेवा, आराधना करेंगे कि ये ठीक होकर, अपने पैरों से चलकर रोहिणी में पधारेंगे।' गुरुदेव के सान्निध्य में करीब 50 भाई-बहनों ने वर्षीतप के पारणे किए। इससे अधिक संख्या में नए वर्ष के लिए शुरू हुए। गुरुदेव उस दिन गर्मी होने के बावजूद भी दो घंटे तक पण्डाल में बैठे रहे, बिना सहारे के, बिना पैरों को हिलाए-डुलाए। वह सौभाग्यशाली दिन अंतिम ही था, जब गुरुदेव किसी प्रवचन-सभा में विराजमान हुए। गुरु-चरणों में सुदीर्घ वर्षी-तप करने वाले कुछेक भाई-बहन ये हैं श्रीमती चचंल जैन मुजफ्फर नगर श्रीमती चमेली जैन रतिया, श्रीमती सुमित्रा जैन (डबरपुर वाले, सैक्टर आठ रोहिणी), श्रीमती सावित्री जैन गोहाना, श्रीमती मूर्ति देवी जालन्धर, श्रीमती प्रेमो जैन गोहाना, श्रीमती ओमपती जैन पानीपत, श्रीमती सामोदेवी पीतमपुरा दिल्ली, श्रीमती शकुन्तला जैन (राजाखेड़ी, सैक्टर तीन रोहिणी)। इस क्रम में और-और नाम भी निरन्तर जुड़ते चले गए। कार्यक्रम समाप्त होने पर स्थानीय प्रबन्धकों ने गुरुदेव की ढीली तबीयत को देखते हुए दो सूचना-पट्ट लिखकर टंगवा दिए कि 'मौन दर्शन करें'। गुरुदेव को पता लगा तो तत्काल उतारने के आदेश फरमाए। जिन्दगी-भर किसी के ऊपर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया, तो आज कैसे लगाते। सब तपस्वियों को गुरुदेव ने सप्रेम साधुवाद दिया। सबके लिए गुरुदेव का एक बोल और एक दृष्टिपात ही पर्याप्त था।

अगले दिन सर गंगा राम हास्पिटल में टैस्टिंग के लिए जाने का विचार बना। गुरुदेव ने कई स्थानों पर अपने मुनियों को स्वयं पत्र लिखें। प्रो. रतन जैन ने डॉ. सौगानी से समय की व्यवस्था कर ली। शालीमार में कथा करने का दायित्व सतियों को देकर दो तीन दिन में वापिस

लौटने की सोचकर 20 ता. को प्रातः ही करौल बाग के लिए चल दिए। नवकारसी आने पर सभी सन्तों ने पानी पिया, पर गुरुदेव ने नहीं। करौल बाग पहुँचते ही गुरुदेव निढाल हो गए। फिर भी शांत भाव से लेटे या बैठे रहे। सभी स्वाध्याय सुनी। यहाँ पर दोपहर को स्लैब पर रखी एक जल-पात्री को एक कौवे ने चोंच मार कर नीचे गिरा दिया। 21 ता. को प्राचीन राजेन्द्र नगर में श्री शिखर चन्द जी जैन के आवास पर ठहरे। हास्पिटल वहाँ से एक-डेढ़ फलांग की दूरी पर स्थित है। गर्मी में कोठियाँ मुनियों के लिए प्रायः असाताकारी ही रहती हैं। और गुरुदेव तो काफी कमजोरी महसूस कर रहे थे, फिर भी उन्होंने एक बार भी ये नहीं कहा कि यहाँ मुझे अनुकूलता नहीं है।

गंगाराम हास्पिटल में गुरुदेव किसी उपचार के लिए नहीं गए थे। केवल निदान कराने के लिए गए थे। तीन चार शारीरिक व्याधियों की टैस्टिंग करानी थी। 1. दोनों घुटनों के लिए एम.आर.आई. टैस्ट कराना था। 2. कई महीनों से गुरुदेव के कानों में साँय-साँय की आवाज गूंजती थी, उसके लिए Audiometry Test, 3. नसों की शक्तिमत्ता की जाँच के लिए Nerve Conduction Test तथा 4. मूत्राशय की क्षति मापने के लिए CMG Test कराना था। 21 ता. को हास्पिटल पहुंचे। उस दिन हास्पिटल की गवर्निंग बॉडी के अध्यक्ष डॉ. सामा गुरुदेव की सेवा में उपस्थित हुए। कहने लगे कि 'सारा हास्पिटल आपकी सेवा में हाजिर है। हर कार्य निःशुल्क होगा। हम आपको यहाँ से पूरी तरह रोग-मुक्त करके भेजना चाहते हैं'। उस दिन गुरुदेव के Audiometry तथा M.R.I. Test हुए। डाक्टर लोग गुरुदेव को हस्पताल में ही रखना चाहते थे, पर गुरुदेव की वहाँ रहने की इच्छा नहीं थी। श्री राजकुमार जी जैन के माध्यम से अपनी भावना डाक्टरों के सामने रख दी। वे सहमत हो गए। 22 ता. को फिर हस्पताल गए। चौथी मंजिल पर कमरा था, तीसरी तक चढ़ते-चढ़ते गुरुदेव का दम फूल गया। आगे बढ़ना और चढ़ना अशक्य हो गया। श्री रोहित मुनि श्री एवं जी विशाल मुनि जी हाथों पर बिठाकर ऊपर ले गए। जब CMG Test के लिए गुरुदेव को ले जाया गया, तो उनके मूत्राशय में

1100 मि.ग्रा. पेशाब जमा था। डाक्टरो ने स्थायी रूप से थैली लगा दी और CMG Test 26 ता. सोमवार तक के लिए स्थगित कर दिया। गुरुदेव वापिस कोठी तक लौट आए।

23 ता. की रात को पेशाब की थैली में पेशाब आना बन्द हो गया। गर्मी काफी थी। सोचा गया कि गर्मी के कारण से नहीं आया होगा। उस दिन भी हास्पिटल में Nerve Conduction Test हुआ। 24 ता. को प्रातः सूर्योदय पर गुरुदेव कोठी के आंगण में श्री आदीश मुनि जी के साथ टहल रहे थे कि जोरदार चक्कर आना शुरू हो गया। उनको पट्टे पर लिटाया गया। शरीर में पसीना आया तथा कुछ उल्टी हुई। Vertigo का मामला समझा गया। गुरुदेव भारी बैचेनी में थे। सन्तों से कहा कि 'मुझे संथारा करवा दो'। पर सन्तों को ऐसा कोई लक्षण दिखाई नहीं दिया कि गुरुदेव की स्थिति गम्भीर है। सन्तों ने निवेदन किया कि तबीयत संभल जाएगी, आप दवा ले लो। गुरुदेव ने फिर कहा कि 'यदि संथारा नहीं करवाते, तो व्रत ही करवा दो'। सब सन्त उस विषय में भी लाचार ही थे। क्योंकि हस्पताल के निकट आए हुए थे। दवा चालू थी। यदि शरीर में कुछ जाएगा ही नहीं, तो तबियत और अधिक खराब ही होगी, सबका ऐसा चिन्तन बना। प्रातः 10 बजे शरीर में और घबराहट हुई। रक्तचाप नीचे गिरकर 60/40 तक आ गया। डॉ. जी.बी. जैन ने तुरन्त संभाला। कोठी में ही ग्लूकोज लगा दिया। सब ठीक हो गया। दोपहर बाद केन्द्रीय कृषि-मन्त्री श्री सोमपाल जी शास्त्री अपने प्रिय मित्र श्री नन्द किशोर जी जैन के साथ दर्शन करने आए। शास्त्री जी गुरुदेव के पराने शिष्य एवं अनुरागी रहे हैं। वे आधा घंटा रहे, पर तबीयत ठीक न होने के कारण गुरुदेव उनसे अधिक बात नहीं कर पाए। तभी गुरुदेव को वमन हुआ। मंत्री जी आदि उठकर बाहर चले गए। उल्टी के बाद कुछ चौन पड़ी। ग्लूकोज उतार दिया गया। मुजफ्फर नगर से बहन चंचल जी परिवार सहित गुरु-चरणों में बैठी रही। गुरुदेव उनका बहुत आदर करते थे। भाव-विभोर होकर बातें करते रहे। ये भी कह दिया कि 'तपस्विनी बहन! अपने तपोबल से मुझे ऐसा आशीर्वाद दो कि मेरी आज की रात आराम से निकल जाए'।

शाम को गुरुदेव का आसन बाहर छज्जे में किया गया। जब उन्हें बाहर लाया जा रहा था, तो फिर चक्कर आया। मुनियों ने उन्हें बाहों में भरकर पट्टे पर लिटाया। सब सन्त चिंतित हुए। रात-भर बारी-बारी से जागने की व्यवस्था बनाई।

24 ता. की रात गुरुदेव ने बैचेनी में ही काटी, लेकिन किसी से कुछ नहीं कहा। मुनिराज यही समझते रहे कि ठीक हो रहे हैं। 25 ता. प्रातः थोड़ा-सा दूध लिया। गर्मी बढ़ रही थी। रविवार था। सन्तों को प्रवचन के लिए भेज दिया। आगंतुकों की भीड़ बढ़ रही थी। कमरे में घुटन थी। गत शाम से ही साँस लेने में दिक्कत आ रही थी। दर्शनार्थियों के लिए निवेदन किया गया कि दूर से ही दर्शन कर लें। आज गुरुदेव ने कुछ नहीं कहा कि दूर से करने दो या पास से। 24 ता. से ही चेहरे पर सोजिश थी तथा दाई बाजू में भी कुछ दर्द था। डॉ. जी.बी. जैन ने अपनी आशंका को दूर करने के लिए ई.सी.जी. की रिपोर्ट नार्मल थी।

गुरुदेव ने श्री राधेश्याम जी को कहा कि 'मुझे 26 ता. को सीएमजी टैस्ट नहीं कराना। मुझे सोमवार को सुबह-सुबह शालीमार ले जाना'। उनकी आज्ञा में सब सन्तों ने स्वीकृति में सिर हिला दिया। साँस की समस्या बढ़ती गई। गुरुदेव ने मुझे कहा कि मेरे गुरु भाई श्री रामप्रसाद जी म. को मेरी तबीयत के बारे में समाचार लिख दो। मैने उत्तर दिया कि 'मौखिक खबर भिजवा दी है, कोई जाने वाला मिलेगा तो पत्र भी लिख देंग'। 11 बजे के लगभग डॉ. जे.के. जैन आए। उन्होंने कोठी में गर्मी की अधिकता को देखते हुए गुरुदेव को हस्पताल ले जाने पर जोर दिया। डॉ. जी.बी. जैन भी इसी विचार के थे। सब की राय बन जाने पर गुरुदेव ने भी सहमति दे दी। शरीर में बैठने की हिम्मत नहीं थी, अतः डोली की बजाय स्ट्रैचर पर लगभग 12 बजे हस्पताल ले गए।

अस्पताल जाते ही विभिन्न उपचार शुरू हो गए। गुरुदेव को आक्सीजन लगा दी गई। एक डाक्टर ने टैस्टिंग के लिए भीतरी (Artery) धमनी से रक्त लेना शुरू किया। जीवन में प्रथम बार इस तरह खून लिया

जा रहा था। वह बार-बार सुई घुसाता, बार-बार निकालता। बड़ी कष्टकारी प्रक्रिया थी, लेकिन गुरुदेव ने उफ तक नहीं की। चेहरे पर भी शिकन तक नहीं आने दी। हाथ से कुछ खून बाहर भी बहा। कपड़े भी खराब हो गए, पर गुरुदेव शान्त थे। कुछ देर बाद गुरुदेव को एक बड़े कमरे 135 नं. में ले जाया गया। वह डुपलैक्स था। एक में ही दो कमरों की सविधा थी। ग्लकोज। आक्सीजन आदि लगने से जनता में घबराहट थी, पर डाक्टरों ने स्पष्ट कर दिया कि चिन्ता की कोई बात नहीं है। तीन चार घंटे में पूरा आराम हो जाएगा। दो दिन से पेशाब नहीं आ रहा था। Lasix का टीका देने से खुलकर पेशाब आ गया। मन का बोझ कम हुआ। सुश्रावक बाबू केसर दास जी काफी देर तक गुरुदेव के पास बैठे रहे। गुरुदेव के चेहरे पर और हृदय में गहरी शान्ति छाई हुई थी। बस साँस लेने में ही तकलीफ महसूस कर रहे थे। उसके लिए उनको नैबुलाइजर लगाया, तो काफी राहत महसूस हुई। श्री रामचन्द्र जी जैन के सुपुत्र श्री विजय जैन इस कार्य में काफी सहायता कर रहे थे। श्री उग्रसैन जी (अशोक विहार) के सुपुत्र चिरं. प्रमोद से भी गुरुदेव उस दिन काफी देर वार्तालाप करते रहे। काफी समय से वे गुरुदेव की चिकित्सा-व्यवस्था से जुड़े हुए थे। गुरुदेव की आहार की इच्छा नहीं थी, हल्का-सा पेय लिया। गुरुदेव ने अब फिर श्री रामप्रसाद जी म. को स्वास्थ्य के सम्बन्ध में पत्र लिखने को कहा। मुनियों ने वही पूर्ववत् उत्तर दिया। गुरुदेव संतुष्ट हो गए। पास गुरुदेव ने मुनियों से कहा कि आज रात यहाँ कमरे में आदीश मुनि को मत सुलाना। यदि ये रात भर जागेगा, तो इसको सिर में तकलीफ हो सकती है। इसे मकान पर ही सुलाना। कुछ सन्तों ने रात को अस्पताल में रहने का विचार बनाया और रात को गुरुदेव की सेवा में दो-दो घण्टे जागने की व्यवस्था बनाई।

गुरुदेव को साँस लेने में परेशानी हो रही थी। उल्टी आई, पर चौन नहीं पड़ी। गर्मी महसूस हो रही थी। डॉ. जे.के. जैन आए। उपचार से सन्तुष्ट थे। रविवार होने से उस दिन हस्पताल का कोई बड़ा डॉक्टर नहीं था। एक जूनियर डॉ. मनीष वैश्य व्यवस्था संभाल रहा था। सन्त आ जा

रहे थे। कोई भी अनिष्ट के प्रति आशंकित नहीं था। शाम 5.45 के करीब श्री राकेश मुनि जी गुरुदेव के लिए 100 ग्राम के लगभग दूध लेने गए कि गुरुदेव ले लेंगे तो ठीक है, वर्ना और कोई सन्त ले लेंगे। गुरुदेव ने कह दिया था कि सूर्यास्त से पहले ही ग्लूकोज तथा आक्सीजन सब हटा लिए जाएँ। डाक्टरों ने तथा सन्तों ने आज्ञा स्वीकार की। एक डाक्टर ने रात को एक इंजैक्शन लगाने की आज्ञा मांगी, पर उसे भी स्पष्ट इंकार कर दिया। गुरुदेव को आशंका थी कि मुझे कहीं दमा तो नहीं हो जाएगा, पर डाक्टर ने ऐसी किसी सम्भावना को साफ नकार दिया।

गुरुदेव शांत भाव से लेटे थे। साँस में बेचौनी थी। विजय से कहकर नैबूलाइजर लगवाया। 6.00 बज चुके थे। शाम की कार्रवाई पूरी करने के लिए डॉ. मनीष आया। उसने आते ही नैबूलाइजर हटा दिया। कुछ हल्की-फुल्की बातें की। आक्सीजन लगाई, पर थोड़ी देर बाद उतार दी। सन्तों से कहा कि इन्हें बैठाओ तथा खाँसी कराओ, ताकि साँस की नली में कहीं बलगम जमा हो, तो निकल जाए। दोनों तरफ से श्री आदीश मुनि जी एवं मैंने गुरुदेव को सहारा देकर बैठाया और कहा 'गुरुदेव! खाँसो!' पर गुरुदेव नहीं खाँसे। आवाज सुननी बंद हो गई, गर्दन थोड़ी लटक गई। उस समय 6.15 बजे थे। हम दोनों को कुछ समझ नहीं आया। डॉक्टर ने गुरुदेव को फिर पलंग पर लेटाया। शोर मचाया कि 'ये लाओ, वो लाओ'। छाती को दबाने लगे। उसी समय डॉ. नागेश जैन एवं डॉ. बी.सी. बंसल भी आ गए। चारों तरफ शोर मच गया। जीवन-रक्षक उपचारों के लिए भाग-दौड़ होने लगी। सन्तों के पूछने पर डॉ. नागेश ने बताया कि 'गुरुदेव जा चुके हैं। इनके बचने की अब कोई आशा नहीं है'। डॉ. सौगानी की प्रतीक्षा की गई। चारों ओर मातम छा गया। कोठी से भी बाकी सन्त पहुँच गए। सब का सब कुछ लुट गया था। सन्तों ने असीम धैर्य का सहारा लेते हुए गुरुदेव के वस्त्र बदले। चार लोगस्स का ध्यान किया। शरीर से ममता का बन्धन हटाया। उसे वोसिरा कर शालीमार बाग श्री संघ को सौंप दिया। श्री संघ के प्रधान ला. रतन लाल

जैन, महामंत्री शान्ति कुमार जैन, समाज नेता किशोरी लाल जैन, सुरेश जैन आदि को कुछ आवश्यक निर्देश दिएः—

1. एक रात्रि से अधिक शरीर को न रखा जाए।
2. अंतिम यात्रा में विमान पर सिक्कों की बौछार न की जाए।
3. हैलीकॉप्टर से पुष्प-वृष्टि न कराई जाए।
4. गुरुदेव के फोटो न बाँटे जाएँ।
5. गुरुदेव के नाम से कोई संस्था या समाधि आदि न स्थापित की जाए।

साढ़े सात बजे के लगभग सभी नौ सन्त हास्पिटल से अपना सामान समेट कर, भरे दिल से, भरी आँखों से, अंधेरी गैलरियों और अंधेरी सड़कों को पार करते हुए कोठी में लौट आए। सबने प्रतिक्रमण किया। महाप्रलय हो चुका था। द्रव्य और भाव दोनों सूर्य अस्त हो गए थे।

दिल्ली में गुरुदेव की सेवा में कुल नौ सन्त थे—श्री जयमुनि जी, राकेश मुनि जी, सत्यप्रकाश मुनि जी, राजेश मुनि जी, आदीश मुनि जी, मनोज मुनि जी, रोहित मुनि जी, विशाल मुनि जी और विकास मुनि जी। कैसा अजब संयोग था कि गुरुदेव के सब वरिष्ठ शिष्य उस समय गुरुदेव के पास में नहीं थे। दृढ़ संयमी श्री प्रकाश मुनि जी म. ठाणे 3 कांधला में, महाप्रभावी शास्त्री श्री पद्मचन्द्र जी म., पंडित रत्न श्री विनय मुनि जी म. ठाणे 4 राजाखेड़ी में, शान्त-मूर्ति श्री शांतिचन्द्र जी म. ठाणे 6 सफीदों में और मनोहर व्याख्यानी श्री नरेश मुनि जी म. ठाणे 4 रोड़ी में विराजमान थे। दूर बैठे सब शिष्यों के मन भी, वचन भी और आत्मा भी बिलख रहे थे। जैसे अंतिम समय में गौतम जी प्रभु महावीर से वियुक्त होकर विषाद-भाव को प्राप्त हुए थे, कुछ वैसी ही दशा सब संतों की थी। गुरुदेव के गुरुभ्राता पूज्यपाद सरलात्मा सेठ श्री प्रकाश चन्द जी म., आगम-ज्ञान-रत्नाकर पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. ठाणे 8 टोहाणा में विराजमान थे।

6.15 बजे गुरुदेव ने अंतिम साँस ली। 6.30 बजे से ये समाचार जंगल की आग की तरह सर्वत्र फैलने लगा। हजारों स्थानों से परस्पर फोन खड़कने लगे। एकदम तो किसी को भी इस घटना पर विश्वास नहीं हुआ। लोगों के दिल धड़कने लगे, हाथ काँपने लगे, सिर चकराने लगे और आँखों से अविरल आँसू बहने लगे। उत्तर भारत के प्रायः सभी जैन श्री संघों ने व्यक्तिगत या सामूहिक, बड़े या छोटे समूहों में गुरुदेव के अंतिम दर्शन के लिए प्रस्थान कर दिया।

जब हास्पिटल से सभी नौ संत कोठी पर आए, तो वहाँ भी सैंकड़ों लोग एकत्रित हो गए। वातावरण में घोर नीरवता थी। बस बीच-बीच में लोगों के फूट-फूट कर रोने की आवाजें सुनाई दे रही थी। सब लोग मुनिराजों को सांत्वना देने की कोशिश में थे, किन्तु न तो मुनियों के पास पहुँचने का हौंसला होता था, न कुछ कहने-सुनने का। नौ बजे के लगभग शालीमार बाग श्रीसंघ के कार्यकर्ता हास्पिटल से कुछ आवश्यक कागजी कार्रवाई पूरी करके गुरुदेव के पार्थिव शरीर को लेकर कोठी के बाहर आए। श्री किशोरी लाल जी ने एक जोरदार आवाज लगाई, 'हम गुरुदेव के शरीर को शालीमार बाग लेकर जा रहे हैं'। ये आवाज सुनकर सारी भीड़ उधर भागी। वहाँ से श्रावक-गण शरीर को शालीमार बाग लाए। सब लोग रो रहे थे कि हमारा दावा था कि गुरुदेव को यहाँ से ठीक करके भेजेंगे, पर ये तो प्रलय ही हो गया। 10 बजे गुरुदेव का शरीर आम जनता के दर्शनार्थ शालीमार बाग के स्थानक हाल में रख दिया गया। समाचार मिलते ही हजारों नर-नारियों की भीड़ दर्शन करने उमड़ पड़ी। रात 2.30 बजे तक लाइन नहीं टूटी। प्रातः 4.00 बजे फिर वही गुरु-भक्तों की अंतहीन पंक्ति दर्शनार्थ शुरू हो गई।

उधर कोठी में सब सन्त उदास बैठे थे। भले ही आँखों का पानी थम गया था, पर दिलों में आँसुओं का दरिया बह रहा था। उस रात को प्रायः सभी सन्त जागते रहे। कोई थोड़ी देर लेट भी गया, तो फिर शीघ्र उठ खड़ा हुआ। प्रातः काल उठकर सबने प्रतिक्रमण किया। सूर्योदय हुआ। सब संत सामान बांधकर चल पड़े। दिल भी भारी थे, पैर भी भारी थे।

रास्ते में स्थान-स्थान पर श्रद्धालु मिलते गए, भीड़ बढ़ती गई। प्रेमबाड़ी पुल उतरने तक एक हजार आदमी हो गया। जब शालीमार बाग की सीमा में प्रवेश किया, तो बड़ा कारुणिक, हृदय-विदारक दृश्य था। सब लोग फूट-फूट कर रो रहे थे। उस भावुक वातावरण में मुनि लोग भी अपने आँसू नहीं रोक पाए। कदम स्थानक की तरफ बढ़े जा रहे थे और आँसू बाहर की ओर बहे जा रहे थे। स्थानक के नीचे दर्शनार्थियों की भारी भीड़ थी। हजारों लोग पंक्तिबद्ध आगे बढ़ रहे थे। आज वे गुरुदेव के अंतिम दर्शन करने को आतुर थे। मुनिराज भीड़ के बीचोंबीच आगे बढ़े। हाल मे चढ़े। गुरुदेव के शरीर के पास न जाकर सीधे चौथी मंजिल पर बरसाती में चढ़ गए। अब उनके लिए हाल में रह ही क्या गया था? बरसाती में श्री संघ के प्रमुखों को बुलाकर कुछ दिशा-निर्देश दिए। फिर सभी संत गैलरी में आकर एक कोने में बैठ गए। उस समय दिल्ली के भिन्न-भिन्न स्थानों से 8-10 साधु और 50 के लगभग सतियाँ वहाँ पधारे।

हाल में दर्शनार्थियों की पंक्तियाँ तेजी से आगे बढ़ रही थी। बीच-बीच में 'जब तक सूरज-चाँद रहेगा, गुरुवर तेरा नाम रहेगा,' 'माँ सुन्दरी के लाल की, जय सुदर्शन लाल की,' 'आगे आगे बढ़ते जाओ, जय गुरुवर की कहते जाओ' आदि नारे गगन-मण्डल को भी और लोगों के दिलों को भी चीर रहे थे। प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार 50 हजार से ऊपर लोगों ने उस समय गुरुदेव के पार्थिव शरीर के दर्शन किए। कई क्विंटल गोले शरीर पर डाले गए। एक हजार के लगभग चादर व दोशाले शरीर के ऊपर ओढ़ाए गए या शरीर-स्पर्श करा के लोग अपने साथ ले गए।

दर्शनों का क्रम जब चल ही रहा था, तभी एक और हृदय-विदारक समाचार मिला कि मुम्बई में श्रमण-संघ के तृतीय पट्टधर आचार्य-प्रवर श्री देवेन्द्र मुनि जी म. का देवलोक-गमन हो गया। सब को हार्दिक दुःख हुआ। मुनिराजों एवं सतियों ने चार चार लोगस्स का ध्यान करके दिवगंत आत्मा के प्रति श्रद्धाजंलि अर्पित की। गुरुदेव का एवं आचार्य श्री जी का कई अर्थों में— आयु में, दीक्षा-पर्याय में अनुभाव-प्रभाव में एवं प्राणांत के कारण में अनेक-विध साम्य था।

एक बजे के लगभग गुरुदेव का शरीर हाल से नीचे उतार कर, नीचे खड़े ट्रक के ऊपर विमान में रखा गया। गुरुदेव के सांसारिक परिवार के सदस्यों को श्रीसंघ ने विशेष कार्ड प्रदान कर विमान के साथ बैठने की सुविधा प्रदान की। कई हजार की जनमेदिनी साथ थी। भयंकर गर्मी थी। तो भी कई लोग नंगे पैर साथ-साथ चल रहे थे। शालीमार से प्रेम बाड़ी पुल, अशोक विहार, त्रीनगर, शास्त्री नगर, आनन्द पर्वत पुल, न्यू रोहतक रोड़, लिबर्टी, फिल्मिस्तान, पहाड़ी धीरज, चाँदनी चौंक होता हुआ विमान सायं 6.00 बजे के लगभग अपनी अंतिम मंजिल—'निगम बोध घाट' पर पहुँचा। अन्तिम यात्रा के सारे रास्ते में विभिन्न श्री संघों, संस्थाओं, गुरुभक्तों ने स्वप्रेरणा से ही खाद्य एवं पेय पदार्थों का वितरण किया। निगम बोध पर एक लाख से ऊपर की श्रद्धालु-संख्या थी। चारों ओर की सड़कें कारों, बसों एवं अन्य वाहनों के कारण जाम हो गई थी। केन्द्रीय कृषिमंत्री श्री सोमपाल जी शास्त्री को संस्कार-स्थल तक पहुँचने में एक घंटे से ऊपर तक मशक्कत करनी पड़ी। कई पुलिस वालों के अनसार निगम-बोध पर इतनी भारी भीड किसी भी संस्कार में आज से पहले नहीं हुई थी। उस अथाह भीड़ में कोई आँख ऐसी नहीं थी, जो आँसू न बहा रही हो और कोई दिल ऐसा नहीं था, जो फूट-फूट कर न रो रहा हो।

जब गुरुदेव के पार्थिव शरीर को विमान से उतार कर संस्कार-स्थल पर ले जाने लगे, तो कितने ही मोह-ग्रस्त लोगों ने भगदड़ मचानी शुरू कर दी। वे विमान के पुर्जे-पुर्जे को तोड़कर ले जाना चाहते थे। पर शुक्र ये रहा कि गुरुदेव के शरीर को, उनके वस्त्रों को तथा उन पर ओढ़ाए गए तीन दुशालों (शालीमार बाग, रोहिणी एवं गुरु-परिवार द्वारा समर्पित) को कोई आँच नहीं आई। इस दृश्य को देखकर (सुनकर) लगा कि अभी जैन समाज ने अपने गुरु-भगवन्तों की दृष्टि को सही पहचाना नहीं है तथा अभी समाज को रूढ़िवादिता, अन्ध श्रद्धा और अज्ञानांधकार से निकलने में काफी समय लग जाएगा। सूर्यास्त से पहले ही चिता तैयार हो गई। गुरुदेव के संसारपक्षीय लघुभ्राता सेठ प्रकाश चन्द्र जैन ने चिता को मुखाग्नि

दी। भीड़ धीरे-धीरे अपने-अपने गंतव्यों पर चली गई। बाद में शालीमार बाग श्रीसंघ के तत्वावधान में पुष्प-चयन आदि कार्य सम्पन्न हुए।

29 अप्रैल को शालीमार बाग में गुरुदेव की स्मृति में विशाल श्रद्धांजलि सभा रखी गई। वाणी-भूषण श्री अमर मुनि जी आदि संत, बहुत-सी साध्वियाँ एवं हजारों भाई-बहनों की उपस्थिति थी। सैंकड़ों संस्थाओं ने अपने श्रद्धांजलि-पत्र श्रीसंघ के महामंत्री को सौंपे। गुरुदेव के प्रायः सभी सन्तों ने भी अपने विचार रखे।

30 ता. को ही गुरुदेव के सभी नौ सन्तों ने शालीमार बाग से विहार कर दिया। 2 मई रविवार को सोनीपत पहुँचे। वहाँ गुरुदेव के ज्येष्ठ-श्रेष्ठ सुशिष्य तपस्वीराज श्री प्रकाश चन्द जी म., महाप्रभावी शास्त्री श्री पद्मचन्द्र जी म. आदि सन्तों से अश्रुपूरित मिलन हुआ। जैन मंदिर के विशाल हाल में श्रद्धांजलि कार्यक्रम रखा गया। दो दिन बाद सब सन्तों ने गोहाना के लिए प्रस्थान किया। वहाँ पर शान्त-मूर्ति श्री शांति मुनि जी म., श्री राजेन्द्र मुनि जी म. आदि से बड़ा भावुकता-पूर्ण मिलन हुआ। कुल 22 मुनिराज इकट्ठे हुए। 9 मई रविवार को पुनः समस्त उत्तरी भारत की ओर से विशाल श्रद्धांजलि सभा हुई। श्रद्धेय श्री शास्त्री जी म. ने, श्री राकेश मुनि जी से प्राप्त, गुरुदेव का हस्त-लिखित पत्र पढ़ कर सुनाया, जिसमें लिखा है कि गुरुदेव ने अपने आज्ञानुवर्ती सभी 26 सन्तों के लिए व्यवस्था-पत्र बनाकर चिरं. आदीश मुनि के पास रख दिया है, जब सभी 26 सन्त एकत्रित हो जाएँ, तब उसे खोला जाए। चूँकि गोहाना में केवल 22 मुनिराज ही थे, श्रद्धेय श्री नरेश मुनि जी म. ठाणे 4 सिरसा की तरफ विराजित थे, इसलिए उसे खोला नहीं गया। चातुर्मास के उपरान्त सम्भावित 26 सन्तों के महासम्मेलन तक उसका उद्घाटन स्थगित कर दिया गया। तब तक अंतरिम व्यवस्था के रूप में गुरुदेव के ज्येष्ठ शिष्य तपस्वीराज श्री प्रकाश मुनि जी म. को संघ-प्रमुख स्वीकार किया गया। उन्होंने अपने मुखारविन्द से गुरुदेव के द्वारा कैथल में 28 फरवरी को फरमाए गए 6 चातुर्मासों पर उसी रूप में स्वीकृति की घोषणा फरमाई। गुरुदेव के गगन-भेदी जयकारों के साथ श्रद्धांजलि-सभा संपन्न हुई। गोहाना में ही

शालीमार बाग श्रीसंघ मुनि-चरणों में आया और गुरुदेव के देवलोक-गमन के पश्चात् उनके तीन पार्थिव अवशेषों-भस्म, दुशाले एवं डोली के विषय में मार्गदर्शन चाहा। श्री प्रकाश मुनि जी म. आदि वरिष्ठ सन्तों ने गुरुदेव की भावना एवं अपनी मुनि-परम्परा के आदर्शों के अनुरूप ही इन तीनों का निर्दोष, निरवद्य समाधान करते हुए फरमाया कि 1. भस्म को यमुना की सूखी रेत में उंडेल दिया जाए। 2. दुशालों को निर्धनों में वितरित कर दिया जाए तथा 3. डोली को भंग कर दिया जाए। मुनिराज नहीं चाहते थे कि गुरुदेव के पश्चात् उनके कुछ स्मृति-चिह्नों को लेकर समाज में जड़-पूजा प्रारम्भ हो। इस समाधान से सभी समाहित हुए। कुछ दिन ठहर कर सब मुनिराजों ने अपने-अपने चातुर्मास-स्थलों के लिए विहार कर दिया। 1999 के समग्र चातुर्मास सफलतापूर्वक सम्पन्न हुए।

पूज्य गुरुदेव की यादों में भीगा जन-मानस उस पत्र के उद्घाटन की प्रतीक्षा करता रहा, जो गुरुदेव जी म. आगामी व्यवस्था के सम्बन्ध में लिखकर गए थे। मुनियों ने उस कार्य के संपादनार्थ जीन्द को चुना। 10 फरवरी को 26 सदस्यीय मुनिमण्डल एकत्र हुआ। 13 फरवरी 2000 के रविवार को पत्र जनता की सेवा में प्रस्तुत करना था, अतः मुनियों ने 10 ता. को वह पत्र खोला, जिसकी शब्दावली हैः–

श्री गुरवे नमः **श्री वीतरागाय नमः**

"उत्तराधिकारी का चयन"

मेरी निश्राय में 27 मुनिराज आज्ञानुवर्ती हैं। 27 मुनिराजों में अनेक मुनिराज इस पद के पूर्णतया योग्य व समर्थ हैं, पर श्री राजेन्द्र मुनि जी को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करता हूँ। सब मुनिराज मेरे इस चयन को पूरे मनोयोग से स्वीकार करेंगे। इससे वरिष्ठ जो मुनिराज हैं, वो सब इसे पूरा प्यार व मार्गदर्शन देते रहेंगे। कनिष्ठ मुनिराज पूर्ण विनय करेंगे और सब मुनिराज इसकी आज्ञा में विचरेंगे।

विशेष कोई कारण उपस्थित हो तो श्री राजेन्द्र मुनि नीचे लिखी समिति से परामर्श लेकर अपना निर्णय देंगें–

वरिष्ठ समितिः–1. श्री प्रकाश चन्द्र जी महाराज 2. श्री शास्त्री पद्‌म चन्द जी म. 3. श्री शान्ति मुनि जी म. 4. श्री विनय मुनि जी म. 5. श्री जय मुनि जी म. 6. श्री नरेश मुनि जी म.

ये सभी मुनिराज संघशास्ता के कार्य में पूरा मार्ग-दर्शन देते रहेंगे। 1. विशेष प्रसंग पर सर्व-सम्मत राय देकर संघशास्ता के कार्य को सहज बनाएंगे। 2. जो सिंघाड़ा मुनियों का विचरे, यदि उसके संयोग से कोई वैरागी बन गया, परिपक्व होने पर उसे दीक्षा दी जाए। उस समय संघशास्ता जी उस मुनि का साधु बना दें। पहले वैरागी से पूछ लिया जाए कि किस मुनिरौज के शिष्य बनेंगे, उसके कथनानुसार ही वैरागी उस मुनि को सौंप दिया जाए। 3. एक घंटा प्रतिदिन मौन किया जाए।

गुरुदेव जी म. के प्रत्येक शब्द पर श्रद्धा-सुमन समर्पित करते हुए सब मुनियों ने उस पत्र को मान्य किया। (श्री मनोज मुनि जी तथा विशाल मुनि जी इस समूची प्रक्रिया से असंबद्ध रहे।)

जब सब मुनियों ने श्री राजेन्द्र मुनिजी को वह अधिकार-पत्र सौंपा तो उन्होंने अपनी अनिच्छा प्रकट कर दी। उन्हें अत्यधिक आग्रह, विनय एवं आत्मीयता के साथ गुर्वाज्ञा शिरोधार्य करने के लिए कहा गया, पर वे टस से मस नहीं हुए। फिर भी उन्हें एक दिन और सोचने के लिए निवदेन किया गया। उस रात श्री राजेन्द्र मुनि जी म. को सब मुनियों ने उचित परामर्श दिए। उन्होंने भी ध्यानस्थ होकर गहन चिंतन-मनन किया। 11 ता. को फिर मुनिमंडल बैठा और उनका निर्णय पूछा। वे अपने पूर्व निर्णय पर ही अटल रहे। ऐसे में मुनिमण्डल असमंजस की स्थिति में आ गया। फिर गहन विचार-चर्चा हुई। अन्ततः श्री राजेन्द्र मुनि जी म. ने गुरुदेव के पत्र को लेकर श्री प्रकाश मुनि जी म. के चरणों में भेंट कर दिया। उन्होंने मुनिमण्डल की सहमति से ये निर्णय दिया कि मैं यह अधिकार शास्त्री श्री पद्‌म चन्द्र जी म. को सौंपता हूँ।

13 ता. को 15-20 हजार की उत्सुक जनता के मध्य सारी प्रक्रिया को समझाते हुए गुरुदेव जी म. के मुनियों के बनी नई व्यवस्था बताई

गई। जनता का अधिकांश वर्ग तो यही चाहता था कि गुरुदेव के लिखित वक्तव्य का ही पालन हो, पर मूल पात्र की ही असहमति होने के कारण कोई अन्य विकल्प शेष नहीं रह गया था, अतः इस निर्णय पर भी समग्र जनता ने अपनी श्रद्धान्वित स्वीकृति की मोहर लगाई। चूँकि 'संघशास्ता' विशेषण पूज्य गुरुदेव जी म. के साथ अविभाज्य रूप से जुड़ चुका था, अतः उनके उत्तराधिकारी के लिए 'संघनायक' विशेषण लगाया गया। आचार्य-परम्परा का प्रचलन न होने से इसी तरह के विशेषण ही उपयुक्त माने जाते हैं।

मुनिमंडल ने श्रद्धेय श्री प्रकाश मुनि जी म. के गौरव एवं उच्च जीवन की महत्ता को रेखांकित करते हुए उन्हें 'महास्थविर' तथा 'तपस्वी राज' इन दो विशेषणों से मंडित करने का मन बनाया। श्रद्धेय श्री शान्ति मुनि जी म. को शान्तमूर्ति विशेषण से नवाजा गया। गुरुदेव जी म. द्वारा निर्दिष्ट समिति तो वही रही, बस श्री शास्त्री जी म. की जगह समिति में श्री राजेन्द्र मुनि जी म. को सम्मिलित कर लिया गया।

पूज्य गुरुदेव जी म. के शरणे से उनका मुनिमण्डल आज भी अपनी मर्यादाओं का निर्वाह करते हुए गुरुदेव जी म. की गरिमा एवं महिमा को अक्षुण्ण बनाए हुए है। अन्त में:—

उद्यन्त्वमूनि सुबहूनि महामहांसि,
चन्द्रोप्यलं भुवन-मण्डल-मण्डनाय।
सूर्यादृते न तदुदेति न चास्तमेति,
येनोदितेन दिनमस्तमितेन रात्रिः ॥

अर्थात् गगन-मण्डल में कितने ही तेजस्वी नक्षत्र और तारागण उदित हो जाएँ, चन्द्रमा भी भले ही सारे विश्व में रोशनी भर दे, परन्तु सूर्य के अलावा किसी और के उदय व अस्त का कोई महत्त्व नहीं है। सूर्य के उदय होने पर ही दिन होता है और सूर्य के अस्त होते ही रात्रि हो जाती है।

पूज्य गुरुदेव के चातुर्मासों की सूची

दीक्षा : 18 जनवरी 1942, संगरूर शहर

क्रम	सन्	स्थान
1	1942	सढ़ौरा
2	1943	चांदनी चौक, दिल्ली
3	1944	बड़ौत
4	1945	हांसी
5	1946	अहमदगढ़
6	1947	मूनक
7	1948	सुनाम
8	1949	जीन्द
9	1950	चांदनी चौंक, दिल्ली
10	1951	पुरानी सब्जी मण्डी, दिल्ली
11-17	1952-58	चांदनी चौक, दिल्ली
18	1959	बड़ौत
19	1960	रोहतक
20	1961	अमृतसर
21	1962	होशियारपुर
22	1963	अमृतसर
23	1964	सोनीपत
24	1965	रोहतक
25	1966	मूनक-जाखल
26	1967	भटिण्डा
27	1968	जयपुर

क्रम	सन्	स्थान
28	1969	अलवर
29	1970	चांदनी चौक, दिल्ली
30	1971	बड़ौत
31	1972	जीन्द
32	1973	गन्नौर
33	1974	रोहतक
34	1975	होशियारपुर
35	1976	जालन्धर
36	1977	फरीदकोट
37	1978	समालखा
38	1979	रोहतक
39	1980	सफीदों
40	1981	गोहाना
41	1982	जीन्द
42	1983	बरनाला
43	1984	सोनीपत
44	1985	रोहतक
45	1986	सिरसा
46	1987	गोहाना
47	1988	गन्नौर
48	1989	कान्धला
49	1990	नरवाणा
50	1991	सोनीपत
51	1992	शालीमार बाग, दिल्ली

क्रम	सन्	स्थान
52	1993	त्रिनगर, दिल्ली
53	1994	बड़ौत
54	1995	सुन्दर नगर, लुधियाना
55	1996	सुनाम
56	1997	जीन्द
57	1998	अम्बाला

देवलोक-गमन – 25 अप्रैल,

1999 शालीमार बाग, दिल्ली

राज्यवार सूची– हरियाणा-23, पंजाब-14, दिल्ली-13 उत्तर-प्रदेश-5, राजस्थान-2

निश्राय			
1.	श्रद्धेय श्री बनवारी लाल जी म.	सन् 1947	कुल 1
2.	श्रद्धेय श्री अमींलाल जी म.	सन् 1949	कुल 1
3.	श्रद्धेय वाचस्पति गुरुदेव श्री मदन लाल जी म.	सन् 42, 43, 45	कुल 3
4.	श्रद्धेय योगीराज श्री राम जी लाल जी म.	सन् 1952	कुल 1
5.	श्रद्धेय भण्डारी श्री बलवन्तराय जी म.	सन् 53, 63, 85	कुल 4
6.	श्रद्धेय श्री मूलचन्द जी म.	सन् 1944	कुल 1
7.	श्रद्धेय स्वामी फूलचन्द जी म.	सन् 64-66, 68-70	कुल 6
8.	श्रद्धेय बाबा श्री जग्गूमल जी म.	सन् 46, 50, 51, 54-58	कुल 8
9.	श्रद्धेय श्री नेकचंद जी म.	सन् 48	कुल 1
10.	अपनी निश्राय में	सन् 59 से 62, 67, 71 से 84, 86 से 98	कुल 32

इतिहास के झरोखे से
पूज्य गुरुदेव की धर्म-वंश-परम्परा

— राकेश मुनि

विक्रम संवत् के प्रारम्भ से 470 पूर्व (ईसा से 527 वर्ष पूर्व) चौबीसवें तीर्थंकर श्रमण भगवान महावीर स्वामी का निर्वाण हुआ। उस समय चतुर्थ आरे-दुषम-सुषमा-काल की समाप्ति में 3 वर्ष 87 महीने शेष थे। वीर निर्वाण सं. 64 तक केवलि-काल रहा। आर्य जम्बू अन्तिम केवली थे। वीर 64 से 170 तक श्रुत-केवली-काल (14 पूर्वधारी) रहा। आर्य भद्र-बाहु अन्तिम श्रुत-केवली थे। वीर सं. 170 से 584 तक कुल 414 वर्ष का दश पूर्वधर काल रहा। ये समय आर्य स्थूलभद्र से प्रारम्भ होकर आर्य वज्र तक समाप्त होता है। तदनन्तर वीर सं. 584 से सं. 1000 तक सामान्य पूर्वधर काल रहा। इसके पश्चात् पूर्वो का विच्छेद हुआ। वीर सं. 980 से 993 तक 13 वर्षों में वलभी नगरी में आचार्य देवर्द्धि गणी क्षमा-श्रमण के नेतृत्व में 84 जैन आगमों का वाचनापूर्वक लेखन हुआ।

वीर निर्वाण 1000 से 2000 तक मुनि परम्परा की निर्मल गंगाधारा शिथिलाचार के पंक से दूषित हो गई। चौत्यवास का प्रचार बढने तथा विभिन्न राजाओं का आश्रय मिलने से अनगार मुनि भी मठधारी बन गए और अनेकविध यन्त्र, तन्त्र, मन्त्र, डोरे, ताबीजों में उलझकर सोने, चांदी, छत्र, चँवर, पालकी आदि की चकाचौंध में फँस गए। वीर नि. 2001 (वि. सं. 1531) में अहमदाबाद में धर्मप्राण लोंकाशाह ने भगवान् महावीर द्वारा प्ररूपित विशुद्ध धर्म का प्रचार किया। उन्होंने मूर्ति-पूजा, स्थापनाचार्य और पालकी आदि ग्रहण करने का प्रखर विरोध करके यति-वर्ग की जड़ों पर

प्रहार किया। थोड़े समय में ही उनके 400 शिष्य तथा लाखों अनुयायी हो गए। अहमदाबाद से दिल्ली तक उनके द्वारा प्ररूपित धर्म का डंका बजने लगा।

लोकाशाह ने जो धर्म-क्रान्ति की प्रचण्ड-ज्योति प्रज्वलित की, उनके निधन के 100 वर्ष बाद, उन जैसे प्रखर नेतृत्व के अभाव में, वह फिर मन्द पड़ने लगी। तब विक्रम की 17 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में स्थान-स्थान पर पाँच धर्म-सुधारक हुए। उन्होंने तत्कालीन मुनियों में आ रही शिथिलाचारी प्रवृत्तियों के विरुद्ध विद्रोह किया। स्वयं शास्त्रविहित मुनि-चर्या का पालन किया और करनी-कथनी में एकरूपता लाते हुए शास्त्रों का सच्चा ज्ञान समाज के समक्ष प्रस्तुत किया।

आज भारत वर्ष के स्थानकवासी समाज में 3600 साधु-सतियाँ है। उन सबका मूल ये 5 महापुरुष ही हैं। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार हैं—

1. **पूज्य श्री जीवराज जी म.**— इनका जन्म सं. 1638 में सूरत में हुआ। सं. 1654 में जगाजी यति के पास दीक्षा ली। आगम पढ़ने पर अन्तर्ज्ञान के नेत्र खुले। यति-जीवन से खिन्न होकर सं. 1666 में 5 साधुओं के साथ पुनः शुद्ध पंच-पहाव्रत की दीक्षा ली। इन्होंने समाज में 32 आगम, डोरा-सहित मुखवस्त्रिका की दृढ़तापूर्वक स्थापना की। सं. 1698 के आसपास आगरा में इनका देवलोकगमन हुआ। आधुनिक काल में श्री फूल चन्द जी 'पुप्फभिक्खू', (मुनि) सुशील कुमार, तपस्वी श्री रूपचन्द जी म. (जगरावां समाधि), उपाध्याय पुष्कर मुनि जी, आ. देवेन्द्र मुनि, कवि चन्दन मुनि 'पंजाबी तथा अनुयोग-प्रवर्तक कन्हैयालाल जी म. 'कमल' आदि इन की परम्परा में आते हैं।
2. **आचार्य धर्मसिंह जी म.**— इनका जन्म सौराष्ट्र प्रान्त के जामनगर शहर में सं. 1685 में हुआ। इन्होंने लोकाशाह की परम्परा में आई हुई कुरीतियों को दूर करके उसकी आन्तरिक स्थिति को सुदृढ़

किया। शिव जी यति के पास दीक्षा ली। थोड़े ही समय में 32 आगम, तर्क, व्याकरण तथा साहित्य पढे। गुरु के आडम्बर-पूर्ण जीवन से विरक्त होकर सं. 1701 में क्रियोद्धार किया। पूर्व परीक्षा के तौर पर दिल्ली दरवाजे के बाहर दरियाखान पीर की दरगाह में एक रात रहे। रातभर ध्यान, स्वाध्याय, कायोत्सर्ग में लीन रहकर उस पीर को प्रतिबोधित किया। इसीलिए इनकी संप्रदाय 'दरियापुरी' के नाम से जानी जाती है। प्रारम्भ से आज तक इसमें केवल एक ही पाट चलता रहा। सं. 1728 में मात्र 43 वर्ष की आयु में इनका निधन हो गया।

3. **आचार्य धर्मदास जी म.**– ये भावसार जाति के थे। अहमदाबाद के पास सरखेज ग्राम में सं. 1701 में जन्म हुआ। पहले 'एकल पात्रिया' पन्थ में दीक्षा ली, पर यतियों के शिथिलाचारी जीवन से क्षुब्ध होकर सं. 1716 में पुनः शुद्ध दीक्षा ली। सं. 1721 में उज्जैन में आचार्य बने। इनका प्रभाव बड़ा व्यापक था। कच्छ, काठियावाड़, सौराष्ट्र, बागड़, खानदेश, पंजाब, मेवाड़, मालवा, हाडौती। ढंढार आदि प्रान्तों में भ्रमण किया। आपके 99 शिष्य थे। सं. 1972 में आपने अपनी संप्रदाय को 22 टोलों में विभक्त किया। ये 22 टोले इतने प्रसिद्ध हुए कि सम्पूर्ण स्थानकवासी साधुओं के ही पर्याय बन गए, परन्तु जैसा कि इस लेख में स्पष्ट है, सम्पूर्ण स्थानकवासी साधु इन 22 टोलों में परिगणित नहीं हैं। अन्य चार महापुरुषों की शिष्य-परम्परा इन 22 टोलों से भिन्न है। 22 टोलों में 5 शिष्यों की आगे परम्परा चली। श्री मूलचन्द जी म. से गुजरात की अधिकांश सम्प्रदाएँ निकली। श्री धन्ना जी म. के पौत्र-शिष्य श्री रघुनाथ जी म. के शिष्य श्री भीषण जी स्वामी ने सं. 1817 में तेरापन्थ सम्प्रदाय की स्थापना की। आ. हस्तीमल जी म., तपस्वी श्री चम्पा लाल जी म., उपा. कवि अमर मुनि जी म. आदि की सम्प्रदाय इसी के अन्तर्गत आती हैं।

4. **पूज्य श्री हरजी ऋषि जी म.**– इनका पूरा परिचय प्राप्त नहीं है। इनकी सम्प्रदाय बाद में कोटा सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध हुई। उन दिनों इसमें 26 प्रखर पण्डित मुनिराज एवं एक पण्डिता साध्वी थी। वि.सं. 1785 में इन्होंने क्रियोद्धार किया। इनकी परम्परा में वर्तमान में खद्दरधारी श्री गणेशी लाल जी म. एवं आचार्य प्रवर श्री नानालाल जी म. आते हैं। एक मत के अनुसार श्री हरजी ऋषि लोकागच्छ की 'कुंवर जी गच्छ' शाखा में थे और धर्मसिंह जी म. के गुरु भाई थे। बाद में उनसे अलग होकर पूज्य लवजी ऋषि जी के शिष्य सोमजी ऋषि जी की आज्ञा में विचरने लगे।

5. **पूज्य श्री लवजी ऋषि जी**– ये भ. महावीर के 76 वें पाट पर विराजे। अपने माता-पिता की एकमात्र संतान थे। बचपन में ही इनके पिता का देहान्त हो गया था। अतः अपनी माँ फूला बाई के साथ सूरत में अपने नाना वीरजी वोरा के यहाँ रहते थे। उस युग में नाना वीरजी वोरा के पास 56 करोड़ रु. का धन था। खम्भात, सूरत और अहमदाबाद के शासकों पर वीरजी वोरा की धाक थी। उनको ये समय-2 पर ऋण देते थे। वीरजी स्वयं यति-भक्त थे। माता फलां बाई की उत्कट धर्मनिष्ठा का मंजीठिया रंग बालक लवजी पर भी चढा और उन्होंने सं. 1692 में वज्रांग यति के पास दीक्षा ले ली। आगमों का गहन अध्ययन किया। संयम के प्रति रुवि जगी। यतियों की शिथिलता और संग्रह-वृत्ति के प्रति क्षुब्ध हुए। सं. 1694 में यति-धर्म से पृथक् होकर शुद्ध दीक्षा ली। इससे यति-वर्ग में खलबली मच गई। वीरजी वोरा के माध्यम से खम्भात के नवाब को कहकर इनको कैद भी करवाया गया, पर ये अपनी दृढ़ आचार-निष्ठा के प्रभाव से मुक्त हो गए। धीरे-धीरे नाना वीरजी वोरा को भी प्रभावित करके अपना अनुयायी बनाया। यतियों ने षड्यन्त्र रचकर इनके एक शिष्य की हत्या कर दी तथा स्वयं इन्होंने भी उनके षड्यन्त्र

के तहत एक हलवाई की स्त्री द्वारा विषैले लड्डू खाने से प्राण दिए।

लवजी ऋषि के प्रधान शिष्य सोमजी ऋषि की शिष्य-परम्परा में से कुछ मुनि गुजरात, मालवा आदि में विचरे। आचार्य प्रवर आनन्दऋषि जी म. आदि इनकी इसी शाखा में आते हैं। सोमजी ऋषि के एक अन्य शिष्य श्री हरिदास जी ऋषि थे। ये पहले लाहौर में उत्तरार्ध लोकांगच्छ की गद्दी के अधिपति थे। किसी कार्यवशात् अहमदाबाद गए। सोमजी ऋषि के सम्पर्क से आत्मा संयम-मार्ग में स्थिर हो गई। संस्कृत, प्राकृत, फारसी पर इनका अधिकार था। इनकी असाधारण विदत्ता से प्रभावित होकर गुरु ने इनको पंजाब-विचरण की आज्ञा दी। इनका पुनः पंजाब-आगमन-काल सं. 1730 है। पंजाबवासियों ने आपकी प्रतिभा तथा योग्य शिष्य-परिवार को देखकर आप को अपना स्थायी अधिशास्ता मान लिया। आपके अधीन पंजाब का श्रमण-वर्ग संगठित होकर संघ का रूप ले पाया और आप उसके आद्य आचार्य बने। कई लोग आ. अमर सिंह जी को पंजाब का प्रथम आचार्य मानते हैं, जो ठीक नहीं है। आपके उत्तराधिकारी श्री वृन्दावन लाल ली म., फिर श्री भवानी दास जी म. हुए। उनके शिष्य पूज्य श्री मलूकचन्द जी म. बड़े प्रतापी आचार्य थे। दूर-दूर तक भ्रमण किया। एक बार उन्होंने आगरा की मस्जिद में 250 मुगलों को महपत्ती बांध कर सामायिक कराई थी। सं. 1840 इनका अन्तिम समय था। उनके पश्चात् क्रमशः श्री महासिंह जी म., श्री कुशाल सिंह जी म., श्री छजमल जी म. पाट पर विराजते रहे। श्री छजमलजी म. के देवलोक-गमन के पश्चात् पंजाब में कोई भी साधु शेष नही बचा था। तब महासाध्वी श्री ज्ञाना जी ने एक राजपूत रामलाल जी को ज्योतिर्विद्या से होनहार जानकर ज्ञानाभ्यास कराया और दीक्षा देकर श्री छजमल जी म. की नेश्राय का शिष्य घोषित किया। उनके सुशिष्य आचार्य-प्रवर श्री अमर सिंह जी म. हुए। ये लवजी ऋषि के 10 वें तथा भ. महावीर स्वामी के 86 वें पाट पर विराजे। अमृतसर में तातेड़ वंश में सं. 1862 में इनका जन्म हुआ। सं. 1898 में दीक्षा हुई। सं. 1913 में आचार्य बने तथा सं. 1938 में अमृतसर में स्वर्गवास हुआ।

आप हर चौमास में एक 'अठाई करते थे। 33 तक सजल व्रत भी किए। निर्विकृतिक अल्पाहार करते। आपकी णमोत्थुणं की विशिष्ट साधना का चमत्कार देखकर महासती पार्वती जी अपनी मूल सम्प्रदाय को छोड़कर आपकी सम्प्रदाय में शामिल हुई। आपके महाप्रभावी 12 शिष्य हुए। इनमें चतुर्थ शिष्य आचार्य रामबक्श जी म. की परम्परा में आज के 75% पंजाबी साधु-सती हैं। षष्ठ शिष्य आ. श्री मोतीराम जी म. की परम्परा में आचार्य-प्रवर श्री आत्माराम जी म. हुए।

आचार्य-प्रवर श्री राम बक्श जी म. का जन्म सं. 1883 में अलवर में हुआ। सं. 1908 में जयपुर में आचार्य-प्रवर श्री अमर सिंह जी म. के चरणों में सपत्नीक दीक्षा ग्रहण की। आ. श्री अमर सिंह जी म. के पश्चात् आप आचार्य बने, किन्तु मात्र 21 दिनों के बाद ही आपका देवलोक हो गया। आपके सुशिष्य तपस्वी श्री नीलोपत जी म. बड़े तपस्वी थे। सुनाम के लोढा गोत्रीय ओसवाल थे। ये हर चौमास में एक मास-खमण अवश्य करते थे। इनके सुशिष्य श्री हरनाम दास जी म. यशः-कीर्ति से सर्वथा दूर बड़े आत्मार्थी सन्त थे। इनका अधिक परिचय प्राप्त नहीं। ये रोपड़ निवासी गधैया गोत्री थे। इनके प्रधान शिष्य श्री मयाराम जी म. हुए, जो कि अपनी कठोर संयम-साधना से भारत-भर में प्रसिद्ध होकर 'संयम-सुमेरु' नाम से विख्यात हुए। आपका जीवन-वृत्त सूर्य व चन्द्र की भाँति जन-जन में ज्ञान-दर्शन-चारित्र का आलोक भरने वाला था। बड़ौदा ग्राम में सं. 1911 में जन्म हुआ। सं. 1934 में पटियाला में दीक्षा हुई और सं. 1969 में भिवानी देवलोक-गमन हुआ। आपके 7 सुशिष्यों की पावन परम्परा ने प्रभु वीर के धर्म-शासन की यशःपताका को दिग्दिगन्त में फहराया। आपके सुशिष्य गणावच्छेदक श्री छोटे लाल जी म. बड़े कड़क संयमी और दृढ़-अनुशास्ता थे। राजस्थान में भीलवाड़ा के पास सांगानेर में डांगी ओसवाल परिवार में आपका जन्म हुआ और सं. 1992 चाँदनी चौंक बारादरी में आपका देवलोकगमन हुआ। आपके सुशिष्य परम शान्तात्मा बहुसूत्री श्री नाथू लाल जी म. उदयपुर के पास पिलाना में जन्मे। हजारों-लाखों को शराब-मांस छुड़ाया। आपने कितने

ही वृद्धों को भी सामायिक, प्रतिक्रमण एवं अनेक स्तोत्र सिखाए। आपके सुशिष्य व्याख्यान-वाचस्पति, चारित्र-चूड़ामणि श्री मदन लाल जी म. हुए। सोनीपत के पास राजपुरा ग्राम में सं. 1952 में जन्म लिया। बचपन में माता-पिता काल कर गए। दिल्ली में मौसी के पास आकर रहने लगे। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. व बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. का शरणा मिला। सं. 1971 में बामनौली में दीक्षा लेकर पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, यू.पी., राजस्थान, गुजरात आदि में धर्म--ध्वजा फहराई। आपके ओजस्वी प्रवचनों से प्रभावित होकर आ. श्री कांशी राम जी म. ने आप को 'व्याख्यान-वाचस्पति' का पद दिया। सन् 1963 में जण्डियाला-गुरु में आपका देवलोकगमन हुआ।

आपके 6 शिष्य हुए। प्रथम शिष्य बाबा जग्गूमलजी म. गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. के बाबा थे। गुरुदेव की जीवन-गाथा में आपका प्रचुर परिचय उपलब्ध है। गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. के प्रति तो ये पुस्तक समर्पित ही है। घोर तपस्वी श्री बदरी प्रसाद जी म. ठाणांग सूत्र में वर्णित 'सीहत्ताए णाममेगे णिक्खंते सीहत्ताए विहरइ' के मूर्तिमान् रूप थे। सोनीपत जिले के रिंढाणा ग्राम में जन्म हुआ। इनकी पत्नी भूला देवी भर-यौवन में दो पुत्रों सेठ प्रकाश चन्द्र जी एवं राम प्रसाद जी को छोड़ कर काल कर गई। दोनों पुत्रों के किशोर-वय हो जाने पर आप तीनों ने नारनौल में 18 जनवरी 1945 को वाचस्पति गुरुदेव के श्रीचरणों में दीक्षा ली। आप कठोर संयम, दृढ़ अनुशासन और निर्दोष भिक्षाचर्या के हामी थे। सन् 1987 में सोनीपत में 72 दिन का देदीप्यमान संथारा पूर्ण करके दिव्य देवलोकों में पधारे। विशाल प्रज्ञा से मण्डित, स्वाध्याय से परिशुद्ध

आत्मा के धनी सेठ श्री प्रकाश चन्द्र जी म. का जन्म सन् 1928 में तथा दीक्षा नारनौल में हुई। आपने आगम, संस्कृत, प्राकृत, न्याय व व्याकरण का गहरा ज्ञान अर्जित किया। आपकी बुद्धि बड़ी विशद, प्रज्ञा बड़ी स्थिर एवं प्रकृति बड़ी वात्सल्य-पूर्ण है। निश्छलता एवं शान्ति के दर्शन आपके मंगल-सुमंगल दर्शन में होते हैं। परम श्रद्धेय, आगम-ज्ञान-रत्नाकर श्री रामप्रसाद जी म. का जन्म सन् 1930 में हुआ। 14½ वर्ष की अल्पायु

में दीक्षित हुए। श्रद्धा, ज्ञान एवं संयम की त्रिवेणी आप में प्रवाहित होती थी। आप सहस्राधिक गीतों के निर्माता थे, पर कहीं भी कोई नाम नहीं दिया। 'शालिभद्र' एवं 'स्थूलभद्र' आपकी दो कालजयी कृतियाँ हैं। आपके विशद एवं गहन अध्ययन की धाक सम्पूर्ण स्थानकवासी समाज में थी। आगम, भाषा-विज्ञान, तर्क, व्याकरण, साहित्य एवं अनेक भाषाओं पर आपका असाधारण अधिकार था।

जीवन के अन्तिम पाँच वर्षों में पक्षाघात के कारण आपश्री जी को गोहाना मण्डी में स्थिरवासी रहना पड़ा। इस पर भी आश्चर्य ये रहा कि आपश्री जी की स्मृति, मेधा, वाशक्ति एवं काव्य-प्रणयन-शक्ति सर्वथा अजस्र और अखण्ड रही, 18 जुलाई, 2007 रात्रि में संलेखना संथारा-सहित आपश्री ने दिव्य देवलोकों की ओर प्रस्थान किया। आपके अन्तिम संस्कार पर उमड़ी भारी भीड़ आपके दिव्य, उदात्त एवं परम उपकारी व्यक्तित्व के प्रति श्रद्धालु जनता की मौन एवं मुखर श्रद्धांजलि थी।

श्री राम चन्द्र जी म. का जन्म सन् 1904 में सिरसली में हुआ। दीक्षा सन् 1945 में हुई। 1983 में दिल्ली सदर बाजार में स्वर्गवास हुआ।

वाचस्पति गुरुदेव के 6 शिष्यों में केवल गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. की ही शिष्य-परम्परा चली। आपके 29 शिष्य हुए, जो सभी जाति-सम्पन्न, कुल-सम्पन्न, ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र से शोभायमान हैं। संयम-मर्यादा में चलते हुए जिन-शासन एवं गुरुदेवों की कीर्ति को उज्ज्वल कर रहे हैं। वर्तमान में गुरुदेव श्री के दूसरे नम्बर के सुशिष्य शास्त्री श्री पद्म चन्दजी म. 'संघ नायक' पद पर आसीन होकर संघ की सेवा कर रहे हैं। वर्तमान में (सन् 2008) इनके आज्ञानुवर्ती 33 पूज्य मुनिराजों का संक्षिप्त जीवन-परिचय इस प्रकार है।

नाम	माता का नाम	पता का नाम/गोत्र	जन्म-तिथि
1. श्री प्रकाश मुनि जी म.	श्रीमती चमेली देवी जी	श्री पन्नालाल जैन, भंसाली	18.08.1939
2. श्री शास्त्री पद्म मुनि जी म.	श्रीमती कलावती देवी जी	श्री श्यामलाल जैन, गर्ग	22.09.1940
* श्री शान्ति मुनि जी म.	श्रीमती सरस्वती देवी जी	श्री स्वरूपचंद जैन, गर्ग	17.09.1941
3. श्री विनय मुनि जी म.	श्रीमती सोना देवी जी	श्री मोतीराम जैन, गर्ग	05.06.1949
4. श्री जय मुनि जी म.	श्रीमती बोहती देवी जी	श्री पन्नालाल जैन, गर्ग	27.10.1956
5. श्री नरेश मुनि जी म.	श्रीमती प्रकाशवती जी	श्री वकीलचन्द जैन, सिंगल	25.08.1956
6. श्री राजेन्द्र मुनि जी म.	श्रीमती अनारकली जी	श्री रामगोपाल जैन, सिंगल	02.06.1959
7. श्री राकेश मुनि जी म.	श्रीमती चन्द्रावती जी	श्री बनवारीलाल जैन, गर्ग	10.07.1960
8. श्री सुधीर मुनि जी म.	श्रीमती प्रकाशवती जी	श्री वकीलचंद जैन, सिंगल	08.12.1960
9. श्री सत्य प्रकाश जी म.	श्रीमती रामोदेवी जी	श्री हुक्मचंद जैन, गर्ग	19.07.1965
10. श्री नरेन्द्र मुनि जी म.	श्रीमती चमेली देवी जी	श्री जयप्रकाश जैन, गर्ग	29.11.1966
11. श्री अरुण मुनि जी म.	श्री मती दयावंती जैन	श्री हंसराज जैन, बोथरा	28.6.1965
12. श्री अचल मुनि जी म.	श्रीमती धन्नो देवी जी	श्री रामकिशन जैन, गर्ग	10.10.1966
13. श्री सुनील मुनि जी म.	श्रीमती इलायची देवी जी	श्री प्रकाशचन्द जैन गोयल	29.11.1967
14. श्री अजित मुनि जी म.	श्रीमती जैनमती जी	श्री श्यामलाल जैन सिंगल	07.08.1969
15. श्री नवीन मुनि जी म.	श्रीमती गीता देवी जी	श्री पारसदास जैन सिंगल	22.09.1970
16. श्री मुकेश मुनि जी म.	श्रीमती दर्शना देवी जी	श्री चन्द्रभान जैन गर्ग	09.02.1971
Þ श्री वकील मुनि जी म.	श्रीमती सोना देवी जी	श्री त्रिलोकचंद जैन सिंगल	15.05.1933
17. श्री आदीश मुनि जी म.	श्रीमती रमेश देवी जी	श्री जिनेन्द्र जैन 'भाभू'	30.08.1971

* देवलोक गमन, 8 अप्रैल, 2005, त्रिनगर, दिल्ली।

Þ देवलोक गमन, 13 सितम्बर, 2001, जींद।

स्थान	तिथि	दीक्षा स्थान	भाई	बहनें	भाईयों में क्रम		शिक्षा
देहली	02.02.1958	चांदनी चौक, दिल्ली	5	3	3	4	(विशारद)
देहली	02.02.1958	चांदनी चौक, दिल्ली	4	3	4	6	(शास्त्री)
देहली	02.02.1958	चांदनी चौक, दिल्ली	5	3	5	7	
बुटाना	30.01.1967	मूनक	5	1	5	7	
बुटाना	15.02.1973	बुटाना	7	-	3	5	
बड़ौत	26.11.1973	गन्नौर	7	2	2	10	
महावटी	18.01.1979	सोनीपत	4	1	4	7	(शास्त्री, साहित्य रत्न)
सोनीपत	18.01.1979	सोनीपत	5	3	2	8	(शास्त्री, साहित्य रत्न)
बड़ौत	16.02.1981	बड़ौत	7	2	4	9	
बुटाना	07.12.1981	गोहाना	4	3	2	6	
गोली	07.12.1981	गोहाना	7	2	4	9	
भटिण्डा	24.4.1983	भठिण्डा	3	3	3	10	
गांगोली	24.04.1983	भठिण्डा	6	2	5	8	
गोहाना	13.12.1985	गोहाना	5	-	3	7	
पीलूखेड़ा	13.12.1985	गोहाना	3	4	2	6	
सुनाम	02.03.1987	रोहतक	3	3	2	9	
सोनीपत	02.12.1987	सोनीपत	5	3	4	8	
हिलवाड़ी	19.04.1988	बालोतरा	1	4	1	10	
जाखल	15.02.1989	जाखल	4	-	2	8	

नाम	माता का नाम	पता का नाम/गोत्र	जन्म-तिथि
18. श्री श्रीपाल मुनि जी म.	श्रीमती राजदुलारी जी	श्री चारित्र जैन गर्ग	30.12.1975
19. श्री रोहित मुनि जी म.	श्रीमती राममूर्ति देवी जी	श्री महावीर सिंह खरब	01.08.1979
20. श्री अजय मुनि जी म.	श्रीमती रामदुलारी जी	श्री वीरसेन जैन गर्ग	07.06.1971
21. श्री श्रेयांस मुनि जी म.	श्रीमती वेदो देवी जी	श्री लहणा सिंह मलिक	18.01.1979

प्रशिष्य

22. श्री सौरभ मुनि जी म.	श्रीमती रोशनी देवी	श्री सुलेखचन्द जैन, मित्तल	15.02.1983
23. श्री वैभव मुनि जी म.	श्रीमती ललितेश जैन	श्री लक्ष्मण जैन, गर्ग	31.3.1983
24. श्री पीयूष मुनि जी म.	श्रीमती कौशल्या देवी	श्री ज्ञानचन्द जैन चौधरी	18.12.1972
25. श्री मनीष मुनि जी म.	श्रीमती त्रिशला जैन	श्री सुभाष जैन, सिंगल	26.6.1982
26. श्री प्रणीत मुनि जी म.	श्रीमती परमेश्वरी देवी	श्री ओमप्रकाश जैन मित्तल	01.01.1983
27. श्री पुनीत मुनि जी म.	श्रीमती कृष्णा देवी	श्री पवन जैन गोयल	23.07.1985
28. श्री राजीव मुनि जी म.	श्रीमती पूर्णकला देवी	श्री चित्रसिंह मल्लव	9.1.1985
29. श्री दिनेश मुनि जी म.	श्रीमती संतोष देवी	श्री भरतराम जैन गर्ग	02.10.1983
30. श्री विनीत मुनि जी म.	श्रीमती सुशीला देवी	श्री महावीर जैन गर्ग	01.02.1987
31. श्री शीतल मुनि जी म.	श्रीमती शान्ति देवी	श्री पितराम जैन सिंगल	07.11.1985
32. श्री वीरेन्द्र मुनि जी म.	श्रीमती दर्शना देवी	श्री रामशरण जैन गोयल	18.09.1986
33. श्री जयन्त मुनि जी म.	श्रीमती सुनीता देवी	श्री मेघराज जैन गर्ग	22.10.1991

स्थान	तिथि	दीक्षा स्थान	भाई	बहनें	भाईयों में क्रम		शिक्षा
लुधियाना	23.02.1994	सोनीपत	2	1	2	8	
गुमाणा	23.02.1994	सोनीपत	2	1	2	8	
बड़ौत	06.10.1994	बड़ौत	3	1	2	10	
राजाखेड़ी	16.06.1995	रायकोट	3	3	2	6	
बड़ौत	29.01.2001	समालखा	5	1	5	5	
शाहदरा	29.1.2001	समालखा	3	x	2	6	
रोड़ी	29.1.2001	समालखा	7	2	7	9	
पंचकूला	24.4.2002	शालीमार बाग, दिल्ली	2	1	1	11	(जैन सि. प्रभाकर)
खावड़ा कलां	15.02.2003	टोहाना	3	1	3	10	
टोहाना	15.02.2003	टोहाना	3	-	3	9	(जैन सि. प्रभाकर)
रामघाट	15.2.2003	टोहाना	2	1	1	5	
हिसार	01.02.2004	हिसार	2	1	2	13	(जैन सि. शास्त्री,आचार्य)
गन्नौर	01.02.2004	हिसार	2	-	1	9	(जैन सि. प्रभाकर,भूषण)
पिल्लूखेड़ा	24.01.2007	शालीमार बाग, दिल्ली	2	2	2	10	+2
रतिया	24.01.2007	शालीमार बाग, दिल्ली	4	1	4	11	(जैन सि. शास्त्री)
भटिण्डा	24.01.2007	शालीमार बाग, दिल्ली	2	1	1	8	

कुछ विशेष प्रसंग

संकलन-कर्ता-आदीश मुनि

1. सन् 1993 में एक अजैन युवक अपने जैन मित्र के साथ दर्शन करने त्रिनगर की स्थानक में आया। सूर्यास्त से पूर्व का समय था। युवक गुरुदेव के चरण-स्पर्श करना चाहता था। मैंने उसे कमरे में आने की अनुमति दे दी। चरण छूते-छूते ही गुरुदेव ने एक वाक्य उसे कहा, 'अपना जीवन सात्विक बनाना'। वह बाहर आ गया। प्रतिक्रमण का समय निकट था, अतः उससे कोई वार्तालाप नहीं हो सका। लेकिन इस एक वाक्य का ही उसके मन पर इतना गहरा असर हुआ कि उसने सदा काल के लिए मदिरा-मांस-अण्डे का सेवन छोड़ दिया। अपने बच्चों से भी अण्डे का सेवन छुड़वा दिया। उस परिवर्तन की जानकारी उसके जैन मित्र ने छोटे मुनियों को दी।

❑ ❑ ❑

2. बचपन में गुरुदेव का सम्बन्ध तपस्वी श्री निहाल चन्द जी म. से बहुत रहा था। एकदा गुरुदेव उनके चरणों में बैठे थे। तभी एक भाई दर्शन करके गया। उसके जाने के बाद तपस्वी जी ने गुरुदेव से कहा—'इस भाई के पेट में जलेबी है। गुरुदेव सोचने लगे कि तपस्वी जी म. ज्ञानी हैं, अतः इसके पेट की जलेबी देख ली होगी। बात को और अधिक पुष्ट करने के लिए गुरुदेव ने आस-पास के कई हलवाइओं से पूछा कि फलां आदमी आपके यहाँ से जलेबी लेकर गया है क्या? कहीं पर भी बात पुष्ट नहीं हुई। अन्ततः फिर तपस्वी जी म. के चरणों में पहुँचकर सारी बात सुनाई, तो वे खूब हँसे। कहने लगे— 'तू बहुत भोला है। समझा नहीं।

उस आदमी के बारे में मैं यह कह रहा था कि वह कपट करता है। कपट को जलेबी कहते हैं। जैसे जलेबी में कई घुमाव होते हैं, ऐसे ही कपटी भी घुमावदार बातें करते हैं'।

❑ ❑ ❑

3. सन् 1946 अहमदगढ़ चातुर्मास। उपदेशों का असर जन-जन पर पड़ता था। एक दिन गुरुदेव ने दया का माहात्म्य सुनाया। एक ग्यारह वर्षीय बालक इतना प्रभावित हुआ कि उसने सोचा–आज मैं दिन में अधिक से अधिक दया के कार्य करूँगा। एक जगह उसको बलगम में फंसी हुई मक्खी नजर आई। अग्लान भाव से उसने उसे निकाला और बचा लिया। स्कूल जाते समय उसने सड़क पर पड़ा हुआ केले का छिलका उठाया, ताकि कभी कोई फिसल न जाए। स्कूल से आते समय उसने एक वृद्ध व्यक्ति को सड़क पार करवा दी। खुश होकर शाम को वह बालक गुरुचरणों में आया तथा कहने लगा कि 'हे गुरुदेव मेरे इन तीन कामों में से कौन-सा ज्यादा जरूरी और अधिक दया रूप था? बालक का प्रश्न सुनकर गुरुदेव मुस्कराए तथा पूज्य बाबा जी म. के चरणों में ले गए। उन्हीं के सान्निध्य में उस प्रश्न का उत्तर देते हुए फरमाने लगे– 'तुम दिन में तीन बार भोजन करते हो। इनमें से कौन-सा जरूरी है? बालक कहने लगा कि 'तीनो ही जरूरी हैं।' तब गुरुदेव ने उसी आधार पर उस बालक को समझाया कि दया का हरेक काम आत्मा को शक्ति और पुष्टि देता है, इसलिए तुम्हारे तीनों काम जरूरी और महत्वपूर्ण हैं। तथा इनके अलावा भी जो काम दया भाव से करोगे, वही जरूरी हो जाएगा।

❑ ❑ ❑

4. किसी क्षेत्र में गुरुदेव जी म. अपने पूज्य बाबा जी म. के साथ पधारे। शाम को गोचरी के लिए गए। पहले घर में श्राविका ने कई रोटियाँ देने के लिए उठा ली। गुरुदेव ने सभी लेने से मना कर दिया। श्राविका कहने लगी-'गुरुदेव, और घरों में मिले, न भी मिले कृपा कर लो। प्रायः

सभी-साधु सती ले लेते हैं।' किन्तु गुरुदेव नहीं माने। अन्ततः दो रोटियाँ ली और अन्य घरों में पधारे। किसी भी घर में अनुकूलता नहीं बनी, वापस आ गए। दोनों ने एक-एक रोटी खाकर गुजारा कर लिया। यद्यपि विहारादि कारणों से भूख काफी थी, लेकिन निर्दोष भिक्षा के लिए बहुत कुछ त्यागना पड़ता है।

❑ ❑ ❑

5. सन् 1941 में गुरुदेव का वैराग्यकाल था। तब गुरुदेव अहमदगढ़ मण्डी में वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में रहते थे। वे हर रविवार को बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. की सेवा में धूरी जाया करते। उनके तात्विक प्रवचन, व छोटे-2 कथानक गुरुदेव को बहुत पसन्द आते थे। श्री बहुसूत्री जी म. के मन में अपने पौत्र शिष्य के प्रति अगाध वात्सल्य था। एक दिन प्रवचन से पूर्व श्री बहसूत्री जी म. ने कहा, 'सुदर्शन जी, मेरी कथा में एक शब्द 'के नाम जेरे' प्रायः आता है ऐसा लोग कहते हैं। तुम आज गिनना कि कितनी बार मेरे मुँह से ये शब्द निकलता है।' गुरुदेव ने कथा सुनी। बाद में पूछने पर बोले— 'भगवन्, शुरू-शुरू में दो-चार बार तो मैं गिनता रहा, लेकिन बाद में कथा में इतना मगन हो गया कि मैं गिनना भूल गया'। कुछ देर बाद श्री बहुसूत्री जी म. ने फरमाया, 'जिन्हें संयम और गुरु-उपासना में रस आ जाता है, उन्हें बड़ों के दोष नजर नहीं आते। जैसे, जब किसी दुकानदार की दुकान पर ग्राहकों का मेला लगा हुआ हो, तब उस दुकानदार को बाजार में होने वाली घटनाएँ नजर नहीं आती'।

❑ ❑ ❑

6. एक बहन गुरुदेव के चरणों में आई और कहने लगी कि 'गुरुदेवय मैं बीमार चल रही हूँ। कल करवा-चौथ का दिन है। व्रत करूँ, तो डर लगता है कि तबीयत बिगड़ न जाए। ऐसी स्थिति में मुझे क्या करना चाहिए। व्रत करूँ या नहीं?' गुरुदेव ने करवा चौथ के असली लक्ष्य को स्पष्ट करते हुए उसे कहा कि 'एक साल तक पतिदेव से न लड़ने का नियम

कर लो, तुम्हारा सही करवे का व्रत हो जाएगा। पति की कल्याण-कामना तो तभी पूरी होगी, जब घर में कलह नहीं होगी।'

❑ ❑ ❑

7. दिल्ली में एक सुशिक्षित बेरोजगार युवक गुरुदेव के दर्शन करने आता था। गुरुदेव के प्रवचनों से उसे बड़ा लगाव था। गुरुदेव ने उसे सामायिक करने की प्रेरणा दी और कहा कि सामायिक को निष्काम-भाव से करना, इसमें लौकिक आवश्यकताओं की पूर्ति की याचना नहीं करना। अगले दिन ही वह युवक प्रातःकाल ही सामायिक करने आया। सर्दी का मौसम था। उसने एक-एक करके कपड़े उतारने शुरू किए। गुरुदेव ने देखा कि वस्त्र उतारकर वह युवक एक शाल ओढ़कर बैठ गया। बिल्कुल शांत-भाव से ध्यान-लीन हो गया। उसे सर्दी की अनुभूति भी नहीं हो रही थी। किसी के आने-जाने से भी वह प्रभावित नहीं हो रहा था। गुरुदेव उसकी दृश्यमान मुख-मुद्रा से ही प्रभावित हो गए। बाद में पूछने पर पता चला कि सामायिक में भौतिक फल की आकांक्षाओं को भी वह दूर रख पाया था। उसका ये सामायिक-क्रम दैनिक बन गया और करिश्मा यह हुआ कि उस युवक की सात दिन में ही एक अच्छे स्थान पर नौकरी लग गई। उसकी सामायिक पूर्ववत् चलती रही।

❑ ❑ ❑

8. एक युवा दम्पती ने गुरुदेव के चरणों में चढ़ती जवानी में शीलव्रत का पच्चखाण लिया। जब उनके घर में पहला पुत्र पैदा हुआ, तभी वे शीलवती बन गए। उनकी दृढ़ धर्मरुचि को परखने के लिए ही मानों 3 वर्ष की आयु में पुत्र का देहान्त हो गया। मन का ढाढस लेने दोनों गुरुदेव के चरणों में आए। गुरुदेव ने उन्हें धर्म का शरणा दिया। उन्हें आश्वासन मिला। उनके मन की तह तक झाँकने के लिए गुरुदेव ने पूछा– 'अब क्या विचार है?' कहने लगे-' गुरुदेव यदि सुख देना होता, तो वो ही दे देता। अपने लिए संतान-लोभ या सुख-लोभ में फंसकर हम

अपना नियम नहीं तोड़ेंगे। आपके दिए हुए व्रत का ईमानदारी से पालन करेंगे'। उनकी उदात्त श्रेष्ठ भावना सुनकर गुरुदेव ने उनके प्रति हार्दिक अहोभाव प्रकट किया।

❑ ❑ ❑

9. गुरुदेव कटु शब्द सुनकर मौन हो जाते थे, छलकते नहीं थे। एक बार गुरुदेव ने बताया था कि मैं नवदीक्षित था। किसी के घर गर्म पानी लेने गया। बहन देखकर क्रोध में पूछने लगी– 'क्यों आया है?' मैंने कहा–'गर्म पानी चाहिए, यदि आपके घर एक ओर रखा हो तो थोड़ा दे दो।' जली-भुनी वह औरत बोलने लगी 'इतने तालाब और कूए भरे पड़े हैं, उनमें से निकाल ले। यदि गरम ही चाहिए तो अंगीठी जला लेता, गर्म कर लेता या अपना घर बसा लेता।' उसकी ये बात सुनकर मुझे दशवैकालिक सूत्र की याद आई, जिसमें निर्देश है– 'अणासए जे उ सहिज्ज कण्टए, वईमए कन्नसरे स पुज्जो' कटु-वचन सुनने वाला ही पूजनीय होता है। और मैं बिना किसी प्रत्युत्तर या प्रतिक्रिया के वापस मुड़ लिया।

❑ ❑ ❑

10. गुरुदेव जब बालक थे, तब एक दिन उनके पड़ोस में काफी मायूसी छाई हुई थी। वे उनके घर के अन्दर गए। जाकर देखा कि एक छोटा-सा बच्चा बेहोश पड़ा था। उसकी माँ ने उसे किसी बात पर गुस्से में आकर पीट दिया था और ज्यादा पिटाई के कारण वह बेहोश हो गया। उसकी माँ उसे दूध पिलाने की कोशिश कर रही थी। कुछ लोग उसे सहला रहे थे, लेकिन लड़का पूरी तरह खड़ा नहीं हो पा रहा था। गुरुदेव ने तुरन्त नवकार-मंत्र सुनाना शुरू कर दिया और बालक थोड़ी ही देर में खड़ा हो गया। परिवार को खुशी हुई और गुरुदेव को नवकार मंत्र पर श्रद्धा बढ़ी।

❑ ❑ ❑

11. रोहतक शहर में सुश्रावक श्री जवाहर लाल जी बालकों में धर्मशिक्षा एवं संस्कारों की वृद्धि-हेतु समय-समय पर परीक्षाएँ आयोजित करते थे। सफल विद्यार्थियों को पारितोषिक देते थे। इस प्रक्रिया में एक बार गुरुदेव ने 8 साल की उम्र में सामायिक के नौ पाठ याद कर लिए तथा एक दिन में पूरा पच्चीस बोल याद किया। गुरुदेव की प्रतिभा और परिश्रम से सबको प्रसन्नता हुई। बाबा जी को पता चला, उन्होंने भी खूब सराहा और सहलाया। विजेता के रूप में जब वे पिताश्री के पास गए, तो उन्होंने कहा कि जब तुम शास्त्र पढना शुरू करोगे, तो तुम्हें और भी आनन्द आएगा, क्योंकि असली सार तो उन्हीं में छिपा हुआ है।

❑ ❑ ❑

12. दीक्षा के प्रारंभिक काल में गुरुदेव पानी लेने किसी घर गए। कुछ दूर से देखा कि एक आदमी दीवार की तरफ एक नारी मूर्ति की ओर हाथ जोड़े हुए खड़ा था तथा बार-बार सिर झुका रहा था। गुरुदेव ने सोचा-शायद यह 'सांझी-पूजन' कर रहा होगा। (हरियाणा की संस्कृति में एक नारी की आकृति को दीवार पर अंकित किया जाता है। उसे सांझी कहते हैं) लेकिन निकट आने पर समझ आया कि वह सांझी नहीं थी, अपितु उसकी धर्मपत्नी थी और किसी विषय में क्रुद्ध हो पतिदेव को धमका रही थी। और पतिदेव उसे शान्त करने के लिए बार-बार हाथ जोड़कर सिर झुका रहे थे। गुरुदेव चुपचाप वापस मुड़ लिए, आकर सारी घटना वाचस्पति गुरुदेव को बताई। उन्होंने हँसकर कहा, 'सुदर्शन, अपनी खुश-किस्मती समझ, जो इस झंझट से बच गया। वर्ना न जाने किस कलिहारी नारी से पाला पड़ता'।

❑ ❑ ❑

13. एक स्थान पर दो सगे भाई आपस में झगड़े हुए थे। कोर्ट में केस चल रहे थे। दोनों ही पेशी से पहले गुरुदेव से मंगलपाठ सुनने के लिए आए। दोनों ही गुरुदेव के भक्त थे और दोनों ने ही वाचस्पति गुरुदेव

की गुरुधारणा ले रखी थी। गुरुदेव ने उन्हें बैठने को संकेत किया। दोनों भाई बैठ गए। गुरुदेव कहने लगे, 'तुम दोनों आपस में ही भाई नहीं हो, मेरे भी भाई हो।' 'कैसे? 'क्योंकि जिन गुरुओं की गुरुधारणा आपने ली, जिनके आप शिष्य हो, उन्हीं के हम हैं, इसलिए तुम दोनों मेरे भाई हो। मैं नहीं चाहता कि मैं ऐसी मंगली सुनाऊँ कि जिससे मेरा एक गुरुभाई जीते, दूसरा हारे। तुम दोनों जीतो, ऐसी मांगलिक सुनाना चाहता हूँ।' दोनों भाई गुरुदेव को निहारने लगे। फिर दोनों की आपस में नजर मिली। नजरों में घृणा की जगह प्रेम का जन्म हो चुका था। गुरुदेव ने उस होते हुए परिवर्तन को परखा। पुनः वार्ता क्रम जारी रखते हुए बोले– तुम दोनों अपने-अपने केस वापस ले लो, तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। दोनों भाईओं ने गुरुदेव के चरण छूए और केस वापस लेने का तुरन्त निर्णय ले लिया।

❑ ❑ ❑

14. गुरुदेव जी म. ने एक बार फरमाया था कि पूज्यपाद श्री खजान चन्द्र जी म. हमें बहुत प्यार करते थे। वे प्रासुक जल को बिल्कुल साफ करते और ठण्डा करके संतों को पिलाते थे। वे छोटे से छोटे संत की सेवा करने में तत्पर रहते थे। उन्होंने पटियाला में मुझे बड़ी अच्छी शिक्षा प्रदान की थी– कोई दिन ऐसा न जाने दो, जिस दिन गुरु की विनय नहीं की हो। हमने हमेशा उनकी शिक्षा का ध्यान रखा और उसका मधुर फल पाया है।

❑ ❑ ❑

15. पंजाब में गुरुदेव का विचरण चल रहा था। एक गाँव में गुरुद्वारे में ठहरे। गुरुदेव का यही दृष्टिकोण रहता था कि जिस धर्म के आराधना स्थल पर ठहरे हैं, उसकी मर्यादा का पालन अवश्य करना चाहिए। किसी भी धर्म और सम्प्रदाय की भावनाओं की उपेक्षा करके हम उनकी सद्भावनाओं को नहीं जीत सकते। उस गुरुद्वारे का ग्रंथी प्रातःकाल बहुत जल्दी गुरुद्वारे में आया और गुरुदेव तथा सभी संतों से कहने लगा कि

मैं कुछ देर गुरुग्रंथ साहिब का पाठ करूँगा, आप इतनी देर खड़े रहिए, ये हमारी सिख-परम्परा है। गुरुदेव ने अपनी परम्परा समझाई, लेकिन ग्रंथी नहीं माना। वातावरण को सुखद बनाए रखने के लिए गुरुदेव खुद भी खड़े रहे तथा संतों को भी खड़े किए रखा। गुरुदेव के सौम्य व्यवहार से वह ग्रंथी बहुत प्रभावित हुआ। बाद में उसने अपने अभद्र व्यवहार के लिए क्षमा मांगी तथा कहने लगा कि 'आप तो रब्ब हो, सच्चे वाहेगुरु हो। इस गुरुद्वारे में आने वाले हर जैन साधु की मैं इज्जत और सेवा करूँगा।'

❑ ❑ ❑

16. पूज्य बाबा श्री जग्गूमल जी म. की सेवा में गुरुदेव जी म. चाँदनी चौंक दिल्ली में थे। एक दिन भिक्षाचरी के लिए गुरुदेव एक घर में पधारे। एक छोटा बालक तभी खाना खाने बैठा था, लेकिन उसकी मनपसन्द सब्जी नहीं बनने से रूठ गया और सब्जी की कटोरी एक ओर फैंक दी। गुरुदेव ने देख तो लिया, पर उस बालक को कुछ नहीं कहा। उस पर नजर अवश्य डाली। बच्चे की माँ को ख्याल था कि गुरुदेव बच्चे को कुछ कहेंगे, लेकिन गुरुदेव तो आहार लेकर वापस आ गए। 3 दिन बाद उसकी माँ से कहा कि बच्चे को भेजना। बालक आया, तब गुरुदेव ने कहा कि 'भोजन में जो माँ दे, वही खा लिया करो।' वह बालक कहने लगा कि 'गुरुदेव, तीन दिन से कोशिश कर रहा हूँ और आज से नियम करता हूँ कि कभी भी भोजन को लेकर लड़ाई नहीं करूँगा।' गुरुदेव बड़े प्रसन्न हुए।

❑ ❑ ❑

17. एक युवक को गुरुदेव ने कहा कि सिग्रेट मत पिया करो। वो कहने लगा कि यह तो बहुत मुश्किल है। गुरुदेव ने पूछा-'मुश्किल क्यों है?' वह बोला कि 'जब मैं गाड़ी चलाता हूँ तब सिग्रेट पीने में बड़ा मजा आता है और गाड़ी की स्पीड अपने आप तेज हो जाती है'। गुरुदेव ने उसे समझाने की कोशिश की। अन्ततः वह बोला कि 'इसके बारे में मैं

आपको कल बताऊँगा। आज-आज तो पीने का मजा ले लेने दो।' उस से अधिक बहस करने का फायदा न देख गुरुदेव मौन हो गए। उसी शाम वह लड़का सिग्रेट पीते-पीते गाड़ी चला रहा था। स्पीड तेज थी, सामने से आते हुए किसी अन्य वाहन से टकराते-टकराते बाल-बाल बचा। उसके तो होश उड़ गए। मुश्किल से संभला। सीधा गुरुदेव के चरणों में पहुँचा। आप बीती सुनाई और हमेशा के लिए सिग्रेट का नियम करके गया।

❑ ❑ ❑

18. किसी विशाल संयुक्त परिवार में गुरुदेव का आहारार्थ पदार्पण हुआ। विचित्र संयोग था कि उस समय उस घर में चार प्रसूतियां हुई थी। तीन बहनों को पुत्रों की प्राप्ति हुई थी, तथा एक को पुत्री की। रिश्तेदार, मित्र आते थे। पुत्रवती देवियों को बधाई देने पहले जाते और कन्या की जननी के पास बाद में। लेकिन गुरुदेव ने कहा कि मैं पहले कन्या की माँ के कमरे में मंगलपाठ सुनाऊँगा। कुछ तो वह स्वयं ही आहत है, कुछ आगन्तुक मेहमान उपेक्षा करके उसकी भावनाओं को और आहत कर देते हैं। मैं उसे सान्त्वना एवं साहस देने का प्रयत्न करूँगा। गुरुदेव ने जब उस देवी को मंगलपाठ सुनाया तो वह भाव-विभोर हो गई और दुनिया से मिले गमों को भूल गई।

❑ ❑ ❑

19. एक भटका हुआ जैन युवक गुरुदेव को बाजार में मिला। कुछ नशे में था। फिर भी अपने गुरुओं की पहचान तो थी ही, सड़क पर सीधा लेट गया और प्रणाम करने लगा। मुँह से मद्य की दुर्गंध आ रही थी। गुरुदेव ने उस समय उससे वार्तालाप करना उचित नहीं समझा। चल दिए। अगले दिन उस युवक के पिता उसे दर्शन कराने लाए। तब वह सामान्य स्थिति में था। उसने गुरुदेव को सामान्य ढंग से वन्दना की। गुरुदेव ने कहा कि कल बाजार में तेरा रूप कुछ और था, अब कुछ और है। सकुचाते हुए उसने पूछा, 'गुरुदेव! क्या आप कल मुझे देखकर डर

गए थे?' गुरुदेव ने कहा— 'मैं कल तो नहीं घबराया, लेकिन आज जरूर घबरा रहा हूँ। क्योंकि कल तो तुम्हारी हालत दया के काबिल थी, तुझपे मुझे रहम आ रहा था, लेकिन अब मुझे ये घबराहट है कि तुम्हारा भविष्य क्या होगा? क्या फिर तुम उसी अंधी गली के राहगीर बनोगे?' गुरुदेव समझाते रहे और वह युवक सिर हिलाता रहा। क्रमशः हृदय-परिवर्तन हुआ और वह नया आदमी बनकर वहाँ से बाहर निकला।

❑ ❑ ❑

20. सन् '94 में वैरागी सचिन (बड़ौत) को गुरु-चरणों में आए महीना-भर हुआ था। गुरुदेव का छपरौली में पदार्पण हुआ। एक दिन वैरागी जी किसी के घर खाना खाने गया, आया तो देर हो गई। गुरुदेव जी समझ गए कि घर पर किसी मनोरंजन में उलझ गया होगा। उसके आने पर गुरुदेव ने श्री शान्ति मुनि जी म. को जाँच करने की आज्ञा दी। उन्होंने पूछा। तो वैरागी जी बोले कि घर में T.V. पर 'कृष्णा' सीरियल आ रहा था, उसे देखने लगा। महाराज श्री ने कहा कि वैरागी को T.V. नहीं देखना। बालमना वैरागी ने कहा कि वह तो धार्मिक सीरियल था, कोई फिल्म थोड़ा ही थी। उसे देखने में क्या हर्ज है? पर म. श्री जी ने उसे बोध कराया कि कुछ भी हो, वैरागी को T.V. देखना नहीं। बालक समझ गया। इस प्रकार गुरुदेव अपने शिष्यों के जीवन-निर्माण में हर सूक्ष्म-सी घटना के प्रति भी सावधान रहते थे।

❑ ❑ ❑

21. सन् 1968 में गुरुदेव का जयपुर चातुर्मास था। एक दिन गुरुदेव एक जौहरी के घर दर्शन देने पधारे। जौहरी ने ढेरों जवाहरात सामने रखे और कहने लगा— 'गुरुदेव, इन जवाहरात को अपने चरण लगा दो, इनकी कीमत बढ़ जाएगी।' गुरुदेव ने फरमाया, 'इनकी बढ़े न बढ़े, तुमने यदि अपने आचरण को सुधार लिया, तो तुम्हारी कीमत निश्चित ही बढ़ जाएगी।'

22. सन् 50 में गुरुदेव दिल्ली चाँदनी चौंक में थे। एक दिन दरीबा में कूचा सेठ में आहार के लिए एक दिगम्बर जैन के घर गए। 3 साल का बच्चा रोटी खा रहा था। आधी रोटी बची थी। बोला– 'गुरुजी को दूंगा'। माँ व पिता ने कहा– 'ये तो झूठी है।' बच्चा जिद्द कर गया। गुरुदेव बोले, 'यही देने दो, हमारी दृष्टि में भाव का महत्व है।' लेकर स्थानक आए। बाबा जी को सब बात बतााई। बाबा जी म. बोले–'ये रोटी मुझे दे, मैं खाऊँगा, झूठ सच क्या होता है।' आगे जाकर उस बच्चे को 'बहुत लगन लगी'।

❑ ❑ ❑

23. सन् 1950 में गुरुदेव दिल्ली चाँदनी चौंक में विराजमान थे। आ. श्री गणेशी लाल जी म. भी वहीं विराजित थे। उस वर्ष उन्हें अलवर चौमास करना था, पर बीमार हो गए, अतः चाँदनी चौंक में इकट्ठा ही चातुर्मास हुआ। आपस में बहुत प्रेम और सौहार्द का वातावरण रहा। एक दिन आचार्य श्री बोले– 'सुदर्शन जी, थें कित्ता वर्ष हुआ व्याख्यान करते?' गुरुदेव बोले, 'मेरे गुरु म. ने सन्'45 में ही मुझे कथा-क्षेत्र में डाल दिया था।' आचार्य श्री ने कहा– 'कभी अपने को भी कथा सुनाई? जिस दिन अपने को सुना दी, समझना उसी दिन सही कथा की है। भीड़ को नहीं देखना कि सुन रही है या नहीं।' गुरुदेव ने इस बात को सारी उम्र याद रखा। यही कारण है कि उनकी कथनी और करनी एक थी।

❑ ❑ ❑

24. गुरुदेव ने अपने श्रीमुख से फरमाया, 'एकदा मेरे पास एक डबल एम.ए., एक डी. लिट् और एक ट्रिप्पल एम. ए., तीन व्यक्ति आए। तीनों ने दिमाग में अहं भरा था। मैंने सोचा कि 'मेरे पास आए हैं, तो इन्हें कुछ बोध देना चाहिए।' वे तीनों भी मूड में थे। मैंने रायजादे, नवाबजादे, शहजादे व हरामजादे की कथा सुनाई, तीनों झेंप गए। बोले– 'गुरुदेव,

शायद आपके पास हमारी रिपोर्ट आ गई।' मैंने कहा, 'विद्या वही है, जिससे नम्रता बढ़े। तुम भी नम्र बनो।' तीनों ने नम्र रहने का प्रण कर लिया।

❑ ❑ ❑

25. एकदा दिल्ली में गुरुदेव के पास एक अजैन भाई आया। बोला, आप इतनी कथा सुनाते हो, क्या श्रोताओं को हजम हो जाती है? गुरुदेव ने फरमाया, 'तुम भी एक महीना सुनकर देखो, तुम्हें भी हजम हो जाएगी।' उस भाई ने लगातार सुनना शुरू कर डाला। कुछ दिन बाद गुरुदेव ने पूछा-'हजम होने लगी?' बोला– 'अब तो छोड़ने को मन नहीं करता। गुरुदेव बोले–'कथा सुनकर आगे न भी बढ़े, तो भी यदि श्रवणेच्छा बनी रहे, तो कल्याण का रास्ता मिलेगा।'

❑ ❑ ❑

26. एक व्यक्ति गुरुदेव को बोला, 'मैं आपके प्रवचन में आता हूँ पर पीछे जगह मिलती है।' गुरुदेव ने कहा– '8 बजे आया कर'। बोला, 'आ नहीं सकता। गुरुदेव ने कहा, 'तो दीक्षा ले ले, पूरी जगह मिलेगी।' बोला-'पोते की शादी करके लूँगा।' गुरुदेव ने फरमाया, 'भाई, संसार छूटना बहुत मुश्किल है। जो छोडे, उसी की बलिहारी है।'

❑ ❑ ❑

27. गुरुदेव चाँदनी चौंक के कूचा सेठ में एक घर में एक दिन गोचरी के लिए पधारे। एक माँ अपने बच्चे को धमका रही थी– तुझे मौत ले जाए। गुरुदेव ने सुन लिया, बोले– 'बहन, इस बच्चे को मैं ले जाऊं?'– 'नहीं म. आपको नहीं दूंगी।' गुरुदेव हास्य रस बिखेरते हुए बोल– 'तो क्या मैं मौत से भी बुरा हूँ, जो मना कर रही हो?'

❑ ❑ ❑

28. सन् 50 में चाँदनी चौंक में आचार्य श्री गणेशी लाल जी म. ने गुरुदेव को एक बार फरमाया– 'हम बेकार हैं।' गुरुदेव ने पूछा– कैसे?

आचार्य श्री बोले— 'बे-का अर्थ है दो, कार का अर्थ है-कार्य करने वाला। हम दो कार्य करते हैं— अपना भी कल्याण करते हैं, संसार का भी।' यदि बेकार का यही अर्थ है तो सचमुच गुरुदेव सारी उम्र 'बे-कार' रहे।

❑ ❑ ❑

29. गुरुदेव को प्रारंभ से ही बातों का रस नहीं रहा। जब गुरुदेव दिल्ली चाँदनी चौंक में थे, तो एक भाई रोज आता। एक दिन बोला 'गुरुदेव, मेरे पास कोई काम नहीं है।' गुरुदेव बोले, 'धर्म का शरणा रखो, दो तीन घण्टे माला फेरा करो। 'मैं तो बात करने आया था।' गुरुदेव बोल— 'मेरे पास समय नहीं है।' गुरुदेव 9 साल दिल्ली रुके, एक चिट्ठी तक कहीं नही लिखवाई। बाबा जी म. की सेवा करना और प्रवचन सुनाना, यही काम था। कभी बात कर लेते तो बाबा जी कहते— 'शास्त्र ढ़ो, बातों में कुछ नहीं रखा।' जिस की नीवें इतनी गहरी जमाई गई हों, भला वो महाविशाल वट वृक्ष क्यों न बनता?

❑ ❑ ❑

30. एक जगह किसी घर में गुरुदेव दर्शन देने पधारे। घर में कई तस्वीरें थी। घर के सभी सदस्यों ने अपने अलग-अलग भगवान्, देवता बैठा रखे थे। गुरुदेव के श्रीमुख से सहज ही निकला-'अगर तुम इतने देवों की बजाय एक अकेले सत्य भगवान् की पूजा करो, तो किसी की जरूरत नहीं। घर का मुखिया बोला— 'गुरु म., टेढ़ा मामला है'। गुरुदेव ने फरमाया— 'दुनिया सत्य को टेढ़ा मानती है, किन्तु हमें सीधा लगता है।'

❑ ❑ ❑

31. किसी क्षेत्र में गुरुदेव के पास एक भाई आया। बोला— 'आज हमारी समाज की मीटिंग है, मंगली सुनाओ' सुना दी। फिर बोला— और कुछ फरमाओ। गुरुदेव ने फरमाया, 'अपने ऊपर ब्रेक लगाओ' "कैसे?" गुरुदेव बोले, 'तू लड़े बिना रहता नहीं, आज लड़ना नहीं।' उसे सामायिक

करवा दी। मीटिंग बढ़िया हुई। शांति रही। बाद में एक श्रावक आकर बोला– 'गुरुदेव, आपने उस 'पतन्दर' को रोक लिया। गुरुदेव बोले, गुरुदेव से बोला, 'ऐसा सुना है, किसी ने मुझे 'पतन्दर' कहा है? गुरुदेव मौन रहे। वह स्वयं फिर बोला-परन्तु सामायिक करके मेरा मन शान्त हो गया। आगे लड़ूंगा नहीं।

❑ ❑ ❑

32. गुरुदेव सन् 1946 में जगरावां पधारे। एक भाई को माला का नियम कराया– 'दुःख सुख छड्डके'। अगले दिन उससे पूछा– माला फेरी? बोला, 'नहीं फेरी, क्योंकि पेट-दर्द था? अगले दिन पूछा तो बोला, 'ठीक हूँ, इसलिए नहीं फेरी। सुख का भी आगार है, दुःख का भी।

❑ ❑ ❑

33. एक समृद्ध जैन भाई ने अपनी बेटी की शादी पर एक करोड़ रू. खर्च किया। जहां जाता, वहीं चर्चा करता। एक बार गुरुदेव के सामने भी कर बैठा। गुरुदेव उसके धन-व्यय (अपव्यय) से प्रभावित नहीं हुए। उल्टे, उपालम्भ देते हुए बोले 'इसमें क्या खास बात है। अपने परिवार के लिए सब करते ही हैं। तेरी दिलेरी तब है जब किसी गरीब की बेटी की शादी में धन लगाए और साथ ही तेरे सगे भाई की जवान बेटी घर में कुँवारी बैठी है, तूने उसके लिए कभी कुछ सोचा?' सेठ जी नई दृष्टि लेकर वहाँ से चला गया।

❑ ❑ ❑

34. सन् 1943 में बड़े गुरुदेव का चातुर्मास चान्दनी चौंक था। गुरुदेव भी साथ ही थे। एक दिन गुरुदेव बाहर से आए व अपने आसन पर बैठकर किताब पढ़ने लगे। वाचस्पति गुरुदेव ने उन्हें बुलाकर कहा, 'आज एक काम बाकी रह गया।' गुरुदेव बोले– 'मुझे ध्यान नहीं आया।'

बड़े गुरुदेव बोले—'पाँव पौंछने थे।' गुरुदेव ने एकदम पोंछे। बड़ों की रज पौंछना आत्मा पर चढ़ी कर्मरज उतारना है।

❑ ❑ ❑

35. गुरुदेव रोहतक में खोखरा कोट पर घूमने जाते थे। एक दिन वहाँ एक ग्रामीण भाई मिला। बोला— 'आ बैठ, बतलाबैंगे। ' गुरुदेव बैठ गए। वह बोला, तेरा ब्याह हो गया?' गुरुदेव के मना करने पर बोला, "फिर छोरा छोरी तो के होणा था?' गुरुदेव ने सोचा- 'बिना शादी के संतान नही, बिना साधना के कल्याण नहीं।'

❑ ❑ ❑

36. जण्डियाला गुरु में बड़े गुरुदेव श्री वाचस्पति जी म. का अंतिम समय चल रहा था। एक दिन गुरुदेव उनके चरणों में बैठे हुए थे। बड़े गुरुदेव बोले—'तूने क्या पाया?' गुरुदेव ने उनके चरण पकड़ के कहा— 'मैंने ये पाए हैं।' बड़े गुरुदेव प्रसन्न होकर बोल— 'अच्छा, तू भरत है और ये तेरी पादुकाएँ हैं।'

❑ ❑ ❑

37. नरवाना के धनाढ्य सेठ श्री कृष्ण गोपाल जी गुरुदेव के अनन्य भक्त हैं। सारे इलाके में उनका रौब है। उनकी एक बेटी मधु की हिसार में शादी हुई। कुछ समय बाद उसकी हत्या कर दी गई। विरोध स्वरूप सारा नरवाना बंद रहा। पूरी मिनिस्ट्री श्रावक जी के हाथ में थी। वो हिसार गए, हजारों आदमी साथ में थे। लड़के वाले भाग गए, अतः बच गए। कृष्ण गोपाल जी गुरुदेव के पास आए, सान्त्वना मिली। उधर वे सभी लड़के वाले जेल में बन्द हो गए। तब गुरुदेव राजाखेडी में थे। श्री कृष्ण गोपाल जी को गुरुदेव ने कहा— 'ऐसा न करो, उनकी जमानत हो जाने दो'। उन्होंने फौरन आज्ञा मानी व केस वापस ले लिया। यद्यपि उनका परिवार विरोध में था, पर 'गुर्वाज्ञा गरीयसी'—गुरु आज्ञा बड़ी है।

38. एकदा किसी घर गुरुदेव गोचरी को गए। रसोई में बहन रो रही थी। चेहरा लाल। कारण पूछा। बोली– 102 डिग्री बुखार है, आज खाना बनाने की मेरी बारी है, अतः आंसू हैं। गुरुदेव ने सोचा-ऐसे घर से आहार नहीं लेना। चलने लगे। अंदर से सास आई- 'गुरु म. वापस क्यों? गुरुदेव– 'बहू बीमार है। यही काम करे, ये भोजन हमें हजम नहीं होगा। सास ने माफी मांगी– आगे ऐसा नहीं होगा। बाद में उस घर में रंग लगा। किसी बहू के पास बेटा नहीं था, सबको हुए।

❑ ❑ ❑

39. एक दिन गुरुदेव ने श्री नरेन्द्र मुनि जी म. से कहा– 'नवकार मंत्र याद है? वो बोले–'जी गुरुदेव, याद है।' गुरुदेव ने मुस्कराते हुए कहा– नहीं, तुझे याद नहीं है। दो-तीन बार यही ना और हाँ होती रही। अन्त में गुरुदेव ने स्पष्ट करते हुए कहा–'क्या नवकार मंत्र के सभी गुण याद हैं? 'नहीं गुरुदेव, सभी गुण तो याद नहीं है।' 'यदि सभी गुण याद नहीं, तो पूरा नवकार मन्त्र याद नहीं माना जा सकता। अब पहले सभी गुणों को याद करो।' गुरुदेव के संकेत को पा श्री नरेन्द्र मुनि जी म. प्रणत हो गए।

❑ ❑ ❑

40. फरवरी 1999 में गुरुदेव जी म. कैथल पधारे। प्रवचन के लिए 'संगम बैंक्वेट हाल' का चयन किया। मालिक को पता लगा तो अतिप्रसन्न हुए। कहने लगे– 'सौभाग्य हैं हमारे कि श्री सुदर्शन लाल जी म. यहां पधारेंगे। वे तो मेरे गुरु हैं। दस साल पहले वे कैथल पधारे थे। मैंने उनके दर्शन किए। तब उन्होंने मुझे पोल्ट्री फार्म का कारोबार बन्द करने के लिए कहा था। मैंने धीरे-धीरे वह पाप का धंधा बन्द कर दिया और आज जो भी हमारी अच्छी स्थिति है, वह भी उन्हीं की कृपा के कारण है।' पिता-पुत्र दोनों गुरुदेव के चरणों में आए। गुरुदेव ने उन्हें पहचान लिया। सेठ जी ने भाव-विभोर होकर बैंक्वेट हाल में कथा की

विनति की तथा कहने लगे-'आपके पधारने की खुशी में एक क्विंटल लड्डू बँटवाऊँगा।' गुरुदेव ने उन्हें मना किया कि हमारी कथाओं में प्रसाद नहीं बंटता। रविवार को प्रवचन में बहुत रौनक हुई। एक अजैन भाई को गुरुदेव ने कर्मणा जैन बना दिया था। कई महीनों से उनका अमेरिका जाने का पासपोर्ट नहीं बन रहा था, गुरुदेव के दर्शन करने के बाद दो दिन में ही बन गया।

❑ ❑ ❑

41. गुरुदेव जींद में विराजमान थे। औषध की आवश्यकता पड़ी। भाई रामू को लेकर एक वैद्य के पास गए। वैद्य जी कुछ क्रोधी मिजाज के थे। दवा तो देने लगे, परन्तु जब गुरुदेव उस दवा के गुणदोष, लाभ हानि आदि पूछने लगे, तो वैद्य जी उग्रता से बोलने लगे। गुरुदेव ने दवाई वापस कर दी। भाई रामू जैन को भी काफी क्रोध आया। लेकिन गुरुदेव ने उसे बोलने से रोक दिया। बाहर आकर उसे त्याग करवा दिया कि समाज में किसी भी भाई को ऐसा नहीं कहना कि उस वैद्य ने गुरुदेव से बुरा व्यवहार किया। यदि किसी ने इस वैद्य को धमका दिया, तो इसकी जैन धर्म के प्रति अश्रद्धा हो जाएगी। बाद में उस वैद्य जी को अपनी गलती का अहसास हो हुआ और उसने गुरुदेव से क्षमा मांगी।

❑ ❑ ❑

42. शालीमार बाग निवासी श्री उग्रसैन जी के सुपुत्र श्री प्रमोद जैन गुरुदेव के अनन्य श्रद्धालु, परम सेवा-भावी, धर्मनिष्ठ युवक हैं। सन् 1992 में वे सी.ए. के पेपर दे रहे थे। उन्होंने जब से सी.ए. में प्रवेश लिया था, तभी से गुरुदेव के चरणों में आते थे। मंगलपाठ सुनते थे। सात पेपरों में से उनका छठा पेपर बहुत खराब हो गया। सातवाँ पेपर देने का मन नहीं था। गुरुदेव के चरणों में अपनी सारी बात रखी। गुरुदेव ने एकदम कहा कि, 'छठे पेपर की तो चिन्ता मत कर। सातवां पेपर जरूर दे'। हौसला बना। आज्ञा पाकर सातवां पेपर दिया। परिणाम आया और सारा परिवार

दंग रह गया कि सभी पेपरों में पास तथा छठे पेपर में और सभी पेपरों से ज्यादा नम्बर आए थे।

❑ ❑ ❑

43. श्री प्रमोद जैन आई.ए.एस. जम्मूवासी गुरुदेव के विशेष भक्त हैं। सन् 1998 में एक वर्ष की इंग्लैण्ड यात्रा के बाद भारत लौटे। घर बाद में गए, पहले गुरुदेव के चरणों में कृतज्ञता प्रकट करने अम्बाला आए। एक रात वहीं लगाई। प्रवचन में सामायिक करके बैठे। स्वयं भी कुछ देर बोले। उन्होंने बताया कि मैं कई वर्षों से विदेश जाने का इच्छुक था, लेकिन सरकारी लालफीताशाही के कारण कुछ बात बन नहीं रही थी। गुरुदेव के दर्शन करने आया। और अपनी समस्या इनके चरणों में रखी। अपनी कृपा बरसाते हुए गुरुदेव ने कहा– try, try, try। एक ही आदेश को गुरुदेव तीन बार कहकर मौन हो गए। आशा की किरण लिए मैं फिर प्रयास में जुट गया। दो बार कार्यक्रम फाइनल होने के बावजूद इंकारी हो गई। मन टूट रहा था।, फिर गुरुदेव का आदेश-वाक्य याद आ जाता ज्तल,ज्तल,ज्तल मैं फिर प्रयत्न में जुट गया और तीसरी बार मुझे सफलता मिली। जब मेरी भावना पूरी हुई, तब मुझे समझ आया कि तीन बार ज्तल शब्द का क्या रहस्य था।

❑ ❑ ❑

44. चार अप्रैल 1999 को दिल्ली शालीमार बाग से एक बस गुरुदेव के दर्शनार्थ सोनीपत में गई थी। श्री किशोरी लाल जी देहरे वाले भी उस बस में थे। वार्धक्य के कारण स्मृतिलोप एवं चित्तविपेक्ष रहता था। सोनीपत जाकर कहीं गुम हो गए। सोनीपत का चप्पा-चप्पा छान लिया। दिल्ली, समालखा, देहरा, जहां-2 दिमागों ने गवाही दी, वहीं तलाशी करवाई, पर नहीं मिले। पुलिस ने भी प्रयास किया। परिवार, रिश्तेदार सब परेशान। 5 ता. को बरोटा गांव में उनके सुपुत्र श्री ओम प्रकाश जी गुरुदेव के चरणों में आए। सब घटनाचक्र सुनाया। गुरुदेव ने उन्हें एक

पाठ लिखवाया। और कहा कि 11 दिन तक पाठ करो।' उनके जाने के बाद मुनियों ने गुरुदेव से पूछा-क्या लाला जी आ जाएंगे? गुरुदेव ने सहज भाव से कहा–'ये पाठ मैं उसी को देता हूँ, जिसका कार्य सिद्ध होना होता है। लाला जी को आना है और जल्दी आना है। ग्यारह दिन पाठ का तो विधान है।' 6 ता. को नरेला में मध्याह्न के पश्चात् एक मुनि को सूचना मिली कि ला. किशोरी लाल जी मिल गए हैं तथा घर पहुँच गए हैं। गुरुदेव को सूचित करने वो मुनि अन्दर गए, कहने लगे कि ला. किशोरी लाल जी मिल गए हैं। गुरुदेव ने मुस्कराते हुए कहा– 'मुझे पता है'।

❑ ❑ ❑

45. किसी डॉक्टर ने गुरुदेव को कहा कि आप अपना वजन नाप लेना। गुरुदेव जींद में डॉ. सुरेश जैन के नर्सिंग होम पर गए। पूछा कि वजन तोलने की मशीन है? डॉक्टर सा. ले आए। जब तोलने के लिए खड़े हुए तो डॉक्टर सा. ने स्क्रीन को साफ करने के लिए जमी हुई धूल पर फूंक मार दी। गुरुदेव ने मशीन वापस कर दी, क्योंकि वायुकाय की विराधना से असूझता हो गया था। वहां से चलकर गुरुदेव लगभग एक कि. मी. दूर किसी और डाक्टर के यहां वजन करवा के आए।

❑ ❑ ❑

46. 26 जनवरी 1994, गुरुदेव शालीमार बाग में प्रातः मुझे (आदीश मुनि) साथ लेकर भ्रमणार्थ जा रहे थे। बी. एम. पश्चिमी ब्लाक से जाते हुए देखा कि एक गाय बुरी तरह तड़फ रही है। उसकी उस दशा से गुरुदेव भाव-विह्वल हो गए। कारण समझ नहीं आया। मुझे आदेश दिया कि किसी भाई को बुलाकर लाओ। मैं श्री पवन कुमार जी (राजाखेड़ी) को बुलाकर लाया। गुरुदेव ने सारी स्थिति भाई को दिखाई तथा गाय की रक्षा का दायित्व दिया। उस भाई ने बड़े कठिन परिश्रम से उस गाय की रक्षा की। गाय आसन्न-प्रसवा थी। बछड़ा अन्दर मरा हुआ था। गाय की जान खतरे में थी। कठिनाई से मृत वत्स को निकाला गया तथा गाय को

ठीक होने में कई दिन लगे। गुरुदेव बराबर उस गाय की जानकारी लेते रहे तथा भाई को उत्साहित करते रहे। गुरुदेव की दया-भावना तथा सूझबूझ ने गोमाता की रक्षा कर दी। श्री पवन कुमार जी का कहना कि मैं उन्हीं दिनों एक भीषण पारिवारिक संकट में फंसने के करीब था। गुरुदेव की कृपा से तथा गाय की रक्षा करने से जल्दी ही बच निकला।

❑ ❑ ❑

47. गुरुदेव का हरियाणा के गांवों में विचरण हो रहा था। एक गांव में एक आर्य समाजी भाई आया और धार्मिक चर्चा करते-करते कहने लगा कि 'आप तो नास्तिक हैं, क्योंकि आप ईश्वर को नहीं मानते'। गुरुदेव वाद-विवाद में उलझना नहीं चाहते थे, केवल उसको दृष्टि देने के उद्देश्य से फरमाने लगे कि 'हमने ईश्वर के लिए, भगवान् के लिए घर-परिवार छोड़ा, संसार का त्याग किया, संयम पालते हैं। तूने ईश्वर के लिए क्या छोड़ा?' वह बोला, 'मैंने तो कुछ नहीं त्यागा'। गुरुदेव ने समझाया, 'जब तूने प्रभु के नाम पर कुछ त्याग ही नहीं किया, तो तेरी आस्तिकता किस काम की? आस्तिक हो हम हैं, जिन्होंने प्रभु के लिए सब कुछ छोड़ दिया'। और वह भाई सन्तुष्ट हुआ।

❑ ❑ ❑

48. गुरुदेव दिल्ली में पूज्य बाबा जी म. की सेवा में विराजमान थे। कोई अपनी गृह-समस्या लेकर आ गया। कहने लगा- 'जब से शादी हुई है, तभी से मारा-मारा फिर रहा हूँ।' पत्नी के स्वभाव का बार-बार जिक्र करता रहा। अपनी कोई गलती मानता ही नहीं था। गुरुदेव ने कुछ समझाने की कोशिश की तथा उसे टालने का भी प्रयास किया। पर वह भाई बोलता ही रहा। गुरुदेव ने उसे झिंझोड़ने की दृष्टि से कह दिया कि 'शादी तूने करवाई है, तो तू ही भुगत, हमने तो नहीं करवाई। भाई तो चला गया, पर तुरन्त बाबा जी म. ने बुलाया और कहने लगे। 'ये भाषा

साधु की नहीं है, इसका दण्ड लो तथा आगे से ध्यान रखो'। एक व्रत का दण्ड देकर बाबा जी म. ने अनुशासन का पाठ सिखाया।

❑ ❑ ❑

49. सन् 1952 या 1953 की घटना है। चाँदनी चौंक बारादरी में प्रवचन का समय होने वाला था। करवा चौथ का दिन था। तभी एक बालक गुरुदेव के पास आया कि हमारे घर में माता जी, पिता जी लड़ रहे हैं, हम तो परेशान हो गए, आप कृपा कर दो। पूज्य बाबा जी म. तक बात पहुँची। उन्होंने फरमाया कि 'कथा थोड़ी देर में कर देना। इनके घर का क्लेश मिटाने के लिए मंगलपाठ सुना आ और कुछ समझा आ।' गुरुदेव उस घर पर पधारे। दोनों पति-पत्नी काफी क्षुब्ध स्थिति में थे। दुखित इतने थे कि आत्महत्या तक की भी नौबत आ सकती थी। गुरुदेव ने हल्का-सा इशारा किया और वे दोनों गुरुदेव के साथ ही प्रवचन में आ गए। करवाचौथ होने के कारण गुरुदेव ने अपने प्रवचन में पति-पत्नी के पारस्परिक कर्तव्यों का उल्लेख किया। और दोनों को मार्ग मिला। शान्ति का माहौल बना तथा उजड़ने के कगार पर खड़ा एक परिवार दोबारा बस गया।

❑ ❑ ❑

50. गुरुदेव अपने चरणों में आने वाले युवकों को सामायिक की प्रेरणा बहुत देते थे। प्रवचनों में किसी महापुरुष की (गजसुकमाल, चंदना, अर्जुन माली आदि) जीवनी सुनाकर कहते कि इनके नाम पर सामायिकों का चढ़ावा चढ़ाओ। व्यवसाय प्रारंभ करने के इच्छुक या नौकरी लगने के बाद आर्शीवाद के इच्छुक युवकों को गुरुदेव यही कहा करते थे कि एक सामायिक जरूर करो। एक बार एक युवक ने गुरुदेव से सामायिक का नियम ले लिया। जब घर पर पहुँचा तो धर्मपत्नी को बताया कि गुरुदेव ने मुझे नियम करवाया है। वह कहने लगी 'आप से नियम निभेगा नहीं, टूट जाएगा। पाप ज्यादा लगेगा। अभी तो नियम ताजा ही है। गुरु म. को

वापस दे आओ'। बेचारा युवक घबरा गया। वापस गुरुदेव के पास आया। कहते हुए संकोच कर रहा था। गुरुदेव समझ गए कि मन में कमजोरी आ गई है। उससे पूछा कि क्या बात है? कहने लगा 'गुरुदेव, घरवाली कहती है कि नियम निभेगा नहीं, अतः वापस कर आ'। गुरुदेव ने पूछा– 'तुम हमें बड़ा समझते हो या घरवाली को?' युवक बोला-'गुरुदेव,बड़े तो आप ही है, इसमें क्या दो राय है'। गुरुदेव ने फिर कहा, 'फिर मैं तुझे कह रहा हूँ कि तुझसे नियम निभ जाएगा, जरा अपना मन पक्का कर ले, पत्नी की हर बात में हाँ में हाँ मत मिलाया कर।' युवक ने गलती की क्षमा मांगी और दृढ़तापूर्वक सामायिक करने लगा।

❑ ❑ ❑

51. गुरुदेव किसी बड़े शहर में चातुर्मास हेतु विराजमान थे। पर्युषणों के दिन समीप थे। दो बच्चों को लेकर एक पिता आया। मांगलिक सुनकर जाने लगा तो गुरुदेव ने पूछा– 'अब किधर जाओगे? पिता ने कहा–'बच्चे नहीं मानते, इन्हें सिनेमा दिखाने ले जा रहा हूँ।' गुरुदेव ने सारी स्थिति को अपनी पैनी नजर से भाँप लिया। कहने लगे 'बच्चों को तो मै समझा दूंगा, तू अपनी बात बता'। पिता झेंप गया। कहने लगा-'गुरुदेव, सचमुच आपने मेरी दुर्बलता को पहचान लिया। वस्तुतः मैं ही सिनेमा जाना चाहता था, बच्चों का तो बहाना ही था। फिर गुरुदेव ने उसे दायित्व का बोध कराया और उसे तथा बच्चों को सिनेमा का कुछ दिनों के लिए नियम दिलवाया तथा सामायिकें करवाई।

❑ ❑ ❑

52. गुरुदेव ने चाँदनी चौंक में रहते हुए कितने ही घरों को धर्मदृष्टि दी। पारिवारिक कटुताओं को मिटा उन्हें जीवन जीने की कला सिखलाई। एक युवक गुरुदेव के चरणों में आकर कहने लगा, 'दुनिया में मेरे दो दुश्मन हैं'। गुरु म. ने पूछा कि कौन-कौन? तो वह बोला– 'मेरी माँ और पिता'। गुरुदेव ने माता-पिता का महत्व बताने का बड़ा सुन्दर ढंग अपनाया।

बोले 'तेरे दो नहीं, तीन दुश्मन है'। युवक समझ नहीं पाया कि तीसरा कौन है। गुरुदेव ने फरमाया— 'तीसरा मैं हूँ, क्योंकि मैं तुझे माता-पिता की सेवा करने और आज्ञा मानने को कहूँगा। ये तुझे बुरा लगेगा और तू मुझे भी दुश्मन समझेगा'। वह युवक शर्मसार हो गया। धीरे-धीरे गुरुदेव ने उसे समझाकर शांत किया और उनकी पारिवारिक कटुता दूर करवाई।

❑ ❑ ❑

53. एक श्रावक गुरुदेव के चरणों में बैठा था। कहने लगा-'घर में क्लेश है, मन बड़ा परेशान रहता है।' गुरुदेव ने उससे कहा—'तुम्हारी जेब में कितने नोट हैं?' ये सुनकर श्रावक हैरान हो गया कि ये संत भी रुपए के चक्कर में आ गए। फिर भी जेब से निकालकर दो नोट दे दिए। गुरुदेव ने पूछा— 'इन नोटों के छपने का साल कौन सा है?' श्रावक ने उत्तर दिया-एक सन 1950 का एक सन 1954 का। 'क्या इन दोनों की कीमत में कोई फर्क है?' श्रावक बोला 'नहीं, दोनों की समान कीमत हैं।' अब गुरुदेव ने नोट उसकी जेब में रखवा दिए और विषय को स्पष्ट करते हुए फरमाने लगे— 'जैसे इन दो नोटों के साल भिन्न हैं, पर कीमत भिन्न नहीं है, ऐसे ही यदि तुम अपने बड़े और छोटे बच्चों को समान दृष्टि से देखो, तो क्लेश नहीं रहेगा। एक बेटा 4 साल पहले पैदा हो गया, दूसरा चार साल बाद, तो इससे क्या फर्क पड़ता है। इस फर्क को तर्क (नष्ट) कर दो, घर का नरक अर्थात् क्लेश मिट जाएगा।' श्रावक की आँखों में आँसू आ गए। गुरुदेव समझ गए कि ये आँसू पश्चात्ताप और प्रायश्चित्त के हैं और सुधार की प्रकिया प्रारंभ हो गई है। बात वहीं रोक दी गई, लेकिन परिणाम की ओर गुरुदेव सतर्क थे। घर ठीक होने के बाद ही उन्हें आत्मसंतोष हुआ।

❑ ❑ ❑

54. एक युवक गुरुदेव के पास विनति लेकर आया कि मेरी धर्मपत्नी अस्वस्थ है, उसे मंगल पाठ सुनाने की कृपा करना। श्री बाबा जी म. की

आज्ञा लेकर घर गए! मकान के प्रारंभिक अंधेरे-से कमरे में किसी के कराहने, रोने की आवाज-सी आई। गुरुदेव रुकने लगे, तो उस युवक ने कहा—'गुरुदेव आगे पधारो'। गुरुदेव, आगे बढ़े, पर मन वहीं अटक गया। आगे उसकी धर्मपत्नी बैठी थी। ठीक-सी थी बीमारी के विशेष लक्षण नहीं दिखे। पूछा-क्या तकलीफ है? 'गुरुदेव, जुकाम चल रहा है, अभी डॉक्टर से दवा लेकर आया हूँ। आप मंगल-पाठ सुनाने की कृपा करें।' गुरुदेव ने पुनः पूछ लिया— 'उस कमरे में कौन कराह रहा है?' नितान्त उपेक्षा भाव से युवक ने उत्तर दिया— 'वो तो हमारी बुढ़िया माँ है, बीमारी का मक्कर (बहाना) भर रही है। गुरुदेव ने बातों के पीछे की असलियत को भाँप लिया। कहने लगे-'मैं मांगलिक तो सुनाऊँगा, पर यहाँ नहीं, जहाँ तुम्हारी माँ है, वहाँ सुनाऊँगा। तुम्हारी बीवी को मंगली सुननी है, तो वहीं आकर सुने'। गुरुदेव वहाँ पधारे। बुढिया की हालत पूछी उसके दिल के दर्द को समझा। लड़के को उसका कर्तव्य समझाया। पत्नी-भक्त बनने की बजाय मातृ-भक्त बनने की प्रेरणा दी। इससे लड़का तो मसले को समझा ही, पत्नी भी समझ गई। चरण छूए, बुढ़िया प्रसन्न हो गई और गुरुदेव के प्रति कृतज्ञता जताते हुए कहने लगी, 'तेरे खूब सारे चेले हों, तेरी खूब सेवा करें'। गुरुदेव मन ही मन प्रसन्न होकर लौटे। बाबा जी म. को आकर बताया, तो वो भी बहुत प्रसन्न हुए।

❑ ❑ ❑

55. धर्म-निष्ठ व्यक्ति के जीवन में कषाय की वृद्धि को देखकर गुरुदेव मानसिक खेद का अनुभव करते थे। उनकी दृष्टि थी कि हर धर्मानुरागी का व्यावहारिक जीवन उपशान्त हो। एक बहन ने गुरुदेव के चरणों में अठाई की तपस्या की। उसका घर काफी दूर था, फिर भी गुरुदेव उसकी श्रद्धा को बल देने के लिए पारणे के दिन उसके घर पधारे। घर में बड़ी विषमता का वातावरण था। पता चला कि सास से पारणा-सामग्री बनाने में कुछ देरी हो गई, तो इसी बात पर बहू का 'पारा' गर्म हो गया।

उचित अवसर देखकर गुरुदेव ने तपस्या का मूल स्वरुप समझाया और आपस में खिमत-खिमावना करवाई। तभी गुरुदेव ने उनका घर फरसा।

❑ ❑ ❑

56. बारादरी में गुरुदेव के पास एक धर्मनिष्ठ श्रावक आता था। हर क्रिया में विवेक रखता था। अपने प्रत्येक उपकरण की प्रतिलेखना करता था। आसन, पुस्तक, धोती, मुँहपत्ती सबकी प्रतिलेखना करता था। गुरुदेव को उसकी ये द्रव्य क्रियाएँ अच्छी लगती थी, लेकिन उसे भाषा का विवेक बिल्कुल नहीं था। एक बार गुरुदेव ने उसे मुँहपत्ती की प्रतिलेखना करते देखा, तो हास्य का पुट देते हुए कहा– 'श्रावक जी, थोड़ी जीभ की भी प्रतिलेखना कर लिया करो'। श्रावक जी समझ गए। तदनन्तर उसके स्वभाव और भाषा में अन्तर आ गया।

❑ ❑ ❑

57. गुरुदेव अपने भक्त श्रावकों के भीतरी जीवन की जानकारी कभी कभार उनके घरेलू नौकरों से भी कर लेते थे। एक सेठ जी का नौकर एक दिन आहार की विनति लेकर आया। गुरुदेव को वह बालक बड़ा सौम्य, निर्दोष और भला प्रतीत हुआ। प्रतिदिन उसे स्थानक में आने को कहा। एक दिन कहने लगा कि बाबू जी ने मुझे काफी डाँटा, क्योंकि मुझसे चीनी का एक बर्तन गिर गया और टूट गया। गुरुदेव ने बालक को ढाढस दिया। एक दिन गुरुदेव उनके घर गए। सेठजी की धर्मपत्नी से पूरा डिनर सैट छूट गया और टूट गया था। गुरुदेव ने चुटकी लेते हुए सेठ जी से कहा– 'इन्हें भी तो डाँट कर दिखाओ, नौकरों को तो एक बर्तन टूटने मात्र से ही सजा देने लगते हो'। सेठ जी न केवल शर्मिन्दा ही हुए, अपितु गल्ती का अहसास भी करने लगे। उसके बाद उनके व्यवहार में बहुत तब्दीली आई।

❑ ❑ ❑

58. गुरुदेव न केवल जनता को समझाते ही थे, यदि समझाने की स्थिति हो, तो श्रावकों से प्रेरणा भी लेते थे। एक नवविवाहित दम्पती बम्बई से बारादरी आए। उन्हें ऐसी जानकारी थी कि वाचस्पति गुरुदेव श्री मदन लाल जी म. दिल्ली बारादरी में विराजमान हैं। वहाँ आकर पता चला कि वे नहीं, उनके शिष्य हैं। वह जोड़ा दर्शन करने ऊपर आया। कहने लगा कि 'हमें वापस बम्बई जाना है, पंजाब जा नहीं सकते। आप वाचस्पति गुरुदेव के शिष्य हैं अतः हमें 'आशीर्वाद' दो'। गुरुदेव फरमाते थे कि तब तक हमें इस 'आशीर्वाद' की बला का कुछ पता नहीं था, क्योंकि कि जैन परम्परा के अनुसार सन्त आशीर्वाद नही, धर्म-संदेश देते हैं। गुरुदेव कुछ देर असमंजस में रहे। वह युवक गुरुदेव की परेशानी को समझ गया और कहने लगा-'आप उलझो नहीं, हम किसी और चीज का आशीर्वाद आपसे नहीं मांग रहे। हम तो आपसे यही मार्गदर्शन चाहते हैं कि आप हमें ये कहें कि मैं इसको सही समझू तथा ये मुझे सही समझे।' गुरुदेव उस युवक के प्रबुद्ध चिन्तन से बड़े प्रभावित हुए और कहने लगे-हमारा ऐसा आशीर्वाद तो सदा ही तुम्हारे साथ है। आपसी सही समझ का यह सूत्र गुरुदेव के लिए जीवन-मंत्र बन गया।

❑ ❑ ❑

59. एक युवक ने गुरुदेव से कहने लगा-'आपके कहने से बेला, तेला तो मैं कर नहीं सका, पर अब तो तीन दिन भूखा रहना पड़ेगा'। गुरुदेव ने कारण पूछा, तो बताने लगा कि 'घरवाली पीहर गई है, माँ को खाना बनाना नहीं आता, अतः तीन दिन भूखा मरने की नौबत आ गई'। पत्नी के प्रति उस युवक की अन्ध-भक्ति देखकर गुरुदेव ने उसे कहा 'भाई, जब तक तेरी शादी नहीं हुई थी, तब तक माँ के हाथ का ही भोजन करता था। अब शादी होने के बाद तुझे माँ के हाथों में से दुर्गन्ध आने लगी। तुझे शर्म आनी चाहिए। पत्नी की इतनी ज्यादा गुलामी भी अच्छी नहीं है।' फिर गुरुदेव ने वासुदेव श्रीकृष्ण का प्रसंग सुनाया, जिसमें उन्होंने अपने शिक्षाचार्य से वरदान मांगा था कि मैं जीवन-भर अपनी माँ के हाथ

का भोजन करता रहूँ। गुरुदेव के मंगल उपदेशों का इतना गहरा असर उसके मन पर पड़ा कि उसने माँ का कभी अपमान नहीं किया।

60. गुरुदेव ने कितने ही युवकों की अंधकारपूर्ण जिन्दगी में धर्म की किरणें फैलाई थी। एक युवक आया। गुरुदेव ने उससे उसका नाम पूछा तो कहने लगा कि 'सुदर्शन'। अपने नाम-राशि युवक से कुछ आत्मीयता-सी गुरुदेव के मन में जागृत हो गई। सप्त कुव्यसन का त्याग कराने लगे, तो पता चला कि वह नियमित रुप से मदिरा का सेवन करता है। गुरुदेव ने एक विशिष्ट अंदाज में उससे कहा, 'या तो अपनी आदत बदल ले या फिर ये 'सुदर्शन' नाम बदल ले। दोनों एक साथ नहीं चल सकते'। वह युवक कुछ देर तो सोचने लगा, फिर अपना संकल्प दृढ़ करते हुए बोला-'ये नाम तो नहीं बदलूंगा, क्योंकि इससे आपकी याद आती रहेगी। हाँ, शराब पीने की आदत छोड़ देता हूँ'। यूं कल्याण किया उसका।

❑ ❑ ❑

61. एक सुशिक्षित युवक दर्शनार्थ आया। उसने तीन विषयों में M.A. किया था। विदेश जाने का इच्छुक था। गुरुदेव ने पूछा- नवकार-मन्त्र याद है? कहने लगा-'बचपन में किया था, अब तो नहीं हैं। इस पुरानी चीज को छोड़ो, कोई नई चीज बताआ'। गुरुदेव के फरमाया—'शाश्वत चीजें कभी पुरानी नहीं पड़ती। सूर्य का प्रकाश, वायु का स्पन्दन, जल की जीवनोत्पादकता सदा से थी, है और रहेगी। ऐसे ही महामन्त्र नवकार भी कभी पुराना नहीं पड़ता'। गुरुदेव के तर्कों से, प्रेम पूर्ण समझाने से वह इतना प्रभावित हुआ कि विदेश जाने से पूर्व सामायिक के 9 पाठ सीखे तथा नियमित सामायिक करने लगा।

❑ ❑ ❑

62. एक बार गुरुदेव ने तीन युवकों को जीवन-पर्यन्त एक-एक सामायिक प्रतिदिन करने का नियम केवल इस आधार पर दिलवाया कि उन तीनों का नाम भी 'सुदर्शन' था।

63. एक किशोर समस्या-ग्रस्त था। उसका अपने ही रिश्ते की किसी कन्या से प्रेम-संबन्ध हो गया। दोनों ने एक दूसरे से विवाह का वचन भी दे दिया। उसने अपने मन की बात गुरुदेव के चरणों में रखी। कहने लगा कि 'इस सम्बन्ध को न तो घर वाले स्वीकार करेंगे, न समाज ही मान्यता देगा तथा मेरा मन भी कुछ-कुछ अनुचित समझता है, लेकिन उस लड़की से अब किस मुँह से मना करूँ? गुरुदेव ने उसे एक प्रयोगात्मक उपाय दिया कि, 'रक्षा-बंधन के दिन उनके घर चले जाना और उस कन्या के माता-पिता के सामने उसे 'बहन' कहकर राखी बंधवा लेना। वह लड़की स्वतः समझ जाएगी।'। उस युवक की समस्या का समाधान हो गया। राखी से पूर्व उसने कन्या से कोई सम्पर्क नहीं किया। राखी वाले दिन राखी बंधवा आया और बड़ी समस्या से बच गया। वह युवक बड़ा सदाचारी निकला तथा जीवन-भर गुरुदेव का आभार मानता रहा।

❑ ❑ ❑

64. एक धनी परिवार का बालक पढ़ता तो बहुत था, पर परीक्षा में पास नहीं होता था। एक ही कक्षा में तीन-तीन बार फेल होना परिवार के लिए चिन्ता का विषय था। एक दिन उस बालक के माता-पिता ने गुरुदेव के पास आकर समस्या रखी और मंत्र मांगने लगे। उस वक्त तो गुरुदेव ने उन्हें टाल दिया, पर एक दिन आहार के लिए उनके घर पधारे। पूछा-'लड़के का अध्ययन-कक्ष देखना चाहता हूँ।' माता-पिता बोले 'उसमें तो उसके सिवा और कोई जाता नहीं' गुरुदेव ने कहा—'पर हम तो गुरु हैं, हमें तो वह नहीं रोकेगा।' ये कहकर उसके कमरे में प्रवेश किया। कमरा क्या था, अश्लील चित्रशाला थी। पुस्तकों के नाम पर जासूसी या फिल्मी उपन्यास थे। गुरुदेव ने उन्हें समझाया कि असली समस्या क्या है। आप समझते हो, लडका पढ़ता रहता है, लेकिन इसकी पढ़ाई का विषय पाठ्यक्रम नहीं, नाविल हैं। लड़के को भी अपनी गलती का अहसास हुआ। सारा स्वरूप बदल लिया। उस वर्ष वह अपनी कक्षा में सर्वप्रथम आया।

❑ ❑ ❑

65. एक भाई ने गुरुदेव से निवेदन किया कि मैं आपका फोटो चाहता हूँ। गुरुदेव जी म. ने उसे मना करने की बजाय फरमाया– "मैं भी अपना फोटो चाहता हूँ,"। भाई बड़ा प्रसन्न हुआ और कहने लगा 'फिर तो ठीक है, मैं अभी फोटोग्राफर को लेकर आता हूँ।' गुरुदेव ने उसे अपनी बात स्पष्ट करते हुए कहा–'ऐसा फोटोग्राफर लाना, जो मेरी आत्मा का फोटो खींच ले, ताकि आत्मा पर लगे कषायों को देखकर उनका परिमार्जन कर सकूँ। ऊपर के फोटो की मुझे कोई जरूरत नहीं है, न हम खिंचवाते हैं।' भाई उस विषय में असमर्थ था, अतः चुपचाप गुरुदेव को श्रद्धा-सहित वन्दन कर चला गया।

❑ ❑ ❑

66. चाँदनी चौंक में गुरुदेव के प्रवचन में एक भाई नित्यप्रति आता। लेकिन उसके बैठने का स्थान एक खास भाई के पीछे ही होता। कई बार भीड़ भी होती, तो भी सब को लांघ कर वहीं बैठता। गुरुदेव ने उसकी स्थान-आग्रह-वृत्ति को पहचान लिया और एक दिन पूछ लिया कि 'भाई, तुम फलां भाई के पीछे ही क्यों बैठते हो?' उस भाई के उत्तर ने गुरुदेव को भी चकित कर दिया। वो कहने लगा, 'मैं अपने से आगे बैठे हुए उस भाई की बालों की चोटी देखा करता हूँ। यदि वह उठी हुई हो, तो हिसाब लगाता हूँ कि आज मार्किट तेज रहेगा। यदि चोटी पड़ी हुई हो तो मार्किट धीमा रहेगा। और उसी आधार पर फिर सट्टा लगाता हूँ'। लोगों की ऐसी मनोवृति देखकर गुरुदेव को आश्चर्य भी हुआ और अफसोस भी। फिर उस भाई को धर्म-दृष्टि दी।

❑ ❑ ❑

67. चाँदनी चौंक में यू.पी. का एक लाला गुरुदेव के पास आया। अर्ज करने लगा कि 'आते समय मुझे रेल में सीट नहीं मिली थी। बड़ी परेशानी रही। इस बार ऐसी मंगली सुना दो कि पूरी सीट खाली मिले।' गुरुदेव मुस्कराने लगे। मंगली सुना दी। लाला जी स्टेशन पर गए। गाड़ी

तैयार खड़ी थी खाली सीट ढूंढता रहा। आखिरी डिब्बे को देखा-बिल्कुल खाली था। खुश होकर बैठ गया। पर एक घण्टे तक भी गाड़ी नहीं चली। उसने बाहर झाँक कर देखा तो पाया कि गाड़ी तो कभी की जा चुकी थी।

❑ ❑ ❑

68. गुरुदेव यू.पी. में पधारे। एक गाँव में एक परेशान आदमी आया। विनति करने लगा,गुरुदेव! इकट्ठी तीन मंगली सुंना दो।' गुरुदेव को तीन मंगली इकट्ठी सुनने का प्रयोजन समझ नहीं आया। पूछने पर वह बोला, 'मेरे घर में पानी के नल में गन्दा पानी निकलता है, एक मंगली उसके लिए कि साफ निकले। मेरी लड़की को ससुराल वालों ने छोड़ा हुआ है, दूसरी उसके लिए कि वे उसे ले जाएँ। मेरी भैंस ने कई दिनों से दूध देना छोड़ा हुआ है, तीसरी उसके लिए कि दूध देना चालू कर दे।' गुरुदेव उस की धर्म के प्रति समझ को देख आश्चर्य-चकित रह गये।

❑ ❑ ❑

69. सन् 1960 के रोहतक चातुर्मास के पश्चात् गुरुदेव ने अपने पावन गुरुओं के दर्शन गोहाना में किए। एक दिन वाचस्पति गुरुदेव ने पूछा-'ये बताओ कि अंकुश झेलने वाला बड़ा है या अंकुश लगाने वाला?' गुरुदेव तो सुनने के लिए हाजिर थे, अतः चुप रहे। अन्ततः वाचस्पति गुरुदेव ने ही अपना विवेचन प्रस्तुत करते हुए फरमाया कि इन दोनों से भी अंकुश झेलने वाला बड़ा है। और चूंकि तुम अंकुश झेलने में समर्थ हो, इसलिए तुम बहुत बड़े हो'।

❑ ❑ ❑

70. 1998 में श्री गुरुदेव ने तप। श्री नरेन्द्र, मुनि जी म. का स्वतंत्र चातुर्मास नाभा (पंजाब) में करवाया। चार मई को गुरुदेव का मंगल-पाठ सुनकर अम्बाला से चले। उसी दिन दोपहर को उन्हें गुरुदेव का पत्र मिला। लिखा था "मैंने वाचस्पति गुरुदेव से तेरे लिए झोली फैलाकर वरदान

मांगा है कि नरेन्द्र मुनि का स्वास्थ्य ठीक रहे और उन्होंने मेरी पुकार सुनी है, ऐसा मेरी आत्मा कहती है। तू पूर्ण स्वस्थ रहेगा।" गुरुदेव के हृदय से निकले स्नेहोद्गार शत-प्रतिशत सफल हुए। वे लगभग 6 महीने तक स्वतंत्र विचरण करते रहे। उन्हें और शारीरिक कष्ट तो क्या आना था, कभी जुकाम भी नहीं हुआ।

❑ ❑ ❑

71. गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. से ज्यादा मिलना तो नहीं हुआ, पर 1994 में बड़ौत में उनके दर्शन हुए थे। हमारे मित्र जयप्रकाश जी (पूर्व एम. पी. एवं केन्द्रीय मन्त्री) गहरे संकट में थे। चौटाला परिवार से उनका विरोध चल रहा था। उन पर उचाना (जीन्द) में फायरिंग हुई, वे बाल-बाल बच गए, पर दहशत के शिकार हो गए। कई दिन तक घर में खाना नहीं बना। घर से बाहर निकलने का साहस खत्म हो गया। एक दिन हम दो तीन दोस्त उनके घर गए, तो उनके हालात देखकर परेशान हो गए। वापस आकर मैंने अपने मित्र रामकुमार जैन (सोनीपत) को बताया तो वे कहने लगे कि आप उन्हें किसी अच्छे सन्त के पास ले जाएँ। वे उनका भय निकाल देंगे। पूछने पर उन्होंने गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. का नाम बताया। हम जयप्रकाश जी को बड़ौत ले गए। बरसात हो रही थी। रामकुमार जी ने हम सबका परिचय कराया और सारा वृत्तान्त सुनाकर उनसे कृपा की याचना की। पहले तो गुरु म. बोले कि "मै क्या कर सकता हँ? सब कर्मों का खेल है। संतों को भी शुभ-अशुभ कर्म भोगने पड़ते हैं। परंतु हमने अधिक विनति की तो उनका हृदय पिघल गया। जे.पी. के सिर पर हाथ रखा और कहने लगे, 'जाओ, वो (चौटाला) तुम्हारा क्या बिगाड़ेगा?' ये सुनते ही जे.पी. का मन खिल उठा। अपने मित्रों से कहने लगा, "अब मैं निश्चित हो गया हूँ। जब आया था, मेरे शरीर में उठने-बैठने की भी हिम्मत नहीं थी, पर अब तो मैं दौड़ भी सकता हूँ"।

थोड़ी देर बाद हमने नीचे जाकर खाना खा लिया और फिर गुरुदेव के चरणों में आ बैठे। पूछा, गुरुदेव अब चौटाला की पार्टी में तो गुजारा

मुश्किल है, तो आगे क्या करें?' गुरु म. ने विचार किया और बोले, "बंसी लाल जी की हरियाणा विकास पार्टी में ठीक रहेगा, क्योंकि बंसीलाल जी को एक बार फिर कुर्सी मिलने वाली है।" हम मंगल-पाठ सुनकर आशीर्वाद लेकर वापस आ गए। फिर जे.पी. ने बंसी लाल जी की पार्टी ज्वाइन कर ली। 1996 में उसकी पार्टी से हिसार की एम.पी. की सीट जीती। हमें पक्का विश्वास है कि गुरु म. अनोखे संत थे।

–सुरेश मलिक, बहादुरगढ़।

❑ ❑ ❑

72. पूज्य गुरुदेव जी म. से मैंने 1971 में गुरु-धारणा ली, जिसमें उन्होंने सात कुव्यसनों का नियम करवाया। मैं कालेज में पढ़ रहा था। गुरुदेव के प्रति असीम श्रद्धा होने से मैंने सब नियम स्वीकार कर लिए। 1972 में श्री राम कालेज ऑफ कामर्स, दिल्ली में जब मैं B.Com.(Hon.) कर रहा था, तब 18-20 लड़कों का एक ग्रुप घूमने निकला और हम 'मोहन मीकिन्स' की फैक्टरी में पहुँचे। वह भारत की अति विख्यात शराब निर्माता कम्पनी है। कम्पनी की तरफ से हमें शराब पेश की गई। ज्यादातर लड़के पीने लगे। वहाँ के कर्मचारी पीने का आग्रह करने लगे। मैंने नियम के कारण मना कर दिया। इस बात पर एक कर्मचारी ने कटाक्षकर कहा, "बाबू जी, गंगा पर आकर भी स्नान नहीं किया, तो क्या फायदा हुआ?" उसकी बात सुनकर मुझे भी जोश-सा आ गया और मैंने एक पैग हाथ में उठा लिया। जैसे ही मैंने पैग लिया, तभी मुझे लगा कि मेरे सामने गुरुदेव जी म. खड़े हैं। मैं पीने की हिम्मत नहीं कर सका। काफी देर उसी स्थिति में खड़ा रहा। थोड़ी देर में वहां के डायरेक्टर आ गए उनके आते ही सबने बोतल रख दी और मैंने भी। उस दिन सचमुच गुरुदेव ने मुझे बचा लिया।

–सुरेश जैन, कादम्बरी, रोहिणी

❑ ❑ ❑

73. 1973 में हमारे कालेज के 6 लड़कों का एक ग्रुप छ।ब।ब के कैम्प के लिए हिमाचल प्रदेश गया। सेना के जवानों के साथ हमें ठहराया गया। भंयकर सर्दी के दिन थे। सेना में एक दिन छोड़कर मांस परोसा जाता था तथा शराब भी दी जाती थी। गुरुदेव के दिए नियम का मुझे ध्यान था, अतः कड़ाई से नियम को निभाया। कैम्प पूरा होने पर हम वापस चले, तो हमें खाने को कुछ नहीं मिला। स्टेशन पर भी अण्डों की एक रेहड़ी के सिवाय कुछ नहीं था। भूख जोरों की लगी हुई थी। बाकी लड़कों ने अंडे उबलवाकर खा लिए। फिर मुझ पर दबाव डालने लगे। कहने लगे, सर्दी है। या तो खा ले, नहीं तो मर जाएगा। मैंने मुसीबत में गुरुदेव को याद किया और बल मांगा। मुझे लगा कि गुरुदेव मेरे ऊपर हैं। मेरा बाल भी बांका नहीं होगा। मैंने तुरन्त उन्हें जवाब दिया कि एक दिन न खाने से भला कोई मरता है? हमारे गुरु महाराज तो कई-कई दिन तक व्रत रखते हैं। इस पर वे चुप हो गए और गुरुदेव की कृपा ने मुझे फिर धर्मसंकट से उबार लिया।

–सुरेश जैन, कादम्बरी, रोहिणी

❑ ❑ ❑

74. श्रद्धा की रवानी : मास्टर जी की जुबानी– मेरा पूज्य गुरुदेव से आध्यात्मिक संपर्क 1966 सितम्बर मूनक में हुआ। जब उन्होंने मुझे सप्त कुव्यसन त्याग के साथ सम्यक्त्व का दान दिया। उसके बाद प्रतिवर्ष चातुर्मास में मुझे दर्शनों का सौभाग्य मिलता रहा। 1972 जून से 1973 जुलाई तक जीन्द में मेरी नियुक्ति हुई। संभवतः ये मेरे लिए कोई ईश्वरीय वरदान ही माना जाएगा, क्योंकि मेरे तबादले के साथ ही गुरुदेव का चातुर्मास हो गया। जैन-अजैन श्रोताओं का वहां समन्दर ही लहराता था। गुरुदेव जी म. ने प्रेरणा दी और श्रद्धेय श्री शांति मुनि जी म. ने मुझे भक्तामर, महावीराष्टक, 25 बोल तथा श्रावक का प्रतिक्रमण सिखाया। प्रत्येक धर्म-क्रिया में हमने बढ़ चढ़कर भाग लिया। ये मेरा अद्भुत अनुभव रहा है कि मेरे मन में जो भी प्रश्न या जिज्ञासा उत्पन्न होती। उसे बिना

बताए ही। गुरुदेव अपने प्रवचन में समाहित कर देते थे। एक-दो घटनाएं प्रस्तुत हैंः—

1. 15 अगस्त की छुट्टी पर मैं अपनी रिश्तेदारी में ऐंचरा गांव में गया हुआ था। हमारे मौसा, गांव के सरपंच श्री हरिराम जी के घर एक कैलेण्डर लटका हुआ था। जिसमें श्रीराम जी के हाथ पर एक गिलहरी को चित्रित किया हुआ था। उन्होंने मुझसे पूछा कि इस चित्र के पीछे क्या घटना है? मैंने अपनी अनभिज्ञता प्रकट कर दी, पर ये कहा कि गुरुदेव जी म. से पूछकर बता दूंगा। अगले रोज मैं वापस जीन्द आ गया। 17 ता. को सुबह प्रवचन में आया। सोचा ये था कि दोपहर को आकर अपनी जिज्ञासा का समाधान पूछंगा। पर चमत्कार ये हुआ कि गुरुदेव जी म. ने प्रवचन में वही प्रसंग सुना दिया, जिसकी मुझे जिज्ञासा थी। उन्होंने फरमाया कि रामेश्वरम् में जब वानर-दल समुद्र-सेतु का निर्माण कर रहे थे, तब भारी भरकम नुकीले पत्थरों को देखकर एक गिलहरी ने सोचा कि श्री राम जी यहां से गुजरेंगे, तो उनके पैरों में ये पत्थरों की नोकें चुभेगी। मुझे भी अपनी शक्ति के मुताबिक श्री राम जी की सेवा करनी चाहिए। पहले वह पानी में डुबकी लगाती, गीले शरीर को रेत में लोट-पोट करती, फिर उसी रेत को पत्थरों पर आकर झाड़ देती। हनुमान ने देखा कि कहीं हमारे आने-जाने से ये गिलहरी मर न जाए। वह उसे उठाकर श्रीराम के पास ले आए। श्री राम ने उसकी प्रंशसा करते हुए हनुमान जी से कहा कि हनुमन्, तेरी शक्ति अनन्य है। पर इस गिलहरी की स्नेह-भावना तुझसे भी बढ़कर है। और राम ने उसके शरीर पर अपनी अंगुलियां फिरा दी और उसके पश्चात् गिलहरी के शरीर पर दो धारियाँ सदा के लिए कायम हो गई। इस दृष्टान्त से गुरुदेव ने बिना पूछे ही मेरी जिज्ञासा का उत्तर दे दिया।

2. संवत्सरी पर गांव खन्दरा से पिता जी, छोटा भाई जगदीश उसका परिवार पौषध करने जीन्द आया। मेरे मन में आया कि गुरुदेव से विनति करूँ कि 'घर में माता-पिता की सेवा करना बच्चों का कर्त्तव्य है', इस विषय पर प्रवचन फरमाएँ पर कहने में संकोच कर गया, ये सोचकर कि कहीं मेरे परिवार के संबंध में गलत छवि न बन जाए। पर गुरुदेव तो शायद भावनाओं को पढ़ना जानते थे और उन्होंने प्रवचन में संतान का माता-पिता के प्रति और बड़ों का छोटों के प्रति जो कर्त्तव्य होता है, इस विषय में पर्याप्त प्रेरणा दी। मेरा मन धन्य-धन्य कह उठा। मेरे गुरुदेव ने एक शिष्य की भावना कैसे पूर्ण कर दी।

3. मेरी पारिवारिक सामाजिक कठिनाइयों का समाधान भी गुरुदेव की कृपा से होता था। चातुर्मास में ही ऐसा प्रसंग बना कि मेरे मौसा श्री कुंदन लाल जी (जाजवान वालों) की दर्शनार्थियों के लिए खाने की बारी थी, पर उन्हीं दिनों उनके घर में प्रसूति का प्रसंग आ गया, जिसे हरियाणा में सूतक मानते हैं। मैंने उनके नाम की बारी ले ली। जीवन में ये पहला मौका था। विशेष खुशी थी। दिन-भर सेवा-कार्य में परिवार जुटा रहा। शाम को मैंने प्रतिक्रमण किया। कथा सुनी और घर आया, तो धर्म-पत्नी ने बताया कि एक कान की बाली गुम हो गई। बहुत ढूंढी, पर मिली नहीं। मन में बड़ी चिन्ता बनी। एक ख्याल बार-बार आने लगा कि आज तो पहली बार इतनी पुण्य कमाई की थी और आज ही नुक्सान हो गया। गुरुदेव का तन्मय होकर ध्यान किया। मन ने कहा, वही रास्ता निकालेंगे। जैसे-तैसे नींद आई और सुबह जैसे ही बिस्तर समेटने लगे, वहीं सुरक्षित रखी हुई बाली मिल गई। मैंने कहा– 'गुरुदेव, आपकी महिमा अपरम्पार है'।

–मा. ओम प्रकाश जैन (मतलौडा)

75. जींद में एक संत को चश्मा बनवाना था। गुरुदेव से पूछा, 'क्या रंगीन शीशे डलवा लूं?' गुरुदेव ने फरमाया, "चश्मे से देखना है या चश्मा दिखाना है? सिम्पल शीशे डलवाओ और काम चलाओ।"

❑ ❑ ❑

76. श्री अरुण मुनि जी म. वैराग्य-भावना लेकर गुरुदेव के चरणों में आए। वे पंजाब की बोली और भोजन-शैली के आदी थे। गुरुदेव का हरियाणा में विचरण चल रहा था। वे हरियाणे की स्थल बोली और स्थल रोटियों से हड़बड़ा गए। गुरुदेव को अपने मन की बात बताई तो गुरुदेव ने सिर सहलाते हुए एक बात कही, "तुम संयम लेने आए हो या स्वाद?" और इस प्रश्न ने अरुण जी को उत्तर दे दिया।

❑ ❑ ❑

77. 1998 में गुरुदेव जी म. ने पटियाला में श्री राजेन्द्र मुनि जी म. का चातुर्मास बदल कर श्री अरुण मुनि जी म. को भेजा। जब वे गुरुदेव जी म. से विदा लेने लगे, तो विनति की 'आपके पावन पत्रों से मुझे विशेष बल मिलेगा, अतः कृपा करते रहना'। गुरुदेव हंसकर बोले "बाद में बताना कि तेरे पत्र ज्यादा आए या मेरे"। चातुर्मास के बाद गुरुदेव पटियाला पधारे। पूछने लगे, 'अरुण, बता कितने पत्र मिले?' उन्होंने कहा, 'गुरुदेव, 118 पत्र।' गुरुदेव ने फरमाया– 'नहीं 120 पत्र भेजे हैं।' श्री अरुण मुनि जी ने 118 पत्रों का संग्रह दिखाया, पर गुरुदेव ने फरमाया, 'देखो, दो पत्र इधर-उधर रखे होंगे?' उन्होंने सहयोगी मुनियों से पूछा, तो दो पत्र उनके पास थे। पूरे 120 दिनों के हिसाब से 120 पत्र। ये भी एक तरह का रिकार्ड ही होगा। पत्रों का रिकार्ड तो अन्यत्र भी मिल सकता है, पर उनके स्नेह का, कृपा का, उपकार का रिकार्ड कौन बनाएगा? प्रश्न तो ये है।

❑ ❑ ❑

78. पटियाला में श्री अरुण मुनि जी म. का चातुर्मास चल रहा था। नानक ज्वैलर्स' के श्री सतीश जी की धर्मपत्नी बहन पिंकी लम्बी तपस्या का लक्ष्य लेकर जुटी हुई थी। 15 व्रत हो गए, तो शरीर में दुर्बलता अनुभव होने लगी। श्री अरुण मुनि जी के मन में आया कि आगे प्रत्याख्यान नहीं करवाना। उसी सुबह गुरुदेव का पत्र आ गया, जिसमें एक वाक्य लिखा था, "पिंकी बहन को धर्म-संदेश कहना, उसका मासखमण पूरी शांति से होगा। आप पूरा ध्यान रखें"। बहन आई, तो पूछा क्या स्थिति है? कहने लगी-कल तो भाव कम थे, पर आज ठीक हूँ। 16 वाँ व्रत करवा दो। श्री अरुण मुनि जी म. ने पच्चक्खाण करवा दिया। उसके बाद तो मास-खमण पूरी तरह साता पूर्वक संपन्न हुआ। मासखमण की पूर्ति पर श्री अरुण मुनिजी म. ने गुरुदेव जी म. का वह पत्र दिखाया, तो वह भावाभिभूत हो गई।

❑ ❑ ❑

79. 1996 में संगरूर प्रवास। लुधियाना से श्री वृद्धि जैन दर्शनार्थ आए। गुरुदेव ने पूछा, "सामायिक करते हो?" श्रावक ने कहा, "पहले तो नियमित करता था। एक बार सामायिक के समय मेरे कपड़ों से पर्स चोरी हो गया। उसके बाद सामायिक छोड़ दी। गुरुदेव ने फरमाया, पर्स की चोरी से गया, ये द्रव्य का नुक्सान था। सामायिक छोड़ दी, ये आत्मा का नुक्सान है। इस नुक्सान से तो बच सकते हो"। इन दो वाक्यों ने ही उसकी सामायिक पुनः शुरू करवा दी।

❑ ❑ ❑

80. 18 अगस्त 1998 को अंबाला में गुरुदेव के दर्शनार्थ जम्मू से एक श्रावक संजय जी आए। कहने लगे "गुरुदेव, नया काम शुरु किया है, आप हमारा ध्यान रखना'। गुरुदेव का उत्तर था– "श्रावक जी, ध्यान तो हमें भगवान् का और अपने गुरुदेव का रहता है। जहां तक नए काम की बात है, इसमें तो तुम्हारा अपना पुण्य ही काम करेगा"।

81. एक बार नरवाणा में मुनिमण्डल गुरुदेव की उपासना में बैठा था। कोई प्रसंग चल निकला। अचानक गुरुदेव ने एक रहस्य प्रकट किया। कहने लगे "बाबा जी म. (श्री जग्गूमल जी म.) मुझे कहा करते सुदर्शन तू किसी का बुरा सोच नहीं सकता, बुरा कर नहीं सकता। और जो तेरे साथ बुरा करेगा, उसका भी भला नहीं हो सकता"। लगता है कि बाबा जी म. का यह वाक्य एक ऐतिहासिक सच्चाई है।

❑ ❑ ❑

82. शक्ति नगर दिल्ली के श्रावक श्री पोहकर मल जी काफी दिनों से अस्वस्थ थे। डाक्टरों ने जांच-पड़ताल के बाद ये निर्णय लिया कि इनका एक गुर्दा निष्क्रिय है। इसे आप्रेशन करके निकालना पड़ेगा। दिन निश्चित हो गया। उनके रिश्तेदार ला. प्रकाश चन्द जी गोहाना वालों का परिवार उस अवसर पर आया। उनके हाथ ही गुरुदेव जी म. का शुभ संदेश-युक्त पत्र था। लाला जी तब आप्रेशन थियेटर में थे, जब गुरुदेव जी म. का पत्र आया। उनके सुपुत्र श्री रामचन्द्र जी ने पत्र पढ़ा। धर्मध्यान के बाद लिखा था कि 'लाला जी का अंग-भंग नहीं होगा।' परिवार सोच में पड़ गया कि आप्रेशन अन्दर हो रहा है तथा गुरु म. का वचन है कि अंग-भंग नहीं होगा। थोडी देर में ही डाक्टरों ने आकर सूचना दी कि 'हमने उनका शरीर खोलकर देखा है। कहीं किसी अंग को काटने की जरूरत नहीं है।' इसलिए हमने ज्यों का त्यों शरीर को बन्द कर दिया है। आप निश्चिंत रहे और शीघ्र ही लाला जी को छुट्टी मिल जाएगी। परिवार का तब ये समझ में आया कि गुरुदेव के वचन कितने रहस्यमय थे।

❑ ❑ ❑

83. मूनक के श्रावक श्री जगदीश चन्द जी को मुंह में बड़ा-सा फोड़ा हो गया। स्थानीय स्तर पर उपचार नहीं हुआ, तो पटियाला दिखाया वहां पर कैंसर का सन्देह व्यक्त किया गया और दिल्ली में किसी बड़े हास्पिटल में दिखाने का परामर्श दिया। परिवार में चिन्ता व्याप्त हो गई। दिल्ली का

विचार ले चल दिए। गुरुदेव जी म. उस समय गन्नौर में विराजमान थे। पहले वहां पहुंचे। मन की और तन की सारी परेशानी गुरुदेव के सामने बयान की। गुरुदेव जी म. ने सहज भाव से प्रभावित स्थल को दो तीन बार छुआ। मंगल-पाठ सुनाया और परिवार दिल्ली आकर ठहर गया। रात को ही वह फोड़ा रिसने लगा और बहुत अधिक मवाद और गंदगी उसमें से निकली। सुबह तक वह फोड़ा बिल्कुल ठीक-सा हो गया। बड़े डाक्टरों को दिखाने की जरूरत ही नहीं पड़ी। परिवार वालों का तो ये मानना है कि बाबू जी का ईलाज तो गुरुदेव जी म. के कर-स्पर्श से ही हुआ है।

❑ ❑ ❑

84. सन् 1967 में मूनक में श्री विनय मुनि जी म. की दीक्षा से पूर्व समाज दीक्षार्थी के लिए 'बानों' की व्यवस्था बना रहा था। किन्हीं विशेष परिवारों को 'बान' का अधिकार न देकर लॉटरी सिस्टम से कुछ नाम निकालने का फैसला हुआ। प्रवचन के बीच सभी परिवारों के नाम की पर्ची डालकर एक बालक से पर्ची निकलवानी थी। गुरुदेव जी म. की संगरूर-दीक्षा पर जिस घर में उनका 'बान' हुआ था और जो धर्म-पिता व धर्म-माता बने थे, उन्हीं की लड़की मूनक में विवाहित थी। गुरुदेव जी म. के मन में एक सात्विक-सी इच्छा बनी कि इस बहन को भी 'बान' का अवसर मिले। गुरुदेव ने अपनी इच्छा समाज को इसलिए नहीं बताई, क्योंकि इससे व्यवस्था प्रभावित होती। अपने हाथ से एक पर्ची पर उस परिवार का नाम लिखा और चादर के छोर पर बांधकर प्रवचन-सभा में पधार गए। उनके पधारने पर लाटरी निकालने का कार्यक्रम शुरू हुआ। एक पाँच वर्ष के बालक से पर्चियां निकलवाई गई। लो, कमाल हो गया! उस परिवार की पर्ची भी निकल गई। तब गुरुदेव जी ने अपनी चादर की पर्ची खोलकर दिखाई और अपनी इच्छा का इतिहास सुनाकर लोगों को गद्गद कर दिया।

❑ ❑ ❑

85. धन और धनिकों से निस्पृहता का आलम ये था कि 1995 में लुधियाना के एक श्रावक ने गुरुदेव को विनति की कि, 'मैं आपके आदेश से एक करोड़ रुपए कहीं खर्च करना चाहता हूं। अपना नाम मैं प्रकट नहीं करूंगा, आप कृपा कर दें।' मगर गुरुदेव ने उसकी पेशकश पर कोई ध्यान नहीं दिया। उन्हें अहसास था कि धन एकत्र करने से साधु की संलिप्तता बढ़ती है और साधना में एकाग्रता नहीं रहती। श्री राकेश मुनि ने एक बार ये प्रश्न पूछ ही लिया कि गुरुदेव, यदि अन्य मुनियों की तरह आप धन एकत्र करने लगो तो कितना कर सकते हो? गुरुदेव पट्टे पर लेटे हुए थे। सुनकर गंभीर हो गए। फिर थोड़ी देर बाद बोले, 'राकेश, एक ही आवाज पर 100 करोड़ रुपया इकट्ठा हो सकता है। पर इससे लोगों की श्रद्धा खराब हो जाएगी। श्रद्धा अरबों-खरबों रुपयों से भी ज्यादा बहुमूल्य है।'

❑ ❑ ❑

86. 1979 मे रोहतक में बाबरा मोहल्ले वाली स्थानक में, शाम के समय मनसुमरण जी गांधरे वाले एक सनातनी भाई को लेकर आए। कहने लगे-'ये आपके बचपन का दोस्त है। दीक्षा से पहले आपसे मिला है। पहचानो जरा'। गुरुदेव ने गौर से देखा, तरन्त उसको नाम लेकर संबोधित किया। 1937 के बाद 1979 अर्थात् 42 साल बाद पहचानना एक आश्चर्य से कम नहीं माना जाएगा। इसी तरह 1992 में दिल्ली जमना पार लक्ष्मी-नगर में विहार हो रहा था। एक कोठी के बाहर छंहचंस भ्वनेम लिखा था। गुरुदेव की अन्तःचेतना स्फुरित हुई। कहने लगे, 'ये मेरा बचपन का परिचित है'। एक भाई को अंदर भेजकर पता करवाया और वही व्यक्ति मिला, जिसके बारे में गुरुदेव ने फरमाया था।

❑ ❑ ❑

87. 1975 में गुरुदेव के चरणों में वै। श्री राजेन्द्र जी एवं श्री राकेश जी ज्ञानार्जन कर रहे थे। उन्हें पंजाब विश्व-विद्यालय की परीक्षा देनी थी।

लुधियाना केन्द्र था। वहाँ एक-दो महीने वैरागियों को छोडना था। सिविल लाईन्स के प्रधान सुश्रावक श्री रामप्रसाद जी ने विनति की कि 'वैरागियों को हमारे घर छोड़ दो। हर तरह की अनुकूलता रहेगी। इनके लिए अलग वातानुकूलित कमरा रहेगा। एक नौकर और एक कार इनके लिए 24 घंटे हाजिर रहेंगे।' पर गुरुदेव ने उनकी विनति स्वीकार न करके माधोपुरी में सुश्रावक श्री दुनीचन्द जी को इस सेवा का लाभ दिया। वे स्वयं किराए पर रहते थे। ऊपर के कमरे में वैरागी रहे। एक दरवाजा, दो खिड़कियाँ, भीषण गर्मी में पढ़ाई करके उन्हें जो अंक प्राप्त हुए, वे ए.सी. कमरे में शायद नहीं मिलते। दूसरे, उन्हें संयम-साधना के लिए भी तो तैयार करना था। इसी तरह अगले वर्ष दोनों को जालंधर फैंटनगंज मंडी में श्री तरसेम जी के आवास पर ठहराया। ठहराने से पूर्व गुरुदेव स्वयं कमरों का सूक्ष्म निरीक्षण करने आए। ये देखने के लिए, कि कहीं कमरे में अश्लील चित्र आदि चीजें तो नहीं। उन्हें हर बात का ध्यान रहता था।

❑ ❑ ❑

88. 1973 के दिसम्बर माह के अंतिम दिनों में गन्नौर से रोहतक की ओर विहार हो रहा था। एक रात स्वप्न आया कि एक बहुत बड़ी मीनार गिर गई। सुबह प्रतिक्रमण से पूर्व मुनियों को बताया कि संभवतः पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. के सम्बन्ध में ये स्वप्न सूचित कर रहा है। और जनवरी के प्रथम सप्ताह में उस दिव्य आत्मा के देवलोक-गमन का समाचार मिल गया।

❑ ❑ ❑

89. गुरुदेव बामनौली गांव में पधारे थे। एक जमींदार भाई आया। नई नई दौलत कमाई थी। ऐब आने शुरू हो गए, धन क्षीण होने लगा। गुरुदेव के पास आकर कहने लगा-मेरे घर पधारने की कृपा करो। नए भाई की भावना को सम्मान देते हुए उसके घर गए। कमरे में एक कोने में उसने रुपयों का ढेर लगा रखा था। कहने लगा, 'मैंने सुना है कि आप

बड़े चमत्कारी हैं। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि आप लाख रुपयों की इस ढेरी पर अपने चरण छुआ दो, इससे मेरी दौलत अखूट हो जाएगा। गुरुदेव जी म. बोले—'भक्त, मेरे चरण से ही कुछ नहीं होगा। अपना आचरण शुद्ध बना। तभी तेरी संपत्ति सुरक्षित रह सकेगी। मेरे पैर छुआने के बाद भी यदि तू जुआ, शराब नहीं छोड़ता तो ये संपत्ति बचने वाली नहीं है।' गुरुदेव ने दृष्टि दी और वह मान गया।

❑ ❑ ❑

90. अन्तर्यामी गुरुदेव

'मेरे द्वितीय सुपुत्र श्री दर्शन कुमार को 7.12.85 शनिवार को पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई और अपनी भावनानुसार मैं इस शुभ समाचार की सूचना गुरुदेव जी म. को देने के लिए अगले दिन गोहाना पहुँचा। सकल परिवार का मानना था कि यह सौभाग्योदय पूज्य गुरुदेव की कृपा से ही संभव हुआ है। गोहाना पहुंचकर मैंने वन्दना की और खुशी का समाचार देते हुए विनति की "गुरुदेव, बच्चे की सुरक्षा का दान देना"। गुरुदेव ने मुझे माला जपने को कहा तथा स्वयं भी अपनी स्वाध्याय में लीन हो गए। पाठ पूरा होने पर कहने लगे, "बच्चा संपूर्ण नहीं है। शरीर में कोई न कोई कमी जरूर है। घर जाकर मुझे पत्र लिखना कि क्या कमी है। ये मत सोचना कि दीक्षा पर (जोकि शीघ्र ही होने वाली थी) आऊंगा, तब बता दूंगा"। मैं रामां आया। सभी ने बच्चे को गौर से देखा, पर कोई कमी नजर नहीं आई। फिर रामां और भटिण्डा में डाक्टरों को भी दिखाया। यद्यपि बच्चा रोता बहुत था, पर डॉक्टर ने कोई कमी नहीं बताई। अतः मैंने गुरुदेव जी म. को पत्र लिख दिया कि बच्चा बिल्कुल ठीक है-कोई कमी नहीं पाई'। जब मैं दीक्षा पर पहुंचा, तब भी गुरुदेव जी म. ने यही फरमाया कि 'तमने ध्यान से नहीं देखा होगा, कमी अवश्य है।' मैं निरुत्तर था। 2-3 महीने बाद की बात है कि एक दिन धूप में हम बैठे बच्चे को खिला रहे थे। तब बच्चा रोने लगा और अचानक हमारी नजर पड़ी कि बच्चे के मुंह में तालुवे की जगह सुराख है। सारे घर मे घबराहट

फैल गई। गुरुदेव की बात की सत्यता अब प्रकट हुई। चिन्ता व्याप्त हुई कि अब क्या किया जाए? पहले भटिण्डा, फिर पटियाला में डाक्टरों को दिखाया। वहां डाक्टरों ने आश्वासन दिलाया कि एक साल बाद बच्चे की प्लास्टिक सर्जरी हो सकेगी और बच्चे का सुराख भर जाएगा। गुरुदेव जी म. के चरणों में जाकर सारी स्थिति बताई। गुरुदेव जी म. ने अपनी कृपा बरसाई और उनकी दयादृष्टि के परिणाम स्वरूप ही एक वर्ष बाद बच्चे की सर्जरी हुई और सफलता मिली। मेरे लिए आज तक ये रहस्य ही रहा है कि गुरु म. ने 250 किलोमीटर दूर से 20 घंटे के बच्चे के तालुए के सुराख को कैसे जान लिया, जबकि 2-3 महीने तक सारा परिवार और डाक्टर देखकर भी नहीं जान पाए?

पारस दास जैन, रामा मण्डी

❑ ❑ ❑

91. गुरुदेव जी म. की अनन्य कृपा के पात्र, अन्तरंग श्रावक, संघ-सेवक श्री राधेश्याम जी का गुरुदेव से 1964 से 1999 तक गहरा संबंध रहा है। हर मोड़ पर, हर पड़ाव पर गुरुदेव के वर्तुल में सम्मिलित रहे हैं। सैंकड़ों, हजारों यादों का कोष इनकी स्मृति में निहित है, उसमें से 7-8 घटनाएं उन्हीं ने लिपि-बद्ध करके दी हैंः—

1. 1973 फरवरी में पूज्य गुरुदेव हमारे गांव बुटाना में विराजित थे। मेरे लघु-भ्राता श्री जयमुनि जी म. की दीक्षा का प्रसंग था। एक दिन प्रातः 4 बजे के लगभग मेरी धर्मपत्नी अंगीठी सुलगा रही थी कि अचानक साड़ी में आग लग गई। पूज्य माता जी मौके पर मौजूद थी। उन्होंने सूझबूझ और हिम्मत से आग बुझाई। शुक्र ये रहा कि शरीर पर आग का प्रभाव नहीं आया। फिर भी चिन्ता स्वाभाविक थी। उन्हें विश्राम करने के लिए सुला दिया और मैं स्थानक में सामायिक करने चला गया। स्थानक का दरवाजा मैंने ही खोला। ऊपर गुरुदेव के दर्शन किए। उस समय वे पाठ कर रहे थे। बीच में ही बोले "प्रेमवती ठीक है,

(धर्मपत्नी का नाम) घबराने की जरुरत नहीं है। अच्छे काम में कोई मिथ्यादृष्टि देव उपद्रव कर देते हैं। मैं सुबह मंगलपाठ सुनाकर आऊंगा, तुम चिन्ता मत करना"। गुरुदेव जी म. बोलते जा रहे थे और मैं आश्चर्य, हर्ष, विश्वास-अविश्वास के झूले में झूलता हुआ सुनता जा रहा था। ये प्रश्न मेरी समझ से परे था कि गुरुदेव ने उस घटना को कैसे जाना? जबकि उस समय तक घर का कोई सदस्य स्थानक आया ही नहीं था। खैर, प्रातः गुरुदेव घर पधारे और मन की आशंकाएं नष्ट हुई और सब कार्य सानन्द सम्पन्न हुए।

2. 1974 में गुरुदेव जी म. का रोहतक में चातुर्मास था। मैं दर्शनार्थ गया। उन दिनों मैं कामधन्धे की ओर से काफी परेशान था। सोचा-गुरुदेव जी म. ही समाधान कारक हैं। मैंने वन्दना की ही थी कि एकदम बोले, "जा मौज कर। दो लड़के हो गए और क्या चाहिए?" उस समय एक ही पुत्र था। मूल बात का जिक्र करना भी भूल गया। घर आकर माता जी से कहा, "माँ लड्डू बाँट, तेरे दूसरा पोता हो गया' वह हँसने लगी। जब गुरुदेव की वाणी का जिक्र किया तो उसने भी हां भरी। मई 1975 में दूसरे पुत्र का जन्म मैं गुरुदेव के आशीर्वाद का ही फल मानता हूँ। आज दोनों सुपुत्रों पर धनलक्ष्मी की भरपूर कृपा है।

3. 1986 में गुरुदेव जी म. रोडी में थे। मैं और भाई रामनिवास दर्शन करने गए हुए थे। गुरुदेव से जिक्र किया कि यू.पी., मध्य प्रदेश व बिहार के बार्डर पर 'अनपरा' में काम करने का विचार बना रहे हैं, पर मन को एक चिन्ता खाए जा रही है कि देश की जनता दूर-दूर से आकर दिल्ली में काम करती है और एक हम हैं कि दिल्ली से बाहर जाकर काम करेंगे। गुरुदेव के मुखारविन्द से तुरन्त एक वाक्य निकला और हमारा समाधान हो गया, "बणिए की तो वहीं दिल्ली है, जहाँ काम हो" उनकी

वो कृपा बरसी कि वर्णन नहीं कर सकते। 'अनपरा' हमारा भविष्य और भविष्य का आधार बन गया।

4. 1987 में हमारी माता जी को पेट की तकलीफ चल रही थी। काफी टैस्ट हुए। उस समय दिल्ली के एकमात्र उच्च-कोटि के डायोग्नोस्टिक सैंटर-'दीवानचन्द नर्सिंग होम' में उनका अल्ट्रासाऊण्ड और सी.टी. स्कैन करवाया गया। दोनों रिपोर्टों में ये साफ आ गया कि लीवर का कैंसर है। मन और तन दोनों टट गए। उन्हें डॉ. जे.के. जैन के नर्सिंग होम में दाखिल करवा दिया। मन कुशंकाओं के घेरे में घिर गया। हमारी दो मौसियां भी पिछले दो सालों में आगे-पीछे गुजरी थी। कहीं तीसरी अनहोनी न हो जाए इसलिए मन दुविधा-ग्रस्त था। दो तीन दिन बाद पूज्य गुरुदेव तथा श्रद्धेय श्री तपस्वी जी म. का गोहाना में मिलन हुआ। उन दोनों महापुरुषों ने संयुक्त रूप से माता जी के रोग के बारे में विचार किया। अगले ही दिन हमें दिल्ली पत्र मिला। लिखा था कि तुम्हारी माता जी को कैंसर नहीं हो सकता।" डॉ. जे.के. जैन को हमने वो पत्र दिखाया। वह भी हैरान। दीवानचन्द्र की रिपोर्ट को कैसे नकारा जाए? कई डाक्टरों को बुलाकर राय ली। अन्ततः प्रयोग के तौर पर उन्हें 8-10 दिन नए किस्म का जतमंजउमदज दिया। दस दिन बाद अल्टा साउण्ड और सी.टी. स्कैन दीवान चन्द में ही करवाए। और आश्चर्य ये कि रिपोर्ट बिल्कुल नार्मल। इतनी साफ कि मानों ये दिक्कत कभी हुई ही न हो। उस दिन के बाद माता जी को चाहे कोई भी बिमारी आई, पर वो तकलीफ कभी नहीं। मैं तो गुरु म. का तथा श्री तपस्वी जी म. का कोई दिव्य चमत्कार मानकर ही मन का समाधान कर लेता हूँ।

5. 1988 में मैं घोर आर्थिक नुक्सान में उलझ गया था। कहाँ जाऊँ? पर मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक। गुरुदेव-चरण में गन्नौर पहुंचा। गर्मी बहुत थी, ऊपर की गैलरी में से होते हुए गुरु

म. वाले कमरे में पहुंचा। आते हुए गुरु म. ने मुझे दूर से देख लिया था। वन्दना की। पूछने लगे-इतनी गर्मी में कैसे आया? मेरे मुंह से निकल गया "गुरु म. इज्जत का सवाल है। मैं ऐसे-ऐसे भारी नुकसान में उलझ चुका हूँ।" गुरु म. ने चश्मे में से मुझे तेज निगाहों से देखा और एकदम कहने लगे "इज्जत, इज्जत, तेरी क्या इज्जत। इज्जत तुम्हारे लाला जी की है। वे देव-पुरुष हैं। उनकी इज्जत को क्या खतरा है?" मैंने तो चरण पकड़ लिए। डूबते को किश्ती मिल गई। फिर वे दो-तीन मिनट रुके और फिर बोले, "जब तू आ रहा था, तो मैं देख रहा था कि तेरी चाल कैसी है? तेरी चाल में तो कहीं भी नुक्सान नहीं था।" मेरा हौसला सौ गुणा हो गया। मंगल-पाठ सुन दिल्ली वापस आ गया। एकदम फिजा ही बदल गई। वह साल नफे में रहा। "लाला जी की इज्जत को खतरा नहीं, तेरी चाल में नुक्सान नहीं," इन दो वाक्यों का अर्थ अकथनीय है।

6. 1991 में बड़ा बेटा जयप्रकाश पूना में इंजीनियरिंग के लिए दाखिल हो गया, परन्तु लाख चाहने पर भी मन नहीं लगा। बार-बार फोन पर घर आने की जिद्द करता। उसे किसी तरह पूना में रोका और हम दोनों पति-पत्नी उसके पास पहुंचे। बहुत समझाया-बुझाया, पर वह वहां पढ़ाई के लिए तैयार नहीं हुआ। अन्ततः एक विचार आया कि गुरुदेव जी म. का निर्देश लें। जैसा वे कहेंगे, हम करेंगे। इस बात पर सबकी सहमति बन गई। दिल्ली समाचार दिया और सोनीपत में विराजमान गुरुदेव जी म. के सामने सारी स्थिति स्पष्ट की। गुरुदेव जी म. का एक पत्र जयप्रकाश के नाम आया, जिसमें उसे "चिरंजीव इंजीनियर जय प्रकाश" के रूप में संबोधित किया गया था। पत्र पढ़ते ही उसका मन एकदम बदल गया और फिर तो वह वहां से इंजीनियर बनके ही लौटा। गुरुदेव जी म. ने तो 5 वर्ष पहले ही ' उसे इंजीनियर बना दिया था।

7. 1992 में शालीमार चातुर्मास पूर्ण कर गुरुदेव जी म. जे.के. जैन एम.पी. की कोठी पर पधारे। हम सुबह-सुबह दर्शन के लिए गए। प्रतिक्रमण पूरा हो चुका था। संत वंदना कर रहे थे। बीच में ही गुरुदेव जी म. ने मुझे संकेत करते हुए कुछ शब्द कहे, "क्या हैदराबाद में आदमी नहीं रहते? वहां काम करने से तुम्हारी चिन्ता दूर हो सकती है"। यद्यपि हैदराबाद में हमारी न कोई रिश्तेदारी थी, न जानकारी, न भाई बरादरी। पर गुरुदेव जी म. के वचनों का अटल विश्वास था कि वहीं काम होगा और हुआ भी, खूब काम चला। दूरी का संकोच भी मन में नहीं आया। और आश्चर्य तो ये कि एक महीने में दुकान का मुहूर्त भी हो गया। सहयोगी भी मिलते गए और प्रगति होती गई।

"तेरी कृपा से जल में स्थल मिलता है। मन की समस्या का हल मिलता है।"

ये कुछ संस्मरण तो आइस बर्ग की नोंक मात्र है। उनका असली उपकार तो ये रहा कि हमारा, हमारे परिवार का समग्र जीवन अपने धर्ममार्ग से कभी च्युत नहीं हुआ तथा मेरे लघु भ्राता श्री जयमुनि जी म. को गुरुदेव के चरणों में संयम का महादान मिला है।

❑ ❑ ❑

93. भविष्य-द्रष्टा गुरुदेव

मेरी बी. काम. के बाद मेरे सम्बन्ध में परिवार में मत-भिन्नता हो गई। मेरा इरादा पढ़ाई करने का था तथा पिता जी चाहते थे कि घर का बिजनैस संभालूं। दोनों के अपने-अपने तर्क थे। कोई एक निर्णय नहीं हो पा रहा था। अंततः ये सोचा कि जैसा गुरुदेव जी म. का संकेत होगा, तदनुसार सबको मान्य होगा। गुरुदेव रोहतक में थे, हम गए। वन्दनादि के पश्चात् हमने अपना आगमन-प्रयोजन बताया और अपना-अपना पक्ष प्रस्तुत किया। गुरुदेव ने कहा इसे आगे पढाओ। मुझे संबोधित करते

हुए बोले—"प्रमोद सी.ए., तेरी इन्स्टीय्यूट तो तुझे डिग्री जब देगी, तब देगी, मैंने तुझे आज से ही सी.ए. बना दिया।" मेरा रोम-रोम खिल गया। अपनी सी.ए. की पढ़ाई के दौरान जब भी मैं उनके दर्शन करने गया, उन्होंने हमेशा ही मुझे सी.ए. कहकर पुकारा। और उन्हीं की कृपा से मैं प्रथम प्रयास में सारे पेपर पास कर पाया। आज जो कुछ हूं, सब उन्हीं की देन है।

—प्रमोद जैन (पुरखास वाले, बैंगलोर)

❑ ❑ ❑

93. **गुरु-कृपा भारी, टली मारणान्तिक बीमारी।** मेरी धर्मपत्नी उर्मिल जैन पूज्य गुरुदेव की कृपा से सन् 1997 में एक वर्षी-तप कर चुकी थी। जनवरी 1999 में वह किसी अज्ञात भय की आशंका से गहन मानसिक अवसाद (depression) से ग्रस्त हो गई। सारा परिवार किंकर्तव्य विमूढ था। सबको डर था कि कहीं हम इससे हाथ ही न धो बैठें। सब तरफ से हार कर हम समाणा में गुरुदेव के दर्शन करने गए। गुरुदेव ने सारी बात सुनी। आशीर्वाद की मुद्रा में हाथ उठाकर कहा, 'चिन्ता न कर, अपनी सारी चिन्ता यहीं छोड़कर जा। सब ठीक हो जाएगा।' धीरे-धीरे धर्मपत्नी की हालत ठीक होती चली गई। गुरु-कृपा के इस अवदान पर आभार प्रकट करते हुए धर्मपत्नी ने 2005 में एक बार पुनः वर्षी-तप किया।

—विनोद जैन (रिंढाणा) जीन्द।

❑ ❑ ❑

94. करनाल के पास शाहपुर गाँव की निवासी बहन गायत्री देवी (धर्मपत्नी श्री राजेन्द्र जैन) गुरु-चरणों के सम्पर्क में 1998 में ही आई थी। कई बार दर्शन करने आती तो गुरु-चरणों में कोई न कोई वर्षी तप करने वाली बहन बैठी होती। गुरुदेव उनसे तप की साता पूछते। परिचय-अभाव से गुरुदेव गायत्री बहन से कुछ पूछते नहीं थे। गुरुदेव के मुखारविन्द से 'ठीक हो, साता से हो ये दो मधुर शब्द सुनने के लिए गायत्री बहन ने

वर्षी तप किया। ये बात अलग है कि इधर 1999 में उनकी तपस्या शुरू हुई, उधर गुरुदेव का देवलोक-गमन हो गया।

कितनी कशिश थी गुरुदेव की वाणी में!

❑ ❑ ❑

95. दूर-द्रष्टा भविष्य-द्रष्टा गुरुदेव- गुरुदेव का सन् 1972 का चातुर्मास जीन्द में था। तब मैं बी.ए. के तृतीय वर्ष में था। एक दिन प्रवचन में किसी बात पर गुरुदेव ने मुझसे पूछा, 'क्यों वकील साहब' अपनी आदत के अनुसार मैंने घर जाकर नोट कर लिया कि गुरुदेव ने मुझे 'वकील साहब' कहा है। इसे एक महज संयोग कहिए या गुरुदेव की भविष्यवाणी कि मैंने सन 1975 में दिल्ली यूनिवर्सिटी से L.L.B. की। 1980 तक मैं वकालत करने का साहस नहीं जुटा पाया। कई बार कोई नौकरी या व्यवसाय करने की सोची, पर कोई योजना सिरे नहीं चढ़ी। फिर 1981 में मैंने इन्कम टैक्स, सेल्स टैक्स की प्रैक्टिस शुरू की और आज मैं एक सफल वकील हूँ। गुरुदेव के मुख से निकले 'क्यों वकील साहब' ये शब्द 36 वर्ष बीत जाने के बाद भी, आज मेरे कानों में रह-रहकर गूंजते है। और मैं बरबस ही मन से भी, वाणी से भी, काया से भी और आत्मा से भी उनके श्रीचरणों मे लोट-पोट हो जाता हूं।

–राजेश जैन एडवोकेट, शालीमार बाग, दिल्ली

❑ ❑ ❑

96. **विघ्न-हरण मंगल-करण गुरुदेव**

6 सितम्बर 1989 बुधवार की घटना है। मैं अपने घर में लेटा हुआ था। मुझे झपकी आई। गुरुदेव के दर्शन हुए। फरमाने लगे, 'कोई चिन्ता मत करना, सब ठीक हो जाएगा।' तब तक मेरे मन पर कोई चिन्ता नहीं थी। मैं शाम 3 बजे मुनीरका में अपनी दुकान पर चला गया। रात 9-10 बजे घर लौटा, तो पिता जी गहरी चिन्ता में डूबे थे। मुझे गुस्से में कहने लगे, 'तू दुकान पर चला गया। पीछे से तेरे भाई अनिल की बहू

को हास्पिटल ले जाना पड़ा। नर्स ने जबाव दे दिया। फिर उसे अशोक विहार डी.आर. नर्सिंग होम ले गए। वहां डाक्टरनी ने कहा कि पेट में जुड़वा बच्चे हैं, सुबह आप्रेशन करना पड़ेगा और बच्चों के बचने के चांस कम ही हैं। ये सुनकर मैंने घरवालों को गुरुदेव के स्वप्न -दर्शन की बात कहकर निश्चिन्त करने की कोशिश की, पर लगता था उनको मेरी बजाय डाक्टरनी की बात पर ही भरोसा अधिक है। अगले दिन 7 दिसम्बर को दोपहर 12 बजे बृहस्पतिवार की कथा का प्रसाद मुंह में डालते ही मेरी भाभी को पेट में जोरदार दर्द हुआ। हम उसे हास्पिटल ले गए। वहां एकदम नार्मल रूप में दो जुड़वा बच्चे गौरव और सौरभ ने जन्म लिया। दोनों बच्चे आज भी पूर्ण सुन्दर और स्वस्थ होकर गुरु-कृपा का मूर्तिमान स्वरूप प्रस्तुत कर रहे हैं। तीन चार दिन बाद में माताजी, पिताजी, भाई अनिल, बहन विमला जी यू.पी. कान्धला में पूज्य गुरुदेव के दर्शन करने हेतु गए। गुरुदेव मेरी बहन से बोले, सब काम ठीक हो गया? कोई दिक्कत तो नहीं आई?' बहन ने कहा कि एक बार दिक्कत आ गई थी, गुरुदेव ने फिर फरमाया,' आपको गुरु-दर्शन हो गए थे। बहन ने कहा कि मुझे तो नहीं, भाई मुकेश को हुए थे। गुरुदेव बोले कि होने से मतलब है, चाहे किसी को भी हुए हों।

गुरुदेव वास्तव में भगवान् की तरह ही पूर्ण भविष्य-द्रष्टा, भविष्य वक्ता और विघ्न-हरण मंगल-करण थे।

–मुकेश जैन S/o ला. अनन्तराम जैन, (सिंघाणा वाले),

पीतमपुरा, दिल्ली।

प्रवचनामृतम्.....श्री गुरु-मुख से

संकलन-कर्ता-नरेन्द्र मुनि जी

पूज्य गुरुदेव प्रवचन-कला के सिद्ध-सारस्वत पंडित थे। सन् 1945 में मात्र तीन वर्ष की दीक्षा-पर्याय में ही प्रवचन-क्षेत्र में उतरे और जीवन के अन्तिम समय तक प्रवचन की मन्दाकिनी बहाते रहे। भाषण-कला में उन्हें ऐसा कमाल हासिल था कि जिस सभा में बैठ गए, वह सभा उनकी हो गई और जिस क्षेत्र में एक बार चरण धर दिए, वह सदा-सदा के लिए उनका हो गया। जब वे भाव-विभोर होकर बोलते थे, तो लगता था मानो कोई तपःपूत ऋषि अपने अनुभवों का विश्व-कोष उंडेल रहा हो या हिमालय-शिखर पर बैठे साक्षात् शिव ही भूतल पर गंगाधारा लुढका रहे हों।

गुरुदेव के प्रवचनों से हजारों दिलों की धधकती धरती पर शान्ति का मेघ-माली बरसा है और लाखों रिसते घावों पर सान्त्वना की मरहम लगी है। वेदों की ऋचाएँ, उपनिषदों के सूक्त, पुराणों के श्लोक, जैन आगमों की गाथाएँ, कुरान की आयतें और बाइबिल के सूत्र सभी एकाकार होकर उस एक गंगोत्री-धार में प्रवाहित होते हैं। प्रस्तुत हैं गुरुदेव के द्वारा फरमाए गए कुछ सूत्र एवं मुक्ता-कण, जिनमें 'गागर में सागर' न्याय से जीवन का सम्पूर्ण दर्शन निहित है।

1. क्रोध नहीं आता है

1. स्वाध्याय शील को, 2. आत्म-स्वरूप-दर्शी को, 3. बड़ों की कृपा लेने वाले को, 4. निर्जरा के लिए तप करने वाले को, 5. सर्वात्म भाव-दर्शन करने वाले को, 6. अपने दोष बारीकी से देखने वाले को।

2. नवयुवक संकल्प लें

1. शादी में दहेज नहीं लेंगे, 2. दोस्तों को लडकी नहीं दिखाएंगे, 3. शादी में पैसा ज्यादा खर्च नहीं करेंगे, 4. पत्नी को तलाक नहीं देंगे, 5. पर-स्त्री गमन नहीं करेंगे, 6. अश्लील फिल्में नहीं देखेंगे।

3. गुरु भक्ति करने से

1. गुरु के दिल में इज्जत होती है, 2. समस्त संशय दूर होते हैं, 3. शास्त्रीय ज्ञान प्रामाणिक होता है, 4. समाधि मिलती है, 5. अष्ट सिद्धि प्राप्त होती हैं, 6. लोक-कीर्ति प्राप्त होती है, 7. देवों व मानवों से पूजा मिलती है।

4. स्वतन्त्रता के बादः क्या खोया, क्या पाया

1. दर्शन खोया, प्रदर्शन पाया, 2. धर्म खोया, भ्रष्टाचार पाया, 3. साहस खोया, निराशा पाई, 4. सादगी खोई, फैशन पाया, 5. ईमान खोया, बेईमानी पाई, 6. स्वतन्त्रता खोई, स्वच्छंदता पाई, 7. सहानुभूति खोई, स्वार्थ पाया, 8. शान्ति खोई, क्रांति पाई, 9. मन्दिर खोया, सिनेमा पाया, 10. सदाचार खोया, दुराचार पाया, 11. विश्वास खोया, अविश्वास पाया, 12. दूध खोया, चाय पाई, 13. मानवता खोई, दानवता पाई, 14. नम्रता खोई, अभिमान पाया, 15. आत्मिकता खोई, भौतिक-ज्ञान पाया, 16. प्रभुता खोई, पशुता पाई, 19. स्वास्थ्य खोया, इलाज पाया।

5. कौन बनेगा लोक-प्रिय

1. जो निष्कपट हृदय हो, 2. पर-निन्दा न करने वाला हो, 3. सर्व-हितेच्छु हो, 4. निःस्वार्थ-सेवी हो, 5. मधुर स्वभाव वाला हो, 6. वाणी का विवेक रखता हो, 7. लंगोट का पक्का हो, 8. पापकार्य से डरने वाला हो, 9. दोष-दृष्टि वाला न हो।

6. संयम रखो

1. सन्त के सामने मन का, 2. जनता के सामने वाणी का, 3. राजा के सामने नयनों का।

7. क्षुद्र और शूद्र

1. अपना दोष दूसरे पर थोपने वाला, 2. छोटी-सी भूल को अधिक तूल देने वाला, 3. शास्त्र व गुरुओं की बातों का अपलाप करने वाला, 4. सज्जनों को अपमानित करने वाला, 5. धर्मदाता गुरु व जन्मदाता माता-पिता के दोष देखने वाला, 6. जिस हांडी में खाएं, उसी. में छेद करने वाला 7. गिरगिट की तरह स्वार्थपूर्ति-हेतु रंग बदलने वाला, 8. नेकी के बदले बदी देने वाला।

8. खता खाता है

1. मूर्खों से राय लेने वाला, 2. दुष्टों से प्रेम जोड़ने वाला, 3. तथ्य से मुंह मोड़ने वाला, 4. हमेशा प्रमाद में रहने वाला, 5. शक्तिशाली से विरोध करने वाला।

9. अच्छे दिन आने के लक्षण

1. बुद्धिमानों से सलाह लेना, 2. सज्जनों से प्रेम करना, 3. कटु सत्य को स्वीकार करना, 4. पुरुषार्थी बनना।

10. संभलो

1. जब शरीर में रोग आने लगे, 2. जब मान-सम्मान अधिक मिलने लगे, 3. जब भोजन बढ़िया मिलने लगे, 4. जब स्वाभिमान को ठेस लगे, 5. जब विरोधी विरोध कर रहा हो।

11. श्रेष्ठ घर के 20 लक्षण

1. जहाँ आपस में मनमुटाव न हो, यदि हो तो 24 घन्टे में दूर हो जाए, 2. रोगी तथा जरूरतमन्द की सुविधा का ख्याल हो, 3.आपाधापी, चोरी-छिपे खाने व बचाने की आदत न हो, 4. छोटे बड़े का सलीका हो, 5. वर्ण, जाति व धन का मापदण्ड न हो, धर्म की पूजा हो, 6. काम-चोरी की आदत न हो, 7. काम का बँटवारा हो, 8. छोटी भूल व गल्ती को तूल न दिया जाए, 9. मनोमनी पाप न हो, 10. बालकों में धर्म-संस्कार हों. 11. स्वच्छता का दिग्दर्शन हो 12 अतिथि-सेवा, सहधर्मी-सेवा व साधु-साध्वी को निर्दोष आहार देने का भाव हो, 13. घर की गुप्त बात घर से बाहर न जाए, 14. अविश्वासी पुरुष का घर में आना-जाना न हो, 15. रोगी के अतिरिक्त सब सूर्योदय से पूर्व जाग जाएँ व इष्ट-स्मरण करें, 16. घर के आसपास सज्जनों का वास हो, 17. सामाजिक रीति तथा रिवाज का पालन हो, 18. फिजूलखर्ची न हो, 19. रुढ़ियों को प्रोत्साहन न हो, 20. आहार-शुद्धि हो।

12. सीखो कुछ रामायण से

1. व्यसनों से मुक्ति हो(दशरथ को शिकार का व्यसन, श्रवण मरा), 2. किसी को वचन दो, तो सोच समझकर दो (दशरथ ने कैकयी को दो वर दिए), 3. नीच की संगति न कीजिए (कैकयी ने मन्थरा की संगति की), 4. पितृभक्ति (राम वन गए), 5. भ्रातृ प्रेम (भरत का राम से प्रेम), 6. पतिव्रता-धर्म का पालन (सीता की तरह) 7. बलिदान की भावना

(सुमित्रा ने लक्ष्मण को वन भेजा) 8. वासना के शिकार न बनें (रावण बना) 9. स्वामी-भक्ति (हनुमान्)

13. ये नहीं, तो वो भी नहीं

1. अपनी भूलों से शिक्षा न पाई, तो भगवान् भी आपका सुधार नहीं कर सकता, 2. बच्चों में धर्म संस्कार न डाले, तो खानदान की इज्जत सुरक्षित नहीं रहेगी, 3. समय पर नहीं खेले, तो कभी नाम नहीं कमाओगे, 4. अपनी आत्मा के दर्शन नहीं किए, तो परमात्मा के दर्शन भी नहीं होंगे, 5. धन के आकर्षण से नहीं निकले, तो धर्म का वास्तविक फल नहीं मिलेगा, 6. अपनी आत्मा पर विश्वास नहीं किया, तो कोई धर्मक्रिया सफल नहीं होगी, 7. अपने अधिकारी बड़ों की आज्ञा नहीं मानोगे, तो जनता की निगाहों में गिर जाओगे. (जन्मदाता, विद्यादाता, धर्मदाता, संसार में खड़ा करने वाला, ये चार बड़े होते हैं.) 8. झूठ को दलीलों से सत्य सिद्ध करना नहीं छोड़ोगे, तो आपकी सत्य बात भी कोई नहीं मानेगा।

14. कामयाबी की चाबी

1. अगर माँ बाप के सामने झुकते रहोगे, तो स्त्री व जवानी जो नशा भरती है, वो नशा नहीं भरेगा. 2. गुरुओं के सामने झुकते रहोगे, तो वो ताकत मिलती रहेगी, जो हर रुकावट दूर कर देती है. 3. गुप्त दान देते रहोगे, तो आँख मिचौली करने वाली लक्ष्मी, कभी धोखा नहीं देगी. 4. माँ की गोद, विद्यालय, धर्मस्थान व सत्साहित्य सुसंस्कारों के केन्द्र हैं. इनकी कुंजी जिनको मिल गई, वो कभी कंगाल नहीं होंगे. 5. सादा खानपान और पहनावा रखोगे, तो दुनिया की वो तीखी नजरें, जो कई बार पत्थरों को भी फाड़ देती है, उनसे बचे रहोगे. 6. आहार-विहार में संयम रखोगे, तो वे रोग जो कभी-कभी पहलवानों को भी हिला देते हैं, तुम्हारे पास नहीं आएँगे. 7. अपने दोषों के प्रति जागरूक रहोगे, तो वो समय कभी नहीं आएगा, जिस समय अकेले में पश्चात्ताप करना पड़े. 8. मौत आपके सिर पर खड़ी है, यदि ये विश्वासपूर्वक समझ लोगे, तो आपसे वो भूलें नहीं

होंगी, जिनकी शुद्धि न हो सके. 9. यदि आप स्वीकृत टेक और मर्यादा व धर्म-सिद्धान्त की रक्षा-हेतु अपनी जान की बाजी लगा दोगे, तो कोई वस्तु दुर्लभ नहीं होगी. 10. यदि आपकी इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि आत्मा के अनुशासन में चलती रहेंगी, तो आप कभी किसी के गुलाम नहीं बनोगे. 11. बोली का गुर जिसको मिल गया, वह कभी निरादर नहीं पाएगा।

15. करते रहिए, पाते रहिए

1. गुरुभक्ति करिए, धर्मतत्व स्वतः मिल जाएगा, 2. माता-पिता की निर्मल सेवा कीजिए, लक्ष्मी मिलेगी, 3. सच्चे हृदय से प्रार्थना करिए, प्रसन्नता मिलेगी, 4. किसी दीन की सेवा कीजिए, आनन्दानुभूति होगी, 5. मन में उत्साह बनाए रखिए, सदा जवानी बनी रहेगी, 6. अपना कर्तव्य पूरा करते रहिए, संसार में यश मिलेगा, 7. दान और परोपकार करते रहिए, मरकर भी अमर हो जाओगे, 8. आलोचना करते रहिए, कृ. आराधना हो जाएगी।

16. गिर-गिर कर गिरने वाला

1. इसी विचार में मगन रहना कि मैं पूर्ण स्वस्थ एवं धनी हूँ। 2. इसी विचार से पाप करना कि केवल दो-चार बार करके छोड़ दूंगा। 3. सुख में पाप करना और दुःख में परमात्मा का स्मरण करना। 4. दूसरे की तुलना में अपने को बढ़कर समझना। 5. रोग को साधारण समझ करके ये विचार करना कि स्वतः ठीक हो जाएगा। 6. किसी नीच मनुष्य की एक बार परीक्षा हो जाने पर पुनः उसकी बातों में आना। 7. दूसरों की तुलना में अपने को तुच्छ समझना। 8. दूसरे की अनुमति का ध्यान न रखकर अपनी इच्छा से कार्य शुरू कर देना। 9. बुरे समय में हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना, उचित उपाय न करना। 10. दूसरे की सहायता न करना, सिर्फ अपनी सहायता के लिए दूसरों से आशा करना। 11. सत्संगति में न बैठकर बुरी संगति में आनन्द मानना। 12. सत्संगति से अच्छी बातों को ग्रहण न करके बुरी बातों को ग्रहण करना। 13. अपनी भूलों को

न देखकर दूसरों की भूल पकड़ना। 14. माता-पिता की सेवा न करना, अपनी संतान से सेवा की आशा करना। 15. आय से अधिक व्यय करना या आय की आशा पर व्यय की योजना बना लेना।

17. मुश्किल है, पंचम आरे में...

1. अपने छोटे से छोटे दोष भी दूर करने का विवेक आना बड़ा मुश्किल है। 2. अपने गुणों को कम समझकर हजम करने का विवेक आना बड़ा मुश्किल है। 3. अपना स्वार्थ छोड़कर परमार्थ साधने का विवेक आना बड़ा मुश्किल है। 4. न्याय-मार्ग और धर्ममार्ग पर दृढ़ता व अस्खलित भाव से चलने का विवेक आना बड़ा मुश्किल है। 5. कृतघ्न और विरोधी का भी बुरा न सोचने का विवेक आना बड़ा मुश्किल है। 6. सच्चे हितैषी को परखने का विवेक आना बड़ा मुश्किल है। 7. बाह्य आकर्षणों को छोड़कर धर्म-श्रवण की तल्लीनता का विवेक आना बड़ा मुश्किल है। 8. धर्म-सिद्धान्त को जीवन के प्रत्येक व्यवहार में स्थान देने का विवेक आना बड़ा मुश्किल है। 9. अपने मान सम्मान को भूल कर समाज के कार्यों में धन लगाना व अपनी सूझ-बूझ से सामाजिक कार्यों में प्राण फूंकने का विवेक आना बड़ा मुश्किल है।

18. विधि-निषेध

1. चलना भी है, नहीं भी चलना-संयम में चलना, असंयम में नहीं। 2. बचना भी, नहीं भी बचना-कामविकारों से बचना, गुरुसेवा से नहीं बचना। 3. हटना भी है, नहीं भी हटना-जिद्द से हटना, गुरु-आज्ञा से नहीं हटना। 4. भरना भी है, नहीं भी भरना-संयम व तप से भरना, आर्तध्यान से नहीं भरना। 5. बोलना भी है, नहीं भी बोलना-समय पर हितरूप मधुर बोलना, शास्त्र-विरुद्ध नहीं बोलना। 6. बढ़ाना भी है, नहीं भी बढ़ाना-ज्ञान, दर्शन, चारित्र बढ़ाना, प्रदर्शन व आडम्बर नहीं बढ़ाना।

19. खुदा को नापसन्द है

1. घमण्ड से चढ़ी हुई आँखें, 2. झूठ बोलने वाली जीभ, 3. निर्दोष का खून बहाने वाले हाथ, 4. अनर्थ की कल्पना करने वाला मन, 5. बुराई की ओर ले जाने वाले पैर, 6. झूठी गवाही देने वाली जबान, 7. भाई-भाई में फूट डालने वाला इंसान।

20. अमृत-कुण्ड

1. कोमल चित्त, 2. मीठी वाणी, 3. निर्मल दृष्टि, 4. क्षमायुक्त शक्ति, 5. नय प्रमाण से युक्त बुद्धि, 6. दीनता नाशक लक्ष्मी, 7. शील युक्त रूप, 8. अभिमान रहित ज्ञान, 9. उदारता-युक्त स्वामित्व।

21. सौ नम्बर का पेपर

1. आपको जल्दी क्रोध तो नहीं आता? 2. आप बहस में जल्दी तो नहीं उतरते? 3. आपको उत्तेजना जल्दी तो नहीं आती? 4. आप एकदम निर्णय तो नहीं लेते? 5. आप दूसरों की भूलों पर हँसते तो नहीं? 6. आपको अपनी आलोचना बुरी तो नहीं लगती? 7. आप काम को बोझ तो नहीं समझते? 8. आपका स्वभाव चिड़चिड़ा तो नहीं? 9. आप दूसरों की सुविधा की उपेक्षा तो नहीं करते? 10. पूर्वोक्त 9 में सत्य बोलने पर 10 नं.।

22. सार-सार को गहि रहो

1. पंचम आरे का रोना वही रोते हैं, जिन्हें देव-गुरु-धर्म पर विश्वास नहीं या जिन्हें इन तीनों का शरणा नहीं मिला। 2. आत्मा के काँटे निकालने का समय ब्रह्ममुहूर्त है। 3. चार समय की स्वाध्याय और दो समय का प्रतिक्रमण रसायन है। 4. श्रावक साधु का चौकीदार है। जब चौकीदार सो जाता है, तब मुनियों का संयम-रूपी खजाना लूटे जाने की संभावना है। 5. गुरु-आज्ञा में कमी निकालने वाले भगवान् को भी नहीं बख्शेगें।

6. श्रावक-श्राविका को भगवान ने तीर्थ कहा है। पर यदि ये अनार्य कर्म करके धन कमाएँगे, तो तीर्थ नहीं रहेंगे। 7. खुशामद करना गलत है। श्रावक की खुशामद तभी की जाएगी, जब साधु में दोष होगा।

23. मिलता हैः परस्त्री-गामी को

1. अपयश, 2. निन्दा, 3. नाश, 4. चिन्ता, 5. नरक।

24. भारत में खटकती है

1. सिद्धान्त-हीन राजनीति, 2. बिना परिश्रम का धन, 3. अमल के बिना शिक्षा, 4. नैतिकता-हीन व्यापार, 5. मानवता-हीन विज्ञान, 6. बलिदान के बिना पूजा।

25. धर्म-चक्रवर्ती की 9 निधियाँ

1. धर्म का अनुराग, 2. गुरु में भक्ति, 3. कपट-रहित हृदय, 4. वाणी में माधुर्य, 5. आचरण में पवित्रता, 6. सद्गुणों में विश्वास, 7. सुख-दुख में समता, 8. नियम का निष्ठा से पालन, 9. साथियों के साथ सहानुभूति।

26. सफल कार्यकर्ता के गुण

1. प्रामाणिकता, 2. अनासक्ति, 3. उदार दृष्टिकोण, 4. सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध, 5. अहिंसा में विश्वास, 6. समय की नियमितता, 7. कर्तव्य निष्ठा।

27. कभी मत भूलिए

1. सत्ता एवं अधिकार पाकर न्याय को, 2. समय का प्रवाह बह जाने पर भी अपने पर किए उपकार को, 3. ऐश्वर्य पाकर धर्म को, 4. विवाह के बाद माता-पिता को, 5. व्यापार एवं व्यवहार करते समय सत्य को, 6. अनुचित कार्य की ओर कदम उठाते समय भगवान को, 7. गरीब

एवं अभाव-ग्रस्त को सहयोग-प्रदान को, 8. बीमार होने पर मन, जिह्वा पर नियन्त्रण रखने को, 9. क्रोध आने पर अपने आपको।

28. अठलड़ा हार

1. जो स्वयं अपने पर अंकुश रख नहीं सकते, दूसरों के अंकुश को पसन्द नहीं करते, वे सदा शैतान के घेरे में रहेगें। 2. जो बोलते समय अपने जोश को बोलने में मिला देते हैं, वे कभी दूसरे का दिल नहीं जीत सकेंगे। 3. जिन्हें अपने विरोधी के गुण नजर नहीं आते, वे अपने विरोधी पे सदा झूठे आरोप लगाते रहेंगे। 4. जिन्हें अपनी प्रशंसा सुनकर संतुलन नहीं रहता, वे उस इन्सान की तरह कमजोर रहेंगे, जिन्हें भोजन नहीं पचता। 5. जिन्हें अपनी निन्दा सुनकर चिन्तन की आदत नहीं है, वो निन्दा से तिलमिलाते रहेंगे। 6. जो भूतकाल की अपनी भूलों से सीख नहीं पाए, वे आगे और भूल करते रहेंगे। 7. जिन्हें आत्म-कल्याण की बातों में रस नहीं आता, वे आत्मदर्शन नहीं कर सकेंगे। 8. जो तनिक से व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए परमार्थ को ठुकराते हैं, वे ज्ञान-लक्ष्मी और निर्मल यश के पात्र नहीं बन सकेंगे।

29. क्या बनो, क्या न बनो

1. समालोचक बनो, निन्दक नहीं, 2. खरे बनो, खारे नहीं, 3. प्रेमी बनो, पागल नहीं, 4. मितव्ययी बनो, कंजूस नहीं, 5. क्षमाशील बनो, डरपोक नहीं, 6. न्यायी बनो, निर्दयी नहीं, 7. सज्जन बनो, दुर्जन नहीं, 8. उत्साही बनो, जल्दबाज नहीं, 9. चतुर बनो, चालाक नहीं, 10. पुरुषार्थी बनो, आलसी नहीं, 11. नम्र बनो, चापलूस नहीं, 12. दृढ़ बनो, हठी नहीं, 13. मानव बनो, दानव नहीं, 14. सावधान बनो, बहमी नहीं, 15. सरल बनो, मूर्ख नहीं, 16. दयालु बनो, क्रूर नहीं, 17. धीर बनो, सुस्त नहीं, 18. मस्त बनो, लापरवाह नहीं।

30. मूर्ख नर

1. दान में अंतराय करने वाला, 2. धर्म-चर्चा के समय बातें करने वाला, 3. भोजन के समय क्रोध करने वाला, 4. उपकारी का उपकार न मानने वाला, 5. अपनी बड़ाई हाँकने वाला, 6. शक्ति होने पर भी सेवा न करने वाला, 7. बिना कारण लड़ाई करने वाला, 8. सज्जनों का अपमान करने वाला, 9. दान देकर अहंकार करने वाला, 10. शान्त कलह को पुनः उभारने वाला, 11. बिना कारण हँसने वाला, 12. संकरी गली में दौड़ने वाला।

31. मन की शांति भंग होने के

कारण	निवारण
1. ईर्ष्या की भावना	1. प्रमोद भावना
2. प्रतिशोध की भावना	2. क्षमा के भाव
3. वासना की भावना	3. वैराग्य
4. निराशा की भावना	4. आशावादी बनना।

32. दस कल्प वृक्ष

1. रूपवान होकर शीलवान् होना, 2. ज्ञानी होकर विनम्र होना, 3. अधिकारी होकर न्यायशील होना, 4. धनी होकर दानी होना, 5. समर्थ होकर क्षमाशील होना, 6. गुणवान् पुरुषों का सम्पर्क करना, 7. पुण्यानुबंधी पुण्य, 8. आदर्श माता-पिता, 9. आदर्श शिक्षादाता, 10. सम्यग्ज्ञान।

33. सीख भाई सीख

1. क्रोध की आग बरसाकर शान्ति की फुलवारी मत जलाइए। 2.जल्दबाजी में कोई काम करके जिन्दगी-भर आँसू मत बहाइए। 3. समय पर सही सोचकर काम कीजिए। यश और सफलता के मधुर फल से तृप्ति

अनुभव कीजिए। 4. दुःख को मेहमान समझकर उसका स्वागत कीजिए और प्रतीक्षा कीजिए। सुख का समित्र भी उसके पीछे-पीछे आ रहा है।

34. गुरु-आराधना के गुर

1. श्रद्धापूर्ण हृदय हो, 2. सरल, मीठी वाणी हो, 3. ज्ञानमय चक्षु हों, 4. कष्ट सहने की क्षमता हो, 5. स्वार्थ का बलिदान हो, 7. वैराग्य की लहर हो, 7. अभिमान से दूर हो, 8. आज्ञानुसार आचरण हो।

35. मन चिन्तित होता है

1. भविष्य की अस्वाभाविक (असंभव) और असम्यक् (गलत) कल्पनाओं से, 2. अतीत के अश्रेयस्कर प्रसंगों की चिन्ता से, 3. कषाय-आसक्ति से, 4. वृत्तियों का बिना विवेक के दमन करने से, 5. कृत्रिम जीवन व्यवहारों से, 6. भौतिक आकर्षणों की अधिकता से, 7. लक्ष्य-हीन जीवन जीने से।

36. कुछ मोती, कुछ सीप

❏ यदि आचरण में भद्दापन और व्यवहार में अड़ियल वृत्ति है, तो बाहर के पूजा-पाठ और नित्य-नियम भी ढकोसला बन जाते हैं।

❏ कवि और संत का काम केवल जोश भरना ही नहीं है, उन्हें जोश के फल की ओर भी पैनी नजर रखनी चाहिए। कुछ लोग आग से शुगल करते हैं और खुद पीछे हट जाते हैं। यह जनता के साथ धोखा है।

❏ जिन्हें आत्म-सुधार करना है, उनके लिए गुरु भी हैं, शास्त्र भी हैं। पर उन्हें मन के मते चलना है, उन्हें भगवान् की वाणी भी नहीं मना सकती।

❏ गुरुओं की आज्ञा, यदि मन न हो, तो भी मानने में कोई हर्जा नहीं है। फायदा ही फायदा है। बच्चों को दवाई जबरदस्ती भी पिलाई जाती है, पर काम आती है।

- यदि तुम्हें अपने बड़ों में या किसी में कोई बुराई नजर आती हो, तो मुँह से गाओ मत। पास आकर स्पष्टीकरण कर लो, इसमें आशातना से बच जाओगे।
- साधु को श्रावकों से कोई तेज बात नहीं करनी चाहिए। तेज बात से श्रावकों के दिल में गाँठ बंध जाती है। साधु से लगी हुई गाँठ खुल जाती है, श्रावकों की खुलनी कठिन हो जाती है।
- किसी की रक्षा करते हुए, दान देते हुए, नियम का पालन करते हुए खुशी होती है, तो समझो यह जीव तरणहार है। प्रवचन सुनने में व दान देने में अन्तराय आती हो और तब मन में ग्लानि बने, तो समझो जीव तरणहार है।
- यद्यपि विश्व के वैभव पुण्य से प्राप्त हो जाते हैं, पर धर्म नहीं होगा, तो वे भी दुःखदायी साबित होंगे।
- मंदिर में भगवान् के चरणों में सस्ते फल चढाए जा सकते हैं, पर बहुमूल्य दागी फल नहीं। ऐसे ही जिनशासन में हल्की समाचारी वाले चल सकते हैं, पर दूषित चरित्र वाले नहीं।
- धर्मात्मा भी जिद्द करते हैं, पापी भी। एक जिद्द ऊपर उठाने वाली है, दूसरी नीचे गिराने वाली।
- आज समाज में ऐसे पुरुषों का अकाल पड़ा हुआ है, जो दूसरों का हित सोचते हैं। सात अरब की दुनिया में ऐसे आदमी अगुंलियों पर गिने जा सकते हैं।
- आज संयम खाण्डे की धार नहीं रहा। साधु-श्रावकों की मिलीभगत से शिथिलाचार पनपा है। प्रचार की धुन ने आचार को कोरा कर दिया। हमने optional पेपर में सौ प्रतिशत नं. ले लिए, पर compulsory पेपर में zero रह गए।
- यदि साधु भी चन्द अमीरों के दास हो गए, तो धर्म की जड़ें खोखली हो जाएंगी।

- दीवे तले अंधेरा होता है, लेकिन एक दीवे के सामने दूसरा दीवा जला दिया जाए, तो किसी के तले अंधेरा नहीं रहेगा। इसी प्रकार साधु श्रावक के और श्रावक साधु के नीचे के अंधकार को दूर करे।
- संतों को इतना न कचोटो कि उनकी चर्या ही धूल में मिल जाए तथा उनकी हैसियत पर चोट पहुंचे।
- विनय और अविनय, बुद्धिमत्ता और मूर्खता किसी के माथे पर नहीं लिखी होती, अपितु आचरण से जानी जाती है।
- कुछ धोबी औरों के कपड़े तो धोकर साफ कर देते हैं, पर खुद गन्दे कपड़े पहनते हैं। ऐसे ही यदि हम लोग केवल श्रावकों को सुधारने में लगे रहे और अपना सुधार नहीं कर सके तो हम उन धोबियों से भी बदतर हैं।
- धर्म को तर्क से ज्यादा मत कसो। तर्क एक सीमा तक तो ठीक है, उसके बाद श्रद्धा को स्थान दो। पैंसिल का सुरमा निकालने के लिए उसे तराशो, पर सुरमे को ही मत तोड़ डालो।
- नाव में दो तरह का पानी होता है। एक घड़े में रखा हुआ दूसरा सुराख से आता हुआ। घड़े के पानी से नाव नहीं डूबेगी। सुराख के पानी से डूबेगी। अणुव्रती श्रावक और अव्रती श्रावक की क्रिया में इतना ही अन्तर होता है।
- आपके खाने की जूठन को गरीब या भंगी खाते हैं, यह रिवाज बिल्कुल जंगली है। इस रिवाज को बदलना चाहिए।
- आज हमारे समाज में दान है, तप है, पर आडम्बर के कारण उनके वास्तविक अर्थ लुप्त हो रहे हैं। धार्मिक क्रिया आडम्बर-रहित होनी चाहिए। धर्म चाहे थोड़ा करो, पर ईमानदारी से करो।
- मेरे गुरु म. अपना दोष न होने पर भी गम खाते थे। उनमें जोश था, पर उन्होंने किसी को नाराज नहीं किया। उनमें होश था, पर किसी के दब्बू नहीं बने।

- आज साधु और श्रावकों के जीवन को देखकर ऐसा लगता है कि दोनों में फर्क इतना ही रह गया है जितना 2/5 में और 10/25 में होता है।
- कथा का मन पर प्रभाव जरूर पड़ता है। सुकथा का सुन्दर प्रभाव पड़ता है, विकथा का बुरा।
- संयम शुद्ध पालने के लिए दुनिया के सब आराम छोड़ने चाहिएं। आज जैन समाज में साधु के लिए भोजन, भवन, वस्त्र आदि सब सुविधाएँ उपलब्ध हो रही हैं, इसलिए संयम पालने में कठिनाई आ रही है।
- 'अरि' को और 'अरि' की बातों को याद रखने की बजाय अरिहन्त और अरिहन्त की बातों को याद करोगे, तो शांति मिलेगी।
- यदि स्वयं को अज्ञानी मानते हो, तो ज्ञान मिल जाएगा। जब स्वयं को ज्ञानी मानने लग जाओगे, तो ज्ञान के दरवाजे बन्द हो जाएंगे।
- भक्ति, माला और पूजा को मंदिर की दहलीज तक सीमित मत रखो। इन्हें मन की गहराई में भी उतरने दो।
- विनय के चार फल साक्षात् है– 1. शैतान का हमला नहीं होता। 2. शक्ति का स्रोत खुला रहता है। 3. बिना ठोकर खाए ज्ञान मिलता है। 4. लोकप्रियता मिलती है।
- छोटा यदि विनय करेगा, तो ज्ञानवान् बन जाएगा। बड़ा यदि विनय करेगा, तो हिस्टोरिकल मैन बनेगा। विनय छोटे-बड़े सबके लिए जरूरी है। पटड़ियां हर एक छोटी-बड़ी ट्रेन के लिए जरूरी हैं।
- जब मेरे सामने कोई झूठ बोलता है, तो मैं अपने पर ही कोप करता हूँ। क्योंकि मैं समझता हूँ कि मेरे में कहीं न कहीं झूठ छिपा है।
- तुम अपनी संतान को धन दोगे, तो हो सकता है वह खो दे। लेकिन दान में दी गई लक्ष्मी कभी नष्ट नहीं होगी।
- यदि चारों ओर अंधेरा हो, तो भी अपनी आँखे तो खुली ही रखो।

- सॉँप के दांत निकाल दिए जाएं, तो उससे खतरा नहीं रहता। ऐसे - ही धर्म करते रहोगे, तो धन भी नुकसान नही देगा। धर्म तो ऐसा दस्ताना है, जिसे पहनने वाले को दुनिया का करण्ट नहीं लगता।
- मुझे बच्चों से गहरा लगाव रहा है। मेरे पास अधिकतर मुनि बचपन में ही आए। उनके माता-पिता ने हम पर विश्वास किया। मेरी कोशिश रही है कि उनके विश्वास की जड़ों को सदा कायम रखूं।
- विनय से साधना प्रारम्भ होती है, सरलता से आगे बढ़ती है तथा शांति व शुद्धि से पूरी होती है।
- कुछ लोग जो धर्म और अधर्म से तो अनभिज्ञ हैं, पर दलील-बाजी में व्यस्त रहते हैं, वे साधना से परे रहते हैं। दर्जी के पास कैंची ही कैंची, हो तो काम कैसे चलेगा? तर्क बुद्धि का स्वभाव है, श्रद्धा आत्मा का स्वभाव है। तर्क सीमित है, श्रद्धा असीम है।

गुरु सुदर्शन आरती

(तर्ज – जय जगदीश हरे)

गुरुदेव सुदर्शन जी, गुरुदेव सुदर्शन जी।
भाव-वंदना उनकी, है दुख-मोचन जी॥ टेक॥

नाम स्मरण करते ही, मन की कली खिलती (मेरे)।
ज्ञान, ध्यान, जप, तप की प्रेरणा है मिलती॥1॥

मन की हर चिंता का, समाधान होता (है)।
माँ की गोद में बालक, है निर्भय सोता॥2॥

जन्म स्थान रोहतक था, थे सुन्दरी-नन्दन (तुम)।
पिता चंदगी के सुत, को शत-शत वन्दन॥3॥

बाबा जग्गूमल के पीछे, चल-चल कर (हाँ)।
पाए मदन लाल जी, पावनतन गुरुवर॥4॥

जीवन को चमकाया, धर्मोद्योत किया (था)।
दुखित-खिन्न जनता को, सच्चा स्नेह दिया॥5॥

दर्शन, प्रवचन, चिंतन, संयम अनुपम था (हाँ)।
करुणा, दया, क्षमा का पावन संगम था॥6॥

सबके हृदय में बैठे, सबके सहारे हो (तुम)।
पावन चरण-शरण से, नाव किनारे हो॥7॥

अपनी कृपा का हम पर, सदा हाथ रखना (तुम)।
दूर न जाने देना, हमें साथ रखना॥8॥